मारवाड़ का सांस्कृतिक इतिहास

डॉ विक्रमसिंह राठौड

राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर

प्रकाशक
राजस्थानी ग्रन्थागार
प्रकाशक व पुस्तक विक्रेता
सोजती गेट, जोधपुर
✆ दुकान 623933
निवास 32567

प्रथम संस्करण 1999

मूल्य तीन सौ पचास रुपये मात्र

मुद्रक
सोढा ऑफसेट, जोधपुर

विषय सूची

शुद्धिकरण मानवीय भावनाओ का विकास लोक साहित्य सृजन जीवन म मधुरता एव उल्लास का सचार ।

४ कलाए १ ८७

कला शब्द की व्युत्पत्ति आर अर्थ स्थापत्यकला एव मूर्तिकला मारवाड़ की स्थापत्यकला के उद्भव आर विकास क प्रमुख कारण जीवन की आवश्यकता धार्मिक भावना एश्वर्य प्रदर्शन । राजपत स्थापत्यकला का विशेषताए
दुर्ग—साजत दुर्ग जालोर दुर्ग नागोर दुर्ग जाधपुर दुर्ग उच्च वर्ग के आवास गृह मध्यम वर्ग क आवास गृह निम्न वर्ग क आवास गृह । मकराने के सगमरमर का स्थापत्य कला म यागदान । उपासना गृह (मन्दिर मस्जिद) जलाशय । स्मारक एव मूर्तिकला । चित्रकला—चित्रकला का अर्थ राजपूत चित्रकला ओर राजस्थानी चित्रकला जाधपुर शला (मारवाड़ शैली) पाला कलम नागोर कलम (नागोर के भित्तिचित्रा के विशष सदर्भ म । सगीत मारवाड क लाकवाद्य—लोककलाए-मडनकला (आगन व भित्ति पर माडणे वस्त्र पर आलेखित माडणे शरीर पर आलखित माडणे बर्तना पर आलखित माडणे अस्त्र शस्त्र व अन्य पत्रो पर आलखित माडणे बर्तना पर आलखित माडण । लोकसगीत लोकनाट्य आर ख्याल (ख्याल का अर्थ माच के ख्याल नागारी ख्याल कठपुतला के ख्याल) लालाएँ रासलीला रामलीला नृसिंह लीला) स्वाग । वस्त्राभूषण व साज सज्जा आभूषण (सिर, कान नाक गल बाहु, कलाई अगुली कटि व पर क आभूषण । वस्त्र (उच्चवर्गीय लागा के वस्त्र महिलाओं क वस्त्र सोन्दर्य प्रसाधन के साधन ।

५ साहित्य १ ६७

साहित्य का अर्थ राजस्थाना साहित्य (सम्भ्रान्त वर्गीय साहित्य धार्मिक साहित्य लोकसाहित्य) सम्भ्रान्तवर्गीय साहित्य चारणसाहित्य चारणतर साहित्य

धार्मिक साहित्य सतसाहित्य भक्तिसाहित्य जैन साहित्य—लोकसाहित्य चारणसाहित्य क विशिष्ट रचयिता-(आशा बारहट, ईसरदास दुरसा आढा वीठू मेहा सादू माला केशवदास गाडण जग्गा खिड़िया बारहट लक्खा शकर बारहट, अक्खा बारहट, दल्ला आसिया वारभाण रतनू, करणादान कविया बखता खिड़िया खतसा सादू, हुकमाचन्द खिड़िया सगता सादू, पृथ्वीराज गिरजूगई । चारणेतर साहित्य क विशिष्ट रचयिता—(बादर ढाढी महाराजा जसवतसिह प्रथम मुहणात नणसी वृन्द जग्गाभाट, सूरतिमिश्र नवीन कवि काकरेची ब्रन्नकवर बाघेला राना राडधरा) । सन्त साहित्य क विशिष्ट रचयिता दादूपथा सत (ब्रह्मदास माधादास कृष्ण देव) रामस्नही सत-(सत दरियावजा सत हरखराम किसनदास सुखरामदास सत सुखराम भगवानदास हरकाम

दयालदास परसराम मुरलीराम आचार्य रामदास निरजनी सत हरिदास हरिरामदास आत्मादाराम

भक्तिसाहित्य के विशिष्ट रचयिता ईसरदास चूडा दधवाडिया माधादास दधवाडिया नरहरिदास द्वारकादास दधवाडिया पीरदान लालस ?मीरदान रतनू ओपा आढा रायसिंह सादू सतदास तजसिह महाराजा जसवन्त सिह प्रथम महाराजा अजीतसिह महाराज कुमार शरसिह मुरारदास बारहठ नागादास अनन्तदास बनारसादास। निम्बार्क सम्प्रदायी भक्त कवि विशनार्ट सम्प्रदाय क सत वल्लभसम्प्रदाय के भक्तकवि हरिराय ध्रुवदास फूलीबा? रानाबाई सूरजकवर। जनसाहित्य के विशिष्ट रचयिता मालदेव समयसुन्दर जिनहर्ष मुतारुग्या जयमल्ल आचार्य भिक्षु।

उत्सव, त्योहार और मेले १-४१

धार्मिक उत्सव-रामनवमी नागपचमा कृष्णजन्माष्टमी गोगानवमी बाबा रामदव की बीज नवरात्रि दशहरा बसन्तपचमी शिवरात्रि। सामाजिक उत्सव होला दीपावला रक्षाबन्धन अक्षय तृतीया गणगार, घुड़ला मकरसक्रान्ति ताज शीतला सप्तमी पुत्र जन्मोत्सव राज्यतिलक बरसगाठ। सस्कारजन्य उत्सव अगरणा नामकरण अन्नप्राशन चूड़ाकर्म विवाह अन्त्येष्टि मल-रामदवरा तिलवाडा नाकोड़ा परबतसर, मडार का वीरपुरी आर नागपचमी का मला शातलाष्टमी का मेला खड़ का मेला खडापा का मला रेण का मेला त्रिलाड़ा का मला। मनारजन क साधन आखेट चापड ख्याल आदि।

७ मध्यकालीन मारवाड म पनपने वाली विशिष्ट सामाजिक मान्यताए १-३८

शकुन-अक्षयतृतीया के शकुन मकरसक्रान्ति के शकुन होली के शकुन दीपावली के शकुन कागमाला रो विचार, रात का राजा का शकुन भ्रमरा शकुन तीतर रा शकुन श्वान रा शकुन रातीकीड़ी रा शकुन साड रा शकुन छाक शकुन आँख फुरकण व अग फुरकण विचार, स्वरोदय सूर्य व चन्द्रग्रहण।

सामाजिक व्यवहार-पितृपूजा भोमिया व जझार कुल दवी सती सन्त व पार, अन्धविश्वास जादू-टाना मत्र-तत्र। ,

सामाजिक मान्यताएँ पुरुष नारी पुत्र पुत्र रिश्तदारी जातीयगुण कुछ अन्य मान्यताएँ, रिजक अतिथिसेवा गहन वस्त्रादि, सवक राजा।

मारवाड़ व उसक पड़ोसी राज्यों के प्रति मान्यताएँ। आचार विचार।

प्रस्तावना

भारताय सस्कृति क विकास म राजस्थान का महत्वपूर्ण यागदान रहा है। मुगलकाल म ता भारताय सस्कृति का सुरक्षा के महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह भी राजस्थान न किया। गारा खिलजी व तुगलक वश क शासका क समय समय पर जा आक्रमण राजस्थान क भू भाग पर हय हे उन आक्रमणा क वृत्तान्त स भी यह विदित हाता ह कि उस समय क शासक अपन धर्म सस्कृति आर मान मर्यादा के प्रति कितने सजग आर प्रतिबद्ध थ। यहा क राजपूत शासका की वारता आर चारित्रिक गुणा से मुगल साम्राज्य का सस्थापक बाबर आर हुमायँ परिचित थे परन्तु उनक इन गुणा का सही अध्यता सम्राट अकबर था जिसन उनस सहयाग प्राप्त करने की नीति अपनायी था। अत सम्राट अकबर की गद्दानशानी क कुछ काल बाद ही राजस्थान क शासका क केन्द्राय शक्ति क साथ सम्बन्धा म बड़ा परिवर्तन आया आर उन्हान भी मुगला से विराध के स्थान पर सहयाग का नाति अपनानी प्रारम्भ का। मारवाड़ के शासक माटाराजा उदयसिह (ई सन् १५८३ १५) न मुगलों का मनसब स्वीकार कर सहयाग की नीति अपनाया।

आलाच्यकाल म जहा राजस्थान म शाति आर समृद्धि की परिस्थितिया बना वही सास्कृतिक विकास क नय आयाम भा पारम्भ हुय। यहा क साहित्य कला आर धर्म म एक नवान उत्थान का सवेग प्रारभ हुआ। एक आर पुरातन सस्कृति के मूल्य आर धारणाए नये रूपा म उद्घाटित हान लगा वही मुगल सस्कृति के सम्पर्क स उनमे समन्वय का भावना का भा स्थान मिला।

उदयसिह क बाद क मारवाड़ क सभी शासक क्रमश मुगल मनसबदार बनत रह आर इस प्रकार व मुगला क निकट सम्पक म आय। उनक साथ उनके अनेक सामन्त आर कर्मचारा भा मुगल सस्कृति आर कलाआ स परिचित हुय आर मुगल दरबार क अदब आर रहन सहन का प्रभाव उनके जावन पर पड़ा। अत प्रकारान्तर स मुगल सस्कृति का प्रभाव राजवर्गीय लागा पर पड़ना स्वाभाविक था। दूसरा ओर यहा का जनता का स्थाया शासन व शान्ति क वातावरण म अपना परम्परागत सभ्यता व सस्कृति

को निखारने का अवसर मिला। जिसके फलस्वरूप इस काल की संस्कृति में एक विशिष्ट प्रकार की सम्पन्नता देखने को मिलती है।

किसी भी भू भाग की संस्कृति में अनेक उपकरण घुल मिल जाते हैं जिनमें धार्मिक भावनाओं का आधार प्रमुख रूप से होता है। अतः मारवाड़ की संस्कृति के अध्ययन हेतु यहां के धार्मिक सम्प्रदायों, धार्मिक उपकरणों, कलाओं, साहित्यिक कृतियों और सामाजिक मान्यताओं आदि का विश्लेषण ही उसका सही आधार बन सकता है।

अब तक मारवाड़ के भू भाग से सम्बंधित जो भी शोधकार्य हुआ वह प्रायः राजवंशों के इतिहास और राजनैतिक घटनाक्रम को ही आधार मानकर किया गया। अतः मध्यकालीन सांस्कृतिक अध्ययन के लिये यहां के धर्म, साहित्य और कलाओं आदि से सम्बन्धित मूल साधन स्रोतों का अध्ययन अपेक्षित था। अतः इस हेतु मारवाड़ की विस्तृत साहित्य सम्पदा, धार्मिक सम्प्रदायों और कलाओं को प्रकट करने वाले भवनों, चित्रों और तत्सम्बंधी अनेकानेक उपकरणों के बारे में विभिन्न स्थलों व स्रोतों में बिखरी सामग्री का अध्ययन व परीक्षण करने के बाद यहां यथोचित रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

राजनैतिक इतिहास के परिलेखन की परिपाटी से हटकर सांस्कृतिक इतिहास पर शोधकार्य करने की पूर्व में कोई पुख्ता परम्परा न होने के कारण यह कार्य श्रमसाध्य व समय साध्य तो था परन्तु नीरस नहीं इसलिए इस विषय पर कार्य करने को आगे प्रवृत्त हुआ। बिखरी हुई ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व की सामग्री को प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रन्थों से खोजने के अतिरिक्त कई स्थानों पर व्यक्तिगत रूप में जाकर विभिन्न लोगों से सम्पर्क करके विषयगत सामग्री को एकत्र किया एवं सामाजिक आधार पर उसे व्यवस्थित रूप से इस शोध प्रबन्ध में यथा स्थान प्रयुक्त किया।

संस्कृति के व्यापक अध्ययन क्षेत्र पर शोधकार्य करना रुचिकर और महत्वपूर्ण तो अवश्य था परन्तु उसके साथ ही बहुत दुरुह और समयसाध्य भी। विषय की व्यापकता, महत्ता और गम्भीरता के अतिरिक्त इसकी बारीकी से परिचित हुए बिना लक्ष्य तक पहुंचना दुष्कर होता। श्रद्धेय स्व. डा. नारायण सिंह भाटी के निर्देशात्मक सहयोग से ही यह कार्य सम्पन्न हुआ है। पद्मभूषण नारायण सिंह माणकलाव, डा. गोविन्दसिंह चुंडावत व श्री रामप्रसाद दाधीच का भी आभारी हूं जिन्होंने समय समय मुझे इस कार्य के लिये प्रेरित किया।

इस कार्य को सम्पन्न करने हेतु राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर व जोधपुर, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, फोर्ट, जोधपुर, सम्यक ज्ञान भण्डार [illegible] जोधपुर

राजस्थान विद्यापीठ साहित्य संस्थान उदयपुर व जयपुर का पोथीखाना आदि विभिन्न संग्रहालयों के व्यवस्थापकों और संचालकों ने मुझे सामग्री के अध्ययन हेतु सुविधा प्रदान की जिसके लिये मैं उनका हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

मैं अपनी परम पूजनीया माताजी स्वर्गीय श्रीमती रसालकुंवर के प्रति श्रद्धानत् हूँ जिन्होंने हर परिस्थिति में मेरे विद्यार्जन के पथ को शुभाशीर्वाद से आलोकित किया और इस कार्यविधि में पारिवारिक चिन्ताओं से मुक्त रक्खा। इसके अतिरिक्त मेरा इस अष्टवर्षीय प्रयोजनशीलता में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देने वाले सभी सहयोगियों परिवार के सदस्यों एवं मित्रों का आभार व्यक्त करना भी अपना कर्तव्य समझता हूँ जिनकी सद्प्रेरणा व शुभ कामनाओं के परिणामस्वरूप मैं इस कार्य को मूर्त स्वरूप प्रदान कर सका।

मध्यकालीन मारवाड़ के इस सांस्कृतिक अध्ययन से राजस्थान के अन्य भू भागों के सांस्कृतिक अध्ययन में किंचित भी सहयोग मिला तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूंगा।

—विक्रम सिंह राठौड़

सांस्कृतिक स्वरूप

राजनैतिक अध्ययन को आधार मानकर इतिहास लिखने की हमारे यहा सुदीर्घ रम्परा रही है किन्तु राजनैतिक अवस्था से परे सामाजिक धार्मिक आर आर्थिक दशाओं ा वृत्तान्त प्राचीन इतिहास में प्रसगानुसार सक्षेप म ही मिलता ह इसलिए यह वर्णन उन शाआ की पूरी तस्वीर पेश नहा करता । इसके साथ ही साधारण जनता या जन समाज म प्रचलित आचार-विचार, मान्यताओ रीति रिवाजो रहन सहन खान-पान आमोद-प्रमोद इत्यादि उनकी सभी अवस्थाओ के वर्णन की अपेक्षा राज्याध्यक्षो व राजवर्गीय लागो के राजनैतिक क्रिया कलापो से सम्बन्धित जानकारी उनम अधिक मिलती ह । कवल राजनैतिक घटनाक्रम म बधा इतिहास हम दूसरा सूचनाएँ प्रदान करने मे असमर्थ रहता ह क्योकि केवल युद्ध या राजनयिकों के जीवनवृत्त के इर्द गिर्द चक्कर काटने वाला इतिवृत्त पूर्ण इतिहास नही कहा जा सकता । उस हम इतिहास की राजनतिक घटनाओ का एक लेखा जाखा ही कह सकते है ।

सामाजिक आर सास्कृतिक अध्ययन के प्रति यहाँ के इतिहासकारो की रुचि इतना अधिक नही रही जितनी कि राजनैतिक अध्ययन के प्रति । टॉड न अपने इतिहास म कुछ बिन्दुआ [1] पर सक्षेप मे अवश्य प्रकाश डाला है ।इसी प्रकार मुन्शी देवीप्रसाद ने यहा की जातिया क रहन सहन आचार विचार, खान पान इत्यादि सामाजिक और सांस्कृतिक जावन के पहलुआ को छुआ परन्तु बाद के इतिहासकारो ने इसको छोड़ दिया ।

राजनतिक घटनाक्रम क घेरो की परिधि को लाँघकर सम्पूर्ण समाज की झाकी प्रस्तुत करन वाला ब्यारा हा इतिहास के समग्र स्वरूप का प्रकट कर सकता ह । इसालिए आधुनिक इतिहासकार समाज का सभा अवस्थाओ को समुचित स्थान दने का सिर्फ बात हा नही करत रहे इस दिशा म उन्हाने महत्त्वपूर्ण कार्य कर इतिहास की नवीन विचार धाराआ से विभिन्न अछूत क्षत्रा पर भी प्रकाश डाला है । आधुनिक युग म इतिहासकारों पर समाजवादा विचारधारा का प्रभाव रहा अत इतिहास म समाज के सम्पूर्ण प्रतिबिम्ब को दर्शाने का आजकल प्रयास किया जाता ह । इस सदी क पिछल कुछ दशका स राजनतिक घटनाआ की अपक्षा इतिहास के सामाजिक आर्थिक धार्मिक

आर सास्कृनिक परिवेश म अपन शाध निबध आर शाधप्रबध लिखकर अद्यावधि इतिहास क इस अल्प सचनाआ स युक्त पक्ष का उजागर करन का प्रयास किया जा रहा ह। इस नूतन प्रयास का सभा न सराहा हा नही इस युग का माग आर समय का आवश्यकता समझकर स्वीकारा भा ह।

जहाँ तक सास्कृतिक अध्ययन का प्रश्न ह इस दिशा म आधुनिक इतिहासकार सचष्ट अवश्य हे किन्तु इस क्षेत्र म अभा काम बहुत कम या नही क बराबर हा हुआ ह। सास्कृतिक अध्ययन का एक ता क्षेत्र बहुआयामी आर विस्तृत ह दूसरा उसका ऐतिहासिक परिप्रक्ष्य म अकित करना आर भी दूभर कार्य है। सास्कृतिक अध्ययन का जब हम बात करते ह ता उसम तत्कालान समाज क समस्त जावन दर्शन का विहगम दृश्य समाविष्ट करना पड़ता ह। इसक अभाव म सास्कृतिक अध्ययन का पूर्णता प्रदान करना असभव ह।

सस्कृति शब्द की विभिन्न विद्वाना द्वारा का गई व्याख्याआ का अवलाकन करन स सास्कृतिक अध्ययन का व्यापकता आर महत्ता स्वत हा स्पष्ट हा जाएगा। सस्कृति शब्द मूल रूप स सस्कृत भाषा का शब्द ह। सस्कृति म दा शब्द हे सम + कृति। इस शब्द का मूल कृ धातु म ह जिसका अर्थ ह क्रिया। सम् उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से क्तिन् प्रत्यय लगकर (स्त्रालिग क भाव म) सस्कृति शब्द निष्पन्न हाता ह। इस दृष्टिकाण स सस्कृति का शाब्दिक अर्थ सम प्रकार अथवा भली प्रकार किया जान वाला व्यवहार अथवा क्रिया ह। यह परिष्कृत अथवा परिमार्जित करन का सूचक ह। सस्कृति शब्द का एक अन्य अर्थ सस्कार से भा जोडा जाता हे। अग्रजी भाषा म सस्कृति क लिए कल्चर शब्द का प्रयाग किया जाता ह। यह शब्द लेटिन भाषा क कलचुरा तथा "कालियर स निकला ह। इन दाना शब्दा का अर्थ क्रमश उत्पादन तथा परिष्कार ह। उत्पादन तथा परिष्कार स जा अर्थ निकलता ह उसेक अनुसार सस्कृति का परिष्कृत मानसिक उत्पादन माना जा सकता ह।[2]

सस्कृति सम्बन्धी विभिन्न विचारणाए ह किसी एक धारणा या विचार स उसक समग्र स्वरूप का भान (दिग्दर्शन) नहा हा सकता न ही ऐसी काई सर्वसम्मत विचारधारा ह जिसस सस्कृति क सम्पूर्ण अर्थ का निरूपण हाता हा। भारताय आर पाश्चात्य सभा विद्वाना न अपन अपन ढग स इसका व्याख्या करने के लिए जा परिभाषाए सुझाई हैं उसम इस व्यापक शब्द के अर्थ का हा नहा अर्थ गाम्भीर्य आर उसक व्यापक परिवश को भा उल्लिखित करन का प्रयास किया ह। सस्कृति के समग्र स्वरूप का समझन क लिए उसका एकाधिक व्याख्याआ आर परिभाषाआ का सहारा लेना नितान्त आवश्यक प्रतात हाता ह।

डा सम्पूर्णानन्द के अनुसार- सस्कृति समष्टिगत समान अनुभवों से उत्पन्न भूत पदार्थ ह । एक ही जलवायु म पल एक हा राजनतिक सामाजिक और आर्थिक सुख दु ख को भोगे हुए लोगा के चित्त का झुकाव प्राय एक ही सा होगा । एक सी अनुभूतियों क आचार विचार भा एक हा हागे । अत सस्कृति वह दृष्टिकोण ह जिससे कोई समुदाय विशय जीवन की समस्याओ पर दृष्टि निक्षेप करता ह जो आज की अनुभूति है वह क्ल सस्कार के रूप म अवशिष्ट रह जावेगी । लकड़ा पत्थर की तरह सस्कृति एक निश्चल पदार्थ नही हे । यह एक बहती हुई धारा है जिसम सदा कुछ न कुछ नवीन अश जुड़ता रहता ह आर कुछ विलुप्त भी होता रहता ह । साथ ही कुछ तत्व किसी और रूप म भी परिवर्तित होता रहता ह । आधुनिक युग के चिन्तका न भा सस्कृति के स्वरूप निर्माण पर इसा ढग के विचार प्रकट किए हे ।

निरन्तर प्रगतिशील मानव जीवन प्रकृति आर मानव समाज के जिन जिन असख्य प्रभावो व सस्कारो स सुसस्कृत प्रभावित होता रहता है । उन सवक सामूहिक पदार्थ को ही सस्कृति कहा जाता हे । मानव का प्रत्यक विचार प्रत्यक कृति सस्कृति नहा हे पर जिन कार्या से किसी देश विशेष क समक्ष समान पर कोई अमिट छाप पड़े वही स्थायी प्रभाव सस्कृति हैं । सस्कृति वह आधारशिला ह जिसके आश्रय से जाति समाज व देश का विशाल भव्य प्रासाद निर्मित हाता ह ।

प जवाहरलाल नेहरू के अनुसार- सस्कृति क्या ह ? शब्दकाश उलटने पर इसकी अनक परिभाषाए मिलती ह । एक बड़े लखक का कहना है कि ससार म जो भी सर्वात्तम बाते जानी या कही गई हे उनसे स्वय का परिचित कराना सस्कृति हे । एक अन्य परिभाषा म कहा गया ह कि सस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तिया का प्रशिक्षण दृढ़ीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है । यह मन आचार अथवा रुचि की परिष्कृति अथवा शुद्धि हे । यह सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना है ।"[3]

सस्कृति के सबध म रामधारीसिंह दिनकर ने अपने विचार व्यक्त कत हुए लिखा ह— असल म सस्कृति जीवन का एक तरीका ह आर यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज मे छाया रहता हे जिसमे हम जन्म लेते है ।— अपने जीवन म जा हम सस्कार जमा करते है वह भी हमारा सस्कृति का अश बन जाता हे आर मरने के बाद हम अन्य वस्तुआ क साथ साथ अपनी सस्कृति की विरासत भी अपनी भावी पीढ़िया के लिए छोड़ जाते हैं । इसलिए सस्कृति वह चाज़ मानी जाता ह जा हमारे सारे जीवन का व्याप हुए ह तथा जिसकी रचना आर विकास म अनक सदिया के अनुभवा का हाथ ह ।[4]

डा सत्यक्तु विद्यालकार ने सस्कृति का परिभाषा देते हुए लिखा ह कि— "मनुष्य अपनी वुद्धि का प्रयाग कर विचार आर कर्म के क्षेत्र म जा सृजन करता ह उसका सस्कृति कहत ह ।[5]

डा जासा पाण्डय का मान्यता ह कि— मूलत सस्कृति जावन का आर एक दृष्टिकोण ह अनुभव के मूल्याक्न आर व्याख्या का एक विशिष्ट आर मूलभूत प्रकार ह । विचार, भावना तथा आचरण क विभिन्न प्रस्तरा म सस्कृति का सिद्धि ह । [6]

अनेक भाषाआ म सस्कृति के लिए जा विभिन्न शब्द मिलत हे उन सभा स सस्कृति का सम्बध क्रिया व्यवहार, उत्पादन सस्कार तथा परिष्कार स जुड़ा मिलता ह । सस्कृति म व्यक्ति तथा समाज का वे क्रियाय उत्पादन व्यवहार, सस्कार तथा परिष्कार सम्मिलित ह जिनक द्वारा व्यक्ति तथा समाज क लक्षणों को पहचाना व परखा जा सकता है । इस आधार पर यह कहा जा सकता हे कि सस्कृति मानव के आदिकाल स लकर आज तक का वह सचित निधि ह जा उत्पादन तथा परिष्कार द्वारा निरन्तर प्रगति करती हुई एक पाढा स दूसरी पाढ़ी को उत्तराधिकार स्वरूप प्राप्त हाती चली आई ह तथा भविष्य म भा उसकी यहा गति रहगी । [7]

अर्थात् सस्कृति का अथ ह— मन अभिरुचि एव व्यवहार का शोधन तथा सुन्दर अभ्यास । इस प्रकार से प्रशिक्षित एव अभ्यस्त हान का अवस्था एव बाद्धिक पक्ष म ससार म जो अब तक जाना एव कहा गया हे उसस परिचित हाना ।

सस्कृति सबधा उपर्युक्त विचारणाआ क विश्लषण स्वरूप यह कहा जा सकता हे कि सस्कृति जीवन का एक विशिष्ट प्रवाह हे जाएक जन समूह को विश्व के अन्य जन समूहा स अलग करता ह । सस्कृति मनुष्य क स्वभाव धारणाओ विश्वासो सान्दर्यबाध आर आचरण स सबध रखती है । सस्कृति की प्रताति मनुष्य क समुदाय विशष के धर्म रीति रिवाज सामाजिक व्यवहार कलाओ आदि म हाता ह । इन सभी चाजा का मिला जुला प्रभाव हा सस्कृति को जन्म देता ह । सस्कृनि में समय के साथ परिवर्तन तो हाता रहता है परन्तु उसका बीज कभी नष्ट नहा होता । सस्कृति म एक निरन्तरता सदैव बनी रहती है और सबल सस्कृति वहा हाती ह जो दूसर प्रभावा का भी आत्मसात कर लेती हे । भारतीय सस्कृति की यह बहुत बड़ी विशेषता रही ह । सस्कृति सदा मूल्य सापेक्ष होती हे वह मानव समुदाय विशष क जीवन-मूल्या के निर्वाह म सदा एक चेतना का काम दता ह आर मनुष्य का हर परिस्थिति से जूझन की शक्ति प्रदान करती ह तथा उसमें आशावादिता का सचार भी करता ह । सस्कृति जीवन का लक्ष्य निर्धारित करती हे । सस्कृति जीवन जीन का एक तराका ह इसलिए वह जीवन के क्रिया कलापा का सयमित भी करती हे आर बदल म स्वय भी सयमित रहती है ।

डा ईश्वरा प्रसाद आर शलन्द्र शर्मा ने ठीक ही लिखा ह कि— सस्कृति मानव की दशा तथा दिशा का बोध कराता ह । सस्कृति मानव जीवन का आधारभूत लक्षण ह । इसम मानव जावन क समस्त गुण निहित ह । सस्कृति के गुणा क वशीभूत हाकर हा मनुष्य उन क्रियाआ को करता ह जा उस ज्ञान विज्ञान समाज धर्म साहित्य कला दर्शन

आर चिन्तन की ओर अग्रसर करता ह । मानव का समस्त क्रियाआ व्यवहारा उत्पादन परिष्कार एव उन्नति का मिला-जुला रूप ही सस्कृति ह । सस्कृति द्वारा सत्य शिव सुन्दरम् के लिए मन मस्तिष्क मे आकर्षण उत्पन्न हाता ह आर उसका अभिव्यक्ति होती ह । सस्कृति मानव के भूत वर्तमान तथा भावी जीवन का पूर्ण विकसित रूप हे ।"[८]

इतना व्यापक अर्थ रखने वाली सस्कृति समुदाय विशेष के जीवन क विविध रूपा अगा प्रत्यगो क्रिया कलापा आर चिन्तन मनन क आदर्शा म अभिव्यक्ति पाती हे । सस्कृति का जन्म मूलत मानव समूह विशेष क आन्तरिक वभव का अध्ययन है जा उसकी कलाआ धर्म उत्सवा मान्यताआ आर रहन-सहन म प्रकट होता ह । इनक माध्यम स उस अभ्यान्तर वभव आर उसकी चतना का समझा जा सकता ह आर इस चेतना क फलस्वरूप समय समय पर जो सघर्ष बाह्य प्रभाव आर नवीन सामाजिक उद्भावनाए हाती रही हैं उनका प्रतिक्रियाआ का भी दिग्दर्शन इनस हाता ह ।

सभ्यता एव सस्कृति

सभ्यता आर सस्कृति का आपस म इतना घनिष्ट सम्बन्ध ह कि प्राय बहुत स लोग इन दाना शब्दा का एक हा अर्थ म या एक दूसरे क पयाय क रूप मे प्रयोग करन लग हे । वास्तव म इन दाना मे बहुत ही सूक्ष्म अन्तर ह– "सभ्यता वह वस्तु ह जो हमारे पास ह आर सस्कृति वह गुण है जो हम मे व्याप्त ह । सभ्यता सस्कृति का बाह्य रूप ह और सस्कृति सभ्यता का आन्तरिक तत्व ह । सभ्यता की पहचान ह सुख सुविधा और ठाट-वाट और सस्कृति की पहचान हे मन का सस्कार ।[९]

सभ्यता का सम्बन्ध मानव की भौतिक समृद्धि स ह और सस्कृति का सबध मानव का सस्कारजन्य उपलब्धि से है । जावनोपयोगी सारा गतिविधिया सभ्यता के अन्तर्गत आती ह जबकि सस्कृति मानव की भौतिक उपलब्धियो मे तो सहायक होती ह साथ ही उसका सम्बन्ध आत्मा मन और मस्तिष्क स होता हे । इस कारण उसका क्षेत्र विस्तृत और व्यापक ह ।

सभ्यता क सुमन सास्कृतिक तत्वों से परिपोषित होकर ही सौरभमय स्वरूप प्राप्त कर सकत है । सास्कृतिक उपकरणों के विकास म सभ्यता का अपना योगदान हाता ह क्याकि मानव म पहले अपनी भौतिक आवश्यक्ताओ का पूर्ति के पश्चात् ही कलात्मक एव आध्यात्मिक चिन्तन और मनन की क्षुधा जागृत होता ह । सभ्यता सास्कृतिक क्रियाओं के प्रादुर्भाव और विकास मे एक सहायक तत्व सिद्ध होता ह । इस प्रकार सभ्यता व सस्कृति मे पारस्परिक घनिष्ट सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता है फिर भी सस्कृति की महत्ता सभ्यता स विशिष्ट आका गई ह क्योंकि सस्कृति वह अक्षुण्ण धारा हे जो सभ्यता को प्रभावित ता करती ह किन्तु सभ्यता के बदलन क साथ स्वय एकाएक नही बदलती ।

भारतीय सस्कृति

प्रागतिहासिक काल स भारत नाना जातिया आर सस्कृतिया का आश्रय स्थल रहा ह ओर उनका विभिन्न प्रवृत्तिया तथा जीवन विधाआ क सघर्ष आर समन्वय क द्वारा भारतीय इतिहास एव सस्कृति का विकास हुआ ह । इस विकास म आर्यतर जातिया का उतना हा महत्वपर्ण हाथ रहा ह जितना आर्य जाति का।[१०] यद्यपि आर्या न अपना पूर्ववर्तिना आर्यतर सभ्यता को ध्वस्त कर अपनी विशिष्ट भाषा धर्म आर समाज को भारत म प्रतिष्ठित किया तथापि यह निर्विवाद ह कि यह सास्कृतिक विध्वस निरन्वय विनाश नही था आर सिन्धु सस्कृति के अनेक तत्व परवर्ती आर्य सभ्यता म अगीकृत हुए। आर्य तथा आर्यतर सास्कृतिक परम्पराओ का यह समन्वय भारतीय सभ्यता के निर्माण की आधारशिला सिद्ध हुई।[११]

यहा जिस सस्कृति का अभिव्यक्ति हुई जगत क आर किसा देश म उसकी उपमा नहा ह । मिश्र फिनीशिया पर्थिया क्रीट भूमध्य सागर का प्राच्य प्रान्तभूमि ग्रीस प्राचीन चीन किसा भी दश का सस्कृति गम्भारता व्यापक्ता विरोध समन्वय सामर्थ्य आर सर्वतामुखी विकास क विषय म भारताय सस्कृति क साथ तुलना याग्य प्रतात नही होता । व्यष्टि के साथ समष्टि का तथा दूसरी आर सर्वातात मूलसत्ता का इस प्रकार अद्भुत समन्वय ओर किसी देश म नही मिलता।[१२]

भारत म सस्कृति का यह विकास वहुमुखा था और उसने सभ्यता को भी बराबर प्रभावित कर आग बढ़ाया । इसालिए भारतीय सस्कृति का विश्व मे एक विशिष्ट स्थान प्रतिपादित करते हुए स्वामी सदानन्द न लिखा है–

How many Hindus of present generation know that there was a period in the course of the long History of India when our ancient forfathers as pioneers of civilazation taught culture and civilazation to many countries of the world They were advanced not only in things pertaining to sprit such as religion Philosophy and metaphysics but they were ahead of other nations in such pratical things of the world as art and Industries trade & commerce language and literature Politics and administration [13]

वैदिक सस्कृति ओर सभ्यता ही भारतीय आचार विचार का मूल स्रोत हे । भारतीय सस्कृति के अन्तर्गत भारताय विचारधारा आर विचारो क अनुरूप आचरण दाना हा सन्निविष्ट है । भारतीय विचारा म पचभूत से निष्पन्न शरीर के अन्तर्गत एक आत्मा की सत्ता का स्वाकार किया गया ह । यह आत्मा जा अजर अमर ह जब एक शरीर का त्याग

का दूसर शरीर को ग्रहण करती ह तो इस हा पुनर्जन्म का सिद्धान्त कहत ह । जिस प्रकार भाजन वस्त्रादि द्वारा शरीर क प्रति हमार अनक कर्तव्य ह उसा प्रकार आत्मा क प्रति भा हमार कुछ कर्तव्य ह । आत्मा क प्रति कर्तव्या का भारतीय सस्कृति म प्रमुख स्थान ह ।[१८]

भारताय सस्कृति सदव जावित रहा ह आर अब तक भी जावित ह जबकि सभ्यता कई बार जीर्ण हा चुकी ह । जिन आदर्शा आर मूल्या की स्थापना वनवासा मनीषा लाग कर गये थे वे आज भी भारताय जनता म देखे जा सकते हे । सस्कृति का सम्बन्ध समष्टिगत चेतना से हुआ करता हे तभी ता सामाजिक आदर्शा व मूल्या क अध्ययन स सास्कृतिक महत्व का अध्ययन किया जा सकता ह । किसी भी सस्कृति के बाह्य स्वरूप क आधार पर ही उसका मूल्याकन करना अनुचित आर एक अधूरा प्रयास हा कहा जायगा क्योकि जब तक उसके आन्तरिक स्वरूप का देखा आर परखा नही जाता तब तक सास्कृतिक गरिमा की सम्पूर्णता का आभास होना नितान्त असभव ह । किसा सस्कृति का समालोचना करते समय यह बात भी ध्यान दने याग्य ह कि समाज विशेष की सस्कृति म नैरन्तर्य (Continuity) के लिए यह आवश्यक नही कि उसका नया आर पुराना बाह्य रूप एक सा हो । इस प्रकार की जड़ता आर स्थिरता तो मरणासन्न सस्कृति का द्योतक हाती है ।

भारतीय सस्कृति एक गतिशील ओर विकासमान सस्कृति ह । भारतीय सस्कृति का प्रवाह पुरातन तत्वा स प्ररणा लता हुआ आर अद्यतन तत्वा को आत्मसात करता हुआ निरन्तर आगे का आर प्रवाहित होता रहा है आर हा रहा हे । इसालिए धार्मिक सहिष्णुता आर अन्य सस्कृतिया क तत्व ग्रहण की शक्ति इस सस्कृति का एक बहुत बडा गुण बन गयी है ।

भारतीय सस्कृति की विशेषताएँ

विभिन्न सस्कृतियो की प्रकृति मे मूलभूत समानताएँ हाते हुए भा समाज विशष आर स्थान विशेष क प्रभाव से वहाँ प्रतिफलित सस्कृति के रूप म तथा गुण मे भिन्नता दृष्टिगाचर होती हे । यह रूप और गुण विशिष्ट का अन्तर हा किसा सस्कृति का निजा विशषता कही जाता ह जो उसे दुनिया की अन्य सस्कृतिया से अपनी अलग पहचान करन म सहायक हुआ करता ह । इस दृष्टि स भारताय सस्कृति की कुछ प्रमुख विशेषताओ का निम्न प्रकार स उल्लिखित किया जा सकता है ।

(१) धर्मप्रधान सस्कृति

भारतीय सस्कृति धर्म प्रधान ह । भारताय जीवन का मलाधार धर्म ह तथा यहा की सस्कृति की नाव हा धर्म पर आधारित ह । यहा का सस्कृति म धर्म का व्यापक अर्था म प्रयाग किया जाता रहा ह । धर्म का परिभाषा— धारयति धर्म का गया है जिसका

मतलब यह हाता है कि जा धारण करता ह वही धर्म ह । अत धर्म का स्वरूप केवल आध्यात्म चिन्तन या ईश प्राप्ति का पद्धनि विशेष तक ही सीमित नही ह परन्तु उसका तात्पर्य सद्चरित्र आर सद्‌गुणा का धारणा से भी ह । अत धर्म शब्द का कवल ब्राह्य कर्मकाण्डा क लिए हा नहा बल्कि सास्कृतिक सगठन आर आध्यात्मिकता के लिए भी प्रयाग किया जाता ह । धर्म शब्द इतना व्यापक ह कि उसमे अंग्रेजा के कल्चर आर सिविलाइजेशन भी समाय हुए ह । यही कारण है कि भारतीय सस्कृति के चार पुरुषाथा म धर्म का सबस पहला स्थान मिला ह । धर्म भारताय सस्कृति का एक सूत्र म बाधता है । भारतीय सस्कृति के अनुसार धर्म ही एक एसा तत्व है जा मनुष्य को पशु से अलग करता है । मनुष्या की विशषता दिखलाने वाला यदि कोई तत्व है तो वह धर्म ही है ।[१५]

अत धर्म स तात्पर्य यहा किसा मजहब विशष तक हा सीमित नही है अपितु धर्म का उस गुणात्मक शक्ति स सम्बन्धित है जा सदाचार और सद्‌गुणा से पोषित सभी धर्मा का आधार स्वरूप ह । इसलिए मजहब अलग अलग होते हुए भी उनम भारतायता की अपना छाप ह आर इन मजहबा क कई तत्वा ने एक दूसरे का प्रभावित कर यहा की जावन पद्धति का इस प्रकार सहिष्णु आर उदार बना दिया कि धर्म न एक विशाल स्वरूप ग्रहण कर लिया ह आर उसम यहा की धरती की विशेषताएँ बहुत गहराई कसाथ समन्वित हा चुका है ।

(२) बहुदेववाद और एकश्वरवाद

धर्मप्रधान भारतीय सस्कृति ने यहा के जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित किया । जावन क साथ प्रकृति का सामीप्य स्थापित करते हुए लोक दवताआ की परिकल्पना को अपनाया गया । इस प्रकार दैविक मान्यता न सामाजिक जीवन को उसके विविध रूपों म बहुत दूर तक प्रभावित किया । य दवता इहलोक और परलोक दानो स्थाना की गतिविधिया का प्रभाविन करन म सक्षम समझे जाने लगे । देवत्व की इस धार्मिक धारणा न यहा बहुदववाद का जन्म दिया । समस्त जड़ चतन तथा प्राकृतिक पदार्थो का उपास्य समझन क पश्चात् भा एक सर्वशक्तिमान "ब्रह्मतत्व" को इस सृष्टि का नियामक माना गया तथा सारा सृष्टि का उसका हा रचना माना गया । उस अदृश्य सर्वशक्तिमान तत्व क अधान हा सार जगत् का क्रिया आर विधान केन्द्रित ह । देवता भी उसकी इच्छानुसार आर सकत स सृष्टि क क्रम एव गतिविधिया म सहयाग प्रदान करते ह । इस प्रकार परमतत्व क निर्देशा का अनुपालना भी करन ह । इस देवत्व की धारणा से मनुष्य शुभकर्मों क प्रति सजग हाना ह क्योंकि अच्छ कार्या म हा देवता प्रसन्न हुआ करते है । इससे भारताय सस्कृति म उदारता आर सहिष्णुता का भावना को ता बल मिला हा साथ हा

देवत्व की धारणा मे यहा जो बहुदववाद आर एकेश्वरवाद का अद्भुत समन्वय दृष्टिगोचर होता है। यह भारतीय सस्कृति का अपनी अनुपम विशपता ह।

(३) आध्यात्मिकता

धर्म के साथ भारतीय सस्कृति पर आध्यात्मिकता ओर दर्शन का रग भी बहुत गहरा है। भौतिक जगत को असत्य या नश्वर तथा ब्रह्म' का हा सत्य माना गया ह 'ब्रह्मसत्य जगत् मिथ्या"। आध्यात्मिक ज्ञान और दर्शन क अध्ययन से इस सत्य की ओर अग्रसर हुआ जा सकता हे। परमतत्व का साक्ष्य एक अनुभूतिजन्य आनन्द का स्वरूप ल लता है जो कि भारतीय आध्यात्म का चरम लक्ष्य ह। आध्यात्मिक ज्ञान का प्राप्ति क पश्चात् ही मानव अपनी आत्मा का उत्थान करके महान हा सकता ह। डा राधाकृष्णन् ने भी लिखा ह– भारतीय सस्कृति मे मानव का तार्किक प्रवृत्ति से अधिक जोर आध्यात्मिक प्रवृत्ति पर दिया गया ह। ऋग्वेद म जिस आत्मिक खोज और बौद्धिक सन्दहवाद की अभिव्यक्ति है– वह भारतीय सस्कृति का आध्यात्मिक विशेषता का आधार हे।"

भारताय सस्कृति का मूल मन्त्र हे– आत्मन विजानीहि (अपन आपको जाना) भारतीय सस्कृति के निर्माता ऋषि आर मुनि इस निष्कर्ष पर पहुचे कि मनुष्य अपन आपको जाने क्याकि ससार म सत्य को जानन का केवल यही एक उपाय है। यही कारण ह कि भारतीय सस्कृति बहिर्मुखा होने का अपेक्षा अन्तर्मुखी अधिक ह। श्री अरविन्द का कहना है कि– 'आध्यात्मिकता भारतीय मस्तिष्क की कुजी हे। भारतीय सस्कृति की आध्यात्मिकता ही इसे ससार भर का सस्कृतियो से निराली बनाए हुए ह। [१६]

आध्यात्मिकता के कारण भारतीय सस्कृति के प्रारम्भिक चरणा म हा पुनर्जन्म स मुक्ति पाना जीवन का सर्वप्रमुख लक्ष्य माना गयाहे। आध्यात्मिक प्रगति एव चेतना का पराकाष्ठा प्रदान की है। विभिन्न दार्शनिक मतो प्रणालियो सिद्धान्ता तथा परम्पराओ का आश्रय लेकर भारतीय सस्कृति ने अभूतपूर्व निरन्तरता तथा विकास की क्षमता प्राप्त की। [१७]

भारतीय सभ्यता आर सस्कृति पर आध्यात्मिक छाप बहुत गहरी है तथा सास्कृतिक विरासत म यहाँ के समाज को यह थाती सदिया से मिलता आ रही हे। इस कारण यहाँ के जनमानस तथा लोक-जीवन मे भी अध्यात्म ओर दर्शन की बात घर कर गई हें। यहाँ की भूमि पर जिसका जन्म या पोषण मात्र हा जाय वह भी अध्यात्म क सस्कारा स प्रभावित हुए बिना नही रहता क्योकि दार्शनिक आर आध्यात्मिक विचार यहा इतन सहज ओर स्वाभाविक रूप से लोक व्यावहार मे घुले मिले रहते ह कि एक अनपढ व्यक्ति का जावन भी उससे अछूता नही रहता।

(४) धार्मिक सहिष्णुता तथा अनुकूलन की शक्ति

इस देश की धरती विभिन्न प्रकार के धार्मिक विचारों और मत मतान्तरों की क्रीड़ा स्थली रहा है। यहाँ विभिन्न जातियों तथा संस्कृतियों का आगमन भी हुआ जो परस्पर विरोधी थीं। किन्तु वे सब जिस प्रकार विभिन्न धाराएँ एक महासमुद्र में आकर समाती है उसी प्रकार आकर समा गईं। अपनी बर्बरता प्रबल प्रतिशोध की भावना और परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों को धीरे धीरे भुलाकर इस धरती पर बस गए। यह भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता का ही प्रभाव था कि जिसने अनगिनत सामाजिक उथल पुथल और राजनैतिक परिवर्तन के पश्चात् भी सभी स्थितियों को धीरे धीरे अनुकूल बनाती गई। भारतीय संस्कृति अपनी सहिष्णुता और अनुकूलन की शक्ति के कारण ही आज तक अपने पारम्परिक स्वरूप और मान्यताओं को जीवित रख सकी। राष्ट्रकवि रामधारीसिंह दिनकर ने हिन्दू संस्कृति की पाचनशक्ति को बड़ा ही प्रचण्ड माना है।[१८] भारतीय संस्कृति की इस विशेषता को लोग बड़े विस्मय से देखते हैं। इतिहासकार स्मिथ ने भी लिखा है कि— विदेशी लोगों ने हिन्दू धर्म की पाचन शक्ति के सम्मुख घुटने टेक दिए और बड़ी ही शीघ्रता से वे हिन्दुत्व में विलीन हो गये। अनेक संस्कृतियों के मिलने से भारतीय संस्कृति में एक प्रकार की विश्व बन्धुता उत्पन्न हुई है जिसे विश्व की मानवता के लिए सबसे बड़ा वरदान माना जाता है।[१९]

(५) एकीकरण व समन्वय

भारतीय संस्कृति की एकीकरण व समन्वयवादी विशेषता भी अद्भुत है। इसकी महत्ता का बखान करते हुए हुमायूँ कबीर लिखते हैं कि — भारतीय संस्कृति की कहानी एकता तथा समाधानों के एकीकरण तथा प्राचीन परम्पराओं के पूर्णत्व की कहानी है। सभी संस्कृतियाँ नष्ट हो गई परन्तु भारतीय संस्कृति की एकता तथा समन्वय सतत् तथा अमर है।

भारतीय संस्कृति की इसी विशेषता ने उसके अनुयायियों को हठधर्मिता और धर्मान्धता से बचाये रखा। इसी के परिणामस्वरूप भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ तत्वों एवं उच्च आदर्शों को कभी किसी पर जबरन नहीं थोपा गया न ही यहाँ के आध्यात्मिक दार्शनिक धार्मिक आचार विचार तथा संस्कारों को स्थापित करने हेतु कभी शस्त्र या बल प्रयोग का सहारा लिया गया। डा ईश्वरी प्रसाद एवं शैलेन्द्र शर्मा ने भारतीय संस्कृति की इस विशेषता को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है— अपनी एकीकरण तथा समन्वयी प्रवृत्ति के कारण भारतीय संस्कृति ने इस भूमि पर आने वाली समस्त संस्कृतियों को स्वयंभू कर लिया तथा स्वयं मन्थर गति से प्रवाहित होती रही है।[२०] इसी तथ्य को उल्लेखित करते हुए सी एम जोड ने लिखा है कि— "मानव जाति को भारत वासियों ने जो सबसे बड़ी चीज वरदान के रूप में दी है वह यह है कि भारतवासी हमेशा ही अनेक

जातियों के लोगों और अनेक प्रकार के विचारों के बीच समन्वय करने को तैयार रहे है।[२१]

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भी इस तथ्य की ओर इस प्रकार संकेत किया है कि— ईरानी और यूनानी लोग पार्शियन और बैक्टियन लोग साथियन और हूण लोग मुसलमानों से पहले आने वाले तुर्क और ईसा की प्रारंभिक सदियों में आने वाले ईसाई और यहूदी तथा पारसी ये सब एक के बाद एक भारत में आये और उनके आने से समाज में कुछ हल्की कपकपी सी महसूस हुई परन्तु आखिरकार वे सब के सब भारतीय संस्कृति के महासागर में विलीन हो गये।[२२]

भारतीय संस्कृति ने अपने इस लचीले एवं समन्वय समर्थक स्वभाव के कारण ही सभी कुछ पचा डाला। सबको अपने में समाहित कर दिया।

(६) चिन्तन की स्वतन्त्रता

किसी देश की संस्कृति का निर्माण उस देश के विचारकों के चिन्तन पर ही आधारित होता है। भारतीय संस्कृति में यह विशेषता पाई जाती है। विचार स्वातन्त्र्य के कारण भारत में श्रुति स्मृति बौद्ध जैन चार्वाक अद्वैत द्वैत विशिष्टाद्वैत शुद्धाद्वैत द्वैताद्वैत आदि कितने ही दर्शन एवं मत मतान्तरों का जन्म हुआ है। भारत में प्रत्येक व्यक्ति को सोचने और चिन्तन प्रणाली को प्रकट करने का अधिकार मिला हुआ था। यही कारण रहा कि यहाँ पर बहुत से धर्म दर्शन और सम्प्रदाय एक साथ फले फूले[२३] फिर भी उनकी चिन्तन की स्वतन्त्रता में बाहरी अवरोध उपस्थित नहीं किये गये फलतः यहाँ के मन्दिरों गिरजाघरों मस्जिदों और गुरुद्वारों के बीच शांतिपूर्ण सहअस्तित्व विद्यमान रह सका।

(७) कर्मप्रधानता

धर्म और आध्यात्मवाद से अभिभूत भारतीय संस्कृति में कर्मप्रधानता का गुण भी महत्वपूर्ण है। यहाँ भक्ति एवं ज्ञान के साथ कर्म को भी एक योग माना गया है। गीता में श्रीकृष्ण द्वारा दिया गया कर्मयोग का उपदेश सर्वश्रेष्ठ और अनुकरणीय माना जाता है।

गीता के इस उपदेश से प्रेरणा लेकर भारत का जनमानस अपने कर्म में अटूट विश्वास रखता चला आया है।[२४] और कर्म के प्रति जन जन का उत्साह कभी निर्बल न हो इसलिए बिना फल की लालसा के किए हुए कर्म को सर्वश्रेष्ठ माना गया है क्योंकि कर्म करते हुए भी बहुत बार इच्छित फल की प्राप्ति नहीं होती फिर भी निष्काम कर्म का एक प्रयोजन है एक आनन्द है क्योंकि उससे भी मनुष्य की सात्विक वृत्ति को बहुत सन्तोष और बल मिलता है तथा फल प्राप्ति के लिए कई बार किये जाने वाले दुष्कर्मों से वह अपने आपको बचा लेता है।

इस प्रकार मानव सत्कमा का पुण्यलाभ करता ह जा कि प्राय सभी धर्मा का एक महत्वपूर्ण तत्व माना गया ह ।

(८) मगलमयी उदार सस्कृति

भारताय सस्कृति का आदर्श (वसुधव कुटुम्बकम्" आर "सर्व भवन्तु सुखिन) लाकमगल एव मानव कल्याण का भावना ह । जीवनमात्र क कल्याण का कल्पना भारताय सस्कृति की अपना विशेषता ह । विभिन्न सामाजिक इकाइया विश्वासा परम्पराआ और राति रिवाजा का यहा एक साथ पनपना आर विकसित होना यहा की सस्कृति की उदारता का ही पुष्ट प्रमाण ह ।

अपना इन सास्कृतिक विशषताआ के कारण हा भारताय सस्कृति परिवर्तनशाल परिस्थितिया क अनुसार स्वय को ढालते हुए या या कहा जा सकता है कि विभिन्न विशेषताआ और अनेक प्रकार के विचारा के बाच समन्वय स्थापित कर उसे अपने मे आत्मसात करती हुई अधिक से अधिक समृद्ध हाती गई ह । जहाँ अन्य सस्कृतिया का भारताय समाज और सस्कृति पर प्रभाव पड़ा वही विश्व की अन्य सस्कृतिया भी भारतीय सस्कृति स प्रभावित हुई ह । भारताय सस्कृति न सभा विराधिया का स्वाकार किया फिर भी उसका मूलभूत विशपताएँ अपरिवर्तित हा रही । यह इस सस्कृति की विशालता आर शक्तिमत्ता का प्रतीक है जा कि समूच जनमानस का बहुत बड़ा सम्बल कहा जा सकता ह आर इसालिए यहा का सस्कृति का समझ बिना यहा क जन जीवन ओर उसकी सामाजिक विकास धारा को नहा समझा जा सकता ।

(ख) भारतीय सस्कृति के परिप्रेक्ष्य म राजस्थान के सास्कृतिक मूल्य

राजस्थान की सस्कृति म भारताय सस्कृति क हा मूल तत्व समाहित हे तथा भारताय सस्कृति की परम्परागत अनुकरणाय विशषताआ का निर्वाह इसम हुआ ह । भारतीय सस्कृति के विशिष्ट एव शास्त्रसम्मत शाश्वत आदर्श हा राजस्थान का सस्कृति के मूलाधार हं । इसालिए राजस्थान क सास्कृतिक मूल्य भारतीय सस्कृति से अलगाव लिय हुये नही बल्कि उसके पूरक ही दृष्टिगोचर होते हे । यहा का सामाजिक धार्मिक आर सास्कृतिक स्वरूप भारतीय सस्कृति से बहुत कुछ साम्यता रखत हुए भी स्थानीय विशिष्टताआ क सम्मिश्रण से उसके स्वय क कुछ सास्कृतिक मूल्य निर्धारित हुए जा उसका अपना निजी पहचान ह तथा व सस्कृति के मूल प्रवाह म उसकी मौलिकता को उद्घाटित करत हे ।

प्राचान इतिहास परम्परा रूढि आर आदर्श की समानता के कारण समस्त भारतवर्ष का एक हा सस्कृति ह । इसे विभिन्न जातिया समाजा वर्गा आर प्रदेशा के रूप में विभाजित नहा किया जा सकता ह फिर भा भारत जस विशाल दश के कतिपय भू भागो

का कुछ सास्कृतिक विशिष्टताएँ भी ह जो इस दश का सामूहिक प्रवृत्ति को पूर्णता प्रदान करती ह। जिस प्रकार एक गुलदस्ते मे विविध रग आर सुगन्ध क पुष्प अपनी विशेषताएँ रखते हुए भी उसकी सामूहिक सान्दय की वृद्धि करते ह उसा प्रकार क्षेत्राय सास्कृतिक विशिष्टताएँ भी इस दश की सामूहिक सस्कृति का गरिमा आर पूर्णता प्रदान करती ह।[२५]

भारतवर्ष म राजस्थानी सस्कृति का उसक महान् आदर्शो के कारण विशष श्रद्धा का दृष्टि से देखा गया ह। यही नही कर्नल टॉड[२६] जस विदशा न भा इस भव्य सस्कृति का मुक्तकण्ठ से प्रशसा की ह। राजस्थानी वाराख्याना म राजस्थानी सस्कृति मिलता ह जिनम वीरपूजा का भावना स्वातन्त्र्य प्रेम धरती प्रम मरणपर्व शरणागत रक्षा गारक्षा दानशालता त्याग धमानुष्ठान व तीर्थव्रत आचार-विचार आर राति नाति मुख्य ह।[२७]

शार्य एव गारव गाथाआ से गूजित राजस्थान की वीर भूमि पर वारपूजा की भावना जागृत होना स्वाभाविक ही ह। यही नही वीर पूजा राजस्थानी सस्कृति का प्रमुख विशषता कहा जा सकती ह क्योकि अधिकाश राजस्थानी साहित्य वार भावना स अनुप्राणित है। यहा युद्ध म पीठ दिखाकर भागना सबसे बडी कायरता समझी जाती था तथा युद्ध स पलायन करने की बजाय यहा के वार सम्मुख रण म प्रवृत्त हाकर मरना श्रयस्कर समझत थे। मरण को मगलमय पर्व[२७] का भाति मनाना यह राजस्थानी सस्कृति की एक प्रमुख विशेषता कहा जायगा।

युद्ध के दारान कुछ विशिष्ट नियमों जसे— स्त्री बालक तथा निहत्थे तथा साय हुए शत्रु पर वार करना आदि की अनुपालना करते हुए राजस्थानी वीर अपना मर्यादित परम्पराआ का रक्षार्थ प्राणात्सर्ग करते थे। मातृ भूमि की रक्षा स्वामिधर्म का निर्वाह शरणागत की रक्षा आर वचन पालन हेतु यहा के वीर अपने प्राणा की बाजी लगाकर भी इन शाश्वत आदशा की रक्षा करने को तत्पर रहते थे।

इस धरता के वीर सपूता क शार्य एव पराक्रम की काई सानी नही। वारत्वपूर्ण आवेश के परिणामस्वरूप सिर कटने पर भा शत्रुदल पर कहर ढाने वाल राजस्थानी वीरो की अप्रतिम शार्यगाथाएँ आज भी पाठको के दिल मे एक रोमाच उत्पन्न कर दती है। तोगा और नेवा आदि के कबन्ध युद्ध प्रसिद्ध ह। अपनी कुलमर्यादित आन गोरव ओर कीर्ति को अक्षुण्ण रखने वाले ऐसे वीराख्यान हिन्दुस्तान ही नही विश्व क अन्य देशो क इतिहास मे भी शायद ही देखने को मिलें।

यहा के वीरों म जहा वीरत्व और ओज चरम उत्कर्ष पर पाया जाता ह वहा उन्हाने दयालुता आर करुणा जैसी कोमल भावनाआ का भी पोषण अपने व्यक्तित्व मे किया ह। प्रतिशोध आर वीरत्व की धधकती आग की प्रचण्ड ज्वालाएँ प्रकट करने वाल इन ज्वालामुखियो (वीरा) क भीतर स जब दया का स्रोता फूटता तब वे उन्मुक्त भाव से

असहाय प्रताड़ित और आतंकित लोगों की सहायतार्थ अपना सर्वस्व लुटा देने में जरा भी सकोच नहीं करते थे। जब दान देने को उतारू होते या सरस्वती आराधक कवियों की ओजस्वी वाणी से प्रभावित होते तो लाखपसाव और करोडपसाव[२८] तक देते।

राजस्थान जितना वीर गाथाओं के लिए प्रसिद्ध है उतना ही चारित्रिक उज्ज्वलता और उदारता के उदाहरणों के लिए भी विख्यात है। मुगलकाल भारतीय संस्कृति और कलाओं के क्षेत्र में दो संस्कृतियों के समन्वय का काल रहा है। समन्वय की इस प्रक्रिया में राजस्थान का अपना योगदान है। यद्यपि राजस्थान ने सदा बाह्य आक्रान्ताओं का डटकर मुकाबला किया है परन्तु इस संघर्ष के दौरान सच्चे वीर पुरुषों के चारित्रिक उदारता आदि के गुण जिन विशिष्ट परिस्थितियों में प्रकट हुए हैं वे निश्चय ही न केवल हमारी संस्कृति अपितु मानव संस्कृति की मूल्यवान धरोहर है।[२९]

भारतीय संस्कृति के मूल प्रेरक तत्व धर्म का राजस्थान की संस्कृति पर अपरिमित प्रभाव कहा जायेगा क्योंकि धर्म यहाँ के समाज जीवन दर्शन और प्रत्येक सांस्कृतिक उपकरण में अपनी अपूर्व महत्ता के साथ स्थापित है। इसीलिए यहाँ की संस्कृति की अधिकांश विशेषताएं धर्म के द्वारा ही निर्दिष्ट एवं निर्देशित होती प्रतीत होती है। धर्म एक विकासशील तत्व के रूप में पुष्पित और पल्लवित होता रहा है और समसामयिक परिस्थितियों के अनुकूल उसमें महान् विभूतियों का प्रादुर्भाव होता रहा है जिससे अनेक मत मतान्तर और सम्प्रदाय यहाँ प्रकट हुए और उन्होंने यहाँ की जनता के चिन्तन और चारित्रिक बल को बहुत दूर तक प्रभावित किया। इन सम्प्रदायों में नाथ निम्बार्क वल्लभ रामस्नेही विश्नोई साध दसनामी सत्यनामी निरजनी सम्प्रदाय और दादू तथा कबीर पंथी प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

धार्मिक आस्था की आधारभूमि से प्रेरित होकर समय समय पर यहाँ कलात्मक मन्दिरों व मूर्तियों का निर्माण हुआ है। अनेक अवतारों और सन्तपुरुषों के चित्र स्थानीय शैलियों में बने है। विभिन्न राग रागनियों में भक्ति के पद पीढ़ी दर पीढ़ी गाये गये है और बहुमुखी सौन्दर्य चेतना के प्रतीक अनेक गीत कथाएँ आदि भी प्रचारित होती रही। जीवन की संघर्षमयी परिस्थितियों में भी सुन्दर कलात्मक भवनों का निर्माण रहन सहन की संस्कार सम्पन्न रुचि और सामाजिक आदान प्रदान के उच्च सिद्धान्तों का निर्माण राजस्थान में बड़े पैमाने पर होता रहा है जिनके अवशेष आज भी शोधकर्ताओं व पर्यटकों के लिए आकर्षण के बिन्दु बने हुए है।

भारतीय संस्कृति की भांति ही यहाँ की संस्कृति एक धर्मप्रधान संस्कृति होते हुए भी अपनी मौलिक उद्भावनाओं के कारण अपना वैशिष्ट्य रखती है। धर्म की जड़ यहाँ निश्चित रूप से बहुत गहरी तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है। इसी कारण राजस्थान की सांस्कृतिक विशेषताएं धर्म में पगी हुई दृष्टिगोचर होती है जिस पर अध्यात्म और

दशन की भा अमिट छाप ह । यहा का सस्कृति म धर्म अध्यात्म आर दर्शन जिम स-जना आर अनुकूलन क साथ अपनाया गया तथा उनक आदशा का यहा सतत अचना हा नहा की गई जावन क व्यवहार म स्थान दकर उस यथार्थ स्वरूप प्रदान किया । इन्हा आदशा न आगे चलकर यहा का सास्कृतिक विशपताआ का प्रतिरूप धारण कर लिया । अत यह कहा जा सकता ह कि धर्म अध्यात्म आर दर्शन की राजस्थानी सस्कृति म महत्वपूर्ण भूमिका रहा ह । इसी क फलस्वरूप यहा उच्च आदशा का महती प्रतिष्ठापना हा सका तथा य आदर्श हा यहा का सस्कृति क मल आर प्ररक तत्व रह ।

राजस्थान की सस्कृति क निर्माण म सास्कृतिक आदशा का निवाह कर यहा के वारा न जहा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई वहा यहा की स्त्रिया का यागदान भी कम महत्वपूर्ण नहा कहा जा सकता । यहा की नारिया की शक्ति प्रम आर ममता के स्वरूप बजोड़ ही कह जायगे क्याकि इनम वारत्व का सस्कार भूमि पुरुषा का तरह हा रही ह बल्कि यह कहना अधिक उपयुक्त हागा कि यहा की वीरत्वमयी सस्कृति के सस्कारा का पाषित करने वाला शक्ति नारी म निहित रही ह ।

राजस्थान की सस्कृति क निर्माण एव इसक सास्कृतिक आदर्शा क निर्वाह म राजपूत जाति का महत्वपूर्ण योगदान माना जायेगा । इसके साथ ही यहा के समाज क प्रत्येक वर्ग आर प्रत्यक व्यक्ति का सहयाग कम महत्वपूर्ण नहा । समाज के प्रत्येक घटक के समर्पित जीवन (सास्कृतिक आदर्शा के प्रति) क अभाव म राजस्थान का सस्कृति का विस्तृत विकास विविध आयामा म होना सभव नहा था आर न ही यहा की सस्कृति के इतन भव्य आर शाश्वत मूल्या और आदशा का स्थापना होती ।

राजस्थान का अपन सास्कृतिक मूल्या के कारण विश्व म गारवपूण स्थान ह आर ये शाश्वत सास्कृतिक [illegible] का जीवनधारा म सतत प्रवाह का सदव नवीन सदेश आर प्रेरणा प्रदान करते रहे ह । डा० आशीर्वादालाल श्रीवास्तव न भी इस तथ्य की निम्न शब्दा म पुष्टि का ह–

> Rajasthan i rich in historical sourcematerial and richer still in the raw materials for a history of society Art and culture [30]

इस विवचन से राजस्थान का सास्कृतिक गरिमा का सुस्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता हे आर इस गरिमा को बढान व सवारन मे यहा क विभिन्न राजपूत राजवशा के द्वारा स्थापित छाट बड राज्या का यागदान रहा ह तथा उन्होंने अपनी कुछ स्थानीय विशपताए भी इसम मिलाकर यहा की सास्कृतिक खूबा को जहा जीवन्त बनाया ह वही अपना स्थानाय रगाना (लाकल आर्ट) स उस अलकृत भा किया ह । पश्चिमा राजस्थान क एक प्रमुख बड राज्य मारवाड का इसम विशिष्ट यागदान रहा ह ।

(ग) मध्यकालीन मारवाड और उसकी सास्कृतिक चेतना यहा के इतिहास क परिप्रेक्ष्य मे

मध्यकालीन भारताय इतिहास पर दृष्टिपात करने स यह दृष्टिगाचर होता ह कि दिल्ला सल्तनत के पतन के पश्चात् यहा मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई । मुगल साम्राज के सस्थापक बाबर ने जिस समय यहा आक्रमण किया उस समय भारत की राजनेति अवस्था बहुत हा दुर्बल आर अस्थिर था । भारत छोटे छाट स्थानाय राज्यो म बट गर था जो आपसी सघर्ष आर आन्तरिक क्लह मे बुरी तरह उलझ हुए थे । राजस्थान म उ समय मेवाड मारवाड़ आमर, बून्दा आदि अपन आपको स्वतत्र राज्य के रूप म स्थापि कर चुके थे तथा प्रत्येक राज्य अपनी शक्ति क सवर्द्धन म लगा हुआ था ।[३१] जिस प्रक भारताय इतिहास मे पृथ्वाराज चाहान के पश्चात् दिल्ला पर काई शक्तिशाली हि (भारतीय) सम्राट नहा बन पाया उसी प्रकार राजस्थान क मध्य कालीन राजपूत शासव म मवाड क महाराणा सग्रामसिह (राणा सागा) के पश्चात् कोई भी राजपूत शासक य की राजपूत शक्ति का सगठित करन म सफल नहा हो सका । सन् १५२७ क खानु के युद्ध म राणा सागा का पराजय क साथ हा राजपूत शक्ति आर सगठन पर ए वज्राघात हाता ह कि उसके पश्चात् दिल्ला पर कामयाबा हासिल कर सक एसी राजपू शक्ति क उभार की सभावनाए एकबारगी नि शष हा गया ।

मध्ययुगान राजस्थान म मुख्य रूप स तीन राज्य प्रमुख थ मवाड मारवाड़ अ आमर (या जयपुर) । मवाड़ म गुहिलात मार ाड म राठाड आर आमर में कच्छवा वश के शासको का आधिपत्य था ।[३२] मारवाड़ म तरहवा शताब्दी म[३३] राव सीहा पाला के उत्तर पश्चिम म एक छोटे भाग पर अपना अधिकार कर राठाड़ राज्य की स्थाप का । नव सस्थापित इस राज्य का विस्तार सीहा क उत्तराधिकारी करते रहे लकिन इ राज्य का शक्ति और महतव प्रदान करने का श्रेय राव चूडा को जाता है ।[३४] डा वी०एस० भार्गव के अनुसार मारवाड़ की गद्दी पर चूडा क बठन के साथ राठा महत्ता ने एक नये युग मे प्रवेश किया । चडा क समय मडोर मारवाड की राजधा थी । इसके पश्चात् राव जाधा ने १२ मई १४५९ म जाधपुर दुर्ग की नीव डाली अ अपने नाम पर जोधपुर नगर बसाकर मडार क स्थान पर उसे अपनी राजधानी बनाया ।[३] तब स मारवाड़ राज्य जाधपुर राज्य क नाम स भी जाना जान लगा तथा राजनैति उथल पुथल और अनेक उतार चढ़ावा के बावजूद देश क आजाद हान तक इस राठाड़ वश का हा राज्य कायम रहा ।

सालहवा शताब्दी म यहा के शासक शक्तिशाली थ । राव गागा राव मालदव अ राव चन्द्रसन अपनी स्वतत्र सत्ता बनाय रखन क पक्ष म थ अत उन्हान मुगल सम्रा का सग विराध किया एव उनस निरन्तर सघर्ष करते रह । विवच्यकाल (१६०० १८०

ई० सन्) म राजा सूरसिंह राजा गजसिंह (प्रथम) महाराजा जसवन्त सिंह (प्रथम) महाराजा अजीतसिंह महाराजा अभयसिंह महाराजा रामसिंह महाराजा बखतसिंह महाराजा विजयसिंह आर महाराजा भीमसिंह मारवाड़ के क्रमश शासक बन।[३६]

राव चन्द्रसन क पश्चात् विरोध का युग समाप्त हाता ह तथा मोटा राजा उदयसिंह स मुगल साम्राज्य के साथ सहयाग करन की नाति प्रारम्भ होती ह। इस सहयोग क युग मे सवाई राजा सूरसिंह राजा गजसिंह आर महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम का उल्लेखनाय यागदान रहा। मुगल सम्राटा का सहयोग करन क उपलक्ष्य म उन्ह उच्च मनसब आर जागीर प्राप्त हुई। जसवन्तसिंह की मृत्यु क पश्चात् मुगलो से सशस्त्र सघर्ष का जा युग आरम्भ हाता हे उसका श्रीगणेश दुर्गादास राठोड़ ने किया। मारवाड़ क इतिहास म दुर्गादास का महत्व इसलिए उल्लेखनीय कहा जायेगा कि उसने अजीतसिंह का रक्षा की तथा मारवाड़ राज्य को मुगल साम्राज्य का स्थायी अग बनने से बचाया।[३७]

महाराजा अजातसिंह के राज्यकाल मे दिल्ली के मुगलशासको मे अपूर्व उथल पुथल मची रही जिसम जोधपुर के अजीतसिंह आर जयपुर के सवाई जयसिंह की अहम् भूमिका रही और इस काल में अजीतसिंह ने अपने राजनतिक वर्चस्व का खुलकर परिचय दिया।

महाराजा अभयसिंह की मृत्यु (१७४९ ई०) के पश्चात् मारवाड़ क शासका के मुगल बादशाहा के साथ सम्बन्ध क्षीण हा जाते है। "सन् १७४९ के बाद मारवाड़ क शासको का दिल्ली के सिंहासन पर आरूढ़ मुगल बादशाहा क साथ सम्बन्ध नाममात्र का था।—पानीपत के प्रथम युद्ध क साथ मारवाड़ के राठाड़ा के मुगल सम्राटो के साथ सम्बन्ध प्रारम्भ हुए थे और पानापत के तृताय युद्ध क साथ सम्बन्ध समाप्त हा गये।"[३८]

इस प्रकार मारवाड़ क राठाड़ शासका ने सोलहवी शदा क लगभग ८ दशका तक मुस्लिम आक्रमणकारिया स सघर्ष कर मारवाड़ की प्रादेशिक स्वतत्रता का बनाये रखन का प्रयल किया। उसक पश्चात् विरोध की नीति त्यागकर सहयाग की नाति का अनुसरण कर यहा के शासकों ने अपना प्रतिष्ठा बढ़ाई। अपन कुछ व्यक्तिगत मतभेदा के बावजूद भी वे मुगलां क अधानस्थ रहे तथा उनक साथ ववाहिक सम्बन्ध भा स्थापित किए। इस काल क शासका को अपना जागीर (वतन जागार) का स्वामित्व तथा उच्च मनसब प्राप्त हाने के उपरान्त भी जाधपुर राज्य स अधिकाश समय तक प्राय बाहर ही रहना पड़ा जिससे यहा की प्रजा के साथ उनका सीधा सम्पर्क शन शन शिथिल हाता गया तथा यहा के प्रशासन म नौकरशाही (विशेषकर मुहता, भडारा व पचोली जाति क राज्याधिकारिया) का बालबाला अधिक बढ़ गया। इतना हाने क पश्चात् भा यहा क शासक बहुसख्यक राज्यवासिया के मान्य प्रतिनिधि क रूप म स्वाकार किय जात रह तथा जनता का सहयाग व समथन उनका प्राप्त होता रहा।

विवेच्यकाल में यहाँ के शासकों के राज्य विस्तार की गतिविधियों के साथ ही मारवाड़ की भौगोलिक सीमाओं का विस्तार भी हुआ । राज्य सम्पर्क के कारण खासकर मुगल सभ्यता एवं संस्कृति का यहाँ कई रूपों में स्वीकार किया गया तथा उसके परिणामस्वरूप यहाँ का राजनीतिक प्रशासनिक और उच्च तथा राजवर्गीय सामाजिक जीवन कुछ मायने में ज्यादा प्रभावित हुआ । फिर भी मारवाड़ (विशेषकर यहाँ का सामान्य जन जीवन) की सांस्कृतिक चेतना प्रत्यक्ष रूप में अप्रभावित ही रही । मुगल प्रभुत्व के प्रबल झंझावात में भी यहाँ की सांस्कृतिक चेतना अपने मान्य आदर्शों के अनुरूप यहाँ के निवासियों को स्वाभाविक व सहज जीवन मूल्यों के निर्वाह हेतु प्रेरित करती रही ।

मारवाड़ की संस्कृति के स्वरूप का निर्माण करने वाली बहुत सी प्रवृत्तियाँ रही हैं जिनसे यहाँ की सांस्कृतिक चेतना का प्रवाह चिरन्तन रहा और इस चेतना के आधारभूत प्रभाव के फलस्वरूप उन प्रवृत्तियों को सदैव सम्बल एवं नवप्रेरणा प्राप्त होती रही । इस नवनवोन्मेषकारी सांस्कृतिक चेतना के कारण ही यहाँ का इतिहास इतना गौरवपूर्ण बन सका और इस गरिमामय ऐतिहासिक धारा के परिणामस्वरूप यहाँ की सांस्कृतिक चेतना को वह जीवटता मिली कि वह आज भी उतनी ही आकर्षक कही जा सकती है ।

मध्यकालीन मारवाड़ के इतिहास ने यहाँ की सांस्कृतिक चेतना में जो पहले से यहाँ के ऐतिहासिक सामाजिक और धार्मिक समन्वय में अपने स्वरूप को सजाये हुए था । उसमें अपने समय की कुछ नवीन प्रवृत्तियों के समावेश से स्वरूप में निखार आया एवं विविध विशेषताओं से उसने अपने आपको परिपूर्ण बनाया । इन विशेषताओं के कारण यहाँ की संस्कृति राजस्थान की संस्कृति में एक विशेष पहचान देती है तथा यहाँ के इतिहास को पूर्णता में समझने का एक अनिवार्य साधन है ।

मध्यकालीन मारवाड़ के परिप्रेक्ष्य में जब हम यहाँ की सांस्कृतिक चेतना के तत्वों को खोजते हैं तो हम वे कई रूपों (प्रवृत्तियों) में समायोजित रूप दृष्टिगोचर होते हैं । इनमें से कुछ को निम्नप्रकार से अभिव्यक्त किया जा सकता है ।

(१) समन्वय की प्रवृत्ति और उदार दृष्टिकोण

भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी विशेषता ने यहाँ की सांस्कृतिक चेतना को प्रभावित किया । इसी कारण यहाँ के अधिकांश शासक समन्वयवादी और उदार दृष्टिकोण वाले हुए । वे जातिगत भेदभावों से ऊपर थे इसलिए उन्होंने अपने कार्यकलापों में मानवतावादी स्तर का भी ख्याल रखा ।

विवेच्यकाल की संस्कृति इसलिए भी विशेष रूप से उल्लेखनीय कहा जायगा कि इस काल में दो भिन्न संस्कृतियों का पारस्परिक घनिष्ट सम्पर्क एवं समन्वय हुआ ।

साथ ही उग्रता एव हृदय की विशालता की घनाभूत भावोद्रेकता से यहा के सामाजिक जीवन म मानवतावादी दृष्टिकोण का विस्तार एव विकास ही नही हुआ उस दृढ़ता भी मिला। य सब बात उस सक्रमण युग म यहा की सास्कृतिक थाती को सुरक्षित रखन एव अपने मौलिक और वशिष्ट्ययुक्त स्वरूप को विकसित करने म भी सहायक सिद्ध हुई।

(२) मर्यादा पालन

मर्यादा को यहा बहुत महत्व दिया गया। मर्यादा की रक्षा म प्राण न्योछावर करने वालो को दवो की भाति पूज्य समझा जाता था एव उनके कृत्यो का बखान व यशोगान करत हुए लोग उनके प्रति श्रद्धावनत भाव से भावपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करना अपना परम कर्तव्य समझते थे।

सत्य का जीवन म निर्वाह करना यहा के समाज मे एक मान्य आदर्श माना जाता था। कठिन और विपरीत समय मे भी इन विशिष्ट मर्यादा का पालन करना अनुकरणीय और प्रशसनीय माना जाता साथ ही यह प्रवृत्ति यहा के जनमानस क डिगमगाते आत्मबल म एक नवीन चेतना और प्रेरणा प्रदान करन वाली सिद्ध हुई।[३९]

गो ब्राह्मण नारी धर्म और भूमि की रक्षा इत्यादि यहा की सस्कृति की प्रमुख विशेषता कही जा सकती ह। यहा की सस्कृति की इस मान्य मर्यादाओ का उल्लघन करने वाल का अपमान होता और समाज म उसे तिरष्कृत समझा जाता चाहे वह कितना ही बडा या सक्षम व्यक्ति क्या न रहा हो। मर्यादाभग होने की स्थिति म उसे सामाजिक दृष्टि से हीन समझा जाता था।

अपन धर्म और मर्यादा की रक्षा करने वाले स्वाभिमानी वीरो का यशोगान यहा की बातो और ख्यातो म सर्वत्र वर्णित ह। केसरीसिंह जोधा जो मुगल सम्राट शाहजहा के दरबार मे एक हजारी मनसबदार था जब तत्कालीन बख्शी सलावत खा न जब बादशाह के साथ अटक[४०] पार काबुल जाने का हुक्म दिया तो इस आदेश को केसरीसिंह ने मर्यादा विरुद्ध मानकर उसे स्वीकार नही किया भले ही इस मर्यादा की पालना हेतु उसे अपना शाही मनसब ही क्या न त्यागना पड़ा हो।[४१] इस एक घटना या उदाहरण से यह जाना जा सकता हे कि यहा क समाज में मर्यादा पालन का कितना महत्व था तथा कितनी दृढ़ता से उसका पालन किया जाता रहा।

(३) वीर भावना एव स्वाभिमान

यहा की सस्कृति में वीर भावना एव स्वाभिमान का रग इतना गहरा हे कि उसका प्रभाव यहा की एतिहासिक घटनाओ और साहित्य दोनो मे पर्याप्त रूप स परिलक्षित होता है। मारवाड क स्वाभिमानी वीरो एव उनकी वीर भावना की उत्कटता के असख्य

विवेच्यकाल म यहा के शासको के वश व व्यक्तित्व को ख्याति तो बढी ही साथ ही मारवाड की भौगोलिक सीमाओ का विस्तार भी हुआ तथा बाह्य सम्पर्क के कारण खासकर मुगल सभ्यता एव सस्कृति को बात यहा कई रूपो म स्वीकार की गई तथा उसके परिणामस्वरूप यहा का राजनैतिक प्रशासनिक और उच्च तथा राजवर्गीय सामाजिक जीवन कुछ मायन म ज्यादा प्रभावित हुआ। फिर भी मारवाड (विशेषकर यहा का सामान्य जन जीवन) का सास्कृतिक चेतना प्रत्यक्ष रूप स अप्रभावित ही रहा। मुगल प्रभुत्व के प्रबल झझावात म भी यहा की सास्कृतिक चेतना अपने मान्य आदर्शो के अनुरूप यहा के निवासियोको स्वाभाविक व सहज जीवन मूल्यो के निर्वाह हेतु प्रेरित करता रहा।

मारवाड की सस्कृति के स्वरूप का निर्माण करने वाली बहुत सी प्रवृत्तिया रही है जिनस यहा की सास्कृतिक चेतना का प्रवाह चिरन्तन रहा और इस चेतना के आधारभूत प्रभाव के फलस्वरूप उन प्रवृत्तियो को सत्व सम्बल एव नवप्रेरणा प्राप्त होती रही। इस नवनवोन्मेषशाली सास्कृतिक चेतना के कारण ही यहा का इतिहास इतना गौरवपूर्ण बन सका और इस गरिमामय एतिहासिक थातो के परिणामस्वरूप यहा की सास्कृतिक चेतना को वह जीवटता मिली कि वह आज भी उतनी ही आकर्षक कही जा सकती है।

मध्यकालीन मारवाड के इतिहास ने यहा की सास्कृतिक चेतना म जो पहले स यहा के एतिहासिक सामाजिक और धार्मिक समन्वय से अपने स्वरूप को सजाये हुये था। उसम अपने समय की कुछ नवीन प्रवृत्तियो के समावेश स स्वरूप म निखार आया एव विविध विशेषताओ स उसने अपने आपको परिपूर्ण बनाया। इन विशेषताओ के कारण यहा की सस्कृति राजस्थान की सस्कृति म एक विशेष पहचान देती है तथा यहा के इतिहास की पूर्णता म समझने का एक अनिवार्य साधन है।

मध्यकालीन मारवाड के परिप्रेक्ष्य म जब हम यहा की सास्कृतिक चेतना के तत्वो को खोजते है तो हम वे कई रूपो (प्रवृत्तियो) म समायोजित हुए दृष्टिगोचर होते है। इनमे से कुछ को निम्नप्रकार से अभिव्यक्त किया जा सकता है।

(१) समन्वय की प्रवृत्ति और उदार दृष्टिकोण

भारतीय सस्कृति की समन्वयवादी विशेषता ने यहा की सास्कृतिक चेतना को प्रभावित किया। इसी कारण यहा के अधिकाश शासक समन्वयवादी और उदार दृष्टिकोण वाले हुए। वे जातिगत भेदभावो स ऊपर थे इसलिए उन्होने अपने कार्यकलापो म मानवतावादी स्तर का भी ख्याल रखा।

विवेच्यकाल की सस्कृति इसलिए भी विशेष रूप स उल्लेखनीय कही जायगी कि इस काल म भिन्न भिन्न सस्कृतियो का पारस्परिक घनिष्ठ सम्पर्क एव समन्वय हुआ।

साथ ही उदारता एव हृदय का विशालता की घनाभत भावाद्रकता से यहा के सामाजिक जावन म मानवतावादा दृष्टिकोण का विस्तार एव विकास ही नही हुआ उस दृढ़ता भा मिला । य सब बात उस सक्रमण युग म यहा की सास्कृतिक थाती को सुरक्षित रखन एव अपन मालिक आर वैशिष्ट्ययुक्त स्वरूप को विकसित करने म भा सहायक सिद्ध हुई ।

(२) मर्यादा पालन

मर्यादा को यहा बहुत महत्व दिया गया । मर्यादा की रक्षा म प्राण न्याछावर करने वाला को दवो की भाति पूज्य समझा जाता था एव उनके कृत्यो का बखान व यशोगान करत हुए लाग उनक प्रति श्रद्धावनत भाव से भावपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करना अपना परम कर्तव्य समझते थे ।

सत्य का जीवन म निर्वाह करना यहा के समाज म एक मान्य आदर्श माना जाता था । कठिन आर विपरात समय म भी इन विशिष्ट मर्यादा का पालन करना अनुकरणीय आर प्रशसनाय माना जाता साथ ही यह प्रवृत्ति यहा क जनमानस के डिगमगाते आत्मबल मे एक नवान चेतना आर प्रेरणा प्रदान करन वाला सिद्ध हुई ।[३९]

गा ब्राह्मण नारा धर्म और भूमि की रक्षा इत्यादि यहा की सस्कृति का प्रमुख विशषता कही जा सकता ह । यहा की सस्कृति की इस मान्य मर्यादाआ का उल्लघन करने वाल का अपमान होता और समाज म उसे तिरष्कृत समझा जाता चाहे वह कितना हा बडा या सक्षम व्यक्ति क्यो न रहा हा । मर्यादाभग हान की स्थिति म उसे सामाजिक दृष्टि से हीन समझा जाता था ।

अपन धर्म आर मर्यादा का रक्षा करने वाले स्वाभिमानी वारा का यशोगान यहा की बातो और ख्याता मे सर्वत्र वर्णित ह । केसरीसिंह जाधा जो मुगल सम्राट शाहजहा के दरबार मे एक हजारी मनसबदार था तब तत्कालीन बख्शी सलाबत खा ने जब बादशाह के साथ अटक [४०] पार काबुल जाने का हुक्म दिया ता इस आदश का केसरीसिंह न मर्यादा विरुद्ध मानकर उसे स्वाकार नहा किया भले हा इस मर्यादा की पालना हेतु उस अपना शाही मनसब ही क्या न त्यागना पड़ा हो ।[४१] इस एक घटना या उदाहरण से यह जाना जा सकता ह कि यहा क समाज में मर्यादा पालन का कितना महत्व था तथा कितनी दृढ़ता स उसका पालन किया जाता रहा ।

(३) वीर भावना एव स्वाभिमान

यहा का सस्कृति म वीर भावना एव स्वाभिमान का रग इतना गहरा है कि उसका प्रभाव यहा का एतिहासिक घटनाओ आर साहित्य लेना म पर्याप्त रूप से परिलक्षित हाता ह । मारवाड़ के स्वाभिमानी वीरो एव उनकी वीर भावना की उत्कटता क असख्य

प्रसग इतिहास म मिलते है। इसस प्रकट हाता ह कि यहा क समाज म स्वाभिमाना चरित्र एव वारत्व को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता था। इसालिए इसका गरिमा स यहा का एतिहासिक एव साहित्यिक पक्ष हा नहा सम्पूण सास्कृतिक परिवेश भा उद्वलित आर अनुप्राणित हुआ।

यहा क वारा म युद्ध का उन्माद विशष रूप स देखन का मिलता ह। युद्भूमि म प्राणोत्सर्ग करन का चाह यहा क वारा का एक बड़ा कामना हुआ करता था। शरशाह सूरा आर मालदव क कुछ प्रमुख सरदारा क बाच हुए इतिहासप्रसिद्ध गिरा सुमल क युद्ध म प्राणात्सग करन क अवसर स वचित रहन का दुख आर पश्चाताप जसा भरवदासात[62] का आजावन सालता रहा।[63]

अमरसिंह राठाड जस साहसा आर स्वाभिमाना वार का गारव गाथा का आख्यान इतिहास प्रसिद्ध ह। अमरसिह राठाड़ (वि स १६९५ १७०१) नागार का राव तथा जोधपुर के राजा गजसिह प्रथम का ज्यष्ठ पुत्र था। जहागार आर शाहजहा क काल म वह मुगल मनसबदार रहा। ख्याता म एसा उल्लख मिलता ह कि शाहजहा क एक प्रमुख दरबारा सलावत खा न जब अभद्र व्यवहार किया ता उस वार का स्वाभिमान इस सहन नही कर सका तथा भर दरबार म हा उसने सलावत खा का काम तमाम कर दिया।[64] आर बाद म स्वय भा लड़त हुआ वि स १७०१ श्रावण सुदि २ का वारगति को प्राप्त हुआ।[65]

राजस्थान का सस्कृति क विशिष्ट तत्वा म स्वत्व रक्षा का भाव प्रमुख रूप स पाया जाता ह जिसन न कवल राजस्थान का सस्कृति का अपितु मध्यकालीन भारताय सस्कृति का जावित रखन म भा बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की ह। इस स्वत्व रक्षा के भाव का प्रमाण मारवाड़ का मध्यकालान सस्कृति म भा प्रमुख रूप स मिलता ह। यह यहा के वीरा आर वीरागनाआ क वारत्व आर उनका स्वाभिमाना प्रवृत्ति का हा द्योतक है। इस प्रवृत्ति न यहा क निवासिया का खासकर वारपुरुषा का सघर्षमय जीवन की प्रेरणा प्रदान की जिसस आन वाली पाढ़िया न युगा तक इस परम्परा का पालन किया आर अपना सम्पूर्ण शक्ति के साथ इस मुल्क पर आन वाले हर सकट का प्रतिराध किया।

(४) स्वातन्त्र्य प्रेम एव धरती की रक्षा

इस धरती के वीर सपूता न अपनी मातृभूमि की रक्षा क लिए जा निरन्तर सघर्ष किय वह इतिहास म अपना विशिष्ट महत्व रखत ह। मारवाड़ के स्वाभिमानी वीर सपूता के धरती प्रेम एव स्वातन्त्र्य प्रम न उन्हे हर अवसर पर बलिदान क लिए तत्पर रहने का प्रेरणा प्रदान की। मृत्यु का वा व मगलपर्व की भाति मानत थे इसीलिए मरण को त्यौहार के सदृश्य स्वाकार कर इस माक का उत्साह व उत्सुकता से प्रतीक्षा करते। स्वातन्त्र्य प्रेम क लिए प्राणा की तनिक भा परवाह न करना तो यहा क वार बचपन स हा सीख जाते

क्याकि उन्ह ऐस सस्कार पारिवारिक वातावरण से मिल जाते थे और जिमे इस प्रकार से प्रारभिक अवस्था म हा सस्कारित वातावरण मिले उन्ह अपने जीवन स बढ़कर प्राणोत्सर्ग की अभिलाषा अधिक प्रिय आर श्रेष्ठ क्यो न महसूस हा । इसी भावना स यहा सघर्ष का एक दार्घकालीन परम्परा विकसित हो सका ।

सघर्ष का इस बेजोड परम्परा न यहा के निवासियो को सदा बलिदान और अपनी धरित्रा की रक्षा हेतु प्रेरित किया । इसी कारण धरती से बद्धमूलता की कई कहावत दोहे आर गीत आज भा यहा के लोक समाज मे प्रचलित ह [४६] जो यहा के स्वातन्त्र्य प्रेम आर धरती प्रेम का बडे ही प्रभावा ढग से उजागर करती ह ।

इसके अतिरिक्त यहा का ख्याता म भी ऐसे अनेक उदाहरण मिलते ह जिसम यह उल्लेख किया गया है कि यहा के वीर धरती की रक्षा क लिए मर मिट पर पीछ नहा हट । राव मालदेव पर जब शेरशाह ने वि स १६०० (१५४३ ई) म चढाई की आर गिरी सुमल क युद्ध क मार्च स मालदेव ने बिना लड़ हा जव वहा से प्रस्थान कर दिया क्याकि शेरशाह ने मालदव के सरदारो के नाम जाली पत्र लिखकर जा षडयन्त्र रचा उसस मालदेव को अपने सरदारा पर सदह उत्पन्न हो गया था । [४७] मालदव के प्रयाण क बावजूद उसक सरदारा ने बिना युद्ध किय ही वापिस लोटने की बजाय अपनी धरती का रक्षार्थ सघर्ष करके मर मिटने का दृढ़ निश्चय किया और जेता कूपा आदि ने यह घोषणा का कि - "यदि राव जा जाते है ता भल जाय । हम अपनी भूमि को छोडकर कभा नहा हटग । क्याकि यह जमान केवल आप द्वारा जीता हुई नही ह । हमार पूर्वजा द्वारा भी विजित का गइ ह अत यहा से हटना हम किसी प्रकार स्वीकार्य नही हो सकता । [४८] जोधपुर राज्य की ख्यात तथा अन्य ख्याता म भा उक्त घटना प्रसग का उल्लेख हुआ है । [४९] इस युद्ध म जेता कूपा सहित मालदेव क कई स्वाभिमानी वीर भयकर युद्ध करत हुए वीरगति का प्राप्त हुए । उनका यह बलिदान आर धरती प्रेम आज भा यहा के लाकजावन म अमर है । [५०]

(५) क्षमा एव शरणागतवत्सलता

क्षमा वीरा का भूषण माना गया ह । यहा के वीर सपूता क व्यक्तित्व का निखारने म क्षमा और उनकी शरणागत वत्सलता ने भा महत्वपूण योगदान दिया । क्षमा राजस्थान क क्षत्रिय वीरा का एक स्वाभाविक गुण रहा ह । इस गुण स यहा का वीरत्व आर भी गारवान्वित हुआ तथा सास्कृतिक चेतना दैदीप्यमान हुई । अपना का ही नहा शत्रु को भी क्षमा याचना करने पर क्षमा कर देना यहा नैतिक कर्तव्य समझा जाता था । इसक कई उदाहरण ख्याता आर साहित्यिक ग्राता म पाय जात हैं । मध्यकालीन मारवाड़ क क्षत्रिय वीरा न अपन युग म इस परम्परा का भा निर्वाह किया ।

क्षमा की भाति शरणागतवत्सलता का भी यहा की सास्कृतिक चेतना का एक महत्वपूर्ण तत्व कहा जा सकता है। यहा के शासको की शरणागतवत्सलता प्रिय रही तथा मध्यकालीन मारवाड़ म भी यह परम्परा पोषित होती रही। उस युग म मारवाड़ के शासक ही नही यहा के जागीरदार तथा साधारण स्तर के वीर पुरुष भी इस परम्परा का पालन करने म गौरव का अनुभव करते थे। इसके लिए वे बड़े से बड़ा सकट व जोखिम झेलने को भी तत्पर रहते थे। मुगल सम्राट अकबर जैसे शक्तिशाली शासक के गुलाम सफदरदान व उसके परिवार के सदस्यो को (जिन पर अकबर किसी कारणवश कुपित हो गया) मेड़ताधिपति जयमल मेड़तिया ने शरण दी।[५१] इसके परिवार को नागौर से मेड़ता तक निरापद लाने हेतु जयमल मेड़तिया का पुत्र सादूल मेड़तिया बादशाही डाक चौकी के सिपाहियो से लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। इतना ही नही इस शरण की बदौलत जयमल को अन्तत अपने पैतृक राज्य मेड़ता से भी हाथ धोना पड़ा और मेवाड़ म जाकर महाराणा से बदनोर की जागीर प्राप्त की। शरणागतवत्सलता के लिए उसने हर सकट स्वीकार किया। पैतृक राज्य त्यागा परन्तु शरणागतवत्सलता की परम्परा का परित्याग नही किया।

इसी भाति दुर्गादास राठौड़ ने औरगजेब के पौत्र और पौत्री बुलन्द अख्तर और सुफीयतुन्निसा को आश्रय दिया।[५२] उनके लालन पालन की समुचित व्यवस्था की और उचित समय पर उन्हे औरगजेब को सौपा।[५३] यही नही कवि कलश[५४] के परिवार को भी दुर्गादास राठौड़ ने आश्रय देकर उनके भरण पोषण तथा रक्षा की समुचित व्यवस्था की। इस प्रकार यहा के वीरो की शरणागतवत्सलता बड़ी ही अनुपम रही है। प रामकर्ण आसोपा[५४] ने भी इस बात को स्वीकार करते हुए लिखा है कि - शरणागतवत्सल राजपूत जाति अपने आश्रय में आए हुए को प्राण रहते उसके शत्रु के अधीन नही करती।[५५]

अपने शरण म आये व्यक्तियो क्या पशु पक्षियों की रक्षा करने की जो वैदिक काल से परम्परा रही है उस सास्कृतिक परम्परा के निर्वाह के कुछ उदाहरण भी मध्यकालीन मारवाड म देखने को मिलते है। नीमाज ठाकुर जगराम सिंह विजयरामोत (वि स १६९१ १७६७) औरगजेब के काल म दिल्ली स्थित चामू ठाकुर के डेरे पर जब वे गये हुए थे तब डेरे म तीर से घायल हुआ मोर वहा आ गिरा। उसे लेने हेतु उसका शिकारी जो एक शाही अमीर था आया तब जगरामसिंह ने कहा शिकार तुम्हारा है मगर हमारे डेरे में आने से हमारा शरणागत हो चुका है अत तुम्हे मोर नही दिया जा सकता। इस बात की अवहेलना करते हुए उस शाही अमीर ने जब जबरन मोर लेने को हाथ बढ़ाया तो जगरामसिह ने तत्काल तलवार के वार से उसका हाथ काट डाला। परिणामस्वरूप जगरामसिंह के विरुद्ध कमरदी खा के नेतृत्व म शाही सेना भेजी गई।

इस प्रकार यहा का क्षत्रिय जाति क सस्कारा म यह गुण किसी न किसी रूप म इम काल म विद्यमान रहा ह[५६]

(६) दानशीलता

यहा के शासका आर जागारदारा का वारत्व आर शौर्य प्रदर्शन जितना प्रबल था उनकी दानवीरता भा उतनी हा महत्वपूर्ण कहा जाएगा । उन्हाने समय समय पर ब्राह्मणा ओर चारणा का दानस्वरूप नक्द राशि मूल्यवान वस्तुए आर जागीर प्रदान की जो उनका दानवीरता का जीता जागता प्रमाण ह । यहा क शासका द्वारा विभिन्न धर्मा एव सम्प्रदाया का खुले मन स दान दिया गया जिसका विवरण विविध बाता व ख्याता म उपलब्ध होता है ।

चारणा भाटा को दा गई जमान आर गावा का जागीर यहा सासण कहलाती थी तथा सासण म प्रदत्त उस सम्पत्ति का उपभाग उनकी सन्तान पीढ़ी दर पाढी किया करती था । मारवाड के शासका द्वारा सासण म दी गई सम्पत्ति का विस्तृत ब्यारा मुहता नणसी कृत मारवाड रा परगना रा विगत[५७] म दिया गया है । इसस पता चलता ह कि प्रत्यक शासक न काइ न काइ गाव या जमीन इन लागा को दकर इस तरह की परम्परा का अक्षुण्ण रखा ह ।

यहा क शामको द्वारा प्रमुख चारण कविया को दिये गय लाख पसाव आर करोड पसाव का भी उनकी दानप्रियता का हा प्रताक कहा जा सकता है । इसा प्रकार तुलादान करने की परम्परा म भा दानशालता का ही भाव अन्तर्निहित ह ।

(७) वचन पालन आर दृढ सकल्प

एक बार किसी का दिय गये वचन से मुकर जाना यहा सामाजिक कलक के रूप म देखा जाता रहा ह । इसी कारण वचन पालन की मर्यादा व उसके आदर्श की समाज म बहुत बड़ा महत्ता था । वचन पालन का इस महत्ता का लाकजावन म भा अत्यधिक प्रचार प्रसार था ।[५८] इसालिए जिस व्यक्ति का जबान का पतियारा (वचन का विश्वास) नही होता उसका समाज मे कोई प्रतिष्ठा आर साख नहा हुआ करता था । इस प्रकार वचन पालन म सत्य वद की पुरातन परम्परा का निर्वाह भी परोक्ष रूप में होता था ओर इस परम्परागत कर्तव्य का पालन करने म यहा के लोग आत्मतुष्टि का अनुभव करते थ ।

इतना ही नहा यदि शत्रु को भी यदि काई वचन दे दिया जाता तो उसकी भी पूर्ण अनुपालना की जाती । मारवाड के शासक महाराजा जसवन्तसिह प्रथम ने शाह शुजा क निवेदन पर जब उस सहायता दने का वचन द दिया तो उसे दिये गय वचन के मुताबिक महाराजा जसवन्तसिह न खजवा क युद्ध (वि स १७१५) म आरगजब की सना पर

आक्रमण किया ।[५९] यहा यह सकेत भी कर दना उचित रहगा कि जसवन्तसिंह का कुछ हा समय पूर्व जयपुर नरश जयसिह क प्रयास स औरगजब का ओर से मनसब प्राप्त हुआ था । परन्तु अपना मनसबदारी की कुछ भा परवाह न करक शाह शुजा के साथ तय हुई बातचात क अनुरूप निश्चित समय पर आक्रमण कर दिया जबकि स्वय शाहशुजा निश्चित समय पर योजनानुरूप कार्य नहा कर सका ।

एस उदाहरण भी मिलत ह जब राजनतिक लाभ या अधिकार प्राप्ति का वचनाए भी उनको विचलित नही कर सका । एस वचन पालक वारा क आख्यान लाक समाज म बहुत हा श्रद्धा व आदर के साथ याद किए जात रह ह जिन्हाने इन आदर्शो का अवहेलना की उन्हान भल हा उस समय स्थिति का लाभ उठा लिया हा परन्तु जनमानस मे उनके प्रति सम्मान का भावना नहा रहा ।

वचन पालन के साथ दृढ़सकल्प का भावना न यहा के निवासिया का कठिन स कठिन परिस्थिति मे और बड़ी स वड़ी विपत्ति म भी जूझन का अतुलित साहस व प्रेरणा प्रदान का तथा सघर्ष करने हेतु आत्मबल जगाया जिसक फलस्वरूप यहा क सामाजिक जावन म अद्‌भुत जावटता का समावश हा सका ।

यहा के वारोपाख्याना व एतिहासिक वाता का अध्ययन करने से यह बात ज्ञात हाता ह कि मध्यकाल म मारवाड़ क वारा म आखडी (प्रण सकल्प) लन की एक विचित्र सी परम्परा भी रहा है । इसे युद्ध कुशल वारा के आत्मसम्मान व स्वाभिमाना स्वभाव का प्रतिफल कहा जा सकता है क्याकि जा जितना ज्यादा आखड़िया लता उसका समाज मे उतना ही अधिक वर्चस्व एव प्रभुत्व स्थापित हाता साथ ही प्रसिद्धि प्राप्त होती ।[६०]

आखड़ी का निवाह व्यक्ति विशेष की दृढ़सकल्प शक्ति का ही परिचायक है जिसमे उसकी सामर्थ्य का भी पता लगता ह क्योकि सकल्प या किसा प्रण का आजीवन निर्वाह करना बहुत ही दुष्कर हाता ह । यहा क वीरो का दृढ़सकल्पी स्वभाव इस बात को उद्‌घाटित करता ह कि मनुष्य परिस्थिति का दास नही है । उन्हें चुनौतियां स सदा प्ररणा मिलता तथा अद्‌भुत वीराचित कार्य करन मे असीम आनन्द की अनुभूति होती थी ।[६१]

आखड़ा परम्परा की विवेचना करते समय यहा यह उल्लेख करना भी समीचीन हागा कि किसा वीर द्वारा ली गयी आखडियो मे अधिकाश मे यहा की सस्कृति के मान्य आदर्श सम्मिलित हात थे क्याकि उन आखड़ियो में कुछ बाते ऐसी होती थी कि जिनका सीधा सम्बन्ध यहा का सास्कृतिक परम्पराआ स होता था । अत उनकी अनुपालना करना एक तरह से यहा के सास्कृतिक मूल्या की समाज म प्रतिष्ठापना करना ही था । प्रत्यक्ष रूप म इस परम्परा स यहा क वीर और स्वाभिमानी वारो की दृढ़ सकल्पी भावनाओ का

आत्मतुष्टि भी मिल जाती थी तथा परोक्ष रूप म यहा के समाज का सास्कृतिक चेतना का लाभ प्राप्त हो जाता था।

(८) स्वामिभक्ति आर त्याग

स्वामिभक्ति जिसे यहा स्याम धरम कहा जाता था उसकी अनुपालना यहा की सस्कृति की खास विशषता रही ह। 'सा सुकृत अक पालडे एक स्याम धरम।'[६२] की प्रवृत्ति ने यहा की सस्कृति को वशिष्टय प्रदान किया आर इसने शासकीय ईकाई को मजबत बनाकर मध्यकाल का विपरात परिस्थितिया से जूझने की प्रेरणा यहा के निवासिया को दी।

मध्यकाल म स्वामिभक्ति की प्रवृत्ति को यहा प्रमुखता क साथ स्थान मिला। यहा के स्वामिभक्त सामन्तो राज्यवर्गीय पदाधिकारियो सिपाहियो तथा जन साधारण के उल्लेखनीय सहयोग के अभाव म कवल यहा के शासका के प्रयास स ही मारवाड राज्य को सभवत वह स्थायित्व प्राप्त नही हा पाता। कई बार ता यहा की लड़खड़ाती आर डगमगाती राज्य व्यवस्था यहा के स्वामिभक्त लोगा के बलबूत पर हा पुन प्रभावा बन सकी। ऐसे स्वामिभक्त लागा म दुर्गादास राठाड का नाम अग्रणी हे जिसने ओरगजेब के कुचक्रो आर नापाक इरादा को नेस्तनाबूत कर जिस प्रकार से मरुधरा और मरुधराधीश[६३] दाना की रक्षा की वह सर्वविदित ह।

स्वामिभक्त दुर्गादास को ओरगजेब ने कई तरह क प्रलोभन दिए किन्तु दुर्गादास न उन सार प्रलोभना का ठुकराकर स्वामिभक्ति का जो आदर्श प्रस्तुत किया वह दूसरे वीरा क लिए भा प्रेरणा का एक स्रोत बना। इस प्रकार के अनक योद्धा प्रत्यक शासक के काल म होते आए है जिन्हान स्वामिभक्ति को हा अपने जीवन का आदर्श रखकर अनेक सघर्ष किए आर अपन तथा अपन परिवार के प्राणो तक की चिन्ता नही का।

जसवन्तसिह प्रथम क प्रधान अमात्य कूपावत राजसिंह की स्वामिभक्ति को भी उल्लखनाय कहा जायेगा जिसन अपन स्वामा क प्राणा पर आय सकट क निवारण हेतु अपने प्राणो का उत्सर्ग कर दिया।

यहा क वारा का त्याग भी अनुपम आर बेजाड़ था। जिस सम्पत्ति को व बडे यत्न एव परिश्रम से प्राप्त करत अवसर आन पर उस त्यागन से किंचित् भी नही हिचकिचात थे। एस त्यागा वारा क प्रसगा से मारवाड का इतिहास आर भी देदीप्यमान एव उज्ज्वल बना। इन त्यागी आर बलिदानी वीरा ने अपनी सास्कृतिक थाती की सुरक्षा एव उसकी गारवशाला परम्पराआ मर्यादाआ तथा आदर्शा की प्रतिष्ठा के लिए बडी से बडी भोतिक सुख सुविधाए प्रदान करने वाला सम्पदा का ठुकराया। एसे हा त्यागा वीरा मे बल्लू चापावत का नाम अग्रणाय है। वि स १७०१ म नागार के राव अमरसिंह राठाड क

वारगति प्राप्त होन की सूचना जब बल्लू चापावत को मिली जो स्वयं शाहजहा के काल मे मुगल मनसबदार था उसने बादशाही मनसब की परवाह नही की और अमरसिंह का शव किले से बाहर अमरसिंह की रानी तक पहुचाया। जो उसके पीछे सती होने जा रही थी और अपने पति के शव की प्रतीक्षा मे थी। इस प्रयोजन मे बल्लू चापावत अपने अन्य साथियो सहित शाही सेना का मुकाबला करता हुआ काम आया।

अपनी सांस्कृतिक परम्पराओ के निवाह हेतु उसने बहुत बडी जागीर और केवल शाही मनसब को ही नही त्यागा अपितु अपने प्राणो को भी उत्सर्ग कर दिया। ऐसे त्यागी वीरो के त्याग और शौर्यभरी गाथाओ से मारवाड का इतिहास गौरवशाली बन पडा। यह भावना उच्च राज्यवर्गीय लोगो मे ही रही हो ऐसी बात नही। ठिकानो के मालिको के अधीन भी ऐसे स्वामिभक्त लोग होते थे जो सकट के समय अपने प्राणो की बाजी लगाकर अपने स्वामी की तथा उसके परिवार की रक्षा करते थे। इस प्रकार यहा की जनता मे स्वामिधर्म एक बडा गुण माना जाता था और उसे आदर्श समझकर यहा के लोग ऐसा ही आचरण करने का प्रयास भी करते थे।

(९) प्रतिशोध की भावना

मध्यकालीन मारवाड के समाज मे बदले की भावना या प्रतिशोध लेने की प्रबल उत्कटता की प्रवृति भी विवेच्यकाल की एक विशेषता कही जायेगी। यहा के क्षत्रिय समाज मे इसका प्रचलन अधिक देखने को मिलता है। यहा की ख्यातो और ऐतिहासिक बातो मे इससे सबधित अनेक घटनाए मिलती है।[६५] यहा के स्वाभिमानी वीर जब तक प्रतिशोध लिया नही जाता तब तक बड़े बेचैन रहते तथा अपने ऊपर एक बहुत बड़े बोझ (भार) का अनुभव करते। मारवाड़ी मे एक कहावत है कि वैर कभी बूढ़ा नही होता[६६] अर्थात् काफी समय निकल जाने के बाद भी वैर पुराना नही होता।

इस प्रवृति का उन्माद उस काल के योद्धाओ मे एक नवीन उत्साह का सचार करता था तथा यहा यह भी देखने को मिलता है कि उनमे सबसे पहले वैर लेने की होड़ (प्रतिस्पर्द्धा) लग जाती थी। इतना ही नही मध्यकालीन मारवाड़ के अति उत्साही योद्धा उधार वैर (दूसरो के प्रतिशोध या बदले) लेने को भी उतने ही उतावले और अधीर हो उठते थे जितने स्वय का वैर लेने को होते थे।[६७] ऐसे युद्ध उन्मादी वीरो मे प्रतिशोध की भावना अपनी पराकाष्ठा तक पहुच चुकी थी तथा तत्कालीन समाज भी इससे प्रभावित हुए बिना नही रह सका।

विवेच्यकाल मे युद्ध के प्रति अत्यधिक उत्कण्ठा और प्रतिशोध लेने की प्रबल भावना एक युगीन विशेषता कही जायगी क्योकि क्षत्रिय वीरो के अतिरिक्त तत्कालीन अन्य वीरो मे भी यह भावना देखने को मिलती है। उस काल का वीर अपने मित्र के प्रति सच्ची मैत्रीभाव रखता था तथा इसे निभाने का यत्न करता। जातीय भेदभाव भी इस मित्रता मे

ग्राधा नहीं ग्रनता था आर हिन्दू मुस्लिम दाना परस्पर अनक ग्रार इस मित्रता को प्रगाढ़ता प्रदान करत हुए न्खिाई दत ह । अपन मित्र पर आए सक्ट का अपना सक्ट समझ उसक सक्ट निवारण हेतु उसस पहल अपन प्राणा का न्याछावर करन का तत्पर रहत । इस अद्भुत परम्परा का प्रभाव हिन्दू समाज तक ही सामित नहा रहा विदशा आक्रान्ताआ पर भी पड़ा आर उन्हान अपन हिन्दू मित्रा क सहयाग हतु युद्ध म भाग लकर अद्भुत वारता का परिचय दिया ।[६८]

इस प्रकार वर लेन (प्रतिशाध लन) का यह परम्परा ग्रड़ा अद्भुत आर विचित्र था जिसका सिलसिला कई बार तो पीढ़िया तक चला करता आर कहीं कहा प्रतिशाध लन क पश्चात् विवाह सम्बन्ध करके वर समाप्त किया जाता । एसे विवाह सबध म विजयी पक्ष का दूल्हा आर दुल्हन पराजित पक्ष की हुआ करती था । पुराने हा चाहे नवीन दोना प्रकार के वर या प्रतिशोध का विवाह सबध स समाप्त करने के ग्रहुत स उदाहरण यहा का ग्राता आर ख्याता म मिलत ह ।[६९]

(१०) अतिथि सत्कार

अतिथि देवो भव " का वदिक परम्परा का यहा की सस्कृति म एक प्रमुख तत्व के रूप म निरूपण होता रहा । अतिथि सत्कार स यहा क सामाजिक जीवन के सौहार्द्र आर प्रम का प्रतीति ज्ञात हाती ह । अतिथि सत्कार का यह भावना 'वसुधव कुटुम्बकम् की भावना को बलवता बनाने में भा एक प्रकार से सहायक सिद्ध हुई ।

इसक अतिरिक्त मानव का ईश्वर का सबसे सुन्दर रचना या कृति होने के नात अतिथि सत्कार म जो आदर आर सम्मान देने का परिपाटा प्रचलित हुई उसने यहा के समाज म मानवतावादी विचारा के प्रचार प्रसार मे भी महत्वपूर्ण योगदान दिया आर मानवाय मूल्या की प्रतिष्ठापना म सहयोग मिला ।

मारवाड मे यह कहावत ग्रहुत प्रसिद्ध ह कि घर आया न मा जायो बराबर[७०] अत कैसा भी अतिथि घर आ गया तो उसका आवभगत श्रद्धा के अनुसार अवश्य का जाती रही है । राजस्थान क रेगिस्तानी इलाके म जहा पीने का पाना तक दुर्लभ हैं वहा भी अतिथि का विश्राम करान तथा भोजन कराये बिना न जाने दन की परम्परा का आज भी निर्वाह किया जाता ह ।

मेहमान के आगमन का यहा विशष महत्व दिया जाता रहा है - मेह न पावणा किणे घर अर्थात् ग्ररसात आर मेहमान का आगमन कब कब होता ह । इसलिए उसका आगमन ईश्वरीय कृपा का प्रतीक माना जाता रहा ह तथा मेहमाना का बडा खातिर तवज्जा करने का परम्परा यहा रही है ।

(११) धर्मानुष्ठान एव धर्मयुद्ध

भारताय सस्कृति क अनुरूप यहा का सस्कृति म भा धर्म का महत्व सर्वोपरि परिलक्षित हाता ह । सामाजिक जावन म धार्मिक अनुष्ठाना का वालवाला था तथा इन धार्मिक अनुष्ठाना क माध्यम स यहा क निवासी धर्म की पालना का प्रयास करत थ । वन्कि सस्कार प्रणाला यहा समयानुकूल कुछ परिवर्तना क साथ अपनाया जाता रहा ।

दूसर शब्दा म यह कहा जा सकता ह कि धर्म हा उनक सम्पूर्ण जावन का नियामक था आर पूर जीवन दर्शन का हा नहा उनक जावन व्यापार का भा किसा न किसा रूप म प्रभावित आर निर्देशित करता रहा ।

जावन क सभी क्रिया क्लापा आर जावन के कर्तव्या का निर्वाह प्रणाली का भारताय सस्कृति म धर्म का सज्ञा दा गई ह । धर्म की यह व्यापक परिभाषा कहा जा सकता ह । इसा के अनुरूप युद्ध का भा कर्तव्य निर्वाह का एक अग आर धर्म के प्रतीक के रूप म ग्रहण किया गया तथा युद्ध करत समय नि शस्त्र पर आक्रमण न करना बाल वृद्ध आर नारा पर शस्त्र न उठाना गा ब्राह्मण एव शरण म आय की रक्षा करना इत्यादि आदशा का निर्वाह भा यहा क वारा न किया ह । युद्ध क मदान म भा जहा उचित अनुचित कुछ भा नहा देखा जाता वहा एस नियमा या धर्माचरण का पालना सचमुच म एक आश्चर्यजनक एव दिलचस्प बात ह ।

धर्मयुद्ध क सम्बन्ध म गाता म यह उल्लख मिलता ह कि "धर्म्यादि युद्धाच्छ्या न्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ।"[७१] अर्थात् धर्मयुक्त युद्ध स बढ़कर दूसरा कोई कल्याणकारक कर्तव्य क्षत्रिय क लिए नहा है । इसम आग यह भा कहा गया ह कि भाग्यशाली क्षत्रिय हाते ह उन्हा का इस प्रकार क युद्ध का अवसर प्राप्त हाता ह ।[७२] इसकी पुष्टि यहा क श्रेष्ठ वार करत हुए दिखाई दत ह ।

धर्मयुद्ध करन का जा यह प्रवृति यहा इतना प्रचलित आर लाकप्रिय हुई उसके पीछे धर्म का अनुभूति का व्यापक प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगाचर हाता ह क्याकि धर्म के अतिरिक्त मानव क स्वभाव को इतना सहज बनाना किसी अन्य प्रशिक्षण स सभव नही लगता । सामाजिक आदर्श के रूप म, धर्मयुद्ध की स्थापना आर युगा तक उसकी परिपालना भी निश्चित् रूप स अपने आप म एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है । इसलिए मध्यकालीन मारवाड़ का सस्कृति म धर्मानुष्ठान एव धर्मयुद्ध को भी एक प्रमुख विशेषता के रूप म स्वाकार करना अनुचित न हागा ।

उपर्युक्त विवचन स यह ज्ञात हाता ह कि मारवाड़ की सास्कृतिक चतना को परिष्कृत करन म उपर्युक्त विवच्य उपकरणा का महत्वपूर्ण योगदान रहा ह । इन तत्वो स जा जातीय सस्कार बन आर उनका अनुपालना हुई उसन यहा के इतिहास का प्रभावित ही

नहा अनुप्राणित भा किया। जिन आदर्श जावन मूल्या की स्थापना मारवाड़ का सस्कृति क परिप्रेक्ष्य म हुई व निश्चित रूप स इस प्रदेश विशष की मालिकता से परिपुष्ट हुए एव एतिहासिक धरातल पर जा आधारभूत विचारणाए पनपा उससे यहा का सास्कृतिक चतना का विकास हुआ।

मारवाड की सास्कृतिक चतना का यहा के इतिहास के परिप्रेक्ष्य म दखने स यह बात भा स्पष्ट हाती ह कि यहा विकसित हाने वाला प्रवृत्तिया न जहा एक आर यहा क इतिहास क निर्माण म उल्लेखनीय यागदान प्रदान किया वही उनक फलस्वरूप कुछ एसा निर्बलताए पनपा एव भल हुई जिसस यहा की व्यष्टि आर समष्टिगत उपलब्धिया पर असर पडा। विवच्यकाल मे मारवाड की सास्कृतिक चेतना पर मुस्लिम आक्रमण-कारिया आर मुगल दरबार क प्रभाव क फलस्वरूप यहा की सामाजिक आर सास्कृतिक विचार धाराआ म जान अनजाने परिवर्तन आया। इस परिवर्तन क परिणामस्वरूप अपना सस्कृति म भिन्न मुगल सस्कृति क जीवन मूल्या स भी यहा का सास्कृतिक मानस प्रभावित हुए बिना नहा रहा। उस प्रभाव के कारण यहा की सनातन सस्कृति म कुछ बदलाव भी आया।

सन्दर्भ - सूची

१ कर्नल टाड न इतिहास क साथ साथ यहा की धार्मिक व्यवस्था धार्मिक उत्सव हिन्दू माइथोलोजा (पौराणिक विश्वासा) राजपूत चारण भाट आदि विभिन्न जातियों के रीति-रिवाजों राजपूत समाज में नारी की स्थिति वारागनाओं के अद्भुत उत्सर्ग के घटना प्रसगों आदि के माध्यम से यहा की सास्कृतिक विशेषताओं को उद्घाटित करने का प्रयास किया। अपनी राजस्थान यात्रा के दारान आये महत्वपूर्ण नगरों एव गावा की स्थिति और सरचना, व्यापारिक दशा तथा प्रमुख मदिरों का भी टाड ने कही कहीं उल्लेख किया है।

२ डा. ईश्वरीप्रसाद एव शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय सस्कृति कला राजनीति, धर्म तथा दर्शन पृष्ठ-१

३ रामधारीसिह दिनकर सस्कृति के चार अध्याय, प्रस्तावना, पृ० ११

४ वही पी. सरीन भारतीय सभ्यता आर सस्कृति की रूपरेखा पृष्ठ-२

५ डा. एस.एल. नागौरी भारतीय सस्कृति, पृष्ठ २

६ डा. रामगापाल शर्मा भारतीय सभ्यता व सस्कृति का इतिहास, पृष्ठ ३

७ डा. ईश्वरीप्रसाद एव शैलन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय सस्कृति, कला, राजनीति धर्म तथा दर्शन पृष्ठ-१

८ डा. ईश्वरा प्रसाद एव शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय सस्कृति कला राजनीति धर्म तथा दर्शन पृष्ठ-४

९ उर्मिला शर्मा तथा डा. रामनाथ शर्मा भारताय सस्कृति पृ० ११

१० पिगट प्रि हिस्टोरिक इण्डिया, पृष्ठ २५७-५८

११ डा. गाविन्द चन्द्र पाण्डेय स्टडीज इन दि ओरिजिस आफ बुद्धिज्म अध्याय-८

१२ श्री गापीनाथ कविराज भारताय सस्कृति और साधना प्रथम खण्ड पृष्ठ २११

१३ Swami Sadanand Hindu culture in Greater India page 1

१४ आदान्त ठाकुर कृत सर्ग में भारतीय सस्कृति नामक पुस्तक में लालाधर शर्मा पर्वतीय का लिखा

प्रकाशकीय, पृष्ठ-५

१५. उर्मिला शर्मा, डा. रामनाथ शर्मा भारतीय संस्कृति पृष्ठ-१२

१६ डा. रामगोपाल शर्मा भारतीय संस्कृति का इतिहास, पृष्ठ ३

१७ डा. ईश्वरीप्रसाद एवं शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन पृष्ठ १२

१८ रामधारीसिंह दिनकर संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ-११५

१९ वही पृष्ठ ११६

२० डा. ईश्वरीप्रसाद एवं शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन पृष्ठ-१३

२१ रामधारी सिंह दिनकर संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ ११५

२२ वही पृष्ठ ११६

२३ उर्मिला शर्मा, डा. रामनाथ शर्मा भारतीय संस्कृति, पृष्ठ-१६

२३ डा. ईश्वरीप्रसाद एवं शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन, पृष्ठ-१३

२४ प्रभुदयाल मित्तल ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ-८४

२ कर्नल टॉड ने ऐतिहासिक विवरणों में भी स्थान-स्थान पर यहाँ की धरती की विशेषताओं की ओर संकेत किया है वहीं उसने अपने पर्सनल नैरेटिव्ज में यहाँ की संस्कृति आचार विचार और विभिन्न रियासतों की राजकीय औपचारिकताओं आदि का बड़ा सटीक वर्णन किया है। उसने अपने दूसरे ग्रंथ पश्चिमी भारत की यात्रा में मुख्य रूप से गुजरात में पड़ने वाले भू भाग का सांस्कृतिक वर्णन बड़े विस्तार से किया है जिससे उसकी सांस्कृतिक दृष्टि की परिनिष्ठता परिलक्षित होती है।

२६ सप्तसिन्धु वर्ष १२ अंक ७-८ पृ० १० पर डा. मनोहरसिंह राठौड़ का लेख राजस्थानी धाराछन्दों में सांस्कृतिक चित्रण

२७ सूर न पूछै टीपणो, सुगन न पूछै सूर।
मरणा नूं मंगल गिणै, समर चढ़ै मुख नूर॥

२८ लाखपसाव और करोड़ पसाव के कई उदाहरण यहाँ मिलते हैं। मोहनलाल जिज्ञासु ने अपने शोधप्रबंध चारण साहित्य का इतिहास भाग-१ बकाया पृ० ७ पर अरब पसाव का उल्लेख भी किया है। लाखपसाव व करोड़ पसाव के लिए रोकड़ राशि तय थी जैसे लाख पसाव के लिए २५ हजार रुपये नकद दिए जाते थे इसके साथ ही जाति-आदान, गाव की जागीर तथा विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति दी जाती थी जो सब मिलाकर उस पुरस्कार को उस राशि के समकक्ष बना देता होगा।

२९ सप्तसिन्धु अक्टूबर १९७१ पृ० ६ पर डा. नारायणसिंह भाटी का लेख राजस्थान के ऐतिहासिक उपन्यासों में धार्मिक उल्लेख।

३० [illegible] राजस्थान [illegible] शर्मा।

३१ डा. [illegible] शर्मा [illegible] भारतीय इतिहास की मूल धाराएं भाग-२ पृ० [illegible]

३२ [illegible] पृष्ठ १२०

३३ [illegible] १२ [illegible] अनुवाद।

३४ डा. [illegible] भारतीय इतिहास की मूल धाराएं पृ० २०२

३५ [illegible] राजस्थान का इतिहास, भाग-१ पृष्ठ ३४१

३६ [illegible]
[illegible]

२ राजा गजसिंह (सन् १६१ १६३८)

३ महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम (सन् १६३८ १६७८)

४ महाराजा अजीतसिंह (सन् १७०७-१७२४)

५ महाराजा अभयसिंह (सन् १७२४ १७४९)

६ महाराजा रामसिंह (सन् १७४९ १७५१)

७ महाराजा विजयसिंह (सन् १७५२ १७९३)

८ महाराजा भामसिंह (सन् १७९३ १८०३)

३७ द्रष्टव्य डा वी.एस. भार्गव मारवाड़ से मुगलों के सम्बन्ध पृष्ठ ७५

३८ डा. वी.एस. भार्गव मारवाड़ से मुगलों के सम्बन्ध, पृष्ठ ८०

३९. सत मत छोड़ा सायवा, सत छोड़्या पत जाय।
सत की बाधी लिछमी फेर मिलगी आय ॥

४० काबुल के पास (समीपवर्ती क्षेत्र) में बहने वाली एक नदी मध्यकाल में जिसके पार जाना यहा मर्यादा व धर्मविरुद्ध माना जाता था।

४१ इणा कहा मुनसब खाविंद रै हाथ है चाहे सो करो म्हारो धरम म्हारै हाथ में है सो राखसा खोवा नही। यू सवाल-जवाब वहात हुवा। तो पर केसरीसिंह मुनसब छोड़ डेरे उठ आयो तिण पर चारण कही--

कळाहरा चढ़ती कळा जीपण जग भाराथ।
केहरी अटक न उतरै साहजहा रै साथ ॥
राजस्थानी बात संग्रह परंपरा भाग ६ ७ पृ० १५३

४२ जसा भैरवदासोत नामक यह वीर मालदेव का सामन्त था जो गिरी सुमेल के युद्ध से पूर्व ही मालदेव के साथ लौट गया था अत वहा युद्ध करने का उसे अवसर नही मिला।

४३ ऐतिहासिक बाता (परम्परा भाग-११), पृष्ठ-३८

४४ उक्त घटना का एक प्रासगिक दोहा यहा के जन मानस में आज भी बड़ा लोकप्रिय है

उण मुख ते गग्गा कह्यो इण कर लई कटार।
वार कहण पाया नही जमदढ़ हो गई पार ॥
साथ ही पावसेर लोह ते हिलाया सारी बादसाही होता समसेर तो छिनाय लेत आगरो यह कवित भी बड़ा प्रसिद्ध है।

४५ प. रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ० १७२ १७३

४६ डा गौरीशकर हीराचन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास भाग-१ पृ ३०३

४७ प रामकर्ण आसोपा मारवाड का मूल इतिहास पृष्ठ-१३५

४८ प. विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास भाग-१ पृ १३०

४९ जोधपुर राज्य की ख्यात (जि १ पृ ७०) में लिखा है कि गिरी पहुचने पर जैता और कूपा ने कहा कि यहा तक की भूमि तो राव की अपनी जीती हुई है आगे राव रिडमल (रणमल्ल) और जोधा की ली हुई भूमि है सो हमारे बाप दादों की है। यहा से हम पीछे नही हटेंगे और लड़कर मिटेंगे।
ओझा जो राज्य का इ भाग-१ पृ ३०५ से उद्धृत

५० इस घटना से सदर्भित एक प्राचीन राजस्थानी दूहा इस प्रकार है
गिरीं थारे गारवे लाबी वधी खजूर।

जैते कूपे आखिया म्रग नेड़ौ घर दूर ॥

१ स डा नारायणसिंह भाटी मारवाड़ रा परगना री विगत, भाग-२ पृ ६७-७०

२ अकबर के भागन के समय उसके परिवार के सदस्य मारवाड़ में ही रह गये थे ।
जगदीश सिंह गहलोत दुर्गादास राठौड़ पृ ७८

५३ वही पृष्ठ ८२ ८३

५४ कवि कलश को शभाजी के साथ बादशाह ने कैद कर लिया था । वह उत्तरी भारत का रहने वाला था । मराठे इससे घृणा करते थे । अतएव इसके परिवार के सदस्य उत्तरी भारत में दुर्गादास के पास चले आये ।
जगदीश सिंह गहलोत दुर्गादास राठौड़ पृ ६९

५५ प. रामकर्ण आसोपा इतिहास नीबाज पृष्ठ-७२

५६ ठा किशनसिंह (बैड़ कला) उदावत राठोड़ इतिहास, पृष्ठ ६१ ६२ प रामकर्ण आसोपा इतिहास नीबाज, पृष्ठ ७२ ७३

५७ इसमें चारण भाट व ब्राह्मणों के सासण की सारिणी है जिसमें पृष्ठ ५३० ५४१ तक चारण भाटों तथा पृष्ठ ५४२ ५५१ तक ब्राह्मणों को दान में दिये गये गावों का उल्लेख है ।
स. डा. नारायणसिंह भाटी मारवाड़ रा परगना री विगत, भाग-३ पृष्ठ ५३० ५५१

५८ जिसकी साख का यह दोहा यहाँ द्रष्टव्य है
मरद नो जवान बको कूख बकी गारिया ।
सुरहल ता दुधार बकी तेज बकी घोड़िया ॥

५९ रेऊ मारवाड़ का इतिहास, भाग-१ पृष्ठ-२२८

६० राव गागौ जोधपुर बड़ा ठाकुर हुवौ । बड़ौ अखाडसिध रजपूत हुवो । घणी आखड़िया वहतौ ।
ऐतिहासिक बाता (परम्परा भाग ॥) पृष्ठ-३७

६१ (अ) राठोड़ खीवों ऊदावत बड़ो ठाकुर हुवौ । भाजणी परत वहतौ थो (दूसरों की प्रतिज्ञा को तोड़ता था)
(ब) राठौड जैतसी ऊदावत बड़ो रजपूत था । घणी आखड़ी वहतौ । पारकी छठी रो जागणहार (शत्रुओं की मौत को जगाने वाला) पारको चाडा (पुकार) रा सारणहार (सुननेवाला) राठौड़ा वड़ा वंश दावा वालिया ।
ऐतिहासिक बाता (परम्परा, भाग-११ (पृ ५९ ६०)
(स) रामदास वेरावत वड़ौ अखाडसिध रजपूत हुवौ । रामदास वेरावत ने उगणीस विरुद (विरुद्ध, उपाधिया) अर चौरासी आखड़ी ।
राजस्थानी साहित्य सग्रह, भाग-१ रामदास वेरावत री आखड़ी री वात, पृष्ठ १९

६२ एक प्राचीन राजस्थानी गीत की पक्ति ।

६३ महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम के नवजात उत्तराधिकारी अजीतसिंह की दुर्गादास ने रक्षा हा नही की उसके वयस्क हान तक उसका लालन-पालन भी किया । मारवाड़ की स्वतत्रता के लिए लम्बे समय तक सघर्ष किया और अजीतसिंह को अपने पैतृक राज्य का शासक बनाकर जिस स्वामिभक्ति का परिचय दिया एसे उदाहरण अन्यत्र बहुत कम देखने को मिलते है ।

६४ महाराजा जसवन्तसिंह जब जोधपुर शहर की गश्त लगाते समय तापी बावड़ी के पास ब्रह्मराक्षस की प्रेतछाया से मूर्छित हो गये और बहुत से उपचार करने पर भी ठीक नही हुए, तब मत्रज्ञाताओं ने यह उपाय सुझाया कि महाराजा के बदले में कोई जान दे तो उनके प्राण बच सकते है । इस पर कूपावत राजसिंह ने महाराजा पर वारा हुआ मत्रित जल पी लिया जिससे महाराजा ता ठीक हो गये और कूपावत राजसिंह का वि.स. १६९७ की पोष वद ५ ई सन् १६४० ता. २३ नवम्बर को प्राणान्त हो गया ।

-गत शिवनाथ सिंह कृपावत राठाड़ा का इतिहास पृष्ठ २२६

(ग) इस घटना स सम्बधित य दो प्राचीन दोहे भी द्रष्टव्य हैं—

राजन नस थारा रिधु, भला भला कुल भार ।
पा प्याला अमरतहित, साधा जावन दान ॥
भल जस रत उचाविया भड़ निज तन कर भग ।
दुनिया सारा दाखव राजड़ तोन रंग ॥

६६ तजसी मारा हुआ नर पवारा रा वात साभळा तर इण वात रा दरद मन माह घणु राखण लागा ज म्हासु पवारा घणा बुरा कावा । परमसर जौ कर ता आ वात वाठ (एतिहासिक वाता) परपरा ॥पृ ६१

६७ वर न बूढ़ा हाय ।

६७ राठाड़ सखा सूजावत सवकी रा वड़ राव गागा माराया तद सूराचन्द रा चहुआणा र माथ राठाडा रा वर था सु सख मरता कह्या राठाड़ जैतसी ऊदावत नु कहज्या तजसा डूगरसिंघात नु कहज्या या दावा वाळज्या । पछ राठाड़ जतसी सूराचद झूरायो । तजसा चहुण रा तयारा काधी थी ता पला तसी जा झूझीया ॥

द्रष्टव्य— जैतसी ऊदावत री वात (ह. ग्रथाक १४५८४(२) राशा स चापासनी

६८ जाधपुर के राव मालदेव के समय नागौर के शासक क अधान सवारत बुरहान पठाण को राठाड़ पृथ्वीराज जैतावत क साथ मित्रता थी आर जव पृथ्वीराज जैतावत न तजसी डूगरसीयोत की चाटसू क पवारा क साथ हुये युद्ध म महायता दी उसम बुरहान पठाण न भी भाग लिया आर इस युद्ध म अद्‌भुत वीरता का प्रदर्शन करता हुआ घायल हुआ ।

द्रष्टव्य परम्परा भाग-११ पृष्ठ ६२

६९ तरै पवारा रा परधान जतारण आया कह्या —म्हे जिसरी गर काधी था तिसड़ा सजा पाई । हिम परणाजा नै वैर भागा ।

राव मालदेव रा वाता एतिहासिक वाता (परम्परा भाग ११) पृष्ठ २

७० घर पर आया मेहमान और सहोदर भाई एक समान है । अतिथि सत्कार स सम्बन्धित एक दोहा यहा द्रष्टव्य है—

घर माग टोटा घणा मोटा पिव रा नाव ।
इण कारण धण दूबळी (कै) गलै ऊपर गाव ॥

७१ श्रीमद् भगवद्गीता, द्वितीय अध्याय श्लोक सख्या ३१

७२ वही श्लोक सख्या-३२ ३३

धर्म

धर्म एक एसा व्यापक शब्द है[1] जो सामने आते ही किसी जाति या समाज का इतिहास आर उसके जीवन की भूमिका प्रस्तुत करने म समर्थ होता है। धर्म शब्द म जाति विशेष का सभ्यता सस्कृति आचार विचार, रहन सहन रीति रिवाज तथा जीवन प्रणाली का प्रक्रिया आर निदर्शन आदि तत्व सामान्यतया समाविष्ट होते ह। धर्म की परिभाषा भी हमारे दार्शनिको चिन्तको मनीषियो न अपने अपने समय के विचार आर चिन्तन के परिणामस्वरूप भिन्न भिन्न रूपो म प्रस्तुत की है।

धारणाद् धर्म इत्याहु के अनुसार धर्म जीवन का मूलाधार है। इसी से मनुष्य को प्ररणा आर प्रकाश उपलब्ध होता है। यही धर्म जीवन की गतिविधि आर प्रगति म सहायक होता है। कहने का अर्थ यह है कि धर्म वस्तुत सकुचित नहीं अपितु विशद् महान आर उदात्तभावना से प्रकाशमान होता है। ससार म जितने भी धर्म हैं उनका अपना महत्व आर स्वत्व तो है ही किन्तु हिंदू धर्म आर हिन्दू जाति की अपनी विशेषता और महत्ता रही है। हिन्दू धर्म अन्य सभी धर्मो आर जातियो का समादर आर सम्मान करने म सदैव अग्रणी रहा है।[2]

धर्म का निवास मनुष्य के मन म है यह स्वय मनुष्य के स्वभाव का एक अग है। ...की प्रत्येक वस्तु विलीन हो सकती है परन्तु ईश्वर म विश्वास जो ससार के सब धर्मो की चरम स्वीकृति है शेष रह जाता है। धर्म चाहे कितने ही रूप क्यो न बदल ले परन्तु वह तब तक बना रहेगा जब तक कि मनुष्य।[3] धर्म परमात्मा की सार्वभौमिकता म हमारे विश्वास आर मानव जाति के प्रति हमारे आदर को बढ़ाने म बहुत बड़ा सहायक हुआ करता है। यह मानव मन म केवल सहिष्णुता करुणा लोकोत्तर उदारता की भावना ही उत्पन्न नहीं करता अपितु सत्य के दर्शन की मनोवृत्ति को भी जगाता है।[4]

धर्म शब्द का अर्थ बहुत विशद आर व्यापक है। एक ही निश्चित आर सीमित अर्थ म धर्म शब्द का प्रयोग नहीं होता। एक ही धर्म शब्द भाषा आर विचार की परम्परा म अनेक अर्थो का वाचक बन गया है। इनमे कुछ अर्थ अधिक व्यापक है आर कुछ कम कुछ सामान्य है आर विशेष। धर्म शब्द की सबसे व्यापक अर्थ सबके

व्याकरणगत मूलधातु धृ पर आश्रित है। धृ का अर्थ धारयति धर्म अर्थात धारण करना है।

धर्म से अभिप्राय उन गुणो अथवा लक्षणो से है जो किसी वस्तु के स्वरूप को धारण करते है और धारण करने का अर्थ अपनाना पालन करना और बनाये रखना है। योग दर्शन मे एक ही विषय मे चित्त की स्थिरता को धारणा कहते है। साधारण व्यवहार मे किसी मनुष्य के एक निश्चित विचार अथवा विश्वास को धारणा कहते है। धारणा के सभी प्रयोगो मे स्थिरता का भाव पाया जाता है। स्थिरता का अभिप्राय एक निश्चित रूप मे बने रहने से है। स्वरूप की स्थिरता का निर्वहण अथवा सरक्षण धारणा का मुख्य लक्षण है।[6]

महाभारत मे धारणा के आधार पर ही धर्म की परिभाषा बताते हुए भीष्म कहते है कि धर्म का नाम धर्म इसलिये पड़ा है कि वह सबको धारण करता है अर्थात् अधोगति मे जाने से बचाता है और जीवन की रक्षा करता है। धर्म ने ही सारी प्रजा को धारण कर रखा है जो प्रजा के धारण से सयुक्त है वही धर्म है ऐसा धर्मवेत्ताओ का निश्चय है।[7]

धर्म और अधर्म की व्याख्या हिन्दू सस्कृति के अन्दर कोई इतना छोटा विषय नही है जिसे थोड़े से शब्दो द्वारा थोड़ा ही देर मे स्पष्ट कर दिया जाय। शास्त्रकारो ने यतो भ्युदय नि श्रेयस सिद्धि स धर्म । के रूप मे भी धर्म की एक परिभाषा निश्चित की है जिसका आशय है कि जिस भाव से हमारा सासारिक अभ्युदय हो साथ ही शरीरान्त के पश्चात् आत्मा को सद्गति प्राप्त हो उसी को धर्म कहते है। दर्शन कारो की एक दूसरी धर्म सम्बन्धी परिभाषा मे कहा गया है कि किसी वस्तु के उस गुण को धर्म कहते है जिसके अभाव मे वह वस्तु अपने सत्व और स्वरूप को खो देती है जैसे उताप और तेज रहित अग्नि को राख या कोयला कहा जाता है इसलिए उताप और तेज ही अग्नि का धर्म है।[8]

स्वामी शिवानन्द ने धर्म की परिभाषा और महत्ता बताते हुए लिखा है कि -

Religion is the real tonic for one and all It is food for the soul It shows the way to the eternal realm of supreme peace perennial bliss and immortal [9]

श्रीमती ऐनिबिसेन्ट ने भारतीय परिप्रेक्ष्य में धर्म शब्द का अर्थ किन रूपो मे भाषित हो सकता है उसकी व्याख्या बहुत ही सुन्दर शब्दो मे इस प्रकार करने का प्रयास किया है—

When the Nation of the earth were sent for one after the other a special word was given to by God to each the word wich was to express

to the world the particular message of each To Egypt in olden days the word was religion to Persia (Iran) the word was purity to Chaldea toe word was science to Greace the word was beauty to Rome the word was law and India the eldest born of his children he gave a word that summed up the whole in one word Dharma It is to difficult to translate the word in English It briefly means a code of duty Duty tow wards God duty towards his people Duty to society duty to animals and birds Which can also mean love for all the creation India has preached this message of love for nearly fifty centuries

उपर्युक्त विद्वानो के विभिन्न मता स यह स्पष्ट हो जाता ह कि धर्म शब्द भारतीय परिप्रक्ष्य म सकीर्ण अर्थ म कभी नहा लिया गया। उसका उद्दश्य बहुत व्यापक रहा ह आर एक प्रकार से पूरे जीवन को सस्कार सम्पन्न करने और सामाजिक मूल्य निर्धारित करने म उसकी परोक्ष या अपरोक्ष रूप म भूमिका रही हे। भारताय सस्कृति की सुदीर्घ परम्परा आर उसकी सुन्दरतम उपलब्धिया का श्रय इसीलिए धर्म को जाता हे[10] क्योकि उसन पूरे समाज को अनुशासित व उदात्त बनान म महत्वपूर्ण योगदान दिया ह।

अत धर्म को लकर मूल बात जो सभा परिभाषाआ म सम दृष्टिगाचर होती ह वह यह कि धर्म शब्द से बहुत हा व्यापक अर्थ ध्वनित होता हे। मानव जीवन के सभी अगा एव कार्य व्यापार का दिशा निर्दश देने वाले समस्त सिद्धान्त धर्म के भीतर समाहित होत ह। इसीलिए धर्म को मानव जीवन का मूलाधार माना गया ह।

हमारे देश को सभ्यता आर सस्कृति म हा नही विश्व की सभी प्रमुख आर महत्वपूर्ण सभ्यताआ आर सस्कृतिया पर धर्म का महत्वपूर्ण प्रभाव दृष्टिगोचर हाता हे। मारवाड़ की सस्कृति म भी धर्म का महत्वपूर्ण योगदान रहा ह तथा यहा के समाज पर उसकी अनूठा छाप ह। विवेच्यकाल मे तो धर्म यहा के समाज के लिए जावनदायिनी सजीवनी की भाति उपयागी सिद्ध हुआ।

मध्यकाल म बाह्य आक्रान्ताओ के निरन्तर आक्रमणों से दुर्धर्ष सघर्ष की दीर्घ परम्परा से यहा क सामाजिक जावन म शिथिलता आर निराशा की भावना का प्रचार हुआ। इस अनिश्चय के वातावरण म धर्म ही था जिसने यहा क सामाजिक जीवन को बचाये रखा जनमानस को धर्य प्रदान कर परिवर्तित परिस्थितिया म भा सामजस्य स्थापित कर जीवन धारा के प्रवाह को निरन्तर गतिमान रखने मे महत्वपूर्ण यागदान दिया।

यहा उत्पन्न हुए विभिन्न सत महात्मा आर महापुरुषो ने पारम्परिक प्रचलित धर्म की सहज व्याख्या अपने अपने ढग से करके यहा के जनसाधारण क जावन की निरसता

आर निराशा का कम करन म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । उनक विचार विभिन्न मत या सम्प्रदाय क रूप म प्रचलित हो गय । इन विभिन्न सम्प्रदायो म कुछ तो इस धरती की ही उपज थ कुछ दूसर प्रान्तो का उदय होन क पश्चात् भी यहा क जनमानस को इतना प्रभावित कर गय कि उनको भी यहा की जनता न सम्मान प्रदान कर उस स्वीकार किया । उन सभी सम्प्रदायो पर सक्षप म यहा प्रकाश डालना अप्रासंगिक न होगा ।

मारवाड के विशिष्ट धार्मिक सम्प्रदाय

मध्यकाल म धार्मिक पुनर्जागरण क युग म विभिन्न सुधारवादी धार्मिक सम्प्रदायो का गठन हुआ । मारवाड म भी उस समय कई सम्प्रदायो का प्रचार प्रसार हुआ जिसम कुछ सम्प्रदायो क संस्थापक तथा उनकी साधना क स्थल यहा स जुड हुए ह इसक अतिरिक्त कुछ एस सम्प्रदायो का भी यहा प्रभाव रहा जिनका प्रादुर्भाव यहा नहा हुआ । यहा दोनो ही तरह क सम्प्रदायो क सम्बन्ध म विचार किया जाएगा जिसस मध्यकालीन मारवाड का जनमानस प्रभावित हुआ ।

रामस्नही सम्प्रदाय

स्वामी रामानन्द न समस्त उत्तरी भारत म जिस भक्ति भावना का प्रचार किया उसस राजस्थान भी अछूता नहा रहा तथा यहा क अनक संतो व महापुरुषो न रामानन्द की भक्तिधारा की भावभूमि क आधार पर ईश्वर उपासना की विधि व धर्म का सहज स्वरूप जागा क सम्मुख रखा । इनम रामस्नही सम्प्रदाय का स्थान प्रमुख ह ।

रामस्नही सम्प्रदाय का उद्गम रामानन्दियो म हुआ तथा राम नाम का स्मरण करन क कारण रामस्नही कहलात ह ।[11] अठारहवी शताब्दी म राजस्थान म इस सम्प्रदाय क चार प्रमुख केन्द्र स्थापित हुए[12] —

१ रेण दरियाव जी

२ शाहपुरा रामचरण जी

३ सिंहथल हरिरामदास जी

४ खेडापा रामदास जी

रामस्नही सम्प्रदाय की उपर्युक्त चारो शाखाए मूलत रामानन्द की शिष्य परम्परा म ही सम्बद्ध ह तथा मारवाड म इनक रामद्वार जगह जगह स्थापित ह ।[14] रामस्नही सम्प्रदाय की इन चारो शाखाओ म जहा साम्यताए ह वहा आचरणगत कुछ विभिन्नताए भी ह तथा प्रत्यक शाखा क अनुयायी अपन गुरु की गादी को प्रमुख केन्द्र या प्रधान पाट क रूप म मानत ह । उपर्युक्त चारो शाखाओ म रेण शाखा क संस्थापक दरियावजी सबस पहल हुए अत मारवाड म रामस्नही मत क प्रथम प्रचारक वही कह जायग ।

रेण के रामस्नेही -

रण शाखा क प्रवर्तक दरियाव जा थ। इनका जन्म मारवाड क जतारण नगर म वि स १७३३ (१६७६ ई) भाद्रपद मास क कृष्णपक्ष की अष्टमी को बुधवार क दिन हुआ।[१५] इनक पिता का नाम मानसा तथा माता का नाम गागा था। य जाति म धुनिया (पिंजार) थ।[१६] डॉ मातीलाल मनारिया इन्ह हिन्दू मानत ह आर उनका तर्क यह ह कि न ता दरियाव जा न कहा अपन ग्रथा म इस बात का उल्लेख किया ह आर न इनक समकालान शिष्या म स किसा न इनका मुसलमान कुलात्पन्न हाना लिखा ह। दरियाव जी क अनुयायिया म स आज भा काई यह नहा कहता ह कि य मुसलमान थ। ... दरियाव जा का वाणी म स्पष्ट रूप स इनक माता पिता क नामा का उल्लेख ह जा हिन्दू शला क ह।[१७]

इस प्रकार इनक जाति विषयक प्रश्न पर विद्वाना म मतभद ह। डा पमाराम[१८] न इनका धुनिया माना ह ता डा मातीलाल मनारिया न हिन्दू। वास्तव म इनक पर्याप्त साहित्य स भा इस बात का स्पष्ट पुष्टि न हान क कारण यह मतभद उत्पन्न हुआ हा सकता ह दरियाव जा का जन्म किसा आर माता पिता स हुआ हा आर कबार का भाति इनका पालन पाषण करन वाल धुनिया दम्पति का ही इनक माता पिता मान लिया गया हा। यह एक सभावना ह। पूर्ण प्रमाणा क अभाव म इस विषय पर कुछ कहना समाचान न हागा। हम ता यहा उनक द्वारा किए गए कार्या का विवचना करना हा अपक्षित ह।

पेमदास नामक सत का इन्हान अपना गुरु स्वाकार किया तथा वि स १७६८ (१७१२ ई) का कार्तिक शुक्ला ११ गुरुवार का दाक्षित हुए।[१९] गुरु मत्र ग्रहण करन के कुछ वर्षा क बाद य जतारण से रण चल गये। रण आर मडता के मध्य स्थित खनडा नामक स्थान पर साधना करन लग। सिद्धि प्राप्त करन क पश्चात् उन्हान अनक स्थाना का भ्रमण किया। भ्रमणकाल क दारान उन्हान राम भक्ति का प्रचार किया तथा स्थान स्थान पर इनक अनक शिष्य भा बन। रण म[२०] उन्हान अपना गद्दी स्थापित का।

वि स १८१५ (१७५८ ई) मागशार्ष पूर्णिमा का रण म हा इनका दहान्त हुआ।[१] रेण क लाखासागर तालाब का पाल पर उनका सगमरमर स निर्मित समाधि स्थल ह जिस दरियावजा का दवल धाम कहा जाता ह। इस उनक शिष्य हरखराम न वि स १८५८ (१८०१ ई) म पूरा करवाया।

सन्त दरियावजा क ७२ प्रसिद्ध शिष्य एव ० शिष्याए था जिनम राजस्थान क विभिन्न प्रमुख कस्बा म इस शाखा का प्रचार प्रसार हुआ। यह शाखा विशषकर मारवाड म काफा फला जिसका श्रय उनक विभिन्न याग्य शिष्या का जाता ह। नागार म हरखराम मडता म सुखरामदास डाडवाना म टमदास जाधपुर म गगाराम साभर म मिरमल

मृडगा म न्वतास राल म जम्माराम ईडवा म सन्तापदास साज म जादराम कुचरा म नानकदास रेणम भगवानदास चूटाटा म मरग्गरराम निम्बडा म नवलराम न अपन स्थान स्थापित कर इस शाखा का प्रचार किया ।[२२]

दरियाव जा का वाणा [२३] नामक ग्रथ म दरियावजा का धार्मिक भावनाआ शिक्षाआ तथा उनका विचारधाराआ का पता चलता है । दरियाव जा न दूसरे सता का तरह गुरुभक्ति पर बहुत अधिक बल दिया एव गुरु का सर्वापरि तथा देवतुल्य मानत हुए माक्ष प्राप्ति हतु गुरुभक्ति का आवश्यक माना । सम्पूर्ण शास्त्रा क अध्ययन का अपक्षा राम नाम क स्मरण का उच्च बताया । साधु सगति पर बल दिया ।

मध्यकाल में धर्म के आडम्बरयुक्त स्वरूप का सत दरियाव जा न विराध किया तथा इसक स्थान पर जनता का सहज भक्ति करन का सदुपदेश दिया । माक्ष प्राप्ति हेतु गृह त्याग का अनावश्यक माना । कपटरहित व सु आचरण स इश्वर उपासना करते हुए गृहस्थ भी माक्ष प्राप्त कर सकता ह । राम नाम के स्मरण स व्यक्ति अपने कर्मबन्धन एव पुनर्जन्म स मुक्ति पा लता है । इस प्रकार उपासनागत सहजता के कारण उनक उपदेशा की आर यहा का जनमानस अधिक आकृष्ट हुआ ।

तत्कालान समाज म प्रचलित अनक प्रकार के पाखण्डा का सत दरियावजी न खण्डन किया । तीर्थस्नान कठीमाला तिलक मूर्तिपूजा योगदर्शन इत्यादि का बाह्याडम्बरा स युक्त पाकर उनका विराध किया । सम्मान और बडाई को दु खदायी मानत हुए जनता को सादगी स जीवन व्यतीत करन का नेक सलाह दी । ससार एव सासारिक सुख का स्वप्न की सज्ञा दकर इसस भ्रमित न हान की चेतावनी दी । सत दरियावजी ने नारा को सम्मान देते हुए उसे जगत की जननी [२४] माना तथा उसकी निन्दा करन वाला को मूर्ख बताया ।

हिन्दू मुस्लिम एकता एव दोना म समन्वय स्थापित करने का दिशा म सत दरियाव द्वारा जा प्रयास किया गया वह भी बहुत महत्वपूर्ण ह । राम नाम की व्याख्या[२५] करत हुए उन्हाने बताया कि रा ता राम का प्रताक ह आर "म मोहम्मद का । इन दा अक्षरा म सार वेद पुराणो का सार सन्निहित है ।

शाहपुरा के रामस्नेही

शाहपुरा शाखा के प्रवर्तक रामचरणजा का जन्म साडा [२६]नामक गाव म वि स १७७६ (१७१९ ई) की माघ शुक्ला चतुर्दशी शनिवार को हुआ ।[२७] इनके पिता का नाम बखतराम था जा बनवाडा नामक गाव के रहने वाल थ । माता का नाम दउ था ।[२८] य जाति के विजयवर्गीय वश्य थ तथा इनका बचपन का नाम रामकिशन था ।[२९] य बचपन से ही प्रखर बुद्धि क थ तथा कुछ समय तक जयपुर नरश की सेवा म मत्री पद

पर भी रहे। चौदह वर्ष की अवस्था में पिता के देहान्त के पश्चात् एक गत स्वप्न दर्शन के फलस्वरूप इन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ और ये गुरु की खोज में निकल पड़े।[३०]

वि.स. १८०८ (१७५१ ई.) में भाद्रपद शुक्ला ७ बृहस्पतिवार को कृपाराम जी ने इनको दीक्षित कर इनका दीक्षा नाम रामचरण रखा।[३१] वि.स. १८५५ (१७९८ ई.) में वैशाख मास को कृष्णपक्ष की पंचमी को इनका स्वर्गवास हुआ।

रामचरण जी के २२५ शिष्य थे जिनमें १२ शिष्य प्रधान थे। इन्हीं में से एक शिष्य भगवानदास वि.स. १८२३ (१७६६ ई.) में जोधपुर आये। यहां उनके शिष्यों के कई रामद्वारे बने हुए हैं।[३२]

धीरे धीरे इनकी शिष्य परम्परा और अनुयायियों की संख्या बढ़ती गई और इस शाखा का प्रचार मारवाड़ के अनेक स्थानों पर व्यापक रूप से हुआ। नागौर, मूंडवा, लाडनूं, खेजड़ा, कुचेरा, पोकरण, जोधपुर, आकेला (मेड़ता), गिनाणी, समदड़ी आदि स्थानों पर इस शाखा के रामद्वारों का निर्माण हुआ।[३३]

शाहपुरा शाखा के साधु प्रारंभ में हिरमिच से रंगे हुए वस्त्र पहनते थे। कालान्तर में गुलाबी रंग का प्रचलन हुआ। साधु कोपीन धारण करते हैं तथा "ब्रह्मचोला" का प्रयोग करते हैं। जो साधु केवल कोपीन रखते हैं तथा चादर का प्रयोग नहीं करते उन्हें विदेही या अवधूत कहा जाता है। मौनव्रत धारण करने वाले साधु मौनी कहलाते हैं। कुछेक साधु नग्न भी रहते थे जो "परमहंस" कहलाते थे। शाहपुरा के साधु प्रारंभ से ही मुण्डित रहते तथा सिर पर केवल एक शिखा ही रखते रहे हैं।[३४]

रामस्नेही गले में माला और माथे पर चंदन का श्वेत तिलक धारण करते हैं। काठ के कमण्डल में जल पीते हैं, मिट्टी के बर्तनों में भोजन करते हैं।[३५] ये निर्गुण परमेश्वर की (राम नाम की) उपासना करते हैं। इनके रामद्वारों में किसी देवता की मूर्ति नहीं होती है। अपने पास तूंबा, लंगोटी, चादर, माला और पुस्तक (पोथी) के अतिरिक्त एक दो बर्तन के सिवाय और कुछ वस्तु नहीं रखते। उच्च वर्ण के लोगों को पंथ में दीक्षित करते हैं तथा पट्टशिष्य गुरु का उत्तराधिकारी बनता है।[३६]

मृत्यु के उपरान्त शव को बैकुंठी या सीढ़ी पर ले जाकर जला देते हैं। साधु स्वयं तो मृत्युभोज आदि कुछ नहीं करते किन्तु इनमें श्रद्धा रखने वाले अनुयायी ... ३ और १० वें दिन ब्राह्मणों और साधु सन्तों को भोजन करवाते हैं।

माहेश्वरी, अग्रवाल, राजपूत, पंचोली आदि जातियों के लोग इनमें अधिक विश्वास करते हैं तथा इनके अनुयायी बनते हैं। शाहपुरा को अपना गुरुद्वारा मानते हैं जहां प्रतिवर्ष फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की ११ से चैत्रमास के कृष्ण पक्ष की ७ तक मेला लगता है।[३७]

रामचरण जी की वाणी ३६ ३५० पद्यों की करीब बताई जाती है[३८] जिसमें काव्य की विलक्षणता के साथ वैराग्य की विशिष्ट झलक देखने को मिलती है। अब इतनी बड़ी संख्या में ये पद्य उपलब्ध नहीं होते परन्तु जो भी उपलब्ध हैं वे उनके अनुयायियों में काफी लोकप्रिय हैं।

निरियाबना की भांति ही स्वामी रामचरण जी ने गुरु को अत्यधिक महत्व देते हुए उसे ब्रह्म रूप में स्वीकार किया। राम नाम के स्मरण पर बहुत बल दिया और इसे मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताया। स्वामी रामचरण ने सत्संग एवं संगति के प्रभाव की महत्ता भी बतलाई और इससे जो सुख प्राप्त होता है वह अन्यत्र नहीं मिल सकता।[३९] जहां रामचरण जी ने ईश्वर उपासना सम्बन्धी सरल उपाय लोगों के सामने रखे वहां सामाजिक सुधार की दिशा में भी कार्य किया तथा समाज में प्रचलित विभिन्न प्रकार के आडम्बरों का विरोध किया एवं उनसे सावधान रहने के लिए लोगों को आगाह किया।

स्वामी रामचरणदास ने जातिगत भेदभाव व ऊंच नीच की भावना का विरोध किया तथा लोगों को यह समझाने का प्रयास किया कि ईश्वर की भक्ति के बिना चाहे कितना ही बड़ा या उच्चकुल का व्यक्ति क्यों न हो वह शूद्र जैसा है। कर्म की शुद्धता पर बल दिया। इसके साथ ही रामचरणदास ने भांग तम्बाकू अमल आदि सभी प्रकार के मादक द्रव्यों के सेवन को बुरा बताया एवं उनका जोरदार निषेध किया। हिन्दू मुस्लिम भिन्न धर्मावलम्बियों की समानता के सम्बन्ध में प्रयास किया तथा दोनों के बाह्याचारों का[४०] दादू कबीर की भांति खुले व स्पष्ट शब्दों में विरोध किया तथा समाज के लोगों को नवीन दिशा निर्देश देकर उनके जीवन को सुखमय बनाने की चेष्टा भी की।

मारवाड के खेडापे के रामस्नेही

मारवाड राज्यान्तर्गत विकमकोर गांव में वि स १७८३ (१७२६ ई) फाल्गुन कृष्णा १३ को खेडापा शाखा के प्रवर्तक संत रामदास का जन्म हुआ।[४१] इनकी जाति के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते हैं कि ये मेघवाल थे।[४२] इनके पिता का नाम शार्दूल था और माता का नाम अणभी था।[४३] प्रारंभ में रामदेवजी वगैरह पंथाई साधुओं की संगति में बैठकर तंबूरे पर भजन और शब्द वगैरह गाते।[४४] मारवाड़ में उन दिनों कामडपंथ की पंच देवोपासना साधारण जनता में ज्यादा प्रचलित थी। उनके पिता भी इस पंथ के अनुयायी थे। अतः रामदास भी रामदेव जी की उपासना में लग गए।[४५] कालान्तर में अनुभवी तत्ववेत्ता गुरु की खोज में निकल पड़े और अनेक गुरुओं की साधनाएं की।[४६] कहा जाता है कि इन्होंने बारी बारी से १२ गुरु किये पर किसी से सन्तोष नहीं हुआ।[४७]

गाधलाव गांव में ज्ञान चर्चा करते समय इन्हें अपने अपूर्ण ज्ञान का एहसास हुआ व इसी बीच चारण स्वामी द्वारा कबीर की वाणी तथा सिंहथल शाखा के प्रवर्तक हरिरामदास की एक रचना सुनकर बहुत प्रभावित हुए तथा उनसे भेंट करने सिंहथल चले गये।

सवत १८०० म वशाख शुक्ला ११ (एकादशी) को हरिरामदास महाराज से दीक्षा पाई।[४८] हरिरामदास स दीक्षा लन क उपरान्त मलाणा गाव म साधना प्रारभ की।[४९] पण सिद्धि प्राप्त कर लन क पश्चात वड़ू, सालवा आसाप रजलाणी अरटिया आदि ग्रामो म रामभक्ति का प्रचार करत हुए वि स १८२२ म व पुन स्थायी रूप स खेड़ापा म रहन लग।[५०]

धीर धीर इनक अनुयायियो की सख्या बढन लगी। खेड़ापा ग्राम से दो फर्लांग पर पहाड की तलहटी म वि स १८३८ (१७७७ ई) फाल्गुन कृष्णा चतुर्थी को इन्होन रामम्हल्ला का निर्माण प्रारभ करवाया और थोड ही दिनो म यह भवन बनकर तैयार हो गया।[५१] इनकी बढती लोकप्रियता को दखकर चोपासनी क गुसाई ने जोधपुर क महाराजा विजयसिह (१७५२ ९३ ई) को बहकाया कि खेड़ापा म पाखड पथ का प्रचार हो रहा है। महाराजा विजयसिंह वष्णव धर्म क समर्थक थ गुसाइ की बात को सही मानकर फाल्गुन शुक्ला ७ सवत १८४६ (१७८९ ई) म हरिरामदास को मारवाड़ त्यागने का आदेश दिया। राजाज्ञा प्राप्त होत ही रामदास जैस बैठ थ वस ही उठकर रवाना हो गये।[५२]

मारवाड़ छोडन क बाद य मवाड़ चल गय दवगढ़ नावसर, करेड़ा म कुछ समय रहन के पश्चात् सिंहथल चल गय। वहा स महाराजा सूरतसिह (बीकानेर) के आमत्रण पर बीकानेर गय। इस समय तक जोधपुर महाराजा विजयसिह न इन्ह पुन मारवाड आन क लिए निवदन किया। दूसरी बार अपन पत्र क साथ दीवान गोवर्द्धन सिंह खीची और रणछोड़ भाटी को भेजा तब व कार्तिक कृष्णा १४ वि स १८४९ (१७९२ ई) को खेड़ापा लौट आए। महाराजा विजयसिंह न इन्हे कुछ गाव भट करन चाह पर सत रामदास न स्वीकार नहीं किया।[५३] वि स १८५५ (१७९८ ई) को आषाढ़ कृष्णा सप्तमी मगलवार को सत रामदास का खेड़ापा म देहावसान हो गया।[५४] सत रामदास विवाहित थ उनक पश्चात् उनका पुत्र दयालदास खेड़ापा की गद्दी का उत्तराधिकारी हुआ।[५५]

रामदास क जीते जी तो कोई अलग स्वरूप या बाना इनका कायम नही हुआ था मगर बाद म उनक बेटे दयालदास क वक्त ५ भेद - विरक्त विदेही परमहस प्रवृत्ति और घरबारी कायम हुए[५६]—

(१) विरक्त नगे सिर, नगे पाव नगे बदन रामचरण जी क रामस्नेहियो की भाति रहते हैं।

(२) विदेही सिर्फ एक लगोटा ३ हाथ कपड़ा और एक तूबा या कमण्डल रखत हैं।

(३) परमहस - बिल्कुल नगे रहत है।

करते हुए उसका उपगा करन स जाव का सहज म हा मक्ति प्राप्त हा सकती ह । राम क नाम स्मरण की भा रामदास न अपन ढग से अध मध उत्तम आर अति उत्तम नाम चार प्रकार का कोटिया बतलायी ह ।

इसक साथ ही सत रामदास ने समान म प्रचलित भेदभाव ऊच-नीच मत मतान्तरा तथा आडम्बरा का व्यर्थ मानत हुए उसका विरोध किया । तथा आत्मज्ञान क बिना धर्म क नाम पर किए जान वाल सारे कर्मकाण्ड ढोग ह । उन्हान सत्य प्रम सहयाग अहिसा करुणा निष्कपट व्यवहार आर विश्वास आदि सद्गुणा की वृद्धि का उपदेश दकर मध्यकालान विकट परिस्थितियो म जनता का शान्ति प्रदान की ।

इस प्रकार रामस्नहा सम्प्रदाय की सारी शाखाओ क प्रवर्त्तको न मुख्य रूप स दो कार्य किय - पहला धर्म के सहज स्वरूप का जनता क सामने रखत हुए गुरुभक्ति सत्सग राम नाम स्मरण का महत्व बताया तो दूसरा तरफ समाज म व्याप्त आडम्बरा व पाखण्डा का विरोध कर यहा क लागा का सादगीपूर्ण जावन हतु प्ररित किया । एक आर विभिन्न स्थानो पर रामद्वारो का निर्माण कर अपने पथाय सगठन का मजबत किया ता दूसरी ओर इन रामद्वारो के निर्माण से राम नाम की भक्ति का प्रचार प्रसार यहा विस्तार पा सका आर राम को परब्रह्म क रूप मे स्वीकार किया गया । राम नाम के स्मरण स ही मोक्ष प्राप्ति हान का नवीन सदेश इन रामस्नेहिया से पाकर यहा की धर्मभीरू जनता म कर्मकाण्डा का विराध करन का साहस उत्पन्न हुआ तथा मिथ्या पाखण्डा स छुटकारा पाया । इस प्रकार लागा क धार्मिक आर सामाजिक दाना ही क्षेत्र रामस्नेहिया द्वारा दूर तक प्रभावित हुए ।

दादू पथी

सत दादू इस पथ क प्रवर्त्तक थे । इनक जन्म स्थान का लकर विद्वाना मे मतभेद ह[६३] किन्तु अधिकाश विद्वान् यह मानत ह कि इनका जन्म गुजरात क अहमदाबाद नगर म हुआ था । दादू जी का जीवन चरित्र नामक हस्तलिखित ग्रथ स भी इस बात का पुष्टि हाता ह जिसम दादू का जन्म गुजरात प्रान्त क अहमदाबाद नगर म वि स १६०१ फाल्गुन शुक्ला अष्टमी वृहस्पतिवार को होना वर्णित ह ।[६४] मर्दुमशुमारी रिपोर्ट राज मारवाड म भी यही उल्लेख मिलता है ।[६५]

जन्मस्थान की भाति दादू की जाति के सम्बन्ध म भी विभिन्न मत दृष्टिगोचर होते हैं तथा विभिन्न विद्वान् अपने अपने मतानुसार दादू को मोची[६६] मुसलमान[६७] तथा धुनिया[६८] आदि जाति से सम्बन्धित होना प्रतिपादित करत ह ।

दादूजा क शिष्य जनगोपाल[६९] एव रज्जब[७०] के कथना को आधार मानकर दादू का धुनिया मान जा सकता ह । दादूपथी अहमदाबाद क लोदीराम नागर ब्राह्मण द्वारा

दादू के पोषण की बात स्वीकार करते है किन्तु उनकी जाति के विषय में पूर्ण निश्चय के साथ कुछ नही बतलाते ।[71]

१२ वर्ष की अवस्था मे विस १६१३ के लगभग दादू ने बुड्ढन (ब्रह्मानन्द) नामक गुरु से ज्ञानोपदेश प्राप्त किया ।[72] १८ वर्ष की अवस्था मे गृहस्थाश्रम छोड़कर चिन्तन मनन और साधना मे लग गये । दादू जी अहमदाबाद से आगे होते हुए करडाला पहुंचे जहां ६ वर्ष तक कठोर साधना की तत्पश्चात विस १६२५ मे ये सांभर आए और यहां धुनिया का कार्य करना शुरु किया ।[73] सांभर मे रहते हुए दादू ने अपने उपदेशो मे हिन्दू व मुसलमानो के धार्मिक अन्धविश्वासो का खण्डन करना आरम्भ किया । प्रारंभ मे इनके विचारो का सांभर के काजी द्वारा विरोध हुआ तथा दादू को अनेक कष्ट भी सहने पडे ।[74]

सांभर मे दादू के उपदेशो का प्रारंभिक विरोध होने के उपरान्त भी वह पांच छः वर्ष तक यहां रहे तथा इनके विचारो से प्रभावित होकर कई लोग इनके शिष्य भी हो गये । इस प्रकार से इनके पंथ का प्रारंभ सांभर से ही हो गया । सांभर से संवत् १६३२ मे शिष्य मण्डली सहित आमेर गये और वहां वे करीब १४ वर्ष तक रहे । दादू की मुगल बादशाह अकबर से भेट होने की बात भी संत साहित्य मे मिलती है ।[75] किन्तु यह कहां तक सही है इसके बारे मे निश्चयपूर्वक कुछ नही कहा जा सकता क्योंकि पंथीय साहित्य के अलावा इसके और कोई प्रमाण उपलब्ध नही होते है ।

संवत १६५० से १६६० तक मारवाड़ जयपुर आदि राज्यो मे घूमकर अपने उपदेश देते रहे । संवत् १६६० मे नरायणा (नराणा) मे दादू जी का देहान्त हो गया ।[76]

दादू के बहुत से शिष्य थे । उनके जीवन काल मे ही अनेक शिष्य हो गये थे जिनका वर्णन जनगोपाल कृत दादू जन्मलीला माधोदास कृत संतगुणसागर मे मिलता है तथा दादू के शिष्यो प्रशिष्यो का विस्तृत विवरण राघवदास कृत भक्तमाल एवं लालदास कृत नाममाला मे मिलता है ।[77] दादूजी के १५२ प्रधान शिष्य थे जिसमे से १०० तो वीतरागी थे और वे अपने आत्मचिन्तन मे लीन रहे तथा इनके पीछे कोई शिष्य परंपरा नही चली ।[78] शेष ५२ शिष्यो की शिष्य परम्परा चली । उन्होने अपने शिष्य बनाये तथा विभिन्न थाभो (स्तम्भो स्थान विशेष) की स्थापना की । इन ५२ थाभो से दादू पंथ का व्यापक प्रचार हुआ तथा उसकी प्रणाली को गति मिली । दादू पंथियो के ये स्थान (थांभ) विशेषकर जयपुर, मारवाड मेवाड अलवर पंजाब आदि राज्यो मे स्थापित हुए ।[79] प्रत्येक थांभ का एक महन्त हुआ करता था और ये सभी महन्त नरायणा के महन्त के अधीन माने जाते थे[80] क्योंकि नरायणा का महन्त मुख्य आचार्य माना जाता था । यह आचार्य परम्परा दादूजी के बाद से ही प्रारंभ हो गयी थी । उनके देहान्त के पश्चात उनके पुत्र गरीबदास को आचार्य गद्दी (नरायणा थांभा) पर बिठाया गया ।[81]

नरायणा क महन्त जतराय (वि स १७५० १७८०) क समय यह पथ - खालसा विरक्त स्थानधारा खाका आर नागा पाच शाखाआ म विभक्त हा गया।[८२] दादूपथी दादूजा का न्यालजा आर नरायणा क महन्त का महाराज कहत ह।[८३] दादूपथा अपन स्थला म सिर्फ दादूजी की तस्वार या उनकी वाणी[८४] रखते ह। कुछ तुलसीकृत रामचरित मानस का पाठ करत ह। ज्यष्ठ शुक्ला अष्टमा तथा भाद्रपद एव मार्गशार्ष की अष्टमा जन्माष्टमा आर एकादशी का दादूपथी व्रत रखते ह।[८५]

मारवाड म जोधपुर (राइकाबाग) महलाणा ईडवा आसाप माराठ नागार, मेड़ता चापासर, रेण जावली कुचरा आदि स्थाना पर इस सम्प्रदाय के स्थल बन हुए ह।[८६] दादूपथिया क दा प्रमुख मले लगत ह पहला मेडता म (फाल्गुन मास क कृष्ण पक्ष की ९ वा को) दूसरा नरायणा म (फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष का पचमी से ग्यारस तक)।[८७]

राजस्थान क शासका पर इस सम्प्रदाय का अत्यधिक प्रभाव रहा ह। इस कारण उनका आर से इस सम्प्रदाय क साधुआ का एव महतो का बडा सख्या म नक्द भूमि एव अन्य सुविधाए दी गई।[८८] यहा यह उल्लेख करना भी समीचीन होगा कि जाधपुर राज्य का ओर स इस सम्प्रदाय को भूमिदान एव अन्य सुविधाए समय समय पर दी गई।[८९] महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम द्वारा वि स १७२४ म इस सम्प्रदाय को भमिदान दिए जाने का विवरण इतिहास म मिलता ह। इससे यह स्पष्ट हाता ह कि महाराजा विजयसिंह स पूर्व भा मारवाड के शासका द्वारा इस सम्प्रदाय का कुछ सुविधाए प्रदान का गई था परन्तु विजयसिंह के शासनकाल म इस मत का प्रचार प्रसार पिछल समय का अपेक्षा अधिक हुआ ओर जोधपुर म दादूपथिया का पहला स्थल सवत् १८४२ म[९०] (महाराना विजयसिह क शासन काल म) स्थापित हुआ।

राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर स्थित जोधपुर रेकर्ड्स का विभिन्न बहिया (सनद परवाना खास रुक्का परवाना) स यह ज्ञात हाता हे कि समय ममय पर मारवाड़ राज्य की आर से यहा स्थित दादूपथियो को स्थल हतु भूमि ग्राम का आमदनी घास के मदान भट किए गए एव उनके लिए खरीद जान वाल अनाज पर राहदारा कर माफ[९१] करन के आदेशा का ब्यारा मिलता है। इस प्रकार राजवर्ग आर जनता दाना म हा दादूपथ का प्रतिष्ठा आर प्रचार लम्ब समय तक रहा है।

दादू न भा अन्य सता की तरह ब्रह्म जाव माया मन जगत माक्ष इत्यादि पर अपने विचार सरल व साधारण भाषा म व्यक्त किए ह जिसस रहस्यमय तत्वा का अनपढ एव साधारण ज्ञान वाले व्यक्ति भी आसाना स समझ सक।[९२] ब्रह्म की सर्वव्यापकता का वर्णन करत हुए दादूजी ने यह स्वीकार किया है कि वह दयालु, सर्वत्र समाया हुआ ह। राम राम म रमा हुआ ह।[९३] जस पानी म प्रवेश कर आख खालन पर जिस प्रकार चाग आर जलबिम्ब हा दिखाई देता ह उसी प्रकार वह ब्रह्म सर्वत्र विद्यमान ह।[९४] ब्रह्म का

महिमा अपरम्पार है न हल्का है न भारी जिसका नाप तोल नहीं किया जा सकता। कितने ही लोग प्रयत्न करते करते थक गये पर उसका परख नहीं कर सके। यहां तक कि सनकादिक और नारद जैसे मुनि भी उसका पार नहीं पा सके।[९५]

सर्वशक्तिमान ईश्वर, जीव माया मोक्ष सद्गुरु जगत आदि के बारे में दादू ने अपनी धारणा स्पष्ट की इसके साथ ही अहंकार इत्यादि मन के विकारों के त्याग साधुसंगति ध्यान एवं हरिस्मरण की आवश्यकता पर भी अपने विचार व्यक्त किये।

दादूवाणी[९६] में स्थान स्थान पर समाज में व्याप्त ढोंग आडम्बर, वर्गभेद इत्यादि सामाजिक कुरीतियों का खण्डन दृष्टिगोचर होता है। कबीर की भांति हिन्दू व मुसलमान दोनों की अतिवादी एवं निरर्थक धारणाओं का दादू ने खण्डन किया इसीलिए दादू और कबीर के सिद्धान्तों में साम्यता दिखाई देती है। यद्यपि कबीर में उग्रता झलकती है जबकि दादू में विनम्रता का भाव है।[९७]

इस प्रकार दादू ने अपने चिंतन के आधार पर जिस सत्य की उपलब्धि की उस सत्य को जनता के लिए बोधगम्य बनाने एवं उनका उद्धार करने के लिए अनेक वाणियों की रचना की जिनका प्रचार पूरे राजस्थान में पाया जाता है और खास तौर से मारवाड़ में तो दादू को कबीर आदि महान संतों के समकक्ष ही महत्व देते हैं।

दादू की वाणियों में जहां आध्यात्मिक महत्व है वहां सामाजिक महत्व इस दृष्टिकोण से है कि उन्होंने हिन्दू धर्म में फैले हुए पाखण्ड और कर्मकाण्ड के वितण्डावाद से मुक्ति दिलाने का प्रयास सहज और सरल ढंग से किया। और जैसा कि पहले निर्दिष्ट किया जा चुका है कि उनके शिष्यों प्रशिष्यों ने अनेक स्थानों पर निवास कर दादूजी के विचारों का निरन्तर प्रचार प्रसार किया इससे निश्चय ही इन्होंने यहां के हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही धर्मावलम्बियों को प्रभावित किया तथा बाह्य आडम्बर को कम कर सरल जीवन की पद्धति को समाज में प्रतिष्ठापित किया। समाज में आत्म सन्तोष और शान्तिपूर्ण जीवन जीने की एक प्रणाली भी इस प्रकार दादू ने परोक्ष रूप में यहां के निवासियों को दी यह दादू का बहुत बड़ा दाय यहां के लोगों को है। दादू ने अपने विचार सरस वाणियों के माध्यम से अभिव्यक्त किये हैं। इन वाणियों में इनके शिष्य प्रशिष्यों ने भी अपने नाम से अनेक वाणियें रचकर जोड़ दी हैं। इस प्रकार यहां के संत साहित्य में इनका एक विशिष्ट महत्व हो गया है।

कबीर पंथ

कबीर की जीवन सम्बन्धी उपलब्ध सामग्री बहुत अनिश्चित है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल डा श्यामसुन्दर दास आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी डा भण्डारकर, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी इत्यादि भारतीय विद्वानों के अतिरिक्त र वेस्टकाट मैकफिल

अडरटिल फुर्करर आदि अनक विशा विद्वानो न भी कबीर के जीवन सम्बन्धी तथ्यों पर विस्तार स वर्णन किया है परन्तु पुष्ट प्रमाणो के अभाव म कबीर क जीवन वृत्तान्त क सम्बन्ध म कोई सामान्य मत निश्चित नहीं हो सका है।

कबीर के जन्मकाल तथा काल निर्णय के सम्बन्ध म बहुत अधिक मतभेद[98] देखने को मिलते है। डा. श्यामसुन्दर दास न कबीर का जन्म संवत् १४५६ माना है[99] तथा जो कबीरपंथियो के साहित्य के विश्लेषण पर आधारित है। डा. श्यामसुन्दर दास के मन्तव्य स आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी सहमत हैं।[100]

कबीर जाति के जुलाहा थे।[101] कबीर की जाति के सम्बन्ध म भी मतभेद है।[102] किन्तु कबीर न अपने को बार बार इस नाम म सम्बोधित किया है।[103] काशी निवासी कबीर के जीवन की घटनाओं के सम्बन्ध म कोई निश्चित बात ज्ञात नहीं होती सारी घटनाएं लोकधारणा विशेष कर कबीरपंथियो म प्रचलित दंतकथाओं पर आधारित है। ब्राह्मणी (विधवा) के गर्भ स उत्पन्न होने तथा नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पत्ति स पोषित होने की कथा भी इसी की एक कड़ी है।

कबीर के जन्म जाति माता पिता की भांति ही उनके दीक्षागुरु का प्रकरण भी विवादास्पद है। कबीर रामानन्द के प्रमुख शिष्यो म स थे।[104] यह मान्यता काफी प्रचलित है साथ ही रामानन्द के अतिरिक्त कबीर के गुरु के सम्बन्ध म शेख तकी और पीताम्बर पीर का नाम भी लिया जाता है तो कुछ यह भी मानते हैं कि कबीर न किसी सन्त विशेष स दीक्षा ग्रहण नहीं की थी।[105]

कबीर को अधिकतर ज्ञान सत्संग की ही देन है और उनके संस्कारो से स्वतः स्फूर्त है फिर भी उनकी वाणियो म गुरु की महिमा वर्णित है जिसस ज्ञात होता है कि वे गुरु के कृपाकांक्षी बनने को इच्छुक थे तथा "कासी म हम प्रकट भये हैं रामानन्द चेताये" नामक कबीर की उक्ति के आधार पर यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि कबीर न रामानन्द को गुरु रूप म माना तो अनुचित न होगा।

स्वयं कबीर न तो कहा था - मसि कागद छूयो नहिं किन्तु उनके नाम से कई पद प्रचलित है। कबीर के बनाये भजन साखी और दोहे "कबीर जी की वाणी" के नाम स समाज म प्रचलित है तथा ग्रन्थो म लिपिबद्ध मिलते हैं जिनको उनके अनुयायी बड़ी श्रद्धा से पढ़ते है और गाते है।[106] रामदास गौड़[107] न कबीर की पुस्तको की तथा प्रो रामकुमार वर्मा[108] ने ६१ पुस्तको की सूची दी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी न इन दोनो के द्वारा उल्लिखित कबीर की पुस्तको का विश्लेषण करने पर यह पाया कि इनम स अधिकांश रचनाएं दूसरो की लिखी हुई है और अनेक रचनाओं की पुनरावृत्ति हुई है।[109]

बाजक कबीर की रचनाओं का पुराना एवं प्रामाणिक संग्रह माना जाता है। इसमें ८४ रमैनियां है। यह चौपाई छन्द में है। कबीर की सबसे प्रामाणिक रचना साखियां मानी गया है।[११०]

कबीर की भक्ति एवं उसके स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों के विभिन्न मत हैं कबीर ने अपनी समस्त साधना अपने मालिक और व्यक्तिगत रूप में ही की थी। उनकी भक्ति पर किसी ने रहस्यवाद का आवरण चढ़ाया है और किसी ने एकेश्वरवाद का। उनके बारे में यह भी कहा गया है कि वे अपने वाग्वैचित्र्य द्वारा अनपढ़ लोगों को चकित किया करते थे।[१११]

कबीर के निधन के सम्बन्ध में दो तिथियां प्रसिद्ध हैं[११२] किन्तु अधिकांश विद्वानों ने उनके परलोकवास का संवत् १५७५[११३] ही स्वीकार किया है।

कबीर पंथ का प्रचार उत्तरी भारत के बहुत बड़े भू भाग पर हुआ। मारवाड़ में भी इस पंथ का प्रचार प्रसार विवेच्य काल में हो चुका था। यहां के कबीर पंथी साहिबदास की गादी को गुरु परम्परा को स्वीकार करने वाले हैं। महाराजा विजयसिंह के शासनकाल में (आश्विन शुक्ला १५ वि स १८३५ को) काशी से कबीरपंथी रामदास और लच्छाराम जोधपुर में आये तब से मारवाड़ में कबीरपंथियों का प्रचार प्रसार अधिक हुआ। इनके गुरुद्वारे जोधपुर के अतिरिक्त मारवाड़ के सांडिया दयालपुरा और चाटलाव इत्यादि गांव में भी हैं। इनकी जमात मंडली कहलाती है।[११४]

कबीर ने प्रमुख रूप में निर्गुण भक्ति का सन्देश यहां की जनता को दिया इसके साथ ही साधारण जन जीवन के फरेबों से मुक्त होकर किस प्रकार सत्य की ओर अग्रसर हो सकता है उसके लिए उन्होंने जो बातें कही हैं वे उनको समाज सुधारक के रूप में भी प्रकट करती हैं और सामाजिक विचारधारा में परिवर्तन की दृष्टि से इनका अध्ययन अवश्य ही मूल्यवान है।

कबीर की भक्ति के साथ उनकी सहज साधना गुरु महिमा बाह्याचार खंडन भी जनता के लिए आकर्षण का कारण थे। कबीर की सधुक्कड़ी भाषा और अपने अनुभव से कही गयी बानी[११५] हिन्दू और मुस्लिम दोनों वर्गों ने समान रूप से अपनाई। कबीर की सरलता सहजता और सत्यता ने ही उन्हें व्यापक धरातल प्रदान किया।

कर्मठता से उदासीन रहने वाली हिन्दू जाती की धर्मजन्य त्यागुलता ने उसे दासता के गर्त में ढकेल दिया था। हिन्दू जाति में से जीवनशक्ति के सब लक्षण मिट गए।[११६] लगातार होने वाले बाह्याक्रान्ताओं के बर्बर अत्याचार से देश में नैराश्य अपनी चरमसीमा पर पहुंच गया था। ऐसी विषम परिस्थिति में जनता का ईश्वर से विश्वास उठने लगा था तथा कष्टों से त्रस्त होकर उसके अनीश्वरवाद की ओर प्रवृत्त होने के अवसर प्रबलतम

रन रह थ । एसा सामाजिक परिस्थिति म कबार का आविर्भाव हुआ आर उन्हान समय का माग क अनुरूप बड हा काशल क माथ जनता का भक्तिमार्ग का ओर प्रवृत्त कर उसे अनाश्वरवाद के अन्धकार स छुटकारा दिलाने का उपक्रम खाजा ।

यह समय सगुण भक्ति क प्रचार क लिए उपयुक्त नहा था क्याकि सगुण उपासना का नि सारता[११७] स जनता परिचित था आर उस पर उसका विश्वास उठ चुका था । अतएव जनता का उमा मार्ग की आर सहसा प्रवृत्त नहा किया जा सकता था अत कबीर न निर्गुण भक्ति स त्रस्त जनता को शान्ति सन्तोष व सात्वना प्रदान करने का प्रयास किया । कबार का यह प्रयास उपयागी आर लाभदायक सिद्ध हुआ तथा जनता ने उसम काफा रुचि ला । कबार का निर्गुणवाद जहा तत्कालीन परिस्थितिया म जनता क लिए आस्था का कन्द्र बना । वहा तुलसी आर सूर क सगुणवाद क लिए भी इसने प्रशस्त किया । मारवाड हा नहीं समस्त उत्तरी भारत म शन शन कबार का निर्गुण भक्ति न भय आर आतक वमनस्य आर घृणा क स्थान पर सोहार्द आर प्रम आस्था आर विश्वास का वातावरण उत्पन्न किया तथा धार्मिकता क लिए भावा पथ प्रशस्त कर जीवन म सरसता का सचार किया ।

कबीर का युग दा प्रकार का सस्कृतिया के सगम का समय था । आपसा सघर्ष तथा उसक विनाशकारा भयावह परिणामा के पश्चात् फिर स दोना ही वर्गा के लागा का धर्म का सही स्वरूप समझान हतु कबीर ने निर्भय हाकर कार्य किया । इस प्रकार ईश्वर की सर्वापरिता धर्म की व्यापकता मानव का एकता के मूल्य स्थापित कर सामाजिक जीवन म दाना हा वर्गा म जा व्यर्थ के पाखण्ड एव आडम्बर व्याप्त थे उनकी भर्त्सना की ।

नाथ सम्प्रदाय

नाथ शब्द का प्रयाग रक्षक या शरणदाता क अर्थ म अथर्ववेद आर तत्तिरीयब्राह्मण म मिलता ह । महाभारत म स्वामी या पति के अर्थ मे इसका प्रयाग पाया जाता ह । बाधिचर्यावतार म बुद्ध के लिए इस शब्द का व्यवहार हुआ ह । जना आर वष्णवा म भा इस शब्द का प्रयाग सबस बडे देवता के अर्थ म पाया जाता ह । परवर्तीकाल म यागपरक पाशुपत शवमत का विकास नाथ सम्प्रदाय के रूप म हुआ आर नाथ शब्द शिव क अर्थ म प्रचलित हा गया । मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गारक्षनाथ या गारखनाथ इस मत क सबस बड पुरस्कर्ता थ ।[११८]

इस सम्प्रदाय के आद्यसस्थापक परम्परा क अनुसार भगवान शिव ह जा सब नाथा क प्रथम आदिनाथ क नाम स विख्यात ह ।[११९] इसस स्पष्ट ह कि सम्प्रदाय शवमत की हा परवर्ती शाखा ह । सिद्धमत सिद्धमार्ग यागमार्ग यागसम्प्रदाय अवधूत सम्प्रदाय आदि विविध नामा स इस मत की पर्याप्त ख्याति उपलब्ध हाता ह । इस मत का मुख्य धर्म यागाभ्यास ह ।[१२०]

ाने रहे थे। ऐसी सामाजिक परिस्थिति में कबीर का आविर्भाव हुआ और उन्होंने समय की माँग के अनुरूप बड़े ही कौशल के साथ जनता को भक्तिमार्ग की ओर प्रवृत्त कर उसे अनाश्वरवाद के अन्धकार से छुटकारा दिलाने का उपक्रम खोजा।

यह समय सगुण भक्ति के प्रचार के लिए उपयुक्त नहीं था क्योंकि सगुण उपासना की निःसारता[११८] से जनता परिचित थी और उस पर उसका विश्वास उठ चुका था। अतएव जनता को उसी मार्ग की ओर सहसा प्रवृत्त नहीं किया जा सकता था अतः कबीर ने निर्गुण भक्ति से त्रस्त जनता को शान्ति सन्तोष व सान्त्वना प्रदान करने का प्रयास किया। कबीर का यह प्रयास उपयोगी और लाभदायक सिद्ध हुआ तथा जनता ने उसमें काफी रुचि ली। कबीर का निर्गुणवाद जहाँ तत्कालीन परिस्थितियों में जनता के लिए आस्था का केन्द्र बना। वहाँ तुलसी और सूर के सगुणवाद के लिए भी इसने प्रशस्त किया। मारवाड़ ही नहीं समस्त उत्तरी भारत में शनैः शनैः कबीर की निर्गुण भक्ति ने भय और आतंक वैमनस्य और घृणा के स्थान पर सौहार्द और प्रेम आस्था और विश्वास का वातावरण उत्पन्न किया तथा धार्मिकता के लिए भावी पथ प्रशस्त कर जीवन में सरसता का संचार किया।

कबीर का युग दो प्रकार की संस्कृतियों के संगम का समय था। आपसी संघर्ष तथा उसके विनाशकारी भयावह परिणामों के पश्चात् फिर से दोनों ही वर्गों के लोगों को धर्म का सही स्वरूप समझाने हेतु कबीर ने निर्भय होकर कार्य किया। इस प्रकार ईश्वर की सर्वोपरिता धर्म की व्यापकता मानव की एकता के मूल्य स्थापित कर सामाजिक जीवन में दोनों ही वर्गों में जो व्यर्थ के पाखण्ड एवं आडम्बर व्याप्त थे उनकी भर्त्सना की।

नाथ सम्प्रदाय

नाथ शब्द का प्रयोग "रक्षक" या "शरणदाता" के अर्थ में "अथर्ववेद" और "तैत्तिरीयब्राह्मण" में मिलता है। "महाभारत" में "स्वामी" या "पति" के अर्थ में इसका प्रयोग पाया जाता है। "बोधिचर्यावतार" में बुद्ध के लिए इस शब्द का व्यवहार हुआ है। जैनों और वैष्णवों में भी इस शब्द का प्रयोग सर्वत्र बड़े देवता के अर्थ में पाया जाता है। परवर्तीकाल में योगपरक पाशुपत शैवमत का विकास नाथ सम्प्रदाय के रूप में हुआ और नाथ शब्द शिव के अर्थ में प्रचलित हो गया। मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरक्षनाथ या गोरखनाथ इस मत के संयम बड़े पुरस्कर्ता थे।[११८]

इस सम्प्रदाय के आद्यसंस्थापक परम्परा के अनुसार भगवान शिव हैं जो सब नाथों के प्रथम आदिनाथ के नाम से विख्यात हैं।[११९] इससे स्पष्ट है कि सम्प्रदाय शैवमत की ही परवर्ती शाखा है। सिद्धमत सिद्धमार्ग योगमार्ग योगसम्प्रदाय अवधूत सम्प्रदाय आदि विविध नामों से इस मत की पर्याप्त ख्याति उपलब्ध होती है। इस मत का मुख्य धर्म योगाभ्यास है।[१२०]

नाथ सम्प्रदाय में यौगिक क्रियाओं की प्रधानता के फलस्वरूप भक्ति में इसका इतना लगाव नहीं रहा। गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने ग्रंथ कवितावली में इस सम्प्रदाय के भक्तिहीन योग की ओर संकेत करते हुए स्पष्ट दर्शाया है कि गोरखनाथ ने योग को जगाकर भक्ति को दूर कर दिया था।[१२१]

इस मत के प्रारंभिक प्रतिष्ठापकों और प्रचारकों में मत्स्येन्द्रनाथ, जलधरनाथ, गोरखनाथ तथा कृष्णपाद (कानुपा) इन चार आचार्यों को विशिष्ट महत्व परिलक्षित होता है। गोरखनाथ मध्ययुग के विशिष्ट महापुरुषों में से थे तथा हठयोग के महान् आचार्य के रूप में उन्होंने प्रसिद्धि पाई। इनके उपदेशों में योग तथा शैवों की तांत्रिक विद्या का पूर्व सामंजस्य देखने को मिलता है।[१२२] उनके अनुयायियों की यह धारणा है कि गोरखनाथ अपनी हठ विद्या के बल पर मृत्युंजयी हो गये हैं और आज भी वे अपने चमत्कार से अपने भक्तों में श्रद्धा भाव को जगाते हैं और उनकी सहायता करते हैं।

"विक्रम संवत् की दसवीं शताब्दी में भारतवर्ष के महान् गुरु गोरखनाथ का आविर्भाव हुआ। शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमान्वित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भारत वर्ष के कोने कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का योगमार्ग ही था। भारतवर्ष की ऐसी कोई भाषा नहीं है जिसमें गोरखनाथ संबंधी कहानियाँ न पाई जाती हों।[१२३]

नाथ सम्प्रदाय का यह प्रभुत्व उन्नीसवीं शताब्दी तक विशेष रूप से देखा जा सकता है परन्तु हमारे आलोच्य काल (१६०० १८०० ई तक) और उसके पहले भी नाथ सम्प्रदाय का प्रचुर प्रभाव इस क्षेत्र में रहा है। इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं।

मारवाड़ में नाथ सम्प्रदाय के लोग अधिक संख्या में पाये जाते हैं। इन्हें नाथ, जोगेश्वर, सरूप, आयस इत्यादि नाम से पुकारा जाता है। मारवाड़ के नाथ जलधरनाथ को अधिक मानते हैं तथा उनके चमत्कारों के किस्से यहाँ बहुत मशहूर हैं।[१२४] इस सम्प्रदाय का मारवाड़ में प्रचुर मात्रा में प्रभाव रहा।[१२५]

मारवाड़ में जलधरनाथ का प्राचीन आसन जालोर किले पर था।[१२६] महाराजा मानसिंह ने उस प्राचीन स्थान पर सिरे मन्दिर का निर्माण करवाया। महाराजा मानसिंह की तो नाथ सम्प्रदाय के प्रति गहरी आस्था थी परन्तु उसके पूर्व भी मारवाड़ के राठौड़ शासकों द्वारा भी नाथ सम्प्रदाय स्वीकार किया गया तथा उसमें रुचि लेने के प्रमाण इतिहास में मिलते हैं। मारवाड़ के राठौड़ शासक रावल मल्लिनाथ ने सर्वप्रथम इस मत को स्वीकार किया।[१२७] मल्लीनाथ नाम भी नाथ सम्प्रदाय के योगी रतन का दिया हुआ है।[१२८] महाराजा अजीतसिंह द्वारा भी गोरखनाथ के आसन (आश्रम) को काफी

गम रने का उल्लेख मिलता ह।[१२९] कालान्तर म इस मत का प्रचार मारवाड म (विशेषकर महाराजा मानसिंह क काल म) अत्यधिक हुआ आर इस राजकीय सम्मान प्राप्त हुआ।[१३०]

मारवाड क जन साहित्य म नाथ सम्प्रदाय क सिद्धा[१३१] विशेषकर गारखनाथ आर जलधरनाथ के चमत्कारा का उल्लेख मिलता ह तथा उनसे सबधित कई घटना प्रसग यहा पचलित ह। यहा क जनसाहित्य का जा लाकिक परम्परा ह उसम यह बात बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी ह कि राठाड़ पाबू जा कि यहा क प्रसिद्ध लाक दवता हा चुके थ जिनका जादराव खाची ने मारा। पाबू के भतीज झरडा न गारखनाथ का कृपा से सिद्धि प्राप्त कर अपन चाचा का बर लिया। इस तथ्य का विस्तृत वर्णन पाबूजा का पड म किया गया ह आर परवर्तीकाव्य पाबूप्रकाश म भी इस प्रसग का विस्तार क साथ उजागर किया गया ह।

मारवाड़ म नाथ सम्प्रदाय म महामदिर (जाधपुर) क नाथजा का उच्च स्थान प्राप्त था। जाधपुर क शासको द्वारा इन्ह बहुत बड़ी जागार भटस्वरूप प्रदान की गयी। यहा क नाथ पावपथी कहलात हे।[१३२] महामदिर मठ का उल्लेख नाथसम्प्रदाय क प्रमुख मठा म होता हे।[१३३]

आचार्य हजारा प्रसाद द्विवदा ने नाथ सम्प्रदाय क विभिन्न पथा का उल्लख करत समय पावनाथ को जयपुर का बतलाया ह परन्तु पावपथ के बार म काई जानकारी नहा दा ह कवल पा पथ (?) का उल्लेख मात्र करके छाड़ दिया ह।[१३४] सभवत इसा पा पथ स यहा क पावपथा नाथ सबधित रह हाग आर इस शाखा क सिद्ध पावनाथ (जा इसके प्रवर्तक कहे जा सकत है) के आधार पर ही इस का नाम करण पावपथा हुआ हागा। आचाय परशुराम चतुर्वदी[१३५] न नाथ परम्परा आर उसका बारह प्रधान शाखाआ[१३६] का वर्णन करत हुए लिखा ह कि- मीननाथी पथ सभवत पावनाथ पथ भा कहा जाता ह आर उसका मुख्य स्थान जोधपुर का महामदिर है।

मारवाड़ के प्राय प्रत्यक जागीर क गाव म नाथ सम्प्रदाय का मठ जिस यहा आसण भा कहते ह बना हुआ आज भी मिलता ह जिसस यह अन्दाजा लगाया जा सकता ह कि इस मत का यहा प्रचुर मात्रा म प्रभाव रहा हागा। इन मठा के पुजारिया क पास भटस्वरूप प्राप्त जा जमीन ह उसे डोळा[१३७] के नाम से जाना जाता हे।

नाथ निम्नांकित वस्तुए[१३८] सदा अपन पास रखत ह अत उन वस्तुआ का उनक सम्प्रदाय का प्रतीक कहा जा सकता है क्योकि उनक कारण हा उनकी अलग स एक पहचान बनी रहता ह।

मारवाड़ में नाथ सम्प्रदाय की तीन शाखाएं[139] (पंथ या उपसम्प्रदाय) भी देखने को मिलती हैं जो मूलतः नाथ सम्प्रदाय से ही सम्बद्ध रही हैं किन्तु कालान्तर में आचरणगत भिन्नता के कारण ये अलग पंथीयस्वरूप के रूप में पहचानी जाने लगीं। इन पर भी पृथक रूप में विचार करना समीचीन होगा—

1. जोगी
2. मसानिया जोगी
3. कालबेलिया

(१) जोगी

नाथ सम्प्रदाय की भांति इस पंथ की प्रारंभिक उत्पत्ति भी शिव से मानी जाती है। कालान्तर में जोगियों का एक अलग पंथ बन गया जो अपनी गुरु परम्परा गुरु गोरखनाथ से जोड़ता है। पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि नाथ सम्प्रदाय के प्रसिद्ध प्रवर्तकों में मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ का महत्वपूर्ण स्थान था जिनसे जोगियों का यह पंथ प्रारंभ हुआ। इस पंथ के लोगों की यह मान्यता है कि यह पंथ बड़ा प्रतिष्ठित रहा है और गोपीचन्द[140] और भर्तृहरि[141] जैसे युगपुरुष भी इसमें दीक्षा ले चुके हैं।

इस सम्प्रदाय में योगसाधना पर अधिक बल दिया जाता था। यौगिक क्रियाओं द्वारा आकाश में उड़ना, पानी पर चलना, काया पलट, परकाया प्रवेश इत्यादि चमत्कारों और रहस्यमयी सिद्धियों की प्राप्ति करना इनका प्रमुख ध्येय रहा है। इस पंथ की विचित्र क्रियाओं का समाज के लोगों पर काफी प्रभाव था और संभव है ऐसे सिद्धों के चमत्कारों ने ही यहां के अधिकांश जनमानस को बहुत समय तक प्रभावित किया होगा। इस प्रकार के अनेक सन्दर्भ प्राचीन [illegible] गाथाओं में देखने को मिलते हैं।[142]

नाथ सम्प्रदाय की भांति ये जोगी भी गेरुआ (भगवा) रंग के वस्त्रों का प्रयोग और गांवों से दूर रहकर एकान्त और निर्जन स्थानों में अपनी योग साधना करते थे। कालान्तर में ये जोगी गृहस्थ हो गये और आजकल इनके कबीले गांवों में घूमते हुए भी दिखाई देते हैं।

मारवाड़ की ख्यात[143] में उल्लेख किया गया है कि— ये जोगी अनेक शाखाओं के [illegible] हैं। मत्स्येन्द्रनाथ के [illegible] चमत्कार के [illegible] भी ये गुरु रहे। इनके अतिरिक्त [illegible][144] और [illegible] हैं।

(२) मसानिया जोगी

[illegible]

न उनके वारिशदारो की इच्छानुसार जाधपुर के मुदा के आधे कफन का हक उनका प्रदान किया। यह कफन लेन क कारण ही य मसानिये जोगी कहलाय।[१४५]

नाथ सम्प्रदाय के लोगा न इस घृणित कार्य का करन के कारण इन्ह अपना जाति से बहिष्कृत कर दिया फिर भी य चिडियानाथ क आसन को अपना गरु द्वारा मानत ह तथा उनक दर्शनार्थ पालासना गाव जाते ह।

य गृहस्थ ह तथा खती आर मजदूरी करके अपना जीवन निर्वाह करत कुछेक भाख मागकर भी अपना गुजारा करत हे।

इनका प्रमुख तार्थ अरना[१४६] हे जो जोधपुर नगर से ६ (छह) मील पश्चिम का आर भामसेन नामक पहाडी की घाटी म स्थित ह।

(३) काळबेलिये

मसानिय जोगिया की भाति कालबेलिय भा नाथा की न्यात म बहिष्कृत किय गये लागा का एक समूह (पथ) है जिस नाथ अपन स नीचा समझते ह। इनका नामकरण भी इसी धटना के सदर्भ म हुआ हे। कार वार अर्थात अपनी जातिगत मर्यादाआ का छोडने के कारण इनका नाम कालबेलिया पडा जा कारबारेया का अपभ्रश स्वरूप ह।[१४७]

जाधपुर परगने मे स्थित ढिकाई गाव म अपने गुरु कनीपाव का गद्दी को कालबलिय अपना गुरुद्वारा मानते हे। कनीपाव जालधरनाथ का शिष्य परम्परा म थे।[१४८] कनीपाव सपरा क गुरु मान जात ह।[१४९] कनीपाव वडे करामाती थ तथा साप विच्छु जस विषले प्राणिया से भयभीत लोगा की सुरक्षा हतु उन्ह पकड लत थ एव उनके काटे जान पर लोगा का मत्र तत्र और जड़ी बूटियो स उपचार करत। उनके शिष्या ने भा इसा धध का जारी रखा।[१५०] आज भी कालबेलिये सापा का पकडने म सिद्धहस्त ह तथा उनस भयभात नही होत एव इस अपने गुरु कनीपाव पर पर्ण विश्वास ह।

कालबेलिय काना म कासी पीतल आर चादी क मुदर पहनत ह उन्ह मुर्राक्या व तुगल नाम स भा पुकारा जाता है।

इस प्रकार नाथ सम्प्रदाय स सम्बद्ध ये ताना शाखाए मूलत उमा परम्परा का एक अग ह किन्तु जोगिया न गारखनाथ मसनिय जोगियो न चिडियानाथ तथा कालबलिया ने कनीपाव का अपनी आस्था का केन्द्र बिन्दु मानकर भिन्न शाखाआ म अपन आपका विभाजित कर दिया। उन उपशाखाआ का यहा क समाज पर उतना व्यापक आर दीर्घकालिक प्रभाव नही रहा जितना इनक मूलपथ नाथ सम्प्रदाय का रहा।

माघ सम्प्रदाय

माध सम्प्रदाय एव उसक प्रधान प्रवर्तका की प्रामाणिक जावनिया उपलब्ध नही हा सका ह। ब्नरा फिशर विलियम क्रुक विल्सन विलियम टाट डा. फुर्कहर, एलिशन

आदि विद्वानों ने इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है। लेकिन इस सम्प्रदाय की उत्पत्ति प्रगति तथा सिद्धान्तों के बारे में अभी मतभेद बने हुए हैं तथा साध पंथी लेखकों की कृतियों पर ही अधिक निर्भर रहना पड़ रहा है। साध सम्प्रदाय के मतानुयायी अपने सम्प्रदाय का प्रारम्भ अनादिकाल से मानते हैं तथा इसके इतिहास को सतयुग त्रेता द्वापर और कलियुग में विभक्त करते हैं।[१५१] साध सम्प्रदाय के प्रवर्तक के संबंध में मुख्य रूप से वीरभान वीरलाल और उदादास का उल्लेख किया जाता है किन्तु मूल प्रवर्तक के विषय में अभी कोई सर्वसम्मत मत स्वीकार नहीं किया गया है।

साध सम्प्रदाय एक आचरण प्रधान सम्प्रदाय है जिसमें इस सम्प्रदाय के १२ नियमों का पालन अनिवार्य रूप से करना होता है। इस सम्प्रदाय के अनुसार ईश्वर एक सर्वशक्तिमान निराकार, सर्वव्यापी सर्वशक्तिमान तथा परम दयालु है। जिसे वे सतगुरु और सतनाम के नाम से पुकारते हैं। इनके यहां मूर्तिपूजा शपथग्रहण भेष या किसी प्रकार का भी व्यर्थ प्रदर्शन निषिद्ध है और व्यक्तिगत साधना ही इन्हें अधिक मान्य है।[१५२] इस सम्प्रदाय की स्वीकृत साधनाओं में नाम स्मरण सत्संग संयत जीवन आदि का प्रमुख स्थान है।[१५३]

साधों के संबंध में रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ में यह उल्लिखित है कि 'साधों का भी एक सम्प्रदाय (भेष) है और मारवाड़ में ये बहुत संख्या में पाये जाते हैं साथ ही ये कई तरह के हैं किन्तु सब का मूल आधार रामानुज सम्प्रदाय है। रामानुज सम्प्रदाय के रामानन्द जी से यह सम्प्रदाय चला। रामानन्द जी राघवानन्दजी के शिष्य थे तथा दक्षिण के ब्राह्मण थे। बहुत समय तक उत्तरी भारत में रहने के कारण उनको वहां की बिरादरी वालों ने नहीं अपनाया जातिच्युत कर दिया तथा उन्हें प्रायश्चित्त करने के उपरान्त जाति में लेने की बात कही परन्तु रामानन्द ने इसे स्वीकार नहीं किया और अपने नाम से रामानन्दी पंथ चलाया। इस पंथ में रामानुज सम्प्रदाय की कठोर वर्णाश्रम एवं खान पान की मर्यादा को सरल बना कर अपने पंथ में प्रत्येक जाति के व्यक्ति को अनुयायी बनने का अधिकार दिया

जात पात पूछे नहि कोय
हरि को भजे सो हरि का होय।[१५४]

इस प्रकार ईश्वर के स्मरण में जातिगत बंधन एवं वर्णाश्रम के कठोर नियमों का परित्याग करने से रामानंदी पंथ का जगह जगह शीघ्र प्रचार हो गया। रामानंदी पंथ का प्रमुख गद्दी काशी में मानी जाती है किन्तु मारवाड़ में रामानन्दी साधुओं का प्रचार कृष्णदास जी पयहारी[१५५] के शिष्यों द्वारा हुआ। रामानंदी साधों से कई छोटे बड़े पंथ निकले जिनमें से कुछ की बहुत सी परम्परा तो एक दूसरे से मिलती जुलती है तथा कुछ अलग परम्पराएं भी स्थापित हुईं।

मारवाड़ मे जो विभिन्न प्रकार के साध पथ जैसे रामावत धन्नावसी दसनामी और सतनामी आदि पाये जाते है उनका सक्षेप मे यहा उल्लेख करना समीचीन होगा।

रामावत साध

मारवाड मे रामावत साधो का आगमन आमेर (गलता तीर्थ की गद्दी) मे हुआ। कृष्णदास पयहारी के एक शिष्य कालजी तो गलता मे ही रहे दूसरे अगरजी थे जिन्होने रैवासा मे अपनी गद्दी स्थापित की। मारवाड के अधिकाश रामावत साधो के गुरुद्वार इनसे ही सम्बद्ध है। मारवाड़ मे इस पथ के प्रमुख और बडे गुरुद्वार खोड[१५६] तथा झीतडा मे है। खोड का गुरुद्वारा गोडवाड के मडतिया राठोडो का गुरुद्वारा है तथा नरसिंघ जी की पूजा के कारण नरसिंगद्वारा भी कहलाता है। ग्राम झीतडा का गुरुद्वारा यहा के चापावत राठोडो का गुरुद्वारा है। रामावत साधो का एक गुरुद्वारा जोधपुर परगने के ग्राम धोलरिये मे भी है। जोधपुर शहर मे इनके मन्दिर फतहसागर तालाब के पास छोटी सी पहाडी पर स्थित है जो पच मदरिया के नाम से प्रसिद्ध है।[१५७]

रामावत साधो के भी मुख्य दो वर्ग है-(१) निहग और (२) घरबारी। निहग साधुओ के निवास स्थल या अखाड के नाम मे जाने जाते है। रामावत साध अपने आपको अच्युत गोत्र का मानते है तथा विभिन्न गुरुद्वारो से उनकी विभिन्न खापो का नामकरण होता है। इस पथ के गृहस्थ अनुयायियो के शादी विवाह मे इनका ध्यान रखा जाता है तथा एक गुरुद्वारे के लोग अन्य किसी दूसरे गुरुद्वारे के घरबारी साधो के साथ या फिर नीमावत विष्णुस्वामी इत्यादि दूसरे साधपथ वालो के साथ शादी विवाह कर सकते है। गृहस्थ साधो का पेशा मन्दिर की सेवा करना झोली फेर कर माग कर खाना है। कुछ लोग खेती और नौकरी भी करते है। मारवाड़ मे अक्सर मदिरो की पूजा का कार्य इन्हे ही सौपा जाता है।

रामावत साधो की कोई भिन्न या विशिष्ट साधना पद्धति नहीं है। ये वेष्णव धर्म को ही मानते है तथा राम और कृष्ण की आराधना एव पूजा पाठ मे अपना समय व्यतीत करते है। सरल एव आडम्बरहीन भक्ति का सहजमार्ग साध सम्प्रदाय की विशेषता कही जा सकती है।

धन्नावसी साध

रामानद के शिष्यो मे एक धन्ना जाट नामक शिष्य भी था। कालान्तर मे धन्ना जाट ने बहुत बडे भक्त के रूप मे प्रसिद्धि पाई और उनके बहुत से शिष्य हुए वे धन्नावसी साध कहलाये। धन्ना के जीवन सम्बन्धी कुछ उल्लेख भक्तमाल तथा अनतनामी मे मिलता है। धन्ना जी ने कोई नवीन या भिन्न सिद्धान्त का प्रतिपादन न कर रामानन्द के उपदेशो और उनके द्वारा प्रणीत भक्तिमार्ग पर ही चलने की अपने शिष्यो को सीख दी। धन्नावसी साधो का आचार विचार तथा रीतिरिवाज रामावत साधो के से ही है।

दसनामी साध

सन्यासियो से अपना उद्‌गम मानने वाले दसनामी शिव उपासक है । इनके नामकरण के सम्बन्ध मे यह प्रचलित है कि दसनामियो का तार्थ आश्रम वन आरण्य गिरि पर्वत सागर सरस्वती भारती और पुरी ये दस उपशाखाए है और इसी के फलस्वरूप इनका नाम दसनामी पडा । जो दसनामी जिस उपशाखा का होता है उसके नाम के साथ उस उपशाखा का नाम जुडा होता है जैसे लछमन वन परभातपुरी लालभारती देवगिरी आदि । मारवाड़ मे दसनामी अधिक सख्या मे पाये जाते है तथा यहा इन्हे स्वामी गुसाई महापुरुष और अतीत के नाम से भी पुकारते है । मारवाड़ के जाडन पूनागिर कवला जाणा समन्डा इत्यादि ग्रामो मे दसनामियो के बड़ मठ स्थापित है जिन्हे राज्य की ओर से समय समय पर भेट भी प्रदान की जाती रही । इन मठो मे आज भी कुछ सदाव्रत बटने की परम्परा देखने को मिलती है ।[१५८]

सतनामी साध

सतनामी सम्प्रदाय के अनुयायी मारवाड़ मे सतनामी साध के नाम से जाने जाते है । यहा यह भी उल्लेख करना समीचीन होगा कि कई विद्वानो ने साध सम्प्रदाय और सतनामी सम्प्रदाय को सर्वेश एक मानकर इन दोनों के इतिहास को भ्रान्तिपूर्ण बना दिया ।[१५९] सत्यनामी सम्प्रदाय को लेकर कि यह सम्प्रदाय के रूप मे अपना अलग अस्तित्व रखता है अथवा साध सम्प्रदाय ही की एक शाखा के रूप मे विकसित हुआ विद्वानो मे मतैक्य नही है । अत इसकी उत्पत्ति और मूलप्रवर्तक के सम्बन्ध मे प्रामाणिक तौर पर कुछ भी कहना सभव नही है ।

मारवाड़ के सतनामी साधो का यह मानना है कि उनका पथ सबसे पुराना है तथा सत्य का जाप करने से सत्यनामी नाम पडा । वे अपने मत को हिन्दू मुसलमानो से अलग समझते है और अपने पथ को तीसरे पथ के नाम से पुकारते हैं । ये अपने पथ के लोगो के सिवाय किसी को सलाम या राम राम नही करते ।[१६०] सादगीपूर्ण जीवन तथा सद् व्यवहार मे विश्वास रखते है । मूर्तिपूजा तीर्थ श्राद्ध ज्योतिष छापा तिलक जनेऊ कठी और भगवा वस्त्रो का इनके पथ मे कोई स्थान नही है ।

सतनामी साधो का मारवाड़ मे आगमन १८वी शताब्दी मे हुआ तथा वे भरतपुर से यहा आये किन्तु मारवाड़ मे इनकी सख्या बहुत कम है । यहा के खवासपुरा (मेड़ता परगना) और नतडय (जैतारण परगना) नामक दो गावो मे ही सतनामी साध बसते है ।[१६१]

इसके अतिरिक्त नामावत साध भी मारवाड मे पाये जाते है जिनका उल्लेख निम्बार्क सम्प्रदाय के अन्तर्गत आगे किया जायगा ।

मध्यकाल मे जब धार्मिक एव सामाजिक जीवन मे दुरूहता तथा विषमता का आधिक्य हो गया तो विभिन्न सम्प्रदायो का प्रादुर्भाव हुआ और उन्होने अपने ढग से

मपान म व्याप्त इस गषम्य का दूर करन का प्रयास किया। इमा क अन्तर्गत साध सम्प्रदाय का भा अपना महता भूमिका रहा ह। मारवाड म विभिन्न प्रकार क पथ यथा रामावत धन्नावसा दसनामा सतनामा आदि साध सम्प्रदाय का प्रमुख शाखाआ का प्रचार प्रसार हुआ आर इन्हान सम्प्रदायगत कठारता तथा वर्णाश्रम एव खानपान आदि मर्यादाआ का सरल बनाया। इन सभा का बहुत सा परम्पराए ता एकसा ह। कुछ अलग परम्पराए भा विकसित हुई जा उनक पथाय स्वरूप का अलग पहचान कराती ह। इसक अलावा भा इन सबका प्रमुख ध्यय धमगत साधनाओं का सरलीकरण करना रहा ह जिमक अन्तर्गत गुरुभक्ति नामस्मरण सत्सग सयत जावन आदि पर विशेष बल दिया गया। राम स्नहा सम्प्रदाय भा इन बिन्दुआ पर विशप बल दता हैं किन्तु साध सम्प्रदाय म इन का आर अधिक सरल रूप स अपनाया गया। साथ ही इस सम्प्रदाय क लाग रामस्नहियों का भाति मूर्तिपूजा क विराधा नहा थ। गृहस्थ साधा न ता मन्दिरा की सवा पूजा का एक पक्ष क रूप म भा अगीकार किया।

साध सम्प्रदाय क लागा का यहा क ग्रामाणा स सीधा सबध रहा ह तथा उनम धार्मिकता का पाषित व पल्लवित करन हतु इनम सदा सम्बल आर प्रेरणा मिलता रहा। साध सम्प्रदाय क अनुयायियां का खान पान रहन सहन आदि भा अन्य सम्प्रदाया का अपक्षा अधिक सहज सरल व आम नागरिका जसा ही था। विशिष्टता हतु इनका कोई विशप आग्रह या प्रयास नहा रहा। जातिगत भदभाव व ऊचनाच की भावना का इसम काई स्थान न था। इसी कारण प्रत्यक वर्ग क लागा का इस ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था तथा वर्णाश्रम का कठार व्यवस्था एव सामाजिक वषम्य के कारण वर्षा स उपक्षित जन समुदाय का सामाजिक आर धार्मिक दाना ही दृष्टियों स मान्यता मिला आर यहा क सास्कृतिक विचार प्रवाह म जा एक ठहराव की स्थिति आ गयी था उस नई गति मिला। एक बहुत बड़ वर्ग म आत्मीयता व जुडाव का भावना बलवती हुई।

निम्बार्क सम्प्रदाय

द्वैताद्वैत मत का परम्परा म निम्बार्क का पसिद्ध मत आता ह। इसक अनुसार ब्रह्म तथा जाव का सम्बन्ध व्यवहार दशा म द्वैत अर्थात भेद ह परन्तु परमार्थ दशा म वह अद्वैत अर्थात अभिन्न ह। निम्बार्क इस मत के प्रधान व्याख्याता मान जात ह परन्तु उनस भा प्राचीन आचार्यो का सम्बन्ध इस सिद्धान्त स मिलता ह।[162] निम्बार्क सम्प्रदाय का श्रीगणश भगवान श्री नारायण के हसावतार स माना जाता है। पौराणिक मान्यताआ क आधार पर इस सम्प्रदाय का हस सम्प्रदाय सनकादिक सम्प्रदाय तथा नारद सम्प्रदाय भा कहत ह।[163]

उपर्युक्त विवरण स यह स्पष्ट हाता ह कि निम्बार्क स पूर्व भा वष्णव सम्प्रदाय म द्वैताद्वैत क सिद्धान्तो का विचार हुआ किन्तु निम्बार्क न इसका अपन ढग स जा विशिष्ट--

विश्लपण किया वह कालान्तर म निम्बार्क सम्प्रदाय क रूप म स्थापित हो गया । कुछ विद्वान इसकी पर्ववर्ती परम्परा को भी उल्लिखित करत ह परन्तु निम्बार्क क पर्वगत अपन सम्प्रदाय म द्वताद्वत दर्शन की प्रतिष्ठा की तभी स इस सम्प्रदाय का नाम निम्बार्क सम्प्रदाय प्रचलित हुआ ।[१६४]

निम्बार्क को डा राधाकृष्णन[१६५] न तलग ब्राह्मण माना ह जबकि रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़[१६६] म निम्बार्क को महाराष्ट्रीय ब्राह्मण तथा अरूण ऋषि का बेटा बताया गया ह ।

१६ वी शताब्दी म निम्बार्क सम्प्रदाय क हरिव्यास दव क प्रमुख शिष्य परशुरामदव न राजस्थान म सलमाबाद नामक स्थान पर निम्बार्क पीठासन की स्थापना कर निम्बार्क सम्प्रदाय का प्रचार किया ।[१६७]

आचार्य परम्परानुसार श्री परशुरामदव ३६ व निम्बार्काचार्य थ किन्तु राजस्थान म निम्बार्क मत क व प्रथम प्रचारक मान जात ह । निम्बार्क सम्प्रदाय म आचार्य परशुरामदव का आविर्भाव युगान्तकारी सिद्ध हुआ । अपने गुरु की आज्ञा स परशुरामदव न अजमेर क समीपस्थ पुष्कराण्य म प्रबल मायावी सलमशाह न जो आतंक जमा रखा था उस परास्त किया और वहा (मरुभूमि) स मुस्लिम आतंक को समाप्त किया तथा सलमाबाद म पीठ की स्थापना की ।[१६८]

आचार्य परशुरामदव न वष्णवधर्म का व्यापक प्रचार प्रसार किया तथा मुख्यरूप स मारवाड़ी और ब्रजभाषा म ही अपन सार ग्रथो का प्रणयन किया । उनका मुख्य कार्यक्षेत्र जांगलदेश रहा ।[१६९] राजस्थान का बीकानेर, जोधपुर मारवाड़ (नागौर, मेडता जालोर जतारण पाली) जयपुर व किशनगढ़ आदि का क्षेत्र जांगल देश क अन्तर्गत माना जाता था । डा आर्या न जांगलदेश की प्राचीन राजधानी नागौर क समीप अहिछत्रपुर नामक स्थान पर होना स्वीकार किया ह ।[१७०]

मारवाड़ म इस सम्प्रदाय को नीमावत साधु क नाम स भी जाना जाता ह । मर्दुमशुमारी रिपोर्ट म यह उल्लख किया गया ह कि— नीमावत साधो की उदगम निम्बार्क सम्प्रदाय स हुआ । निम्बार्क सप्रदाय स सम्बद्ध होन कारण य नीमावत कहलाय । इस पथ क साधुओ का प्रमुख स्थल सलमाबाद (किशनगढ़ राज्य) म ह और इनक कुछ गुरुद्वार मारवाड़ म भी ह ।[१७१] मारवाड़ म इस सम्प्रदाय क गोपालद्वार जोधपुर पीपाड़ रास रायपुर, नीमाज लाम्बया नाम्बाल बाराल झिटिया (मड़ता) जोधपुर फलादी थाब (बालोतरा) कुचामन मीठड़ी आदि स्थानो पर बन हुए ह ।[१७२] जतारण का गोपाल द्वारा मारवाड़ क उत्तर राठोड़ो का प्रमुख गुरुद्वारा माना जाता ह ।

प्रारभ म इस सम्प्रदाय क आचार्यो न दववाणी क द्वारा ही अपन भावो तथा विचारो को प्रकट किया था परन्तु मध्ययुग म इन आचार्यो न समय की पुकार सुनी और

नन साधारण के हृदय तक अपने भक्ति स्निग्ध भावों की पहुँचाने के लिए इन्होंने ब्रजभाषा के माध्यम से अपनी कोमल भावनाएं अभिव्यक्त की।[१७२]

निम्बार्क सम्प्रदाय के विपुल साहित्य में दार्शनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन भक्ति और साधना सम्बन्धी विवेचन से अपेक्षाकृत कम है। इस सम्प्रदाय में कृष्ण ही उपास्य भगवान सत्य और पूज्य हैं। कृष्ण के साथ राधा को भी इष्ट देवी के रूप में स्वीकार किया है। इनके अनुयायी ललाट पर गोपीचन्दन की दो लम्बी रेखाओं को धारण करते हैं जिनके मध्य में एक कृष्ण बिन्दु रहता है (U) । वे तुलसी की लकड़ी की कंठी व माला धारण करते हैं।[१७४]

इस पंथ में भी विरक्त व गृहस्थी नाना प्रकार के अनुयायी सम्मिलित हैं। इनके रीति रिवाज रामावत साधुओं से काफी मिलते जुलते हैं। आपस में इनके विवाह सम्बन्ध भी होते हैं।[१७५]

यहां यह भी द्रष्टव्य एवं उल्लेखनीय है कि आद्य निम्बार्काचार्य से लेकर निम्बार्काचार्य की परम्परा में ३१ वें आचार्य श्री हरिव्यासदेव तक इस सम्प्रदाय के पीठ स्थल ब्रजमण्डल में ही विद्यमान रहे किन्तु श्री हरिव्यास देव के पश्चात् उनके शिष्य परशुराम देव द्वारा सम्स्थापित स्थल सलेमाबाद अखिल भारतीय निम्बार्क सम्प्रदाय के पीठ के रूप में स्थापित हुआ[१७६] तथा आचार्य परशुराम देव एवं उनके बाद के इस पीठ के पीठाधिश्वरों द्वारा निम्बार्क सम्प्रदाय का मारवाड़ तथा राजस्थान में विशेष प्रचार हुआ। सलेमाबाद आज भी निम्बार्क सम्प्रदाय की प्रमुख गद्दी के रूप में विद्यमान है।

रामानन्द ने उत्तरी भारत में जिस सन्देश का प्रसारित किया उसे मरुभूमि में व्यापक रूप से परशुरामदेव ने फैलाया। उन्होंने वैष्णव धर्म का व्यापक रूप से प्रचार किया तथा हिंदुओं में फैले हुए जाति पांति भेदभाव बहुदेववाद और ब्राह्मणवाद का जोरदार खंडन किया। मरुभूमि में सर्वप्रथम राधाकृष्णन की युगल भक्ति का प्रवर्तन परशुरामदेव ने ही किया।[१७७] इस प्रकार मरुभमि के सूखे प्रदेश में परशुरामदेव ने निम्बार्क सम्प्रदाय की भक्ति की रसधारा बहाकर लोगों के नीरस जीवन में सरसता का संचार किया।

वल्लभ सम्प्रदाय—

इस सम्प्रदाय के संस्थापक वल्लभाचार्य थे जिनका जन्म वि.सं. १५३५ (१४७८ ई) को वैशाख शुक्ला एकादशी गुरुवार को चम्पारन (जिला रायपुर, मध्यप्रदेश) में हुआ।[१७८] *निम्बार्क सम्प्रदाय के संस्थापक निम्बार्क की भांति वल्लभाचार्य को भी वल्लभ* सम्प्रदाय का संस्थापक कुछ लोग निर्विवादरूप से इसलिए नहीं मानते क्योंकि वे इस सम्प्रदाय को विष्णुस्वामी सम्प्रदाय की ही एक शाखा समझते हैं।[१७९] विष्णुस्वामी सम्प्रदाय में कृष्ण के बाल स्वरूप की जो उपासना विधि थी उसमें वल्लभाचार्य ने राग भोग और शृंगार सम्बन्धी आराम और अमीरी की बातें सम्मिलित कर कुछ परिवर्तन

किया जिसमें बड़े बड़े राजा और सेठ साहूकार इस सम्प्रदाय की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुए।[180]

इस प्रकार शुद्धाद्वैत मत से भक्तिमार्गी वैष्णव सम्प्रदाय की शाखा में वल्लभाचार्य का मत 'पुष्टिमार्ग' के नाम से अभिहित हुआ और वे इसके प्रवर्तक माने गये।[181]

यहां यह उल्लेख करना भी समीचीन होगा कि वेदशास्त्रों द्वारा प्रतिपादित ज्ञान तथा कर्म को मार्ग मर्यादा मार्ग कहा जाता है किन्तु भक्तिमार्ग में ईश्वरीय कृपा और उसके अनुग्रह की महत्ता अत्यधिक होती है। पुष्टिमार्गी इस भक्ति को ईश्वर के अनुग्रह से स्वतः ही अभिभूत होना मानते हैं। इस सम्प्रदाय के राधाकृष्ण उपास्य देव हैं तथा तन मन धन का निश्चल व सर्वस्व समर्पण ही इस मार्ग की प्रमुख विशेषता कही जा सकती है।

वल्लभाचार्य ने सम्पूर्ण देश की तीर्थयात्रा की तथा प्रमुख स्थानों पर कई बार गये। इन्होंने गोवर्धन पर्वत पर श्रीनाथजी का वि.सं. 1556 में एक भव्य मन्दिर बनाया। इन्होंने कई ग्रंथ लिखकर अपने सिद्धान्तों एवं विचारों का प्रतिपादन किया। वि.सं. 1587 की आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को काशी में इनका देहान्त[182] हुआ।

यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि राजस्थान में वल्लभ सम्प्रदाय का कब आगमन हुआ। पुष्कर में एक वल्लभ घाट है जिसके बारे में यह कहा जाता है कि वल्लभाचार्य द्वारिका की यात्रा से लौटते समय यहां आये थे और उनकी स्मृति में उनके प्रशंसकों ने इस घाट का निर्माण करवाया था।[183]

दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता से यह ज्ञात होता है कि मारवाड़ के मेड़ता के शासक जयमल मीरां तथा उसकी ननद अजब कुंवरी गोस्वामी विट्ठलनाथ[184] के सम्पर्क में आये थे। अतः यह अनुमान लगाया जा सकता है कि गोस्वामी विट्ठलनाथ के समय मारवाड़ में वल्लभ सम्प्रदाय प्रवेश और प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था।

औरंगजेब ने जब सन् 1669 में हिन्दुओं के मन्दिर गिराने की आज्ञा दी[185] तब गोवर्धन पर्वत पर स्थित श्रीनाथजी के मन्दिर की मूर्ति को लेकर मन्दिर का पुजारी दामोदर अपने चाचा गोविन्द जी के साथ संवत् 1726 (ई. सन् 1669) में आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को आगरा, बूंदी, कोटा, किशनगढ़, पुष्कर होता हुआ चांपासनी पहुंचा।[186] चांपासनी के पास कदमखंडी नामक स्थान पर छः मास तक रहा फिर यहां से मेवाड़ की ओर गया और गांव सीहाड़[187] में ठहरा।[188]

यह एक प्रमुख ऐतिहासिक घटना थी तथा इस सम्प्रदाय को राजकीय सुरक्षा जब प्राप्त हुई उसका यहां की प्रजा में भी उसका प्रभाव पड़ा। छः मास बाद मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के आग्रह पर पुजारी मूर्ति सहित मेवाड़ चला गया जहां नाथद्वारा में रुका। तब

स नाथद्वारा वल्लभ सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र बन गया। मूल मूर्ति वहा चला गया फिर भा इस स्थान (चापासना) पर दूसरी मूर्ति स्थापित कर वल्लभ सम्प्रदाय की परम्परा के अनुसार सवापूजा जारी रहा जा आज तक भी यथावत चल रहा है।

इस प्रकार जाधपुर के महाराजा जसवतसिह प्रथम के शासन काल म श्रीनाथजी की मूर्ति का आगमन मारवाड राज्य म सर्वप्रथम चापासना[१८९] के समीप कदमखण्डी मे हुआ।

सवत १७८६ म महाराजा अभयसिह ने यहा के गुसाई को चापासना गाव भेटस्वरूप प्रदान किया।[१९०] महाराजा विजयसिंह के काल म बहुत स गुसाई गोकुल से यहा मारवाड म आकर बस गय थ और जोधपुर म एक तरह से ब्रज का सा वातावरण बन गया था।[१९१] महाराजा विजयसिंह का इस सम्प्रदाय के प्रति गहरा लगाव था और इस सम्प्रदाय के विचारो म प्रभावित होकर उन्होने राज्य भर (मारवाड़) के सारे कसाई बाड़े उठा दिये थे और कसाइयो को चबालिया (हम्मालो) का काम सौंपा। विशेष अवसरो पर राज्य म शराब और मास की बिक्री पर भी रोक लगा दी था।[१९२]

मारवाड़ म वल्लभ सम्प्रदाय भी काफी लोकप्रिय रहा है और विशेषकर राजवर्गीय और धनी लोगो की इसमे अधिक रुचि रही। इस सम्प्रदाय के अनुयायियो म साधन सम्पन्न (अमीर) लोगो का आधिक्य दृष्टिगोचर होता है सभवत इसीलिए श्रीनाथजी के उत्सवो का आयोजन शानशौकत और बडे भव्य ढग स किया जाता है।

श्रीनाथजी के प्रत्येक उत्सव जैसे दीपमालिका अन्नकूट रामनवमी जन्माष्टमी बसतपचमी और डोल के उत्सव पर जोधपुर राज्य स भेट दी जाती थी। जोधपुर राज्य की ओर स भजन गान वाले गायक (कीर्तनिय) एव श्रीनाथजी की सेवार्थ एक सैनिक टुकडी (रिसाला) भेजे जाने का भी उल्लेख मिलता है।[१९३]

वल्लभसम्प्रदाय मुख्यत धनी लोगो की रुचि व स्वभाव के अनुरूप अधिक अनुकूल है क्योकि इस सम्प्रदाय म कृष्ण के बाल स्वरूप की उपासना के साथ नानाविधि रागभोग और शृगार की झाकियो स प्रभु को रिझाने का जो उपक्रम वल्लभाचार्य ने सुझाया वह सब आर्थिक रूप स सम्पन्न लोगो के ही बस की बात थी। यहा की साधारण जनता के पास न तो इतना समय था और न ही इतना धन कि वे इस सम्प्रदाय के मान्य भव्य आयोजनो को सफलतापूर्वक सपादित करते अत यह सम्प्रदाय आर्थिक रूप से सम्पन्न वर्ग तक ही सीमित रहा। यह कहा जा सकता है कि इस सम्प्रदाय ने सम्पन्न वर्ग की धार्मिक भावना को सुसंस्कारित करने का कार्य किया तथा उनकी प्रवृत्तियो और रूढ़ियो को परिष्कृत कर आत्मकल्याण की ओर प्रवृत्त किया।

इस प्रकार इस सम्प्रदाय ने समाज के उस तबके म सहजता व स्वाभाविकता तथा सामाजिकता के गुणो का विकास करने म महत्ती भूमिका निभाई जो धन के गहरे कुहर

म अपना पहचान भी खा दत ह आर समाज क साथ उनका सम्पर्क कट मा जाता ह । धार्मिक भावना के साथ अपन समाज क पाडित शाषित आर श्रमहारा वर्ग क प्रति सहानुभुति के बाज भा इस सम्प्रदाय न अपने अनुयायिया म जाय यदि यह भा कहा जाय ता अतिशयाक्ति नहा हागा । इसस समाज का सगठनात्मक स्वरूप सुदृढ़ हुआ तथा गराब व अमीर के बीच फला विपमता की विशाल खाई का पाटन का प्रयास भा अपराक्ष रूप म हुआ ।

विश्नाई सम्प्रदाय

विश्नाई सम्प्रदाय क प्रवर्तक जाभाजा का जन्म वि स १५०८ मे भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमा सामवार का नागोर परगन के चापासर गाव म हुआ था । व पवार जाति क राजपूत थे ।[१९४] इनक पिता का नाम लाहट आर माता का नाम हसादवा था जा भाटा कुल की कन्या था ।[१९५]

विश्नोई सम्प्रदाय का यह मान्यता था कि लाहट का बालक जाभा अपन घर क बाहर पडा मिला आर उसन उसे पाला । प्रारभ म वह गूगा था[१९६] किन्तु डा गापानाथ शमा न लिखा ह कि बचपन स हा यह मननशाल थ आर कम बालत थे । साधारणत इस स्थिति का दख कर लाग इन्हे गूगा गहला भी कहत थ परन्तु कभी कभी य ऐसा बात कर बठत कि लाग आश्चर्यचकित रह जात ।[१९७] इसस उनक जन्मजात गूग हान की बात सहा प्रतात नही हाती । उसके प्रति एसी धारणा का प्रचार सभवत उनका शान्तिप्रिय मननशालता आर मितभापिता के कारण हुआ हागा ।

कहा जाता हे कि जब ये ७ वर्ष के हुए इन्ह गाए चराने क काम म लगा दिया गया । गाए चरात समय जगला म इन्ह एकान्तवास एव आत्मचिन्तन का समय मिला । ऐसा हा दशा म सालह वर्ष का अवस्था म इन्ह सद्‌गुरू का साक्षात्कार हुआ ।[१९८]

इस सम्प्रदाय का यह मान्यता ह कि जाभाजा ने गुरु गारखनाथ स दाक्षा ग्रहण का[१९९] जो कि उचित प्रतात नहा हाता है क्याकि एतिहामिक दृष्टि स दखा जाय ता गारखनाथ का काल विक्रम की १०वा[२००] आर ११वा[२०१] शताब्दा स्वाकार किया गया ह आर जाभा जा १६ वा शताब्दी के पूर्वार्द्ध म हुए इसलिए जाभा जी न गारखनाथ का विधिवत शिष्यत्व स्वाकार किया था एसा सभावना स्वापि नही हा सकता ह । परन्तु हा गारखनाथ का कृपा स उन्ह ज्ञान का प्रकाश मिला हा आर उन्हान गारखनाथ का हा अपना गुरु[२०२] मान लिया हा एसा बात म सत्यता हा सकती ह ।

जाभाजा आजीवन ब्रह्मचारा रहे । अपन माता पिता क दहान्त क पश्चात् अपन घर तथा सम्पत्ति का परित्याग कर सभराथल[२०३] म रहत हुए सत्सग एव हरिचर्चा म अपना सारा समय व्यतात करन लग ।[२०४] सम्भराथल गाव का इन्हान अपना साधना

विश्नाइ सम्प्रदाय क लाग आज भा खजड़ व हरिण का [१] पज्य आर श्रध्दता का प्रतीक मानकर अपन प्राणा का बलि दकर भा उसका रक्षा करन का तत्पर रहत ह।

कबार का भाति जाभाजा न भा हिन्दू मुस्लिम दाना हा धर्मा म प्रचलित अनक प्रकार क ढाग आर पाखण्डा का मिथ्या बताते हाए धर्म क वास्तविक एव सरल स्वरूप का जनता क सामन रखा। मर्तिपजा मन्दिर तार्थयात्रा जाति भद आदि क विरुद्ध उन्हान आवाज उठाया तथा समाज म शान्ति प्रम अहिसा समन्वय आर नतिकता का भावना का पनपान का प्रयास किया।

जाभाजा का शिक्षाआ पर नाथ पथ एव वष्णव धर्म का विशिष्ट प्रभाव लक्षित हाता ह। इसक अतिरिक्त जन व इस्लाम धर्म का भा कुछ बात उन्हान स्वाकार का तथा उस अपन ढग स उद्घाटित कर नवान सम्प्रदाय का स्थापना का। इसम आचरणगत शुद्धता अहिसा एव सरल उपासनाविधि पर अत्यधिक बल दिया गया।[२१६] इस कारण यह सम्प्रदाय जावन का व्यावहारिकता म निकटता एव साधारण स्तर क लागा म अधिक सफलता प्राप्त कर सका।

जन सम्प्रदाय

शक्तिशाला राजपता क शासनकाल म यहा जन धर्म का अप्रत्याशित प्रगति हुई। यहा क अधिकाश शासक हालाकि शव या शाक्त धर्म क अनुयाया तथा वष्णव धर्म क मानन वाल रह फिर भा अन्य धर्मा क प्रति सहिष्णु बन रह। अपन धर्म सहिष्णु व उदार दृष्टिकाण क फलस्वरूप उन्हान जन धर्म का उन्नति म भा हर प्रकार स सहयाग दिया।[२१७] बडला शिलालख[२१८] स यह ज्ञात हाता ह कि यहा ई पूर्व पाचवा शताब्दी म इस धर्म का प्रचार प्रसार था। बाजापुर क निकट हठडा क राठाड़ राजवश क जन धर्मावलम्बा हान का सभावना व्यक्त करत हुए डा क सा जन न लिखा हे कि सामान्यत यह राठाड राजवश जन धर्मावलम्बा विदित हाता हे। वासुदेवाचार्य क उपदश स प्रभावित हाकर हठडी म हरिवर्मन क पत्र विदग्धराज न ऋषभदव का मन्दिर निर्मित करवाकर भूमि दान दा था।[२१९]

डा क सा जन का इस राजवश के जन धर्मावलम्बा हान का सभावना सत्य प्रतात नहा हाता क्याकि मारवाड़ क शासक सहिष्णु व उदार दृष्टिकाण क कारण हर धर्म व सम्प्रदाय का सम्मान व सहयाग करत थ। इसा भावना तथा सास्कृतिक परम्परा स प्ररित हाकर जन धर्म का उन्नति म भा सहयाग दिया हागा। अत इस आधार पर हठडा क राजवश क जन धर्मावलम्बा हान का सभावना व्यक्त करना उचित प्रतात नहा हाता। हरिवर्मन क पुत्र विदग्धराज न वासुदवाचार्य क उपदश स प्रभावित हाकर ऋषभदव का मन्दिर निर्मित करवाकर यदि भूमि दान म दा ता इसस कवल विदग्धराज हा प्रभावित हुआ परा हठडा का राठाड़ राजवश नहा। अत यह सभावना पुष्ट प्रमाण क अभाव म

स्वीकार नहीं की जा सकती। परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि १० वीं शताब्दी में मारवाड़ में जैनधर्म का व्यापकता विस्तार पा रहा था तथा उसे यहाँ के शासकों एवं विभिन्न राजवंशों[220] का सहयोग मिलने लगा।

मारवाड़ (जोधपुर) के राठौड़ शासकों ने भी जैन धर्म के प्रसार और उन्नति में योगदान दिया था। सूरसिंह के राज्यकाल में वस्तुपाल ने १६१२ में पार्श्वनाथ प्रतिमा की प्रतिष्ठा की थी। गजसिंह के समय में १६२१ ई में कापरडा में पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रतिष्ठापित हुई तथा जालोर में जयमल ने १६८६ ई में आदिनाथ पार्श्वनाथ एवं महावीर की नवनिर्मित मूर्तियों का प्रतिष्ठा समारोह किया था। गजसिंह के शासनान्तर्गत मेडता में सुमतिनाथ की तथा पाली में पार्श्वनाथ की मूर्तियों के प्रतिष्ठा समारोह सन् १६२० में सम्पन्न हुए। महाराजा अभयसिंह के अधीनस्थ मारोठ में भक्तसिंह एवं जैसाल के शासनान्तर्गत १७३७ ई में मूर्ति प्रतिष्ठा समारोह हुआ था। रामसिंह के शासनकाल में गिरधरदास ने १७४६ ई में जिलाड़ा में मंदिर बनवाया था तथा उसके सामंत मेड़तिया राजपूत हुकमसिंह के समय भट्टारक विजयकीर्ति ने १७६७ ई में मारोठ की यात्रा की थी।[221]

जैनों के मुख्य दो सम्प्रदाय दिगम्बर और श्वेताम्बर राजस्थान में बड़ी संख्या में निवास करते थे। काल प्रवाह के साथ जैन धर्म विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त हो गया। जैन साहित्य और अभिलेखों से जैन धर्मावलम्बियों के विभिन्न संघ गण एवं गच्छ के उल्लेख मिलते हैं। संघ एवं गण शब्द राजनीतिक इकाई के द्योतक हैं। जैन धर्म के अनुयायी विभिन्न संघ एवं गण में संगठित हो गये। कालान्तर में गण को गच्छ नाम से अभिहित किया गया।[222]

इन गच्छों की उद्भवभूमि के रूप में मारवाड़ का महत्वपूर्ण स्थान रहा है साथ ही यहाँ के क्षेत्रों में इन विभिन्न गच्छों का विशिष्ट प्रभाव रहा है। जिनप्रभसूरि के शिष्य रत्नकीर्ति ने नागौर में भट्टारक[223] पट्ट स्थापित किया।[224] नागौर पट्ट के भट्टारक भुवनकीर्ति के शिष्य रत्नकीर्ति द्वितीय ने अजमेर में भट्टारक पट्ट की स्थापना की। इसके अतिरिक्त मारवाड़ में विभिन्न गच्छों का उद्भव हुआ तथा उस स्थान विशेष के आधार पर ही उसका नामकरण हुआ। मारवाड़ के ओसियाँ से उपकेश गच्छ का प्रादुर्भाव हुआ। यशोभद्रसूरि ने मारवाड़ के साडेराव में साडेराव गच्छ की स्थापना की थी। मारवाड़ के ही हस्तिकुण्डी से हस्तिकुण्डी गच्छ का प्रादुर्भाव हुआ तथा चैत्रगच्छ का उद्भव मारवाड़ के चैत्रवल नगर से हुआ। पल्लिवाल गच्छ और पल्लिगच्छ के नाम से विख्यात गच्छ की उत्पत्ति पाली से हुई।[225] इस प्रकार विवच्य काल में यहाँ अनेक जैन गच्छों का उद्भव तथा विभिन्न जैन गच्छों का अस्तित्व देखने को मिलता है।

मूलत जन धम क सस्थापक ऋषभनाथ थ जो आदिकाल क नाम स जान जात ह तथा जन धर्म के चाबास तार्थकरा का परम्परा म प्रथम तार्थकर थे। पार्श्वनाथ इस परम्परा क तईसव एव महावीर चाबासव तार्थकर थ।[२२६] जन दस्तावजा के अनुसार वीर निवाण क ६०९ वर्ष पश्चात् दिगम्बर सम्प्रदाय का तथा वार निवाण क ६०६ वर्ष पश्चात् श्वेताम्बर सम्प्रदाय का जन्म हुआ। य दाना सम्प्रदाय अपने का मूल आर दूसर का अपना शाखा मानकर चलत ह।[२२७] इस प्रकार वार निर्वाण ६०१ (ई सन् ८३) म जन श्रवण सघ का एकत्व श्वताम्बर आर दिगम्बर के द्वित्व म परिणत हा गया।

कालान्तर म श्वताम्बर सम्प्रदाय चत्यवासा[२२८] आर सविग्न इत्यादि कई विभागा म तथा विभिन्न गणा व गच्छा म विभाजित हाता रहा। राजस्थान म स्थानकवासा व तरापथिया का प्रभाव अधिक रहा। स्थानकवासिया का अपक्षा मारवाड़ म तेरापथिया का प्रचार प्रसार विवच्यकाल म अधिक रहा।

स्थानकवासी

विक्रमा का सालहवा शताब्दी म लाकाशाह न आचार का कठारता क पक्ष का प्रबल किया। उनके गच्छ का नाम लाकागच्छ हुआ।[२२९] लाकागच्छ क अनुयायियो म आग चलकर लवजा मुनि[२३०] हुए। उन्हान वि स १७०९ म ढूढिया सम्प्रदाय (स्थानकवासी) का स्थापना का।[२३१] स्थानकवासा सम्प्रदाय का ढढिया सम्प्रदाय व बाईस टाला या बाईस पथा क नाम से यहा जाना जाता ह। इस पथ क नामकरण क बार म यह प्रचलित है कि सूरत म लवजा नाम का एक कराडपति सठ था आर वह ससार स विरक्त होकर जतिया का जमात म शामिल हुआ ता उस जतिया न उपासर[२३२] म रहन का स्वाकृति प्रदान नहा का तब वह अलग स अपन एक ढढ[२३३] मे रहा। अपनी तपस्या आर साधना से उसने बहुत सा प्रसिद्धि पाई आर अनक दूसरे जता भा उसक साथ आकर ढढ म रहे इस कारण इस पथ का नाम ढूढिया हा गया।[२३४]

कालान्तर म इस सम्प्रदाय की एक शाखा क आचार्य धर्मदास वि स १७१६ म दाक्षित हुए। उनक ९९ शिष्य हुए। आचार्य धर्मदास क दिवगत हान पर व सब बाईस शाखाआ म विभक्त हा गय फलस्वरूप उनकी शिष्य परम्परा बाईस टाला नाम स प्रसिद्ध हुई। इस समय तक उक्त परम्परा का १७ शाखाआ का पूर्णतया लोप हा चुका ह। शष पाच शाखाओं म भी साधुआ का सख्या नगण्य रह गया ह फिर भी यह नाम इतना प्रचलित हुआ कि ढूढिया सम्प्रदाय का समग्र शाखाआ का लाग इसा नाम स पहचानन लग।[२३५] इस प्रकार ढढिया क इस पथ का बाईस टाला या बाईस पथी भा कहत ह।[२३६] रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड म यह लिखा ह कि २२ टाला या बाईसपथा कहलान का कारण यह ह कि इस पथ म २२ साधु बड़ करामाता हुए जिन्हान इस पथ क प्रचार प्रसार म विशिष्ट योगदान दिया अत उनकी स्मृति स्वरूप हा यह नामकरण हा गया।[२३७]

स्थानकवासी सन्तो के धर्म प्रचार की विशेषता यह थी कि ये जातिवाद से दूर, सामान्य कुल १२ कुलो की गोचरी और सब लोगो को उपदेश देते।[238] धर्मदास के पट्ट शिष्य मूलचन्द तो गुजरात में रहे और भूधर तथा अमरसिंह नामक दो शिष्यो (मूलचन्द के गुरु भाइयो) को भंडारी खीवसी[239] दिल्ली से जोधपुर (मारवाड़) लाया तदुपरांत इस पंथ का यहा प्रचार प्रसार हुआ तथा मारवाड़ में इस पंथ के उपासरे[240] स्थापित हुए।[241]

इस पंथ के अनुयायी जैन धर्म के सिद्धान्तो में विश्वास करते है तथा अहिंसा पर बहुत अधिक बल देते है। पुरुष साधुओ की जमात ढूढिया (साधु महाराज) कहलाते हैं तथा ढूढनियो की जमात में केवल औरतें ही होती है इन्हें आर्जियाजी महाराज के नाम से पुकारा जाता है। इन दोनो वर्गों के थानक (उपासरे) अलग अलग हुआ करते है दोनो कभी साथ नही रहते। इनमे किसी बड़े साधु या पहुचे हुए महात्मा के नाम से विभिन्न टोल (जमात) भी स्थापित होते है। जो किसी टोल में नहीं होता या बदचरित्र के कारण टोल से अलग कर दिया जाता है उसको टोल्या टाळ[242] कहते है। इस पंथ के अनुयायी किसी देवी देवता को नही मानते हैं न हो उनकी पूजा करते है। दोनो वर्गवालो को चाहे साधु हो या साध्वी आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है। ये शादी नही करते शिष्य और शिष्याओ को दीक्षित करके अपने पंथ में वृद्धि करते है। शिष्य या शिष्या को दीक्षित करने का समारोह बड़े धूम धाम से सम्पन्न होता है।

इस पंथ के गृहस्थी अनुयायी श्रावक कहलाते है। जब किसी साधु या साध्वी का देहान्त हो जाता है तो उपासरे के अन्य साधु या साध्वियां उसको छूते तक नहीं श्रावक ही उस के शव को बैकुठी बनाकर या लिटाकर जय जय नदा शब्द का उच्चारण करते हुए ढोल बाजा के साथ शमशान भूमि की ओर ले जाते है। शव ले जाते समय रास्ते में रुपये पैसे भी उछाल जाते है। चन्दन की लकड़ियो से दाह संस्कार करते है। दाह संस्कार के पश्चात् किसी प्रकार का और क्रियाकर्म नहीं किया जाता।

समेगी

धर्मदास की ही भांति आनदविमल सूरि ने वि.स. १५६८ के लगभग अहमदाबाद में अपना नया पंथ चलाया। आनद विमल सूरि के इस सुधारवादी प्रयोग से ही एक नवीन पंथ की स्थापना हुई जो समेगी कहलाये। भेष इनका भी जतियो का सा है परन्तु अपनी पहचान के लिए पीली धोती और पीली चादर रखना प्रारंभ कर दी। सिर नगा हाथ में लकड़ी माथे पर केसर का तिलक रखते है। समेगी साधु भी निर्ग्रन्थ रहते हे तथा शिष्यो को दीक्षित करते हैं। इनके तीर्थ शास्त्र इत्यादि भी जतियो के से है केवल आचार व्यवहार में फर्क है। ये मन्दिर मार्गी भी है। देवी देवताओ में तथा तीर्थंकरो की पूजा में विश्वास करते है। शेष अन्य रीतिरिवाज दूसरे जैन मतावलम्बियो की भांति हे।

य मारवाड म नहा नहा आसवाला का सख्या ह ग्य म पिगत ह आर ~ ~ दिन म ज्यादा कया नहा उन्हत । ग्नक पथ म महिलाआ का भा गाभल किया नाता ह आर व समगण कहलाता ह । समणा आर समणणा क थानक भा अलग अलग हआ करत ह ।[6]

तरापथ

नन धम का दा मख्य शाखाए— श्वताम्बर आर दिगम्बर पहल स प्रचलित ह । श्वताम्बर शाखा म सवगा आर स्थानकवास। य दा प्रशाखाए था । तराप । क उद्भव क बाद तान प्रशाखाए हा गइ । तरापथ न जन परम्परा का विशालता आर रमणायता म वृद्धि का ।[66]

नन मतावलम्बिया क बाईस टाला थ । म त ट । निकला ।[66] वि स १/१० म आचाय भिक्ष (भाखणजा) न तरा प । का स्थापना का ।[65] इसक स्थापना काल क सम्बाध म विभिन्न तिथिया भा दखन का मिलता ह ।[67] किन्त इसक पथाय साहित्य व साध्या म इसका उद्भव वि स १/१७ (ई स १७६०) का आषाढ पणिमा का हाना बताया गया ह जिस स्वाकार किया जा सकता ह । मदमशमारा रिपाट म वि स १/३१ का जा समय दर्शाया गया ह वह शायद इस आधार पर हागा कि तराप । का अनशासित व व्यवस्थित बनान क लिए सर्वप्रथम सवत १८३१ मार्गशाष क कृष्ण प । का ७ का एक लिखित किया ।[१४९] विधान बनान क वर्ष का हा इस पथ का स्थापना वष मान लिया गया हागा एसा करन पर एक वर्ष का अन्तर हा आता ह जा चत्रादि... का धारणा क कारण आया हागा ।

इस पथ क नामकरण क सबध म यह प्रसिद्ध ह कि आवार्य भिक्षु न धार्मिक जगत म एक नइ क्राति का था । उस क्रान्ति क सचालक क रूप म प्रारभ म १३ साध तथा १३ हा श्रावक थ । उसा सख्या क आधार पर किसा श्रावक क द्वारा इसका तराप । नामकरण श्रवण कर आचाय भिक्षु न इसका अर्थ किया ह ह प्रभा । यह तरा पथ प्रभा यह तम्हारा प । ह हम ता इसक पथिक ह ।[२५०]

तरापथ का प्रचार प्रसार मारवाड म अधिक हआ तथा यहा उसका प्रसिद्धि अधिक ह । इस पथ क अनयायी मारवाड म बहत अधिक सख्या म पाय जात ह ।[']

इस पथ क प्रवतक भाखण जा का जन्म राजस्थान क जाधपर राज्य क कटालिया ग्राम म वि स १७८ का आषाढ शक्ला त्रयादशा क दिन हआ था । व आसवाल जाति क सकलचा गात्र म उत्पन्न हए थ उनक पिता का नाम शाह बलुजा आर माता का नाम दापाबाइ था । व विवाहि । । आर उनक एक पत्रा भा हइ था ।[२५३]

आचाय भिक्ष न तत्कालान व्यवस्था क अनसार महाजना शिक्षा प्राप्त का था । बचपन स हा उनक घर म धार्मिक । स्कार मिला । पहल व गच्छवासा सम्प्रदाय क

अनयाया थ गाट म पातियारध सम्प्रदाय क माध आ क पास व्याख्यान मनन जाया करत । आखिर उनका सम्पर्क स्थानकवासी सम्प्रदाय का एक शाखा (बाइसपथा) क आचार्य रुघनाथ जी म हुआ और व उनक अनुयायी बन । [१] भीखणजी २५ वर्ष का अवस्था म मारवाड क बगड़ी नगर म वि स १८०८ मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष का द्वादशी को आचार्य रुघनाथ जी द्वारा दीक्षित हुए । [१] आठ वर्ष तक स्थानकवासी साधु क रूप म तथा ४४ वर्ष तेरापथ क आचार्य क रूप म कार्य करत हुए ७७ वर्ष का अवस्था म वि स १८६० का भाद्रपद शुक्ला त्रयोदशी मगलवार क दिन सिरियारी म इनका स्वर्गवास हुआ । [८६]

तेरापथ का उद्भव कोई आकस्मिक घटना नहा था । उस युग का परिस्थितिया का एक अनिवार्य माग था । एक अर्थ म युग क गर्भ म धार्मिक क्रान्ति का जो बीज परिपाक पा रहा था उसी का विस्फोट वि स १८१७ आषाढ पूर्णिमा को तेरापथ जनता क सामने आया । [८७]

तेरापथ क उद्भवकाल म मारवाड का राजनीतिक स्थिति अत्यन्त अस्थिर और भयावह थी [८८] जिसस सामाजिक व आर्थिक स्थिति भी गडबडा गयी थी साथ ही उस समय जैन साधुओं म शिथिलाचार का भी अभिवृद्धि हो चुकी थी जिसक सम्बन्ध म आचार्य भिक्षु का य पक्तिया द्रष्टव्य ह

वैराग घटिया न भेख वधिया हाथ्या रा भार गधा लदिया ।

थक गया बोझ दिया गेला एहवा भेख धारी पाचमे काला ॥

आचार्य भिक्षु न इस अव्यवस्थित श्रमण सगठन को अनुशासित व व्यवस्थित बनान क लिए एक सुदृढ विकल्प तैयार कर तेरापथ क रूप म अपनी योजना को मूर्तरूप प्रदान किया । इसक लिए आचार्य भिक्षु न अपनी योजना को लिखकर अपन सहयोगी साधुओ को सुनाकर उनकी सहमति प्राप्त कर उस पर हस्ताक्षर करवाय और उस लिखित सविधान का रूप दिया । इस क सम्बन्ध म स्वय आचार्य भिक्षु का यह स्पष्टीकरण द्रष्टव्य ह कि मैन यह उपक्रम शिष्यादि क ममत्व परिहार क लिए सयम विशुद्धि क लिए तथा सभी अनुशासन एव न्यायमार्ग पर चलत चल इसलिए किया ह । [८९] तेरापथ क इस मौलिक सविधान का धाराओ क अनुरूप प्रतिवर्ष मर्यादा महोत्सव मनाया जाता ह ।

तेरापथ क स्थान आहार एव धर्मोपकरण आदि किसी वस्तु पर किसी का व्यक्तिगत स्वामित्व नहा होता । व समष्टि क ह और उसी क अनुयायी जो उसक अनुरूप ह व समान रूप म आवश्यकतानुसार प्रयोग म ला सकत ह । धर्म सघ क रूप म सबका समान अधिकार ह सघ का स्रोत आचार्य ह उसका आज्ञा प्रधान ह । उसक द्वारा नियुक्त अग्रणी सघ को सघ का सवाहक माना ह । सघ म किसी का किसी पर अधिकार नहा ह । सब अनन्त पदमय आचार्य का धर्म सघ म समर्पित ह । [९०]

आचार्य भिक्षु द्वारा गठित तेरापंथ में संघ की मर्यादा निर्माण उत्तराधिकार का व्यवस्थित विधान तो है किन्तु पद की विशेषता का स्थान माना है अन्य पद का पूर्व नियोजित कोई व्यवस्था नहीं है। आचार्य स्वयं ही अपने उत्तराधिकारी का चुनाव उसको गुरुभाई हो या शिष्य मनोनीत करता है पद के लिए चुनाव या कोई उम्मीदवार नहीं होता आचार्य द्वारा घोषित उत्तराधिकारी ही उसके बाद में अपना स्थान ग्रहण करता है तथा समस्त पंथ को वह स्वीकार्य होता है। धर्म संघ में इस व्यवस्था को स्वयं तेरापंथ समतामूलक मानते हैं जिसमें शिष्याधिकार व पद का औचित्य हो जाता है। सबों के लिए इसमें भरपूर स्थान है सत्ता के लिए किंचित् भी नहीं।[261] परन्तु धर्म संघ की यह आन्दोलनमुखी व परम्परागत मर्यादा को स्वरूप है सत्ता व पद प्राप्ति को लेकर कालान्तर में इस पंथ में भी कई बार मतभेद उत्पन्न हुआ व असंतोष व्यक्त किया गया।

आचार्य भिक्षु के पश्चात् आज तक तेरापंथ का शिष्य परम्परा चली आ रही है जो इस प्रकार है आचार्य भिक्षु, भारमल रायचन्द जयाचार्य माघराजी माणकलाल डालगणी कालूगणी और वर्तमान में आचार्य तुलसी।[262]

इस प्रकार आचार्य भिक्षु ने जैन धर्म में तेरापंथ का प्रादुर्भाव कर अपना एक अलग पहचान बनाई व जैन धर्म की तत्कालीन समय में व्याप्त कुरीतियों का निराकरण कर श्रमण संस्कृति को एक नवीन व सुदृढ़ व्यवस्था प्रदान की। उस युग में जैन सम्प्रदायों में एक ही संघ में कई आचार्य हो जाते थे और आचार्य के अधीनस्थ साधु भी अपने अलग अलग शिष्य बनाते थे ऐसी स्थिति में धार्मिक सम्प्रदाय के विखंडित होते स्वरूप व प्रवाह को उन्होंने जो नया मोड़ दिया उससे जैन सम्प्रदाय के विकास में महत्वपूर्ण सहयोग मिला।

मुस्लिम सम्प्रदाय की स्थिति

मध्यकालीन भारतीय समाज में हिन्दू मुस्लिम दो भिन्न संस्कृतियों के सात्मीकरण की प्रक्रिया का एक विशाल ऐतिहासिक सन्दर्भ है। कालक्रम के साथ दोनों संस्कृतियों ने एक दूसरे को प्रभावित किया।[263] धार्मिक क्षेत्र में भी यह प्रभाव एक दूसरे धर्मों पर पड़ा। डा रामधारीसिंह दिनकर[264] का यह मानना है कि सूफीमत की आधारभूमि में भारतीय वेदान्त का अप्रत्यक्ष किन्तु महत्वपूर्ण प्रभाव स्वीकार्य है। सूफी सन्त प्रेरणा एवं मार्ग दर्शन प्राप्त करने के लिए हिन्दू साधु एवं सन्यासियों के पीछे घूमा करते थे। इसी प्रसंग में डा आर.सी. मजूमदार का यह कथन भी द्रष्टव्य है कि सूफियों के अतिरिक्त भारतीय मुसलमानों में कलन्दर नामक सन्तों की परम्परा का विकास भी पौराणिक धर्म की ही देन है जो कि शतप्रतिशत हिन्दू प्रभाव का परिणाम था।[265] मुस्लिम सूफी मतों पर तत्कालीन हिन्दू गुरुओं के प्रभाव का जिक्र डा अशरफ[266] ने भी किया है। इसी प्रकार हिन्दुओं के शिवरात्रि पर्व की भांति शब बारात जैसा धार्मिक पर्व मुसलमानों में

आयानित हान लगा। मूर्तिपजा के निषेध क बावजद भी इस्लाम धर्म क अनुयायिया म शातला त्वा का मूर्ति पर जल चढ़ान व पूजा करने की प्रथा प्रारभ हुई। तत्कालीन हिन्दू समान म प्रचलित लोकविश्वास जस नजर लगना भतप्रत जादू टोना आदि मुस्लिम समाज म भी प्रचलित हुए तथा हिन्दुआ का आरता का प्रथा उतारा एव निसार क नाम स अपना ली गयी।[२६७]

इसी प्रकार हिन्दू धर्म पर इस्लाम का प्रभाव पड़ा। डा ताराचन्द का विचार ह कि धर्मसाधना क अन्तर्गत लिंगायत शक्राद्वैत मतमवियो क एकश्वरवाद तथा चैतन्य महाप्रभु का शिक्षाआ म इस्लाम क व्यापक प्रभाव का चित्राकन हआ ह।[२६८] मध्यकालीन मारवाड म पनपन वाल कुछ धार्मिक सम्प्रदाया पर भी इस्लाम का प्रभाव क्रमाग्रशी दृष्टिगाचर हाता ह। विश्नाई सम्प्रदाय पर इस्लाम धर्म का छाप स्पष्ट परिलक्षित हाता ह। इस सम्प्रदाय का एसा विशषताआ पर पहल प्रकाश डाला जा चुका है।

एकश्वरवाद आर ईश्वर क निर्गुण स्वरूप की परम्परा जा प्रारभ से ही यहा प्रचलित था उसका जगह कालान्तर मे सगुण स्वरूप और बहुदेववाद की धारणा अत्यधिक प्रबलवता हुई। इस्लाम के सम्पर्क में आने से एक बार पुन हिन्दू धर्म म बहुदेववाद की धारणा क साथ एकश्वरवाद की भावना का बल मिला। अनक सन्ता न ईश्वर क निर्गुण स्वरूप का आराधना का उपदश दिया जिसका प्रभाव यहा का बहुसख्यक हिन्दू आबादी पर भा समान रूप स पड़ा। कबीर, दादू, रज्जब जैसे कई मुस्लिम सन्तो का यहा विशेष प्रभाव रहा तथा उनकी वाणिया को बहुत ही श्रद्धाभाव से गाया जाता रहा। इतना ही नहीं रामस्नेही सम्प्रदाय की रेण शाखा के प्रवर्तक दरियावजी के सम्बन्ध म भी यह कहा जात ह कि व मुसलमान थे। इस सम्प्रदाय का मारवाड की स्थानीय जनता पर विशेष प्रभाव रहा।

इससे स्पष्ट हाता है कि प्रारम्भ म इस्लाम को विदेशी व विधर्मियो का मजहब मानकर घृणा का दृष्टि स दखा जाता था परन्तु मुस्लिम सन्तो व हिन्दू सतो की उदारवादिता से हिन्दू आर मुस्लिम धर्म के बीच की यह खाई धीरे धीरे पाटने का प्रयास मध्यकाल मे यहा बड पमान पर हुआ। राजनैतिक मतभद व पारपरिक स्थितिया स परे साधारण जनता ने धर्म के इस समन्वित स्वरूप का स्वागत किया एव उत्साह स दोनो ही वर्गो ने इस स्वीकारा क्योकि अब यह स्पष्ट हा गया था कि दाना हा जातिया सदा के लिए यही (हिन्दुस्तान मे) ही आबाद रहगी आर उनका सह अस्तित्व तथा सहयोग व्यावहारिक दृष्टि स आवश्यक है।

इस प्रकार धार्मिक जगत म मध्यकालीन सतों का यह कार्य एक युगान्तकारी प्रयास माना जायेगा जिसक द्वारा कट्टर धार्मिक विभद भुलाकर ईश्वर एव धर्म के सच्चे स्वरूप

को जानकारी आम लोगों को करवाई। इससे समाज में समन्वय, सहिष्णुता, उदारता व मानवता की भावना का विकास हुआ और इससे नैतिक अस्थिरता के वातावरण में भी राज्य के निवासियों के सामाजिक जीवन में शान्ति व व्यवस्था बनी रही। इस्लाम अनुयायियों में जो सर्वाधिक कट्टर धर्म माना जाता था हिन्दू धर्म के सम्पर्क में उसमें भी सहिष्णुता [illegible] यहाँ तक कि मारवाड़ में [illegible] मुसलमानों [illegible] (समसामयिक) [illegible] हिन्दू मुस्लिम [illegible] के मजार पर [illegible] अर्पित करते हुए मुस्लिम मुल्लाओं व काजियों में [illegible] आदि करवाते पाये जाते हैं।

धार्मिक सम्प्रदायों का मध्यकालीन संस्कृति को देन—

मध्यकालीन विषम परिस्थितियों में यहाँ के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों ने मारवाड़ के तत्कालीन निवासियों में एक नवीन चेतना जागृत की जिसके परिणामस्वरूप वे उस राजनैतिक अस्थिरता और सामाजिक असुरक्षा के वातावरण में भी अपने जीवन को एक [illegible] मार्ग खोज पाये। यहाँ के नैराश्यपूर्ण वातावरण में इन धार्मिक सम्प्रदायों ने यहाँ के वासियों के सामाजिक धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन को उत्साह व आशा की किरण से आलोकित किया और यहाँ हुए तीव्र राजनैतिक उथल पुथल को सहजता से स्वीकार करते हुए उसे स्वाभाविक ढंग से अपनाने की क्षमता प्रदान की। आम जनता ही नहीं शासक वर्ग जो राजनैतिक महत्वाकांक्षा के प्रति अधिक जागरूक व सजग था वह भी इससे प्रभावित हुआ। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यहाँ के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों ने परिस्थिति व युग की माँग के अनुकूल एक सुन्दर व्यवस्था प्रदान करके यहाँ के निवासियों का मार्ग प्रशस्त किया और मारवाड़ की सांस्कृतिक धारा को सतत संवारने व सुरक्षित रखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिनको निम्न प्रकार से संक्षेप में अभिव्यक्त किया जा सकता है।

(१) धर्म का सरलीकरण

पूर्व मध्यकाल में धर्म में जब कर्मकाण्ड व पाखण्डों के कारण कई प्रकार की विकृतियां आ गयी और धर्म की छवि धूमिल हो गयी उस समय विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के प्रवर्तकों व सन्तों ने धर्म के सरल व सहज स्वरूप को आम जनता से परिचय करवाकर उससे नैकट्य स्थापित किया। धर्म की कठोर व जटिल परिभाषाओं व विधियों को धार्मिक सम्प्रदायों के प्रवर्तकों व सन्तों ने अपनी वाणियों के माध्यम से सरलीकरण कर धर्म के मर्म को आम आदमी तक पहुंचाया।

(२) सतवाणी म धर्म की सहज अभिव्यक्ति

इन विभिन्न धार्मिक सम्प्रदाया क प्रवर्तक न स्वय उच्चकोटि क मन व उन्नान स्थानाय भाषा म अपना मतिनुरूप धम का सहज अभिव्यक्ति वाणिया द्वारा का । इस सत साहित्य म ईश्वर ब्रह्म माया व जाव आर जगत क सम्बध म बहुत सुलझ हुए विचार व्यक्त किय गय ह । धम का धपिल ग्वि का मन निवारन हतु समाज म व्याप्त दाग आडम्बर आदि का खण्डन करक अपन चिन्तन क आधार पर धर्म क सहा स्वरूप को आम जनता क लिए व्यावहारिक दृष्टि म बाधगम्य बनाया । इस प्रकार दनिक जावन क व्यवहारा व धार्मिक विचारा का परिष्कृत करन म इन सम्प्रदाया का विशिष्ट यागदान रहा । अपन अपन पथाय साहित्य क वशिष्ट्य क बावजूद इस साहित्य म ईश्वर, धर्म अधम ब्रह्म जाव व जगत आदि क सम्बध म जा धारणाए व्यक्त का गया ह व सरल सरस सुगम्य व समान सा ह । इस साहित्य का सृजन निरन्तर जारा रहा आर सम्प्रदाय व विभिन्न पथा म उसक नियमित पठन पाठन स धार्मिक भावना का विकास भी निरन्तर होता रहा ।

(३) भक्ति भावना का व्यापक प्रचार प्रसार

इन धार्मिक सम्प्रदाया द्वारा धर्म का सरलस्वरूप जनता क सम्मुख रखा गया व सत साहित्य क माध्यम स धर्म का सहज अभिव्यक्ति मिला साथ ही भक्ति भावना का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ । सता द्वारा सृजित इस साहित्य का सम्प्रदायो म बडा सम्मान व आदर था तथा धार्मिक ग्रथा का भाति सता का इन वाणिया का लाग बडा श्रद्धा भक्ति स नियमित पठन किया करत थ । ऐस अभ्यास स भक्तिभावना का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ एव कम पढ लिख व निरक्षर लागा का भा सता का अनक वाणिया कण्ठस्थ थी । इस प्रकार यहा का निरक्षर व्यक्ति भा धर्म व ईश्वर सम्बधा जानकारा स अनभिज्ञ नहा रहा । इस भूखण्ड म धर्म आर भक्ति भावना क इस व्यापक प्रचार प्रसार का बहुत कुछ श्रय इन धार्मिक सम्प्रदाया का जाता ह ।

(४) सामाजिक व सास्कृतिक मूल्यो की प्रतिष्ठापना

धार्मिक व भक्ति भावना का व्यापक प्रचार प्रसार ता इन धार्मिक सम्प्रदाया द्वारा हुआ हा । इन धार्मिक चिन्तन क क्रम म सामाजिक व सास्कृतिक मल्या का प्रतिष्ठापना म भा परोक्षरूप म इनस बडा सहायता मिला । शिष्टाचार सयत जावन व शुद्धाचरण धार्मिकता का हा प्रताक माना गया । साच बराबर तप नहा झठ बराबर पाप का अवधारणा समाज म काफा लाकप्रिय हुई । सामाजिक सुधार क अभाव म धार्मिक आन्दालन का मल्याकन एकागा हा कहलायगा क्याकि इन सम्प्रदाया क प्रवर्तक व सन्त लाग जितन धर्म सुधारक थ उतन हा बड समाज सुधारक भा । सामाजिक सुधार भा लाकापकारा भावना क कारण धर्म का हा अग था एव बिना इसक धर्म क सहा स्वरूप

का स्थायित्व प्रदान करना मुश्किल था । इस प्रकार एक दूसर पर अन्यान्याश्रित इस कार्य म धर्म के साथ साथ समाज सुधार भी स्वयमव हुआ । वर्गभेद शिथिलाचार, सामाजिक कुरीतिया अन्धविश्वासो व आडम्बरो का इन सतो ने सतत विरोध किया ।

जात पात पूछ ना कोय हरि को भज सो हरि को होय सामाजिक वर्गभेद पर कुठाराघात करने वाली यह प्रखर उक्ति उस काल के सतो की वाणिया म मूलमन्त्र की तरह प्रभावशाली बनी । यही नही सतो न सामाजिक सुधारो क साथ साथ पारपरिक श्रेष्ठ आदर्शो व मूल्यो की प्रतिष्ठापना म भी महत्वपूर्ण योगदान दिया । ऐसा उन्होन चाह धार्मिक प्ररणा स अभिभूत होकर ही किया हो किन्तु उनका यह प्रयास यहा की सास्कृतिक प्रगति क लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और सार्थक सिद्ध हुआ ।

इन सतो की विचारधारा और वाणियो को देखने स पता चलता है कि उन्होने उस समय क समाज की नब्ज को भलीभाति परखा था और समाज म धार्मिक भ्रम और शिथिलाचरण की जो व्याधि व्याप्त हो गई थी उसका निराकरण करने के लिए अपनी वाणियो क माध्यम स कड़वी और मीठी औषधि जनमानस को पिलाकर उन्हे स्वस्थ चिन्तन की ओर प्रवृत किया तथा एक आत्मविश्वास के साथ निम्नवर्ग को भी आग बढ़न का सम्बल प्रदान किया । उनके इस कार्य म कबीर की विचारधारा और अभिव्यक्ति म स्पष्टवादिता स बहुत कुछ प्ररणा ली गयी । धर्म केवल उच्चवर्ग की वस्तु नही रह गया न ही वह व्यवहारिक जीवन स अलग केवल चिन्तन की वस्तु बना रहा अपितु उसने समस्त समाज को सास्कृतिक धरातल पर प्रभावित किया ।

स्थानीय लोक देवता और मध्यकालीन सस्कृति को उनकी देन—

मध्यकालीन मारवाड़ की धर्मप्राण जनता पर यहा क बड़े धार्मिक सम्प्रदायो के अतिरिक्त स्थानीय लोक देवताओ का भी महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है । धार्मिक मान्यताओ क अन्तर्गत ईश्वर और विभिन्न देवी देवताओ की परिकल्पना के साथ साथ लोक देवताओ की धारणा भी समाज मे प्रचलित थी । लोक देवता स तात्पर्य ऐसे महापुरुषो स है जो मानव रूप म जन्म लेकर अपने असाधारण व लोकोपकारी कार्यो के कारण दैविक अश क प्रतीक क रूप म स्थानीय जनता द्वारा स्वीकारे गये और उनको भी देवतुल्य पूज्य माना गया । देवी देवताओ की आराधना व पूजा म विभिन्न कर्मकाण्ड व अनुष्ठान की जटिल विधियो की अपेक्षा लोकदेवताओ का पूजन अर्चन बहुत ही सहज सरल व सुविधाजनक था अत यहा की स्थानीय ग्रामीण जनता का उनक प्रति झुकाव अधिक रहा । अध्यात्म अद्वैत तथा ब्रह्मज्ञान पण्डितो व ज्ञानी लोगो के बस की बात थी । आम जनता मे धर्म की लोकोपकारी भावना को लोक देवताओ क माध्यम स यहा की स्थानीय जनता अधिक सहजता क साथ आत्मसात कर सकी और उस अपने व्यवहार म अपना सकी । लोक देवताओ क चमत्कारी कार्यों के परिणामस्वरूप उनकी धार्मिक भावनाओ

का ता सम्बल मिला हा साथ हा भातिक कष्टा क निवारण म भा उन्ह सच्चा सहायक माना गया। अपनी मनाकामना की पर्ति व भातिक सुख समृद्धि क प्रदाता क रूप म लाकदवताआ का यहा का ग्रामाण जनता पर जा अमिट छाप पड़ी उसकी छवि आज तक यहा क समाज म विद्यमान ह। एस ही कुछ लोक दवताआ का यहा सक्षिप्त परिचय दिया जा रहा ह जिन्होन मारवाड़ का सस्कृति विशषकर यहा का जनसस्कृति का प्रभावित ही नहा सदिया तक अनुप्राणित किया। इन लाकदवताआ की यहा की सास्कृतिक चतना की जागृति म तथा धार्मिक व भक्तिभावना क व्यापक प्रचार प्रसार म महत्वपूर्ण भूमिका रही ह।

गोगा जी

गोगा के पिता चाहान जेवर ददरवा के अधिपति थे।[२६९] गागाजी चहुवाण रा नासाणा म गोगाजी क जावन सम्बन्धी प्रसग व माता पिता का नाम तथा निवास स्थान का उल्लेख मिलता ह। इनकी माता का नाम वाछल था। इनक जीवन काल के सबध म विद्वाना म मतभद पाया जाता हे। कर्नल टॉड न गोगाजी का फिरोज तुगलक के समकालान माना ह[२७०] जिसका प झाबरमल शर्मा[२७१] व अगरचन्द नाहटा न[२७२] समर्थन किया ह। किन्तु डा दशरथ शर्मा न क्यामखा रासा के आधार पर उन्ह महमूद गजनवा का समकालान माना ह।[२७३] जिसका डा सत्यकेतु विद्यालकार[२७४] आर डा चन्द्रदान चारण[२७५] ने समर्थन किया ह। एक गुजराता ग्रथ श्रावक व्रतादि अतिचार वि स १४६० (१४०३ ई०) तथा राणकपुर शिलालख वि स १४९६ (१४३९ ई०) क आधार पर यह ज्ञात हाता हे कि उस समय गोगाजा लोकदेवता क रूप म पूज्य थे तथ् ब्रह्मा विष्णु आर शिव के समकक्ष माने जाते थे।[२७६]

गागाजा पीर रा छन्द गागापेड़ा व गोगाजा चहुवाण री नीसाणा नामक हस्तलिखित ग्रन्थो म गुरु गोरखनाथ के आशार्वाद स गागाजी का जन्म होना वर्णित ह जिसक आधार पर डा पेमाराम ने गोगाजी का समय ग्यारहवी शताब्दी के प्रारभिक भाग म होना माना ह।[२७७]

गोगाजा क बारे म यह प्रचलित ह कि अपने मोसेरे भाई अरजन आर सरजन क साथ जमीन को लेकर झगडा चल रहा था। इन दोना भाइया न मुसलमाना का सेना के सहयाग स आक्रमण कर दिया। आक्रमणकर्ता गोगाजी का गायं घेर कर ल गय। गोगाजा ने इनका पीछा कर युद्ध किया। अरजन सरजन मार गये और स्वय गागाजा भी अपने कई वीरा के साथ काम आये।[२७८] उनके इस युद्ध का बहुत हा प्रभावशाली वर्णन कवि मेहकृत गोगाजा रा रसावला[२७९] नामक रचना म देखन का मिलता है तथा इसम यह भी उल्लेख है कि गागाजी की पत्नी मेनल सता हुई। गाया का रक्षार्थ गोगाजी द्वारा युद्ध करने का प्रसग वशभास्कर आर यहा के लोकगाता मे भी वर्णित हुआ ह। कुछ लोकगीत[२८०] तो गागाजी से हा सम्बद्ध ह जिनम उनकी यशगाथा का गान हुआ ह।

का यशागान करत आज भा न्खे जा सकत ह । सारगी पर थारा जाति द्वारा पाबूजा क यशागान गान का यहा का प्रचलित भाषा म "पाबूधणी रा वाचना कहत ह ।[३०४]

वारता प्रतिज्ञा पालन त्याग शरणागत वत्सलता एव गा रक्षा हतु बलिदान हान क कारण राजस्थान का जनता पाबूजा का दवता क रूप म पूजा करता है ।[३०५] पाबूजा लक्ष्मण के अवतार[३०६] एव ऊटा क न्वता[३०७] मान जात ह । आज भा लागा म यह विश्वास प्रचलित ह कि पाबूजी का मनाती मानन पर ऊटा का बामारा दूर हा जाता ह ।

पाबूजा सम्बन्धा विस्तृत साहित्य[३०८] (जिसम लाकसाहित्य की अधिकता ह) मिलता है जिससे जन समाज म उनका लाकप्रियता सिद्ध हाता ह । पाबूजा का वारता आर उनकी महिमा का गान यहा क चारणा भाटा आर कविया न विभिन्न दाहा कवित्त रूपका छन्दा गाता पवाड़ा सारठा आदि म किया ह । पाबूजा का बात आर उनका गाथा म भा उनके गारक्षार्थ किए गए युद्ध का वर्णन तथा उनक जावन सम्बन्धा विविध प्रसग वर्णित हे । माड़जी आसिया कृत पाबूप्रकाश ता पूरा महाकाव्य ह जिसम पाबूजी क जीवन प्रसग का बहुत सुदर, सरस व सजाव ढग स प्रस्तुत किया गया ह ।

रामदव जी

रामन्व जा तवर वशाय राजपूत थे तथा इनक पिता का नाम अजमाल जा आर माता का नाम मणाद था । एसा माना जाता ह कि अजमाल जा नि सतान थ आर उन्हान जब द्वारिका जाकर भगवान द्वारकाधाश से पुत्रप्राप्ति का वरदान प्राप्त किया तब उन्ह पुत्र प्राप्ति हुई । रामदव जा की जन्म तिथि के बारे म डा नरन्द्र भानावत[३०९] पूनमचन्द[३१०] ठाकुर रुद्रसिह तामर,[३११] पुराहित रामसिह[३१२] लक्ष्मीदत्त बारहठ[३१३] इन सभी ने लिखा ह कि रामदवजी का जन्म वि स १४६१ म हुआ था किन्तु मारवाड़ रा परगना री विगत[३१४] तथा रामदवजा स सबधित अन्य दा ख्याता मे रामदवजा व मल्लानाथ जी का आपसा भट तथा मल्लानाथजी द्वारा रामदवजी का पाकरण का इलाका दन का वर्णन मिलता ह जिससे यह पता चलता ह कि रामन्व जा मल्लानाथ ज के समकालीन थे ।[३१६] इसलिए उक्त विद्वाना द्वारा न गया रामन्वजा की जन्मतिथि सत्य प्रतीत नहा हाता क्याकि मल्लानाथ जा का व गवास वि स १४ ६[३१७] का ही हा गया था आर उससे पूर्व रामदवजी को पाकरण का क्षत्र उन्हा स प्राप्त हुआ था ।

रामदेव जा न पाकरण क्षत्र म भरव नाम क व्याप्त आतक का समाप्त किया । उसक भय स पूरा क्षत्र उजड गया था आर पन आबाद कर वहा के लोगों का उसके आतक स मुक्त किया । [illegible] पराक्रम युक्त कार्य स लागा का बहुत राहत मिली आर रामदेवजी का [illegible] म वृद्धि हुई ।[३१८] तथा उनका प्रतिष्ठा आर ख्याति चारा और फला । अमर [illegible] दलजी साढ़ा की पुत्री नतल द स रामदव जी का विवाह माघ शुक्ला एकादशा मगलवार का हुआ ।[३१९]

रामदेवरा ने अपना भतीजी का विवाह हमीर (जगमाल मालावत का पुत्र) से कर पोकरण कन्यादान में दे दिया। उसके बाद अपने नाम पर रामदेवरा नामक गाव बसाया जो यहा रुणचा के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसी गाव मे उन्होने जीवित समाधि ली। रामदेवरा या रुणचा रामदेव जी का प्रसिद्ध स्थान है जहा इनका विशाल मंदिर बना हुआ है और यहा प्रतिवर्ष भाद्रपद माह के शुक्ल पक्ष की द्वितीया से एकादशी तक भारी मेला लगता है जिसमे दूर दूर से लाखो श्रद्धालु इनके दर्शनार्थ आते है। यहा माघ शुक्ला एकादशी को भी मेला लगता है परन्तु भाद्रपद का मेला बड़ा विशाल और हिन्दुस्तान के प्रमुख मेलो मे अपना स्थान रखता है।

रामदेवरा के अतिरिक्त पोकरण मे रामदेव जी का पुराना मंदिर है और वहा रामदेवजी की बनाई हुई एक बावडी भी है।[320] जोधपुर मे मसूरिया पहाडी पर रामदेव जी का मंदिर है जहा भाद्रपद मास मे मेला लगता है। मारवाड़ के कई ग्रामो मे इनके छोटे मोटे मंदिर जिन्हे यहा देवरा कहा जाता है बने हुए है। मारवाड के लगभग हर गाव मे रामदेव जी का स्थान जिसे यहा थान कहा जाता है देखने को मिलता है। ये स्थान किसी वृक्ष के नीचे दो चार फीट ऊची चबूतरा बनाकर स्थापित किये गये है जहा रामदेवजी के 'पगलिये' अवश्य होते है। वृक्ष पर या फिर लम्बी बास की लकड़ी मे रामदेव जी की ध्वजा फहराई जाती है। रामदेव जी की ध्वजा अधिकतर श्वेत कपडे की जिस पर लाल कपडे के रामदेवजी के चरण चिन्ह अंकित होते है बनाई जाती है। कहीं कहीं पचरगी ध्वजा भी देखने को मिलती है। रामदेवजी के अधिकाश अनुयायी तो अपने घरो मे भी रामदेव जी के पगलिये स्थापित कर उसकी धूपदीप से प्रतिदिन पूजा करते है। कई लोग सोने अथवा चादी के पत्र पर रामदेव जी की मूर्ति खुदवाकर गले मे पहनते है जिसे यहा फूल कहा जाता है।

रामदेवजी की उपासना करने वाले तथा अनुयायियो मे खेतिहर किसान व निम्न जाति के लोगो की सख्या अधिक है। भाबी (मेघवाल) रामदेव जी की पूजा करते है। इसके अतिरिक्त अन्य जातियो के लोगो की भी रामदेव जी मे आस्था है तथा गावो मे रामदेव जी के भजन कीर्तन व रातीजगे विशेष उत्साह के साथ सम्पन्न किए जाते है।

रामदेव जी से सबधित साहित्य भी यहा विपुल मात्रा मे देखने को मिलता है। बहुत सा साहित्य प्रकाशित है इसके अतिरिक्त हस्तलिखित ग्रथ भी उपलब्ध होते है। मालवा गुजरात मेवाड सिरोही जैसलमेर, बीकानेर तथा अन्य स्थानो से रामदेव जी के भक्त व श्रद्धालु लोग आते है जो समाज के बहुत बडे भाग और देश के व्यापक क्षेत्र पर उनके प्रभाव को लक्षित करता है। रामदेव जी के चमत्कारो से युक्त उनका महिमागान की रचनाए यहा बहुत लोकप्रिय है तथा उन्हे सभी असाध्य रोगो व भारी सकटो से मुक्ति दिलाने वाला माना जाता है। रामदेवजी को चरमा दूध मिठाई नारियल धूप चढ़ाये

जाते हैं तथा इनकी अन्य में शोभी इनके अनेक मन्दिर द्वारा आरोर जो ... जाते हैं। यहाँ की जनता रामदेवजी को पूर्ण अवतार (कृष्ण का अवतार) चमत्कारी आराध्यदेव के रूप में पूजा करती है।

रामदेव जी कृष्ण के अवतार माने जाते हैं।[3] [1] वे कुष्ठ रोगियों का भयंकर कुष्ठरोग दूर करने वाले अंधे को आँख, पंगु को पाँव व निसंतान को पुत्र देने वाले[3] तथा सुबुद्धि तथा सुख सम्पत्ति के दाता सबकी मनो कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा अभावों को मिटाने वाले हैं।[323] रुणेचा के राम सरोवर में स्नान करने से मनुष्य के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं[324] ऐसा लोक विश्वास है।

मल्लीनाथ जी

मल्लीनाथ जी मारवाड़ के राव सलखा जी के ज्येष्ठ पुत्र थे।[325] इनकी माता का नाम जाणादे था इनका जन्म एक तपस्वी के आशीर्वाद से वि.सं. १४१। (१३५८ ई०)[326] में हुआ और तपस्वी के कथनानुसार ही माता पिता ने इनका नामकरण (मल्लीनाथ) किया।[327] पिता के स्वर्गवास के पश्चात मल्लीनाथ महेवा जाकर अपने चाचा कान्हड़दे के पास रहे और वहाँ के शासन प्रबन्ध में हाथ बटाने लगे। अपने चाचा की मृत्यु के पश्चात् जालोर के खान की सहायता से मल्लीनाथ स्वयं महेवा के स्वामी १४३१ (१३७४ ई) में शासक बने।[328] मल्लीनाथ को तत्कालीन दिल्ली के बादशाह द्वारा रावळ की पदवी प्रदान की गयी।[329]

महेवा के अधिकारी के रूप में मल्लीनाथ जी ने अपने राज्य को सशक्त एवं सुदृढ़ बनाया। सीमाओं का विस्तार किया तथा उस पर होने वाले आक्रमणों का डट कर प्रतिरोध किया। फिरोज तुगलक के मालवा के सूबेदार निजामुद्दीन ने अपनी सेना को १३ दलों में बाँटकर संवत् १४३५ (१३७८ ई) में जब मल्लीनाथ जी पर आक्रमण किया तब मल्लीनाथ जी ने इस आक्रमण का बड़े साहस के साथ मुकाबला किया और मालवा के सूबेदार की सेना को परास्त होकर मैदान छोड़ना पड़ा। मल्लीनाथ जी की इस विजय से उनकी प्रतिष्ठा बहुत अधिक बढ़ गयी। मारवाड़ में अब तक इस प्रसंग की स्मृति में यह कहावत प्रचलित है कि तेरह तुंगा भाजिया माले सलखाणी। मल्लीनाथ जी से संबंधित लोकगाथाओं में भी उनके अद्भुत साहस और शौर्य का वर्णन मिलता है।

मल्लीनाथ जी ने अपने राज्य को विस्तार और स्थायित्व ही प्रदान नहीं किया अपितु अपने भाई भतीजों को भी अपना शासन स्थापित करने में सहयोग प्रदान किया। राव चूँडा (भतीजा) को मंडोर (संवत् १४५१) एवं नागौर (संवत् १४५४) विजय में अपनी सहायता प्रदान की।[330] मल्लीनाथ जी ने अपने भाई जैतमल को सिवाना, वीरमल को खेड़ और शोभित को आसिया की जागीर प्रदान की[331] जिससे उनके उदार व दानी स्वभाव का पता चलता है।

मल्लानाथ जा एक कुशल प्रशासक आर वीर योद्धा हा नहीं सिद्ध पुरुष भा थ । उनका जारता म भा ज्यादा उनका भक्ति भावना की कार्ति का प्रचार प्रसार हुआ आर उन्ह इस भक्ति पथ का आर माडन का श्रय उनका भक्तिनिष्ठ रानी रूपाद[332] का जाता ह । याग साधना क बल पर व अपन जावन काल म हा सिद्धावस्था प्राप्त कर पज्य बन गय थ तथा उन्ह भविष्य का ज्ञाता[333] माना जान लगा था । अपन जावन क अन्तिम काल म हरि भजन आर सत्सगति क प्रति उनका अगाध निष्ठा थी इसका प्रमाण हम इस उदाहरण स भा मिलता ह कि वि स १४५६ म उन्हान मारवाड क सभा सता का आमत्रित कर विशाल स्तर पर हरि कार्तन सम्पन्न करवाया था ।[334] उसके पश्चात वि स १४५६ का चत्र शुक्ला २ का उनका स्वगवास हुआ ।[335]

मारवाड म मल्लानाथ जा का बहुत प्रभाव रहा । पश्चिमी मारवाड म तो यह आर भा अधिक व्यापक कहा जायगा । इस क्षत्र क परगन का नामकरण मालाना भा इन्हा क नाम पर हुआ । तिलवाडा गाव जा लूनी नदी के किनार बसा हुआ ह जहा इनका मदिर बना हुआ ह वहा प्रतिवर्ष चत्र माह म मला[336] लगता ह जिसम मारवाड़ हा नहा समस्त राजस्थान म आर राजस्थान क अलावा गुजरात मालवा इत्यादि प्रदशा स बडी सख्या म लाग आत ह । मल्लानाथ जा क वशज तथा अन्य दूसर हिन्दू मल्लानाथ जा का एक सिद्ध महापुरुष सत आर लाक दवता क रूप म पजत ह ।

हरभूजी -

हर भूजा नागार परगन क भूडाल गाव क निवासी महराज क पुत्र थ ।[337] य साखला (परमार) जाति क राजपत थ ।[338] अपन पिता के दहावसान के पश्चात भूडल गाव का छाडकर फलादा परगन क चाख गाव क पास हरभमजाळ म आकर रहन लग । यहा रामदव जा स उनका मलाकात हाता ह आर वे रामदव जा क गुरु बाळकनाथ का शिष्यत्व प्राप्त कर भक्तिमार्ग का आर प्रवृत्त हुए ।[339]

हरभजा जाधपुर क शासक राव जाधा (१४१६-८९ ई) क समकालान थ ।[340] जब राव जाधा मवाड क महाराणा कुम्भा क अधिकार क्षत्र स मडार का पुन प्राप्त करन का काशिश कर रहा था उस समय हरभजा न जाधा की सहायता का[341] आर उस इस काय म सफल हान का आशार्वाद दिया । एसा भा माना जाता ह कि हरभूजा न जाधा का एक कटार भा प्रदान का था । मडार पर जब जाधा का आधिपत्य स्थापित हा गया तब हरभूजा का बगरा गाव भट स्वरूप दकर[342] उनम अपना भक्ति व आस्था प्रदर्शित का । सकट क समय म हरभजा द्वारा जाधा का सहायता करन क उपलक्ष्य म हा यह गाव उन्ह दिया गया ।

हरभजा यात्रा क साथ साथ यागा भा थ । यात्रा क रूप म उन्हान [illegible] लागा का सहायता प्रदान का । हरभजा द्वारा सहायता पान वाला म जाधपर क शासक राव

जाधा[३४३] का नाम विशाप उल्लख याग है। हरभजा अपन यहा आय महमाना का बडा आवभगत किया करत थे तथा उनक यहा स काइ व्यक्ति भखा नहा लाटता था तथा हमशा सदाव्रत भा चटा करती था।[३४५]

यहा की ख्याता व जाता स यह पता चलना ह कि हरभृजा शकुना थ आर भविष्य का जाता का पता इन्ह पहल हा लग जाया करता था।[३४६] अत व बड शकुना वचनसिद्ध आर करामाता मान जात थ।[३४७] हरभजा कृत सुकनविचार नामक (हस्तलिखित ग्रथ) का प्रतिलिपि भा उपलब्ध ह।[३४८]

बगटी गाव म हरभजा का एक मदिर बना हुआ ह जिसका निर्माण जाधपुर क महाराजा अजातसिह न वि स १७७८ (१७२१ ई) म ७००० रुपय का लागत स करवाया। यहा क पुजारा साखला राजपत ह तथा इस गाव क लागा क इष्ट दवता हरभृजा ह।[३४९]

तेजाजी

तजाजी नागार परगन के खड़नाल गाव क रहने वाल थ।[३५०] इनका जन्म जाट जाति क धाल्या गोत्र म वि स ११३० की माघ शुक्ला चतुर्दशा बृहस्पतिवार को हुआ था। इनके पिता का नाम ताहडजा आर माता का नाम राम कुवरा था।[३५१] इनका पत्नी का नाम पमल था जिससे उनका विवाह बचपन म हा हा गया था। जिसका पुष्टि तजाजा से सबधित लाक गाथाओ ओर लोकगीतो स भा हाती ह। लाकगीतो म यह वर्णन भा मिलता है कि जब तेजा जी युवावस्था को प्राप्त कर गये तब अपनी पत्नी पेमल का लन पनेर गय। वहा पहुचने पर जब उन्हे यह ज्ञान हुआ कि मेर लाग लाछा गूजरी की गाय घर कर ल गये ता तेजाजा ने उसका मदद के लिए मेरो का पीछा कर उनसे सघर्ष किया आर गायो का छुडवाया। इस सघर्ष म व स्वय भा बुरा तरह जख्मी हुए आर पृथ्वी पर गिर पड़ तथा सर्पदश[३५२] के कारण उनका मृत्यु हुई।[३५३]

तजाजी की मृत्यु क पश्चात् उनका पत्नी सती हुई।[३५४] तजाजा क सर्पदश स सबधित विभिन्न लोक गाथाए मिलती है[३५५] जिनम सर्वाधिक प्रचलित एक गाथा क अनुसार जब तजाजा अपनी पत्नी का लन ससुराल जा रह थे तब रास्ते म आग म जलत हुए एक साप का बचाया जिसका नागिन उस आग म जल चुकी था। नाग इस कारण क्राधित हाकर तेजाजा को डसने लगा तब तेजाजी न उस वचन दिया कि म ससुराल स लाट कर आऊ तब डस लेना। ससुराल म गूजरा का गायो का वापिस लाने क कार्य म मरा स युद्ध करत हुए व बहुत अधिक घायल हा गय थ किन्तु सर्प का दिए हुए वचन को पालना करन हतु उसके पास गये। सर्प न जब घावा स भरा हुआ तजाजा का शरार देखा तब कहा कि म कहा डस। तब तजाजा न अपना जिह्वा पर सर्पदश करवाया।

इस प्रकार गाया का रक्षार्थ तथा वचन पालन क लिए अपन प्राणा का त्याग करन वाल तजाजा का लाक दवता का स्वरूप प्राप्त हुआ। उनके मृत्यु स्थल सुरसरा (किशनगढ) म एक मन्दिर बना हुआ है जहा पहल एक पशुमला आयाजित हाता था किन्तु महाराजा अभयसिह जा क समय म वि स १७९१ (१७३४ ई) म परबतसर क हाकिम द्वारा वहा स्थापित मूर्ति परवतसर लाया गइ तब स यह मला परबतसर म आयाजित हान लगा। वि स १७०१ भाद्रपद माह म कृष्णपक्ष का ६ (छठ) शुक्रवार का जोधपुर क प्रधान विजयराज भण्डारा द्वारा तजाजी की मूर्ति बनाकर प्रतिष्ठापित करन का लख भी मिलता ह।[३५६]

मारवाड़ क जाटा म तजाजी का अधिक मान्यता ह तथा व उन्ह अपन आराध्य दवता क रूप म मानत ह। भादा सुद १० का वे तजाजा का पूजा करत ह तथा तजाजा का ब्यावला तथा उनका कथा का वाचन करत ह।

परबतसर म तजाजा का विशाल मला लगता ह जा भाद्रपद शुक्ल पक्ष का पचमा से पूर्णिमा तक चलता है। परवतसर क अलावा खड़नाल सुरसरा ब्यावर आदि स्थाना पर भी तेजाजी क मेले लगते ह।[३५७] मारवाड़ क कई गावा म तजाजी क चबूतरे तथा मदिर बन हुए ह जिनम तजाजा की घाडे पर सवार मूर्ति तथा उनक भाले क साथ लिपटे सर्प द्वारा तेजाजी की जिह्वा पर डसन का चित्र अंकित होता है। कुछ लाग उनकी आकृति खुद हुए चादी क तावाज़ (फूल) भा गल म लटकाय रहते ह। तेजाजी को गागाजा की भाति सर्पो क देव के रूप म पूजन की प्रथा भी यहा विद्यमान ह तथा सर्पदश क समय तजाजा क नाम की ताता बाधन का रिवाज भी प्रचलित ह।

देवजी -

दवजी का जन्म वि स १३०० क लगभग आसाद नामक गाव म हुआ था।[३५८] ये गूजर जाति के थ तथा भोजा बगड़ावत के पुत्र थे। इनका माता का नाम साढो (सेदू) था। बगड़ावतो का मूल पुरुष हरराम चाहान माना जाता ह जिसका पुत्र बाघजा था। बाघजी के चाबीस पुत्र थे जिनम भोजा सबसे वडा था और ये चाबीसा भाई बगड़ावत नाम से विख्यात हुए।

बाघजा अपने पुत्रो सहित भिणाय के शासक राघट परिहार क यहा रहन लगे। कुछ काल बाद भिणाय क शासक की नवविवाहित रानी जेलू क प्रश्न का लेकर भिनाय क शासक और बगड़ावता में सघर्ष छिड गया जिसमे भाजा सहित तईस बगडावत भाई मार गय।[३५९] भाजा की मृत्यु क पश्चात् उसका पत्नी सेदू गूजरा अपने नवजात शिशु दवजा का लेकर बच बचाकर अपने पाहर चली गई। भिनाय क शासक ने दवजी को मरवाने की बहुत काशिश का किन्तु वह सफल नहीं हा सका। बाद म देवजी का विवाह धारा नगरी के जयसिंह दव परमार की पुत्री पीपलद के साथ हान तथा गाया को लेकर

हुए झगड़े में भिनाय के शासक को मारकर अपने पिता व पूर्वजों का प्रतिशोध लिया जिसका वृतान्त उनसे सम्बंधित वाता, ख्याता तथा लोकगीतों में मिलता है। इस युद्ध के बाद देवजी की बड़ी प्रतिष्ठा फैली तथा उन्होंने मेवाड़ में भी कई करामातें दिखाई[३६०] जिसके कारण इस क्षेत्र में उनकी ख्याति फैली।

वास्तव में देवजी ने गायों को छुड़ाकर अपने पिता का बैर लेकर तथा अपने पूर्वजों की नष्ट प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित कर जनता के समक्ष पुरुषार्थ का एक ऐसा आदर्श रखा जिससे लोक मानस अत्यधिक प्रभावित हुआ। सम्भवतः यही कारण है कि ये लोकदेवता की भांति पूजे जाने लगे जिसमें उनके द्वारा दिखाये गये चमत्कारों का भी योगदान रहा।[३६१]

जिस प्रकार तेजाजी की मान्यता जाटों में अत्यधिक है उसी प्रकार देवजी गूजरों के देवता माने जाते हैं। देवजी का एक मन्दिर चित्तौड़ में महाराणा सांगा ने निर्मित करवाया था।[३६२] आसींद तथा इनके मृत्यु स्थल देहमाली के अतिरिक्त मारवाड़ के कई गांवों में इनके देवरे बने हुए हैं जहां इनकी पूजा होती है तथा भाद्वा सुद ६ तथा माघ सुद सप्तमी को मेले भरते हैं। माघ सुद सप्तमी देवजी के जन्मदिन के रूप में मनाते हैं। इस दिन गूजर उनकी पूजन करते हैं।[३६३] इस तिथि को गूजर दूध नहीं जमाते हैं। देवजी के भोपे (पुजारी) गूजर होते हैं तथा वे अविवाहित होते हैं। कई भोपे शादीशुदा भी होते हैं। गूजर देवजी की कसम को बहुत पक्का समझते हैं।[३६४]

देवजी से सम्बंधित जो साहित्य उपलब्ध होता है उसमें 'बात देवजी बगड़ावत री', 'देवजी री पड़', 'देवनारायण की मारवाड़ी ख्यात', 'देवनारायण बगड़ावत महागाथा' काव्यप्रमुख है।[३६५] इसके अतिरिक्त उनके सम्बंधित कई लोकगीत भी मिलते हैं।

लोक देवताओं की मध्यकालीन संस्कृति को देन

मध्यकालीन इतिहास में भक्ति आन्दोलन का प्रादुर्भाव एक महत्वपूर्ण घटना थी जिससे धार्मिक क्षेत्र में कई क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। धार्मिक सुधार की इससे जो चेतना जागृत हुई उस जन जन तक पहचान एवं उसका व्यापक प्रचार प्रसार करने में यहां के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों की भांति लोक देवताओं की भी प्रमुख भूमिका मानी जायेगी। हालांकि ये लोक देवता एक जाति विशेष या समुदाय विशेष से सम्बद्ध रहे फिर भी इनके त्याग, बलिदान व उपलब्धियों ने पूरे समाज को प्रभावित किया। उनके जीवन प्रसंग यहां की लोकसंस्कृति के पर्याय बन गये क्योंकि उन्होंने धार्मिकता की भावभूमि पर जिन सांस्कृतिक मूल्यों व आदर्शों का निर्वाह किया उससे यहां की सांस्कृतिक विरासत से लोकमानस को सीधा सम्पर्क व सम्बन्ध स्थापित होने में बड़ी सहायता मिली। इस दृष्टि से इनकी मध्यकालीन संस्कृति को सम्यक रूप से जो देन रही उसे निम्नलिखित शब्दों में सार रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता है।

(१) सांस्कृतिक चेतना की जागृति

मध्ययुग में विदेशी आक्रान्ताओं में यहाँ की शासकीय इकाई या राजनैतिक व्यवस्था नष्ट हो गई तो इसके साथ ही सामाजिक एवं धार्मिक जीवन भी संत्रस्त हो गया तथा सांस्कृतिक स्वरूप भी परिवर्तित होने लगा। उस समय यहाँ के लोकदेवताओं ने जो मनुष्य योनि में ही थे लोगों को एक नवीन संदेश व आत्मबल प्रदान कर अपनी संस्कृति की रक्षा हेतु प्रेरित किया। लोकदेवताओं में अधिकांश ने गायों की रक्षार्थ अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। गाय भारतीय संस्कृति का प्रतीक एवं एक महत्वपूर्ण धार्मिक उपकरण माना जाता रहा है। इसी प्रकार अन्य धार्मिक उपकरण में जैसे मन्दिर, ब्राह्मण, नारी इत्यादि की रक्षार्थ सर्वस्व होम कर तथा प्राणप्रण से उनकी रक्षा करने की भावना को जागृत कर इन्होंने यहाँ की सांस्कृतिक चेतना को जागृत किया। इसके परिणाम स्वरूप यहाँ की सांस्कृतिक अस्मिता अपना अस्तित्व बनाये रखने में सफल हो सकी।

(२) धार्मिक भावना व भक्ति भावना का प्रचार -

मध्यकालीन मारवाड़ की अशिक्षित ग्रामीण व निम्न जातियों में नवीन भक्ति भावना को प्रस्फुटित करने का श्रेय इन्हीं लोक देवताओं को जाता है। राम, कृष्ण व अन्य हिन्दू देवों में यहाँ की जनता की आस्था थी, यहाँ के धार्मिक ग्रंथ व सम्प्रदायों से भी वह बिल्कुल अनभिज्ञ हो यह बात नहीं किन्तु यहाँ के धर्माचार्यों व संतों से भी अधिक यहाँ की जनता को भक्ति से सीधा तादात्म्य स्थापित कराने में यहाँ के लोक देवताओं की प्रमुख भूमिका रही। धर्म के नाम पर विभिन्न मतमतान्तरों व दर्शन की गूढ़ परिभाषाओं व क्रियाकलापों से दूर यहाँ की जनता ने लोक देवताओं में ही अपनी आस्था रख कर इन्हीं विभूतियों को देव स्वरूप मानकर गांव गांव में उनके देवरे, देवल, थान (स्थल) आदि बनाकर अपनी भावनानुसार पूजना प्रारंभ कर दिया। उनकी पूजा में कोई कर्मकाण्ड या नियमों का प्रावधान नहीं था। सहज भक्ति से ही उनके लोक देवता तुष्ट हो जाते तथा ग्रामीण अपनी स्थिति व भावना के अनुरूप केवल धूप दीप के साथ पूजन की परम्परा निभा लेते थे तथा अपने घर बनने वाली भोज्य सामग्री जो सहजता से उपलब्ध होती जैसे दूध, लापसी, चूरमा आदि से भोग लगाते। खर्चीले विधि विधानों से युक्त धर्मानुष्ठानों के आयोजन हेतु न तो उनके पास समय था न धन न विभिन्न तीर्थ स्थानों की यात्रा करने की सामर्थ्य ही। अतः वे अपनी धार्मिक भावना को सहज रूप में अभिव्यक्त कर सन्तुष्ट हो जाते थे तथा इन लोक देवताओं की सेवा पूजा (उपासना) सत्संग व भजन कीर्तन आदि से करना ही उनके आध्यात्मिक अनुष्ठान थे। इस सरल व सहज भक्ति की भावना से उनके धार्मिक विचारों की सम्पुष्टि शीघ्र व सुग्राह्य थी अतः उसका व्यापक प्रचार प्रसार हुआ। इस प्रकार उनके धार्मिक विचारों एवं भक्ति भाव को विकसित कर उसमें पूर्ण विश्वास बनाये रखने की प्रेरणा भी इन लोक देवताओं से मिली।

विभिन्न प्रकार की धार्मिक आपचारिकताओ से परे सहज भक्ति के विकास की दिशा मे यह एक महत्वपूर्ण कदम था जिस पर संतो ने भी बाद मे बहुत बल दिया।

(३) सामाजिक मान्यताओ पर प्रभाव--

समाज सुधार के क्षेत्र मे अस्पृश्यता जात पात भेद भाव आदि बुराइयो का निराकरण करते हुए लोक देवताओ ने अपने युग मे जो निम्न वर्ग की जातिया थी जिनका जीवन स्तर बहुत नीचा था उन्हे ऊपर उठाने का प्रयास भी किया। पाबूजी द्वारा थोरी जाति व रामदेव जी द्वारा चमार जाति के उत्थान हेतु उल्लेखनीय प्रयास किए गए यही कारण है कि उन जातियो मे इन लोक देवताओ की गहरी आस्था है। पाबूजी और रामदेव जी के प्रयासो के कारण ही थोरी व चमार जाति के लोगो को अपने धर्म और समाज मे बने रहने का आत्मबल मिला। उस युग मे ये क्रांतिकारी परिवर्तन कहे जायगे क्योकि मध्यकालीन वर्णव्यवस्था के भीतर ऐसी सामाजिक मान्यताओ का प्रादुर्भाव व प्रचार कोई सहज व आसान कार्य नही था किन्तु यदि लोक देवताओ के द्वारा यह प्रयत्न नही होता तो हिन्दू समाज का बहुत बडा तबका धर्म परिवर्तन के प्रति आकृष्ट होकर इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेता क्योकि उस युग मे तो इस्लाम द्वारा धर्म परिवर्तन का एक जबरदस्त दौर चल रहा था। अत उस प्रयास को विफल कर तत्कालीन लोक देवताओ ने हिन्दू समाज की रक्षा की तथा निम्न जातियो को कुण्ठित होने से बचाया तथा उन्हे उस भयावह स्थिति से उबारा।

(४) आचार विचार का शुद्धिकरण--

सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र की भाति लोक देवताओ द्वारा लोगो के व्यक्तिगत जीवन मे भी आचार विचार के शुद्धिकरण के प्रति भी प्रयास हुये। सभी लोक देवताओ ने बाह्याचारो का विरोध किया मल्लीनाथ जी और रामदेव जी ने मूर्तिपूजा आदि का विरोध करते हुए ईश्वर स्मरण व सत्कर्म पर बल दिया। सत्संग व सत्कर्म से ही व्यक्ति को जीवनादर्शो की प्राप्ति होती है। लोक देवताओ के जीवन चरित्र व उनकी जीवन की घटनाओ से जिन शाश्वत मूल्यो का गुणगान प्रतिदिन किया जाता है उनकी प्ररेणा से सामान्य जन को त्याग सत्य निष्ठा कर्तव्यपरायणता ईमानदारी न्याय आदि उदात्त भावनाओ एव जीवन मूल्यो की जानकारी हुयी। वे यह भी जानते थे कि महान् गुणो और सद्चरित्रता के बल पर ही इस लोक मे मनुष्य भी देवता तुल्य पूज्य बन जाता है। इस प्रकार इन लोक देवताओ ने जहा यहा के धार्मिक जीवन को प्रभावित किया वहा व्यक्तिगत जीवन मे आचार विचार एव हृदय के शुद्धिकरण की महत्ता को भी प्रतिष्ठापित किया जिसके परिणामस्वरूप समाज के लोगो को सद्मार्ग पर चलने की प्ररेणा मिली। इस प्रकार व्यष्टि एव समष्टिगत जिस आचरण सहिता का निर्माण हुआ उसका पालना को उपयुक्त एव गौरवयुक्त समझा जाने लगा। इस विचार ने लम्बे समय तक सामाजिक

जीवन को प्रभावित ही नही किया सुसगठित भी किया तथा लोग आचारगत विशिष्टताओ की व्यावहारिक पालना हेतु जागरूक रहते थे । इस प्रकार लोक देवताओ ने यहा के धार्मिक और नैतिक जीवन को बहुत हद तक प्रभावित ही नही किया उसे नवीन दिशा निर्देश भी प्रदान किये जो उस युग की आवश्यकता के अनुकूल तो थे ही कालान्तर मे भी जिनका पालन करना समाज सापेक्ष एव नैतिक तथा आध्यात्मिक उद्बोधन हेतु उपयोगी एव सार्थक माना जाता रहा ।

(५) मानवीय भावनाओ का विकास—

जीवन के विभिन्न पहलुओ को प्रभावित करने वाले लोक देवताओ की सास्कृतिक देन ने *समाज मे मानवीय भावनाओ के विकास का आधार भूमि का निर्माण किया ।* जीवन मे सहजता सरलता एव शिष्टता को महत्व देने वाले उदात्त जीवन मूल्यो के कारण मानवीय भावनाओ को सम्बल मिला । समाज मे अस्पृश्यता एव बाह्याडम्बरो के विरोध ने प्रत्येक मानव मात्र से प्रेम करने की प्रेरणा दी । प्रत्येक जाति व वर्ग के लोगो से स्नेह रखना व सामुदायिक उत्थान हेतु तत्पर रहने की सुख दुख मे एक दूसरे का सहयोग करने की प्रेम तथा भाई चारे की भावना से वसुधैव कुटुम्बकम् की कल्पना साकार होती है । लोक देवताओ द्वारा जातीय कट्टरपन को दूर करने मे हम यहा मानवीय भावना दिखायी देती है । इन मानवीय भावनाओ के सरक्षण और सवर्धन के परिणामस्वरूप हिन्दू धर्म जातीय आधार पर सगठित होकर जहा अपने अस्तित्व को तथा सास्कृतिक जीवन की विशिष्टताओ को सुरक्षित रखने मे सफल हुआ वही उसमे धर्म के सही एव सहज स्वरूप की जानकारी के फलस्वरूप एक समन्वयवादी दृष्टिकोण का प्रादुर्भाव हुआ । इस समन्वयवादी दृष्टिकोण ने विभिन्न धर्मावलम्बियो मे मतैक्य न होते हुए भी एक ईश्वरीय शक्ति के प्रति आस्था एव उसकी आराधना के विभिन्न स्वरूपो को स्वीकार करते हुए जगत के सृष्टा की इस सृष्टि की प्रत्येक वस्तु से अपनत्व स्थापित करने मे बल मिला । इसी कारण विभिन्न सम्प्रदायो के प्रवृत्तियो और लोकदेवताओ ने मानवतावादी दृष्टिकोण को अधिक महत्व दिया ।

(६) लोक साहित्य का सृजन —

लोक देवताओ की स्तुति मे गाये जाने वाले पदो भजनो गीतो आदि के माध्यम से यहा जिस विशाल लोक साहित्य का निर्माण हुआ । इसमे एक ओर जहा हमे लोक *देवताओ सम्बन्धी बाते ज्ञात होती है वही तत्कालीन युग की ऐतिहासिक प्रवृत्तियां भी* ज्ञात होती है । लोक देवताओ सम्बन्धी रचित यह लोक साहित्य यहा की धार्मिक भावनाओ व अन्य सामाजिक परम्पराओ का हमे दिग्दर्शन कराता है । इस प्रकार का यह साहित्य मौखिक व लिखित दोनो रूपो मे मिलता है । हालाकि अभी भी उसका बहुत कम अश प्रकाशित हुआ है । लोक देवताओ सम्बन्धी गीत भजन पवाडे इत्यादि आज

भी यहा बड चाव स गाय जात है । इस प्रकार य विशाल लोक साहित्य जन का सम्मान का अमूल्य धरोहर है ।

(७) जीवन म मधुरता एव उल्लास का सचार

लोक देवताओ न अपन युग म तो यहा क लोगो क सत्रस्त जीवन म आशा और सताप की नई किरण जगायी ही थी किन्तु उसक पश्चात भी उनक कार्य व विचार शताब्दियो तक यहा क लोगो क जीवन म मधुरता व उल्लास का सचार करत रह । लोक देवताओ क पूज्य व प्रसिद्ध स्थल इनक श्रद्धालु भक्तो क लिए आज भी तीर्थ रूप ह । उनकी यादगार म स्थान स्थान पर भरन वाल मेलो म यहा क लोगो क जीवन को सरस व उल्लासित होन का अवसर मिलता ह । उनस सम्बंधित साहित्य गान भजन पवाडा आदि का पाठ व श्रवण कर आज भी यहा क लोक जीवन म उल्लास व आनन्द का सचारण होता ह । जिनम तेजा क गान गोगाजी व रामदेव जी क भजन पाबूजी व देवजी का पड व पवाड विशेष रूप स उल्लेखनीय है ।

मध्यकाल म पनपन वाल विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो का अनक विशेषताए रही ह । इन सम्प्रदायो क प्रभाव और गुणो का विवेचन करन क पश्चात भी इस बात को नही नकारा जा सकता कि इन धार्मिक सम्प्रदायो क वैविध्य क परिणामस्वरूप कालान्तर म यहा कई प्रकार के मतभेद भी पैदा हुय । प्रारभ म प्रत्यक सम्प्रदाय क प्रवर्तक का त्यागपूर्ण जीवन एव शुद्ध आचरण क कारण उसक पथ व सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा बढ़ी किन्तु बाद म इन पथो व सम्प्रदायो क कुछ मठाधीशो और महन्तो न अपन संस्थापको के उद्देश्यो और आदर्शो की तात्विक विशेषताओ को भुला दिया ।[366] इस कारण शन शन उनम कई दोष घर कर गय । इतना ही नही आग चलकर उनकी गद्दी पर बैठन वाल उत्तराधिकारी व सामान्य साधुओ म धन सग्रह की लालसा व अन्य कई प्रकार क दुर्गुण पैदा हो गय ।[367]

इन कारणो स सम्प्रदायो म आपसी खीचातान और कई नय पथो का उदय भी समय समय पर होता रहा परन्तु गुरु शिष्य परपरा क अनुसार सम्प्रदाय क सस्थापक गुरु क प्रति फिर भी आस्था रखत रह क्योकि यह विचारभेद काफी बाद म जाकर पनपा । इसम सन्देह नही कि इस प्रकार क सकीर्ण दृष्टिकोण स स्वस्थ धार्मिक आन्दोलन को ठेस भी पहुची और कही कही तो समाज म इस विघटन स बिखराव भी आया फिर भी हर सम्प्रदाय की तत्वगत विशेषताए किसी न किसी रूप म जीवित रही ।

सन्दर्भ सूची

१ भारतीय शब्द धर्म का परिपूर्ण व्याख्या विश्व की किसी अन्य भाषा क सामान्यतया समानार्थी समझ जान वाल शब्दों द्वारा नहीं की जा सकता । इसके लिए उन शब्दों क साथ हम और भी बहुत स शब्द जोडन

२६ यह गाव जयपुर राज्य क अन्तर्गत था तथा रामचरणजा का यहा ननिहाल था।

२७ दरियावजी महाराज की जन्मलीला (ह.ग्र) क्रमाक ३१०३४ पृ १२२ रा प्रा.वि.प्र, जोधपुर

२८ ना पमाराम मध्यकालीन राजस्थान मैं धार्मिक आन्दोलन पृ २२४

२९ स. वैद्य कवनराम स्वामी आदि श्रीरामस्नेही सम्प्रदाय, पृ २४

३० रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ० २८२

३१ स वैद्य कवनराम स्वामी आदि श्रीरामस्नेही सम्प्रदाय पृ १०

३२ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २८३

३३ द्रष्टव्य राधिकाप्रसाद त्रिपाठी रामस्नेही सम्प्रदाय पृ ७१ ७२

३४ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ १०६

३५ डा सुदर्शन सिंह मजीठिया सत साहित्य, पृ १०६

३६ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २८४

३७ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २८४

३८ रामचरण जी क पदों की सख्या के सम्बन्ध में यह साखी प्रसिद्ध है

रामचरण महाराज भजन छक बालिया।
सवा छतीस हजार, श्लाक ज खालिया।
अक्खर ग्यारह लाख साठ हज्जार है।
जगन्नाथ तामाह ज्ञान तत सार है। वही पृ २८४

३९ रामचरण आनन्द अति निर्भय आदू जाम।
सा सुख ह सतसग में सा नही दूसरी ठाम॥

४० व मसात व द्वार भम्या फिरे निराट।
रामचरण हिन्दू तुरक निकस्या एके घाट॥

४१ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्री रामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ क डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान म धार्मिक आदोलन, पृ २३६ पर बालकरामकृत जनप्रभाव परचा के आधार पर इनका जन्म वि.स १७८ पा शु १३ बताया।

४२ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २८७

४३ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन, पृ क रामदास की परची (ह ग्रथ) क्रमाक २३०९७ पृ ५ रा प्रा वि.प्र जोधपुर

४४ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २८५

४ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ क

४६ वही पृ ग

४७ रामदास की परची (ह.ग्रथ) क्रमाक २ ९७ पृ ८ रा.प्रा वि.प्र, जोधपुर

४८ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ च

४ रामदास की परची (ह ग्रथ) क्रमाक २३ ७ पृ २२ (रा.प्रा वि.प्र जोधपुर)

५० प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ

५१ वही पृ ठ

२ रामदास का परचा (ह ग्रथ) क्र ७ ७ पृ / (रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर)
३ प. उत्साहराम प्राणाचार्य श्री रामस्नेही मत दिग्दर्शन, पृ थ स व
४ रामदास का परचा (ह ग्रथ) क्रमांक २ ० ७ (रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर संग्रह)
डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन, पृ ८ १
६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २८६
७ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन पृ २४२
८ द्रष्टव्य सेवगराम कृत परसराम जी का परचा (ह ग्रथ) सूरसागर, बड़ा रामद्वारा जोधपुर
९ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन, पृ २४०
१० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २८६ ८७
११ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २८६
६२ स चौकसराम श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश पृ १
६३ (अ) सुधाकर द्विवेदी ने दादू का जन्मस्थान जौनपुर माना है।—दादूदयाल का सबद भूमिका पृ २
(ब) क्षितिमोहन सेन अहमदाबाद को दादू का जन्मस्थान नही मानते क्योंकि अहमदाबाद में दादू के जन्म का कोई प्रमाण उपलब्ध नही होता। द्रष्टव्य दादू उपक्रमणिका पृ १० १२
६४ दादू का जीवन चरित्र (ह ग्रथ) क्रमांक १ १०) रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर
६५ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २९०
६६ सुधाकर द्विवेदी दादू दयाल का सबद भूमिका पृ २
६७ डा. मोतीलाल मेनारिया राजस्थान का पिंगल साहित्य, पृ १८ क्षितिमोहन सेन दादू उपक्रमणिका, पृ १७
६८ डा. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल दि निर्गुण स्कूल आफ हिन्दी पोयट्री पृ ५७
६९ जनगोपाल के अनुसार दादू के दर्शनों के लिए भीड इकट्ठा होने लगी तो उससे मुक्त होने के लिए वे धुनिया का काम करने लगे तब धुनिया का कृत्य जु कोनो भीड मिटन का उद्यम कीनो।
७० रज्जब धुनिग्रभ उत्पना दादू योगन्द्र महामुनि
७१ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २९०
७२ वही पृ २९०
७३ दादू जन्मलीला (ह ग्रथ) क्रमांक २६६ पृ (रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर)
७४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २ २
७४ सवत् १६४२ मे इनकी अकबर से फतहपुर सीकरी मे भेंट हुई। अकबर इनके विचारों से काफी प्रभावित हुआ तथा ४० दिन तक अपने यहा उनको रखकर धार्मिक विचार विमर्श किया।
दादू जन्मलीला (ह ग्रथ) क्रमांक २६६ ३५ (रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर)
७६ दादूजी के पद (ह ग्रथ) क्रमांक ३१५९९ रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर में दादू के मृत्यु सवत एव मिति का उल्लेख इस प्रकार है स १६६० मिति ज्येष्ठ कृष्णा अष्टमी शनिवार।
७७ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन, पृ १२७ २८
७८ श्री दादू सम्प्रदाय का संक्षिप्त इतिहास पृ २
७९ दादूजी का जीवन चरित्र (ग्रथ) क्रमांक ३१५९ रा. प्रा.वि.प्र. जोधपुर

८० रिपार्ट मर्दमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २९३

८१ श्री दादू सम्प्रदाय का संक्षिप्त इतिहास पृ २४

८२ वही पृ ७ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन पृ १३०

८३ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ ३

८४ दादू वाणी

८ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २

८६ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन पृ १ ६

८७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २९४

८८ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आन्दोलन पृ १३६

८९ (अ) चापासर के दादूपथी नारायणदास को महाराजा जसवन्तसिंह ने संवत् १७२४ कार्तिक कृष्णा ४ को एक स्थान एवं संवत् १७२८ भाद्रपद शुक्ला ३ को पाच खेत दिये। यह सम्पदा उसके उत्तराधिकारियो को महाराजा अजीतसिंह द्वारा संवत् १७६ में और विजयसिंह द्वारा संवत् १८४० में हस्तान्तरित की गयी।

(ब) संवत् १८२५ में दादूपथी रूपदास को रूण में २०० बीघा भूमि नागौर के गाव कासाणा को हासल पूरणदास को एव कुचेरा में स्थान हेतु भूमि दादूपथी प्रेमदास को प्रदान की गयी।

डा पेमाराम मध्यकालीन राज मे धार्मिक आंदोलन पृ १३९

९० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २९४

९१ दादू द्वारों में बटने वाले सदाव्रत हेतु जो अनाज मूग वगैरह जोधपुर राज्य में खरीद जाते थे उनको राहदारी कर माफ कर दिया गया था।

सनद परवाना बही न ४५ पृष्ठ ३६७ जोधपुर रेकर्डर्स राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर

डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान मे धार्मिक आंदोलन पृ १३८

९२ वही पृष्ठ ११८

९ दादूजी की वाणी साखी ७८ (ह ग्रथ) क्रमाक २२१३५ प्रा वि प्र जोधपुर।

९४ वही साखी ८३

९५ दादूजी की वाणी (ह ग्रथ) क्रमाक ३ २ ८ परचे को अग रा प्रा वि प्र जोधपुर

९६ दादूवाणी दादूजी की वाणी ५ ० श्लोको के बराबर है उसके दो भाग है (१) पूर्वार्द्ध और (२) उत्तरार्द्ध। पूर्वार्द्ध में साखी और उत्तरार्द्ध में शब्द है। साखियों में ज्ञान और वैराग्य के ३७ अग है और शब्दो में २७ राग के भजन और हरजस वगैरह है।

रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २९५

दादूपथ में खूब साहित्य उपलब्ध होता है। दादू के जीवनकाल में ही विभिन्न साधुओं की वाणियाँ एकत्रित हो गई थी। सर्वगी गुणगजनामा में दादू के अतिरिक्त कबीर, नामदेव रैदास हरिदास आदि सतों की वाणियों को भी स्थान मिला है।

डा सुदर्शनसिंह मजीठिया सत साहित्य पृ ८७

९७ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ १२७

९८ संवत् १८५ ज्येष्ठ सु १

(क) रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ २७७

(९) । न्होंने इनका जन्म संवत् १४ ७ में और स्वर्ग वास्तव में संवत् १ ०५ में होना स्वीकार किया है।

ग) के ग्रन्थियों में इनके विषय में यह पद प्रचलित है

चौदह सौ पचपन साल गए चन्द्रवार एक ठाट ठए।
जेठ सुदी बरसायत को पूरनमासी तिथि प्रगट भए॥

इसके अनुसार कबीर का जन्म संवत् १४ ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा माना है।

डा. श्यामसुन्दर दास कबीर ग्रन्थावली पृ १३ १४

१ सभी बातों का विचार करके बाबू श्यामसुन्दर दास को यही संभव जान पड़ा कि कबीरदास जी का जन्म सं १४ ५ में और मृत्यु संवत् १ ७ में हुई होगी।
आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर, पृ ३३ ३४

१ १ डा. श्यामसुन्दर दास कबीर ग्रन्थावली पृ १० आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर, पृ २०

१०२ कबीर मुसलमान जुलाहे थे।
रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरी हिस्सा पृ २७

१० (अ) जाति जुलाहा मति को धीर, हरषि हरषि गुन रमै कबीर
(ब) तू ब्राह्मण मै काशी का जुलाहा
(स) कहत कबीर माहि भगति उमाहा कृत करणी जाति भया जुलाहा। इत्यादि बहुत से ऐसे उदाहरण कबीर के पदों में देखने को मिलते हैं।

१ ४ डा. श्यामसुन्दर दास कबीर ग्रन्थावली पृ १०

१० डा. सुदर्शनसिंह मजीठिया संत साहित्य पृ २०१ १

१०६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरी हिस्सा पृ २७६

१०७ रामदास गौड़ हिन्दुत्व पृ ७,४

१०८ द्रष्टव्य प्रो रामकुमार वर्मा कृत हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास

१ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर, पृ २० ०

११ वही कबीर, पृ २ ३

१११ रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ ७७

११२ (अ) संवत् पन्द्रह सौ औ पाचमों मगहर कियों गमन।
अगहन सुदी एकादशी मिले पवन में पवन॥
(ब) संवत् पन्द्रह सौ पछत्तर किया मगहर को गवन।
माघ सुदी एकादशी रळ्यो पवन में पवन॥

११३ डा श्यामसुन्दरदास कबीर ग्रन्थावली पृ १४

११४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरी हिस्सा पृ २७८

११ तू कहता कागज की लेखी मैं कहता आँखों की देखी।

११६ डा श्यामसुन्दर दास कबीर ग्रन्थावली पृ ८

११७ तैमूर, महमूद गजनवी व मोहम्मद गोरी के अमानुषिक अत्याचारों से रक्षा हेतु हिन्दू जनता के सगुण उपास्य देव ईश्वर नहीं आये अतः सगुण भक्ति के प्रति जनसाधारण में अरुचि उत्पन्न होने लगी थी।

११८ प्रधान सम्पादक डा धीरेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य कोश पृ /

११ हजारा प्रसाद द्विवदा नाथ सम्प्रदाय पृष्ठ १

१२ स राजवना पाण्डय हिन्दा साहित्य का वृहद इतिहास भाग १ पृ २८

१२१ गारख जगाया जाग भगति भगाया लाग।
नियम निगम त सा कवि हा उारा सा ह।
१२२ आचार्य हजारा प्रसाद द्विवदा न भा नाथ सम्प्रदाय क सिद्धान्त को शवतन्त्र तथा पतंजलि याग क मिश्रण का परिणत फल माना ।
द्रष्टव्य हजारा प्रसाद द्विवदा कृत नाथसम्प्रदाय।

१२३ हजारा प्रसाद द्विवदा नाथसम्प्रदाय पृ १५

१२४ रिपार्ट मर्दुमशुमारा राज मारवाड तासरा हिस्सा पृ ६२

१२५ डा मागीलाल व्यास मयक जाधपुर राज्य का इतिहास पृ ४

१२६ जालार का पुराना नाम हा जालधर ह।
रिपार्ट मर्दुमशुमारा राज मार. तासरा हिस्सा पृ २४२

१२७ डा मागालाल व्यास मयक जाधपुर राज्य का इतिहास पृ २४९

१२८ बाकीदास री ख्यात बात सख्या ३६ पृ ५

१२९ शाधपत्रिका वर्ष १८ अक ३ पृ २८ ४१

१३० विश्वेश्वरनाथ रेउ मारवाड़ का इतिहास भाग-१ पृ २७

१३१ यदि नवनाथों कापालिकों ज्ञाननाथ तक के गुरसिद्धा आर वर्णरत्नाकर के चारासा नाथ सिद्धा का नाथ परपरा में मान लिया जाय ता चादहवा शताब्दा के आरभ होने के पूर्व लगभग सवा सा सिद्धों के नाम उपलब्ध हाते है।
हजारा प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय पृ ३२

१३२ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तासरा हिस्सा पृ २४३

१३३ हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय पृ १७० श्री अभय कुमार वद्यापाध्याय गभारनाथ प्रसग पृ ५३

१३४ हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय पृ १६८

१३५ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरा भारत की सत परपरा भूमिका पृ ५५

१३६ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी नाथ सम्प्रदाय के मुख्य रूप स बारह पथ माने ह।
द्रष्टव्य हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय पृ १६१

१३७ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तासरा हिस्सा पृ २४५

१३८ (१) कानों के मुन्द्रा (२) भगवा कपड़ (३) सली (४) नाद (५) भसमा (६) रूद्राक्ष/रूद्राक्ष का माला
वहा पृ २४३ २४४

१३९ जागा मसानियो जागी आर कालबेलियां क अतिरिक्त आघड अधारा व रावल इत्यादि भा ऐसा सम्प्रदाय स सम्बन्ध रखत ह किन्तु उनका मारवाड म अति अल्प प्रभाव रहा ह।

१४ (अ) गापाचन्द क गुरू गारखनाथ थ तथा चिरपट उनक गुरुभाई थ।
गुरू हमार गारख वालिए,
चिरपट ह गुरुभाई ना।
एक सबद हमका गुरू गारखनाथ दाया
त वा लख्या मणाऊ मामाई जी॥

गोपीचन्द जी की सबद (ह.ग्रंथ) क्रमांक १२८४४ पृष्ठ-१ राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी जोधपुर

(ब) गोपीचन्द बंगाल के राजा थे। भर्तृहरि की बहन मैनावती इनकी माता थी।

हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय, पृ १८४

अध्याय द्वितीय (Cont.)

१४१ गोरक्षनाथ के एक अन्य पंथ का नाम वैराग्य पंथ है। भरथरी या भर्तृहरि इस पंथ के प्रवर्तक है।

वही पृ १८२

१४२ (अ) नाप साखले री वात (ह.ग्रंथ)

(ब) राजा भोज री पन्द्रहवी विद्या (ह.ग्रंथ)

१४३ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २४१

१४४ चांपावत वीठलदास जी सावनपुरीजी महाराज री वर हुवो थो पछे बेटो हुवो तिणरो नाव जोगीदास इणहीज मुन्द दियो सो वड़ा प्रतापीक हुवा तिणरा वचन सु डरा, तबु जोगीदासोत भगवा रंग री राखे है।

जोधपुर राज्य से सबंधित राति किरोयावर री बही क्रमांक १३०५६ राशो संस्थान, चौपासनी जोधपुर

१४५ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २४६

१४६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २४७

१४७ कालबेलिया किसी विशेष के मत से अलग सम्प्रदाय नहीं है। रिड़वामारी ही कालबेलिया कहलाते है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथसम्प्रदाय फुटनोट, पृ १६९

१४८ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २५१

१४९ हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय, पृ १६८

१५० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २५१

१५१ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परंपरा पृ ४७२-७३

१५२ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परंपरा पृ ४८० ८१

१५३ डा. सुदर्शनसिंह मजीठिया संतसाहित्य पृ ८४

१५४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ. २७३

१५५ ये रामानंद की शिष्य परम्परा में से थे और जयपुर स्थित गलता में उनकी गद्दी थी। इन्हें बड़ा चमत्कारी व सिद्धपुरुष माना गया है।

१५६ यह पाली परगने में स्थित है।

१५७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २७४

१५८ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २६२ ६३

१५९ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ ४७२

१६० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २९७

१६१ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २९८

१६२ राजबली पाण्डेय हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास भाग-१ पृ ५४०

१६ डा. रामप्रसाद शर्मा आचार्य परशुरामदेव व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ १६

१६४ सभी वैष्णव सम्प्रदायों में उनसे सबंधित प्रमुख दर्शनाचार्यों ने अपने मतानुकूल प्रस्थानत्रयी (ब्रह्मसूत्र गीता और उपनिषद) की विशद व्याख्या कर अपने पूर्वगत सम्प्रदायों में विशिष्ट दार्शनिक सिद्धान्तों का

निरूपण किया है इस सम्प्रदाय में यह कार्य श्री निम्बार्काचार्य ने किया।

डा. रामप्रसाद शर्मा आचार्य परशुरामदेव व्यक्तित्व और कृतित्व पृ ११ १३

१६५ डा. राधाकृष्णन इण्डियन फिलासफी भाग-२ पृ ३ १

१६६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २६ ३

१६७ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ १८०

१६८ डा. रामप्रसाद शर्मा आचार्य परशुरामदेव व्यक्तित्व और कृतित्व पृ ७८

१६९ वही पृ १०० १०१

१७० द्रष्टव्य गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत ओझा निबंध संग्रह भाग-१ में राजपूताने के भिन्न-भिन्न विभागों के प्राचीन नाम नामक लेख।

१७१ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २७४

१७२ ब्रजवल्लभशरण वेदान्ताचार्य श्री निम्बार्क और उनका सम्प्रदाय पृ ४२३ २९

१७३ राजबली पाण्डेय हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास, भाग-१ पृ ५४४

१७४ डा. आर.जी. भण्डारकर वैष्णव, शैव और अन्य धार्मिक मत, पृ ७३

१७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २७४

१७६ डा. रामप्रसाद शर्मा आचार्य परशुरामदेव व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृ ५२

१७७ वही पृ ९८ ९९

१७८ आचार्य सीताराम चतुर्वेदी महाप्रभुवल्लभाचार्य और पुष्टिमार्ग पृ १४९

१७९ स. राज बली पाण्डेय हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास, भाग-१ पृ ५४७

१८० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २६७

१८१ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परंपरा पृ ६९

१८२ रामलाल भारत के संत महात्मा पृ २७

१८३ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आंदोलन, पृ १९७

१८४ वल्लभाचार्य की शिष्य परम्परा के एक प्रमुख शिष्य का नाम।

१८५ डा. जे.एन. सरकार औरंगजेब भाग-३ पृ ३०३

१८६ प. रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ १८९

१८७ सीहाड़ (सीहाट) वर्तमान में नाथद्वारा (मेवाड़) के नाम से प्रसिद्ध है।

१८८ प. रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ १८९

१८९ चौपासनी गाव जोधपुर नगर से ६ मील की दूरी पर पश्चिम दिशा में स्थित है। ओझा ने चौपासनी में श्रीनाथ के विग्रह रखने का उल्लेख किया है जबकि आसोपा व रेऊ ने चौपासनी के समीपस्थ कदमखण्डी स्थान पर रखे जाने का उल्लेख किया है।

१९० प. रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ २२६

१९१ जोध बसायो जोधपुर, ब्रज कीन्ही ब्रजपाल।
लखनऊ काशी दिली मान कियो नपाल। प. विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास भाग-२ पृ ४३९

१९२ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ २६७-६८

१९३ डा. पमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदालन पृ २० २०६
१९४ म. सुरजनदास स्वामी श्राजाभा जा महाराज का जावन चरित्र पृ २
स्वामा ब्रह्मानन्द जम्भदेव चरित्र भानु पृ १ मर्दुमशुमारा रिपार्ट में कवल इनके पिता का नाम लोट उल्लिखित है।
१९६ रिपार्ट मर्दुमशुमारा राज मारवाड़ तासरा हिस्सा पृ ९३
१९७ डा. गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास भाग १ पृ ५०९
१९८ डा. पमाराम मध्यकालान राजस्थान में धार्मिक आन्दालन पृ ८६
१९९ श्री रामदास जम्भदेव लघुचरित्र पृ २९ ३०
२०० हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय पृ ९५
२०१ आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरा भारत का सत परपरा भूमिका पृ ५६
२०२ सम्भवत गारखनाथ इनके मानस गुरू थे।
डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदोलन पृ ८६
२०३ यह स्थान नोखा (बीकानेर) स १७ किलामीटर पूर्व में स्थित है।
२०४ स्वामी ब्रह्मानन्द श्री जम्भदेव चरित्र भानु प्र ४१ ४३
२०५ डा. हीरालाल माहेश्वरी जाभा जी विष्णाई सम्प्रदाय और साहित्य प्रथम भाग पृ २३८
२०६ उणतीस धर्म की आखड़ी हिरदै धरिये जोय।
जाम्भेजी किरपा करी नाम विष्णोई होय॥
२०७ जैसे विश्नाई गाड़े जावें विष्णु क साथ बिस्मिल्ला भा कहें सारा सिर मुड़ावे चोटी नही रखे इत्यादि।
२०८ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ९६
२०९ मर्दुमशुमारी रिपोर्ट म मगसर वद ८ सवत् १५८३ को जाभोजा का इन्तकाल हाना लिखा है पृ ९६
२१० यह स्थान नोखा (बीकानेर) स १६ कि.मी पूर्व में स्थित ह।
२११ स्वामी सच्चिदानद श्री जम्भगाता भूमिका पृ ३
२१२ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ३९६
२१३ वह स्थान जहा जाभो जी ने ज्ञानापदेश दिया उसे पूज्य स्मारक के रूप में इस सम्प्रदाय के लोग मानते है।
२१४ डा हीरालाल माहेश्वरी जाभोजी विष्णोई सम्प्रदाय और साहित्य प्रथम भाग, पृ ४५५
२१५ बिश्नोई सम्प्रदाय वालों के यहा कोई खजड़े या शमी वृक्ष की हरी डाल काट नही सकता न ही इनके आस-पास कोई हिरणों की आखेट नही कर सकता है। राजस्थान व पजाब के अनक स्थानों पर इस सम्प्रदाय क अनुयायियों ने इस अहिंसाव्रत के उपलक्ष्य में अपना बलिदान तक किया है।
द्रष्टव्य आचार्य परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की सत परम्परा पृ ३३६
रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तासरा हिस्सा पृ ९७
२१६ विश्नाई सम्प्रदाय के २९ नियम सक्षप में इस प्रकार ह
(१) सतानात्पत्ति क बाद एक माह तक मा (प्रसूता) का घर क कार्यों स अलग रखना (२) स्त्री धर्म के समय औरत का ५ दिन अलग रखें (३) प्रतिदिन नहाना (अन्न खाने वाल बच्चों को भी) (४) एक पत्नी व्रतधारी (५) सतोष रखना (६) सध्या आरता (७) प्रतिदिन हाम करना (आग पर घी डाल कर) (८) पाचा वक्त विष्णु नाम का जाप (९) छानकर पाना पीना (१०) लकड़ी और कडे खूब झाड़कर जलाना (११)

साधु विधार का नाश करना (१२) चारी नहीं करना (१३) असत्य भाषण नहीं करना (१४) आजन्म अहिंसा (१) अपने हाथ का पकाया खाना (१६) निन्दा नहीं करना (१७) क्रोध न करना (१८) हास प नहीं करना (१९) अमावस्या का व्रत रखना (२०) घर का भेड़ बकरा का वध न करना (२१) वेन का उपकरण न करना (२) अफीम (२) मदिरा (२४) भाग (२५) तम्बाखु का सेवन न करना (६) नील के रंग का कपड़ा न पहनना (२७) दूसरे का पल्ला न लगावें (२८) सांसारिक मोह का अत्यधिक न रखना (२९) सब पर दया रखना तथा किसी से विवाद न करना।

रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ ९४ ९५ के अनुसार।

२१७ प्रस डा नरेन्द्र भानावत जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ १२०

१८ नाहर जैन इन्सक्रिप्शन, न ४०४

२१९ डा क सी जैन जैनिज्म इन राजस्थान पृ २६ २७

२२० प्रतिहार शासकों के काल में उनके पश्चिमी मारवाड़ में जैनधर्म का प्रचार हो चुका था। दक्षिणी मारवाड़ अर्थात् गोडवाड़ प्रदेश में चौहान शासकों के संरक्षण में जैन धर्म को पनपने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ और नाडोल, नाडलाई बाली साडेराव, पाली आदि स्थानों पर अनेक जैन मन्दिरों का निर्माण हुआ। इन मन्दिरों के निमित्त चौहान शासकों ने प्रभूत मात्रा में दान दिया था। मारवाड़ में राठौड़ों का प्रभुत्व स्थापित हो जाने के उपरान्त भी जैनधर्म क्रमशः पल्लवित होता रहा।

मांगीलाल व्यास मयंक जोधपुर राज्य का इतिहास, पृ २५५ ५६

२२१ प्रसपा डा नरेन्द्र भानावत जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ १४

२२२ वही पृ १४

२२३ भट्टारक दिगम्बर जैनों के धार्मिक शासक के समान थे।

२२४ डा के भी जैन जैनिज्म इन राजस्थान, पृ ७४ ७५

२२५ इसके अतिरिक्त विभिन्न गच्छों का मारवाड़ तथा राजस्थान के जिन जिन क्षेत्रों में विशिष्ट प्रभाव रहा उसके जैन अभिलेख भी उपलब्ध होते हैं उनका विवेचन जैन संस्कृति और राजस्थान नामक पुस्तक में लिखा गया है।

प्रस डा नरेन्द्र भानावत जैन संस्कृति और राजस्थान पृ १४१ १६०

२२६ मुनि श्री बुधमल तेरापंथ का इतिहास, खण्ड १ पृ १ ४

२२७ वही पृ १०

२२८ चैत्यवासी जैन साधुओं हेतु वर्षा के चातुर्मास के अतिरिक्त एक स्थान पर निवास करना वर्जित है कि श्रमण संस्कृति का महत्वपूर्ण पक्ष है। परन्तु बोद्धों की तरह जैनों में भी यति एवं भट्टारक के रूप में विरागी – वर्तमान में श्वेताम्बरों में यति अथवा श्रीपूज्य तथा दिगम्बरों में भट्टारक मठवासी है जिन्हें सम्मिलित रूप में चैत्यवासी कहा जाता है।

प्रस डा नरेन्द्र भानावत जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ १६

२२९ मुनि श्री बुद्धमल तेरापंथ का इतिहास, पृ १२

२३० प्रस डा नरेन्द्र भानावत जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ १६२

२३१ आचार्योपासक मुनि विद्याविजय श्वेताम्बर तेरापंथ-मत समीक्षा पृ १

२३२ उपासना गृह

२३३ जो मकान जीर्ण शीर्ण या मानव निवास के उपयुक्त न हो उसे मारवाड़ में ढूंढा नाम से पुकारा जाता है।

४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २ ४
मुनि श्री बुद्धमल तेरापथ का इतिहास खण्ड १ पृ १३
६ उस समय तक स्थानकवासी संत जो बाईस सम्प्रदाय या ढूंढिया नाम से पुकारे जाते थे का प्रसार अत्यल्प था।
आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. का लेख- राजस्थान में स्थानकवासी परम्परा जैन संस्कृति और राजस्थान पृ १६
७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २५४ इसी में इस पंथ के २२ महापुरुषों का नामोल्लेख भी किया गया है जो इस प्रकार है
(१) धरमदास (२) मूलचन्द ( ) हरिदास (४) रामचन्द्र (५) मलूकचन्द (६) नानक (७) लवजी (८) बड़ा पाथाजी (९) छोटा पाथाजी (१०) स्वामीदास (११) चतुर्भुज (१२) ताराचन्द (१) रघुनाथ (१४) जयमल (१) भोजराय (१६) लालचन्द (१७) नारायण (१८) नाथूराम (१९) कानरिख (२०) अमरसिंह (२१) श्यामजी (२२) धरमसी।
३८ आचार्य हस्तीमल जी म.सा. का लेख राजस्थान में स्थानकवासी परम्परा जैन संस्कृति और राजस्थान पृ १७४
२३ खीवसी भण्डारी जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंह का दीवान था।
२४० उपासरा का यहां थानक नाम से भी जाना जाता है।
२४१ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २५४
२४२ टाळाटाळ का अर्थ है जमात से परित्यक्त किया हुआ।
४३ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ० २५८ ९
२४४ मुनि नथमल का लेख राजस्थान में तेरा पंथ सम्प्रदाय का उद्भव जैन संस्कृति और राजस्थान पृ० १७
४ आचार्योपासक मुनि विद्याविजय श्वेताम्बर तेरापथ मत समीक्षा पृ १
२४६ प्रम युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ तेरा पंथ मर्यादा और व्यवस्था पृ० ९
२४७ यह पंथ १८१८ की साल में शुरू हुआ।
आचार्योपासक मुनि विद्याविजय श्वेताम्बर तेरा पंथ मत समीक्षा पृ २ संवत् १८१३ में नया पंथ स्थापित हुआ जिसे तेरा पंथी कहते हैं।
रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २६०
२४८ मुनि श्री बुद्धमल तेरा पंथ का इतिहास खण्ड १ पृ १३
४ प्रम युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ तेरापथ मर्यादा और व्यवस्था पृ १०
मुनि श्री बुद्धमल तेरापथ का इतिहास खण्ड १ पृ० १३ इस पंथ के प्रारंभिक १३ प्रमुख प्रवर्तक थे इसलिए इसका नाम तेरा पंथ हुआ।
रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २६०
२ १ आचार्योपासक मुनि विद्याविजय श्वेताम्बर तेरा पंथ मत समीक्षा भूमिका
२ २ आचार्य भिक्षु तेरापंथ के प्रवर्तक।
२ ३ मुनि श्री बुद्धमल तेरापथ का इतिहास खण्ड १ पृ ० २१
४ आचार्योपासक मुनि विद्याविजय श्वेताम्बर तेरापथ मत समीक्षा पृ

२५५ मुनिश्री बुद्धमल, तेरापथ का इतिहास, खण्ड १ पृ० ३८
२५६ वहा पृ० ११८ ११९
२५७ वही पृ० १६
२५८ कुछ समय पूर्व ही मराठों ने यहा आक्रमण किया था और यहा से बहत सा धन ये ले गये थ।
बुद्धमल मुनि तेरापथ का इतिहास, खण्ड १ पृ० १७
२५९ प्र.स. युवाचार्य श्री महाप्रन तरापथ मर्यादा और व्यवस्था, पृ. १०
२६० प्र.स. युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ तरापथ मर्यादा और व्यवस्था, पृ० १३
२६१ वही पृ० १३
२६२ मुनि बुद्धमल, तेरापथ का इतिहास, खण्ड १ पृ० ५२०
२६३ शोधपत्रिका वर्ष ३५ अक-१ पृ० ४५
२६४ रामधारीसिह दिनकर, सस्कृति के चार अध्याय, पृ० २५३ ५४
२६५ डा. आर.सी. मजूमदार, दि देहली सल्तनत, पृ० ६०७
२६६ डा. क.एम. अशरफ, लाइफ एण्ड कडीशस आफ दि पीपुल आफ हिन्दुस्तान, प्रथम खण्ड, पृ० ७२ ७३
२६७ शोधपत्रिका वर्ष ३५ अक १ पृ० ४७
२६८ वही पृ० ४८ से उद्धत
२६९ डा. जी.एन. शर्मा साशल लाईफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ० २२६
२७० एनल्स एण्ड एण्टाक्यूटीज आफ राजस्थान, वोल्यूम-II पृ० ३६२
२७१ प झाबरमल्ल शर्मा न पाबूजा की भतीजी कलणबाई के साथ गोगाजी का विवाह होना भी स्वीकार किया है शोधपत्रिका, भाग-१ अक-३ पृ० १५१ ५३
२७२ अगरचन्द नाहटा न नैणसी की ख्यात के आधार पर कर्नल टाड का समर्थन किया है—भारती वर्ष ३ अक ८ पृ० ७३ ७६
२७३ डा. दशरथ शर्मा अर्ली चौहान डाइनेस्टी, पृ० २६१ ६३
२७४ डा. सत्यकेतु विद्यालकार, अग्रवाल जाति का इतिहास, पृ० २६१ ६३
२७५ डा. चन्द्रदान चारण गोगाजी चहुवाण री राजस्थानी गाथा पृ० १४ १५
२७६ डा. जी.एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ० २२६
२७७ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान म धार्मिक आन्दोलन पृ० ३२
२७८ डा. जी.एन.शर्मा साशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ० २२६ २७
२७९ कवि मेह कृत गोगाजी का रसावला (ह लि) क्रमाक २३४५१ रा.प्रा. वि. प्रतिष्ठान, जोधपुर
२८० राजस्थान भारती वर्ष ६ अक ३ ४ पृ० २९ ३२
२८१ डा. जी.एन. शर्मा साशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ० २२७ जबकि रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ० १४ पर लिखा है भादो सुद ९ को जो गोगानम कहलाती है गोगाजी का पूजा होती है।
२८२ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ० १४
२८३ श्यामलदास वीरविनोद, भाग-२ पृ १०२

२८४ गागाजी चाहान की राजस्थानी गाथा नामक पुस्तक म सत्यनारायण पारीक द्वारा लिखे गय प्रकाशकीय लेख स ।

२८५ गगानगर जिल में नोहर तहसील स १६ मील पूर्व म स्थित ह ।

२८६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड तीसरा हिस्सा पृ० १४

२८७ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदोलन, पृ० ३

२८८ जिस स्थानीय लोग भोपा के नाम स पुकारत ह ।

२८९ गौरीशकर हीराचन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड, पृष्ठ १६३

२९० घाधल जी स चली राठौड़ों की एक शाखा/ धाधल क वशधर

२९१ जोधपुर रेकार्डर्स बस्ता न ७६ ग्रथाक ३ राजस्थान अभिलखागार, बीकानेर

२९२ डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ २२७

२९३ नैणसी री ख्यात द्वितीय खण्ड पृ १६७

२९४ लधराजकृत पाबूजी के दोह ह ग्रथाक ४०२ रा शो स चोपासनी

२९५ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदोलन पृ ४१

२९६ नैणसी री ख्यात द्वितीय खण्ड पृ १६८

२९७ (ह ग्रथ) ग्रथाक १०० अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर ।

२९८ जोधपुर रेकार्डर्स बस्ता न ७२ ग्रथाक ५६ राज. राज्य अभि बीकानेर

२९९ (ह ग्रथ) ग्रथाक ८२१६ रा शो स चोपासनी

३०० (ह ग्रथ) ग्रथाक ४०२ रा. शो स चोपासनी

३०१ (ह ग्रथ) ग्रथाक १२२२३ रा शो स चोपासनी

३०२ प्रकाशक-महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश मेहरानगढ जोधपुर ।

३०३ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ५

३०४ शिवसिंह चोयल राजस्थानी लोकगीत, भाग २ पृ ३

३०५ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदोलन पृ ४३

३०६ ओ लिखमण अवतार, सकल रूप केसर सदा ।
आ घोडी असवार, आयोकथ राखण अमर ॥
रामनाथ कविया कृत पाबूजी के सोरठे ।

३०७ शिवनाथसिंह कूपावत. राठौड़ों का इतिहास पृ ९

३०८ पाबूजी सम्बन्धी साहित्य

१ पाबूजी क दोह (ह लि. ग्रथ) ग्रथाक ४०२ ८२१६ रा शो स चोपासनी
पाबूजी के दोह जोधपुर रेकर्डर्स (ह ग्रथ) बस्ता स ७२ ग्रथाक ५ रा राज्य अभि बीकानेर

२ जोधपुर रकर्डर्स पाबूजी रा कवित बस्ता न ७२ ग्रथाक ५६ रा अ बीकानेर

३ जोधपुर रकर्डर्स पाबूजी रा रूपक वस्ता न १४ ग्रथाक ४२ रा अ बीकानेर

४ पाबूजी रा छन्द (ह ग्रथ) ग्रथाक ९७ ९१४२०३ रा शो स चोपासनी पाबूजी रा छन्द (ह. ग्रथ) ग्रथाक १०० अस ला बीकानेर ।

५ पाबूजी क पवाड़ मरूभारती वर्ष १ अक ४ पृ ४१ एव वर्ष २ अक १ पृ ७२

६ पाबूजी के सोरठ मरुभारती वर्ष १३ अंक १ पृ ४

७ राजस्थानी लोकगीत भाग २ पृ ३

८ नीसाणी पाबू रा कन्न (ह ग्रथ) क्रमांक ११ रा शा स चौपासनी

९ पाबूजी की लोक गाथा शोधपत्रिका वर्ष अंक पृ ७१ ९

१ जोधपुर रेकर्ड्स पाबूजी री कथा ब न ८ ग्र १ रा अ बीकानेर

११ पाबूजी रा वचन-८ १२ रा शा स चौपासनी

१२ नैणसी री ख्यात भाग २ पृ १८

१३ स सूर्यकरण पारीक पाबूजी री वात राजस्थानी वार्ता पृ १७६ १९२

१४ स सूर्यकरण पारीक पाबूजी के गीत-राजस्थानी वार्ता म ८

१ प्र स डा नारायण सिंह भाटी मोडजी आसिया कृत पाबूप्रकास

३०९ डा नरेन्द्र भानावत राजस्थानी वेलि साहित्य पृ ४ ८

३१० पूनमचन्द रामदेवजी की ब्यावली पृ ११

३११ ठाकुर रूद्रसिंह तोमर श्रीरामदेव चरित्र पृ ८

३१२ पुरोहित रामसिंह श्रीरामदेव प्रकाश पृ २

३१३ लक्ष्मीदान बारहठ रामदेव लीलामृत कथा, पृ ३

३१४ मारवाड़ रा परगना री विगत भाग २ पृ २ १

३१ रामसापीर री ख्यात और तंवरा री ख्यात जोधपुर रेकर्ड्स बस्ता न २६ ग्रथांक तथा बस्ता न १ १ ग्रथांक १३ रा अ बीकानेर।

३१६ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ ३

३१७ प विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास भाग १ पृ ४

१८ मारवाड़ रा परगना री विगत भाग २ पृ २ १

३१ पूनमचन्द रामदेव की ब्यावली पृ ३६

२ मारवाड़ रा परगना री विगत भाग २ पृ ३११ १२

२१ रामदेवजी रा छन्द (ह ग्रथ) ग्रथांक ३४३७ रा शा स चौपासनी

३२२ रामदेवजी रो छन्द ग्रथांक ३१७६ रा शा स चौपासनी

३२३ रामदेवजी का सिलोका ग्रथांक ३६३९ रा शा स चौपासनी

२४ रामदेवजी रा छन्द ग्रथांक ७६ रा शा स चौपासनी

३२ प विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास प्रथम भाग पृ

१२७ ... टॉड की का इतिहास पृ ४८

३२७ नैणसी री ख्यात भाग २ पृ ३

३२८ प विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास भाग १

३२ मुहता नैणसी री ख्यात भाग २ पृ १ २८३

३ प रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ ८४

१ प रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ ८३

२ द्रष्टव्य शोधपत्रिका भाग ७ अंक २ पृ ३५ ४५

३ मारवाड़ रा परगना रा विगत, भाग १ पृ १६

३ ४ रावशिवनाथ सिंह कृपावत राठौड़ों का इतिहास, पृ ५१

३ ५ विश्वेश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास भाग१ पृ ५४

६ यह मेला चैत्र कृष्णा ११ से चैत्र शुक्ला १ तक लगता है जिसे बालोतरा मेला भी कहते हैं।

डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ ५१

३३७ कहक नि साखला महराज पीहलाय रह्यो पछै नागार रै गाव भूडेल राव चूड़ा सू मिळ ने वसिया ।_मह राज गोपाल रा आत रा बेटा, आक १२ हरभू ए नि रा मेल्ला मेहराज ।

मुहता नेणसा री ख्यात भाग १ पृ ३४७-४८

३३८ आझा जाधपुर राज्य का इतिहास भाग १ पृ २५ फुटनोट

३० तठे रामदे पीर न हरभम र परसग हुवा । जोगी बाळनाथ रामदे पीर रै माथ हाथ दियो था तिण ही हरभम साखलां माथै हाथ दियो । हरभम हथियार छोड़नै इण राह में हुवौ ।

मुहता नैणसी रा ख्यात भाग १ पृ ३५० ३५१

३४० ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास पहला भाग पृ २५ फुटनोट

३४१ वही पृ २३९

३४२ पछै राव जोधै रै धरती हाथ आई । पछै राव जोधै हरभम नु बैंहगटी सासण कर दीना ।

मुहता नैणसी री ख्यात भाग १ प ३५१

३४३ आझा जाधपुर राज्य का इतिहास, पहला भाग पृ २३९

३४४ द्रष्टव्य मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग, पृ ३३

३४५ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आदोलन पृ ५९ ६०

३४६ राव जोधो हैरान हुवौ । हरभूजी ने किणी भात आगै खबर हुई । माहौ माह वात करण नु लागा । तरै सग ही कहौ हरभू पीर छै इणमें बड़ी करामात छे । इण नु सारी खबर पड़ै छै ।

मारवाड़ रा परगना री विगत, प्रथम भाग, पृ. ३३

३४७ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास, पहला भाग पृ २५

३४८ साखला हड़बूजी कृत सकुनविचार ग्रथाक ८२२७ (४) (ह ग्रथ) रा शा स. चापा

३४९ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ ६०

३५० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ६१

३ १ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ ३७

३५२ तब तेजा मेरों के पीछे गया और लड़कर गायें छुड़ा लाया लेकिन खुद भी जख्मी होकर गिरा वहा एक साप बैठा था उसने उसकी जबान पर काट खाया जिससे वह मर गया और तभी उसकी औरत सती हो गई ।

रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ ६१

३ ३ डा. जी एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ २२७

४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ६१

५ द्रष्टव्य डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ ३८ पाद टिप्पणी
५६ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा, पृ ६१
३५७ डा. जी. एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ २२७
८ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ४६
३ ९ अथ वात न्वजी वगड़ावत री (ह ग्रथ) क्रमाक २१ पृ १०३ १०८ अस ला. बीकानेर
६० रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ४६
६१ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान म धार्मिक आन्दोलन पृ ४८
३६२ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ४६
३६ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान म धार्मिक आन्दोलन पृ ४८
३६४ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ ४६
३६५ शोध पत्रिका वर्ष १५ अक १ पृ १५
३६६ डा. जी एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ २४०
३६७ डा. पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ २५३

◆ ◆ ◆

कलाए

कला शब्द की व्युत्पत्ति कल् + अच् + टाप् धातु तथा प्रत्ययो के सयोग से हुई है। इस शब्द का अर्थ किसी भी वस्तु का लघु अश चन्द्रमण्डल का सोलहवा अश राशि के तीसवे भाग का साठवा अश है। एक अन्य दृष्टिकोण से कला शब्द की व्युत्पत्ति कवि और लास्य के प्रथम अक्षरो से हुई है। कवि का लास्य ही कला है। लास्य शब्द का अर्थ है नृत्य अथवा उछल कूद। कवि के काव्य में कवि के अव्यक्त भावो की अभिव्यक्ति होती है। उसमे अव्यक्त भाव शब्दो के माध्यम से और आनन्दातिरेक के कारण नृत्य करने लगते है। कला शब्द की एक अन्य व्युत्पत्ति इस प्रकार से की जा सकती है -

क + ला = कामदेव सौन्दर्य प्रसन्नता आनन्द।

कलाति ददातीति कला = अर्थात् सौन्दर्य का दृश्यरूप मे प्रकट कर देना ही कला है।'[1]

कला संस्कृत भाषा का शब्द है। संस्कृत साहित्य में इसका प्रयोग अनेक अर्थो मे हुआ है जिनमे प्रमुख किसी वस्तु का सोलहवा भाग समय का एक भाग किसी भी कार्य करने मे अपेक्षित चातुर्य आदि विशेष उल्लेखनीय है।[2]

मन के भावो को अधिकतम सौन्दर्य के साथ दृश्य रूप मे प्रकट करना ही कला है। कला एक प्रकार से मनोभाव तथा बाह्यरूप को सयुक्त करने वाला माध्यम है। इसी कारण कला मनुष्य के हृदय के इतनी निकट होती है कि जो कुछ मन में होता है वह कला में परिलक्षित हो जाता है। कला मनुष्य की सौन्दर्य कल्पना को साकार करता है। जो कुछ मन मे है वह कला मे आता है किन्तु सौन्दर्य गुण के साथ। भर्तृहरि ने कला के ज्ञान से रहित मनुष्य को साक्षात् पशु माना है - यथा "कलाविहीन साक्षात् पशुपुच्छविषाण हीन"

भरतमुनि से पूर्व "कला" शब्द का प्रयोग काव्य को छोडकर दूसरे प्राय सभी प्रकार के चातुर्य कर्म के लिए होता था और इस चातुर्य कर्म के लिए विशिष्ट शब्द था शिल्प। जीवन से सबधित कोई उपयोगी व्यापार ऐसा न था जिसकी गणना शिल्प मे न हो। इस प्रकार सभी कलाए शिल्प के अन्तर्गत समझी जाती थी।

दृश्य या अदृश्य स्थूल या सूक्ष्म वस्तु या भाव से सम्बन्धित सौन्दर्यानुभूति साकार होकर मनुष्य के सामने व्यक्त रूप में प्रकट होती है तो उस अभिव्यंजना को कला कहते हैं। कला काल्पनिक सौन्दर्य की भी अभिव्यक्त करके मनुष्य के अन्तर की सौन्दर्य निधि का प्रत्यक्ष करा देती है।

१६ वीं शताब्दी में कला का प्रयोग काव्य संगीत चित्र वस्तु आदि ललित कलाओं के रूप में भी होने लगा। इस प्रकार कला के स्वरूप के निरूपण में पूर्वी और पश्चिमी दोनों ही विद्वानों के मत एक से जान पड़ते हैं। देश काल और परिस्थितियों के अनुसार कला शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होने के उपरान्त भी चातुर्य कर्म और कौशलपूर्ण अभिव्यक्ति के अभिप्राय से वंचित नहीं हुआ।[6]

भारतीय कला का इतिहास बहुत पुराना है। भारतीय कला की शुरुआत सिन्धुघाटी सभ्यता से होती है।[7] भारतीय सौन्दर्यशास्त्र के अनुसार रस अर्थ कल्पना तथा रूप कला के चार तत्व माने गये हैं। कला के वर्गीकरण के सम्बन्ध में कला मर्मज्ञों में मतभेद हैं - एक वर्ग कला को अविभाज्य मानता है दूसरा विभाज्य भारतीय शास्त्रों में भी कला के वर्गीकरण का उल्लेख मिलता है जिनमें कामसूत्र और शुक्रनीति में चौसठ कलाओं प्रबन्धकोष में ६२ तथा बौद्धग्रन्थ ललितविस्तर में ८६ कलाओं का नामोल्लेख मिलता है। पाश्चात्य विद्वानों ने कला के पांच वर्ग बताये हैं स्थापत्य मूर्ति चित्र संगीत तथा काव्य कला। प्राचीनता मौलिकता परम्परागत अभिव्यंजना आध्यात्मिकता अनामता प्रतीकात्मकता तथा आध्यात्म एवं जीवन के साथ कला का सामंजस्य भारतीय कला की मुख्य विशेषताएं कही जा सकती हैं।[8]

भारतीय कला व राजस्थान की कला के परिप्रेक्ष्य में ही मारवाड़ की कला का विकास एवं उन्नयन हुआ तथा उसमें आध्यात्म धर्म तत्वज्ञान और लोकप्रचलित संस्कृति के स्वरूप का निरूपण हुआ है। यहां के लोगों के जीवन विश्वास मान्यताएं, उपासनाविधि और विविध रुचियों की बहुत ही कलात्मक अभिव्यक्ति यहां की कला में देखने को मिलती है। कला के विविध प्रकारों में यहां की जो संस्कृति सुरक्षित है वह जड़ माध्यम को अपनाकर भी बहुत सजीव एवं जीवन्त है तथा जिसमें यहां की संस्कृति के भव्य आदर्श मुखरित हुये हैं।

स्थापत्य मूर्ति संगीत नृत्य और चित्रकला जैसी कई शाखाओं व उपशाखाओं में कला को विभाजित करते हुए मानव के विकासक्रम के साथ उसके विकास का जो अनवरत क्रम जारी रहा उसको हम मानव के साथ उसके घनिष्ट सम्बन्ध को देख सकते हैं। इसी सम्बन्ध के कारण प्रत्येक युग की कला के साथ उस युग की संस्कृति का गहरा जुड़ाव रहा है। यही नहीं प्रत्येक स्थान की कला अपनी विशिष्ट पारम्परिक शैली के कारण अलग पहचान देती है और आज भी हम भारतीय इतिहास में विभिन्न युग और

काल की कलाओं जैसे मौर्यकालीन कला गुप्तकालीन कला एवं मुगलकालीन कला की मौलिक विशेषताओं और विभिन्नताओं को देख सकते हैं। ये मौलिकताएं और विशेषताएं उनकी सांस्कृतिक विभिन्नताओं के कारण ही स्थापित हुई।

(१) स्थापत्य कला एवं मूर्तिकला

स्थापत्य कला में भवन मन्दिर, बांध पुल प्रासाद आदि की गणना की जाती है। इस कला को वास्तुकला भी कहते हैं।[९] स्तूप स्तम्भ गुफाएं इत्यादि वास्तुकला के ही वर्ण्य विषय हैं।

कलामर्मज्ञों के अनुसार भवन निर्माण कला मूर्तिकला और संगीत कला का सामूहिक रूप कला की परिधि के अन्तर्गत आता है। मध्यकालीन राजस्थान में कला के विकास को विभिन्न राजा महाराजाओं द्वारा समुचे रूप में प्रोत्साहित किया गया था। व्यक्तिगत ऐश्वर्य को चिरस्थायी रखने वाले शासक (नाव गीतडा न भींतड़ा सू रहव) भवन निर्माण एवं मंदिर निर्माण पर अत्यधिक ध्यान देते थे।[१०] जोधपुर के शासक स्थापत्य कला एवं मूर्तिकला में भी पर्याप्त रुचि रखते थे। मारवाड के सुदृढ़ दुर्ग उनकी कलात्मक अभिरुचि के सुन्दर उदाहरण हैं।

मारवाड की स्थापत्य कला का इतिहास बहुत पुराना है तथा उसकी सुदीर्घ परम्परा रही है। यहां के प्राचीन दुर्ग मन्दिर इत्यादि इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। हालांकि उसमें से अधिकांश अब खण्डहर एवं भग्नावशेष के रूप में बचे हैं। मध्यकाल में मुसलमानों के आगमन के पूर्व ही भारत में स्थापत्यकला की एक शैली विकसित हो चुकी थी। जिसमें शिल्प सौष्ठव अलंकृत पद्धति एवं विषयों की विविधता का अपना स्थान था यह स्थापत्य कला जो उस समय हिन्दू कला कहलाती थी अपनी सम्पन्नता अलंकरण एवं विविधता के लिए प्रसिद्ध थी। हिन्दू स्थापत्य में स्तम्भों और सीधे पाटों का महत्व था हिन्दू मन्दिरों पर ऊंचे शिखर बनाये जाते थे पत्थर में सुन्दर आकृतियां बनायी जाती थी हिन्दू कला के मुख्य प्रतीक कमल और कलश थे। और इसमें मजबूती व सुन्दरता का समन्वय था।[११] इसी के अनुरूप ही मारवाड की स्थापत्य शैली यहां विकसित हुई और उसके आधार पर निर्माण कार्य हुआ करते थे। जिस प्रकार राजस्थानी स्थापत्य में जैन बौद्ध और हिन्दू विचारों को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था[१२] ठीक उसी प्रकार का समन्वय हम मारवाड के स्थापत्य में देखने को मिलता है लेकिन बौद्धकला के अवशेष हम यहां देखने को नहीं मिलते। मुगलों के आने के पश्चात् मारवाड का स्थापत्य काफी प्रभावित हुआ क्योंकि यहां के अधिकांश स्थापत्य को राजकीय संरक्षण प्राप्त था और यहां के शासक मुगलों के अधीन हुए तो उनकी स्थापत्य रुचि में भी व प्रभावित हुए।

कला के विकास के लिए शान्ति एवं समृद्धि आवश्यक है[१३] परन्तु इसके विपरीत मध्यकालीन मारवाड़ में युद्धकालीन परिस्थितियां ही अधिक समय तक व्याप्त रहीं।

बाह्य आक्रमणाओं से संघर्ष में यहां के शासक अधिक प्रवृत्त हुए। इस कारण प्रदेश की शक्ति और साधन सुरक्षा कार्य में अधिक लगाये गये। बाह्य आक्रमणों के खतरे के अलावा इस प्रदेश के शासकों को आन्तरिक गृहकलहों में अधिक समय व शक्ति लगाना पड़ा। मुगलकाल में शाही मनसब प्राप्त करने के उपरान्त भी यहां के शासकों को लम्बे समय तक विभिन्न युद्धों में व्यस्त रहना पडा तथा उनका अधिकांश समय मारवाड से बाहर ही बीतता था। इन सब विषम परिस्थितियों के बावजूद भी उनका कला के प्रति अनुराग कम नहीं हुआ तथा वे कला के विभिन्न अंगों के विकास हेतु संरक्षण व प्रोत्साहन प्रदान करते रहे। स्थापत्य कला के विकास में जहां एक ओर यहां के शासकों ने प्रयास किया वहां यहां के जागीरदार और सामन्त वर्ग तथा धनाढ्य व्यक्तियों ने भी पर्याप्त रुचि ली। उन सबके कलात्मक अनुराग के परिणामस्वरूप मारवाड़ की स्थापत्य कला का विकास हुआ।

मारवाड की स्थापत्य कला के उद्भव और विकास के प्रमुख तीन कारण माने जा सकते है

१ जीवन की आवश्यकता

२ धार्मिक भावना

३ ऐश्वर्य प्रदर्शन

(१) जीवन की आवश्यकता

मानव को अपने जीवन की आवश्यकता पूर्ति हेतु जो प्रयास करने पड़े उसके साथ ही स्थापत्य का विकास हुआ। सुरक्षा के दृष्टिकोण से बड़े बड़े दुर्गों का निर्माण हुआ नगर के परकोटे बने। निवास हेतु आवास गृहों का निर्माण पानी हेतु कृत्रिम तालाब झील कुएं, बावड़ियां इत्यादि का निर्माण करवाया गया।

(२) धार्मिक भावना

सभी कलाओं मे धर्म की प्रमुख भूमिका रही है और धार्मिक भावना ने कलाओं के विकास में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है। यहां के लोगों ने भी धार्मिक भावना से प्रेरित होकर विभिन्न मन्दिरों उपासरों मठों मस्जिदों और स्मारकों का निर्माण करवाया कई कुएं, तालाब व बावड़ियां धार्मिक प्रेरणा से ही निर्मित हुई।

(३) ऐश्वर्य प्रदर्शन

स्थापत्य कला के विकास में ऐश्वर्य प्रदर्शन की भावना से भी सहयोग मिला। सामन्त लोग राजधानी में सुरक्षा के साथ साथ अपने ऐश्वर्य के लिए भव्य महलों और आराम गृहों का निर्माण भी करवाते थे। धनाढ्य लोग भी व्यक्तिगत ऐश्वर्य प्रदर्शन के लिए अपने आवास गृहों को कलात्मक स्वरूप प्रदान करने में पीछे नहीं रहते थे।

इस प्रकार उपर्युक्त तीनो कारणो को यहा के स्थापत्य के विकास के लिए प्रमुख कारक मानना समाचीन ही होगा क्योकि लगभग सभी जगह के स्थापत्य का निर्माण व विकास इन्ही से प्रेरित लगता है। डा. वी एस भार्गव का यह मानना है कि मुसलमानो के आगमन के पूर्व राजस्थान मे स्थापत्य कला की तीन शैलिया मुख्य रूप से प्रचलित थी - (क) जैन स्थापत्य शैली (ख) हिन्दू स्थापत्य शैली तथा (ग) राजपूत स्थापत्य शैली।[१६] मारवाड़ मे उपर्युक्त तीनो प्रकार की स्थापत्य शैलिया पायी जाती है किन्तु विवेच्यकाल मे राजपूत स्थापत्य शैली की प्रमुखता दृष्टिगोचर होती है। धार्मिक भावना से प्रेरित स्थापत्य कला के नमूनो मे हिन्दू शैली तथा कही-कही जैन शैली के उदाहरण भी देखने को मिलते है। मुसलमानो के आगमन के पश्चात् मारवाड की स्थापत्य पर मुगल शैली का प्रभाव पड़ा।

राजपूत स्थापत्य कला की विशेषताए

हर स्थापत्य शैली की अपनी कुछ निजी और मौलिक विशेषताए हुआ करती है तथा इन मौलिक विशेषताओ के फलस्वरूप ही स्थापत्य विशेष की पहचान होती है। स्थापत्य कला की ये विशेषताए शैली विशेष की विशिष्ट परम्पराओ के अनुरूप होती है तथा भवनो व इमारतो के निर्माण मे जो प्रकार, विधिए (स्टाइल) अपनायी जाती है वे ही उस स्थापत्य को अभिव्यक्त करती है। राजपूत स्थापत्य कला की विशेषताओं को निम्नलिखित बातो के आधार पर समझा जा सकता है-

"राजपूत इमारतो की छते चपटी और पटावदार होती थी। भवनो मे पतले छोटे और चोकोर प्रस्तर स्तम्भो का निर्माण किया जाता था। इन पर नक्काशी का सुन्दर काम भी किया जाता था। भवनो के बाहर निकले हुए छज्जे बनाए जाते थे। छज्जो को तोड़ो (Brackets) का सहारा दिया जाता था। दीवारो मे मन्दिर की शक्ल की 'ताक' और 'आले' बनाये जाते थे। भवन निर्माण मे सजावट के अधिक कमरे बड़े-बडे भी बनाये जाते थे और रोशनदान भी रखे जाते थे। दरवाजे सादे और मेहराबदार होते थे।"[१५]

मध्यकाल मे राजपूत स्थापत्य का सम्पर्क मुस्लिम स्थापत्य से होता है विवेच्यकाल मे यहा के स्थापत्य पर मुस्लिम प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है जिसका उल्लेख अनेक कलामर्मज्ञो ने किया है। सुप्रसिद्ध कलामर्मज्ञ फर्ग्यूसन ने हिन्दू मुस्लिम शैली के स्थापत्य मे समन्वय व परस्पर प्रभावित होने को स्वीकार करते हुए इसे 'इडो सारसेनिक शैली'[१६] के नाम से अभिहित किया है।

मुस्लिम प्रभाव के कारण राजपूत स्थापत्य मे मीनार, गुम्बद मेहराबदार दरवाजे विशालद्वार तथा फाटक ऊची कुर्सी के निचले भाग मे तहखाना डाटदार छज्जे भव्य इमारत तथा चमकदार पालिश का प्रचलन देखने को मिलता है।

मुस्लिम स्थापत्य स प्रभावित हान के पश्चात् भा राजपत स्थापत्य म अपना निजा परम्पराआ का निर्वाह हाता रहा। मारवाड म जन शला की बजाय राजपत स्थापत्य शला का प्रभाव विवच्यकाल म अधिक रहा तथा यहा का सथापत्य कला का निदर्शन दुर्ग महल मन्दिर मस्जिद मीनार स्तम्भ समाधिस्थल थड मकबर दरगाह ब सता चबतरा छत्रिया इत्यादि स्मारका बावडिया झालरा जलशय के घाटा व उसक किनार बनाय गय भवना एव सार्वजनिक गृहो म देखा जा सकता है।

मध्यकाल क स्थापत्य कला क य नमून आज भा राजपूत स्थापत्य कला का कहाना कहन साना ताने खड़े हैं इसमे कुछ खण्डहर अवस्था मे भा हे आर कुछ खण्डहर हात जा रहे है। केवल व ही स्थल सुरक्षित या अच्छा दशा म हे जा किसा का निजा सम्पत्ति के रूप म है या सार्वजनिक या प्राइवेट टस्ट के अधान ह या किसा कारण पज्य या अधिक चर्चित स्थल रहे हे।

मध्यकालान मारवाड की स्थापत्य आर मूर्ति कला का विवचन हम यहा निम्न बिन्दुओ के आधार पर कर सकत हे

(१) दुर्ग (२) आवास गृह (३) उपासनागृह (४) जलाशय आर (५) स्मारक।

(१) दुर्ग

हमार दश म दुर्ग निर्माण का सुदार्घ परम्परा रहा है। मानव क विकास क्रम के साथ उसके अपने सुरक्षा के उपाय व साधन भा विकसित हुए। प्रारभिक अवस्था म उसन जगली पशुआ ओर प्राकृतिक प्रकोप से बचन हतु गुफाआ आर गिरि कन्दराआ का शरण ला। धार धारे ज्या ज्या मानव सभ्यता का विकास हाता गया त्या त्या अपन लिए सुरक्षित निवास स्थान के निर्माण की नवीन योजनाए आर नया खाज म वह लगा रहा। मानव ने गिरि कन्दराओ को छोड़ सामूहिक याजना ओर स्थाया निवास हतु मिट्टा पत्थर के उपयोग स गृह निर्माण शुरु किया। इस क्रम म विशाल दुर्गा का निर्माण प्रारम्भ हाता है। इस प्रकार दुर्ग निर्माण क मूल म जो भावना रहा वह मानव की सुरक्षा का भावना हा था। यहा धारणा जब सामाजिक व्यवस्था म राजा का प्रतिष्ठापना हाता ह तब तक आवश्यकता के रूप म स्वाकार का गयी आर इस धारणा के प्रचार व प्रसार स दुर्ग निर्माण का परम्परा दिन प्रतिदिन विकसित होता रहा आर दुर्ग अब राजा क सम्मान शक्ति का प्रतीक माने जान लग आर प्रजा का रक्षार्थ सुदृढ़ दुर्ग की आवश्यकता अपरिहार्य समझा जान लगा।

मानव का सुरक्षा का भावना स प्ररित इस दुर्ग निर्माण का परम्परा का जुड़ाव मानव सभ्यता क विकास क साथ बड़ा गहरा रहा ह तथा समय समय पर युग का माग आर आवश्यकता क अनुरूप इनक निर्माण स्वरूप आर स्थापत्य म परिवर्तन हात रह। इन

परिवर्तनो के परिणामस्वरूप दुर्ग निर्माण की कला मे सवर्धन होता रहा और कमियो तथा त्रुटियो का परित्याग करते हुए नवीन तकनीक जो उपयोगी और ज्यादा कारगर थी उसे स्वीकार कर दुर्गो की सुदृढता के प्रति मानव सदा सचेष्ट रहा। मानव के रक्षात्मक साधनो मे अति प्राचीन काल से दुर्गो की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण रही है। मध्यकाल मे सुदृढ रक्षास्थल के रूप मे दुर्ग की भूमिका निर्विवाद रूप से स्वीकारी गयी। मध्यकाल तक इनका बडा प्रभाव रहा किन्तु बारूद के आविष्कार के बाद दुर्गो का महत्व कम हो गया। आधुनिक काल के मशीनीकरण के युग मे जबकि मानव ने विभिन्न प्रकार के रक्षात्मक एव आक्रमणकारी साधनो का आविष्कार कर लिया है उसके प्रारभिक काल तक मे दुर्गो की उपयोगिता और महत्व बना रहा। आज के युग मे अत्याधुनिक हथियारो व युद्ध सामग्री के आविष्कार से दुर्गो की उपयोगिता समाप्त प्राय हो गयी है और वे प्राचीन दुर्ग जो कभी सुरक्षा के सर्वमान्य सुदृढ स्थल समझे जाते थे अब परित्यक्त निर्जन व एतिहासिक और पुरातात्विक स्मारक के रूप मे पर्यटको के लिए दर्शनीय स्थल मात्र बन कर रह गये है फिर भी उनका महत्व इतिहास की दृष्टि से कम नही हुआ है। मारवाड के दुर्गो की स्थापत्यकला आज भी दर्शक का मन मोह लेती है तथा कई शोधार्थी उसके समग्र विवेचन की टोह लेने को उत्सुक रहते है क्योकि ऐतिहासिक और सास्कृतिक दृष्टि से उनका महत्व आज भी स्मरणीय है।

दुर्गो के निर्माण मे राजस्थान और मारवाड़ ने भारतीय दुर्ग निर्माण कला की परम्परा का निर्वाह किया है।[१७] हमारे यहा निर्माण कला की दृष्टि से दुर्गो को अलग अलग वर्गो मे वर्गीकृत किया है और उद्देश्य की पूर्ति स्थिति व आवश्यकता के अनुकूल विभिन्न प्रकार के दुर्गो का निर्माण होता रहा है। दुर्गो के निर्माण के सम्बन्ध मे हमारे यहा विस्तृत वर्णन मिलता है। प्राचीन भारतीय मनीषियो ने सामरिक, प्रशासनिक एव सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थल के रूप मे स्वीकार्य दुर्गो की रचना के सम्बन्ध मे विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया जिनमे मनु[१८] और चाणक्य[१९] का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मनु ओर चाणक्य द्वारा वर्णित इस दुर्ग रचना के आधार पर ही मारवाड़ के शासको और सामन्तो ने यहा दुर्ग निर्मित करवाये।

यहा यह बात द्रष्टव्य है कि राजाओ और महाराजाओ की भाति यहा के बड़े जागीरदारो और ठाकुरो ने भी छोटे छोटे गढ़ अपने स्तर पर बनवाये जो दुर्ग की भाति ही हुआ करते थे किन्तु उनका स्वरूप दुर्गो से छोटा होता था फिर भी इनके स्थापत्य व निर्माण मे दुर्ग परम्परा का ही निर्वाह हम देखने को मिलता है।

मारवाड़ मे मडोर साजन जालोर और सिवाना के दुर्ग प्राचीनकाल मे बड़े महत्वपूर्ण रहे है इनका निर्माण हालांकि पूर्व मे हो चुका था फिर भी मध्यकाल मे विशेषकर साजन जालोर और सिवाना के किलो का उपयोग समय समय पर जोधपुर के शासक करते आये।

सोजत दुर्ग—

साजत दुर्ग का लकर अनेक वार सघर्ष हुए। राठाड़ अमरसिंह क पुत्र राव इन्द्रसिंह न मुगला के सहयोग से साजत पर आधिपत्य स्थापित किया। अकबर न माटाराजा उदयसिंह का यह दुर्ग पुन इनायत किया। गजसिंह प्रथम (१७०७ ई) क समय स स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व तक इस दुर्ग पर जाधपुर के राठाड़ शासका का अधिकार रहा।

आज यह दुर्ग बिल्कुल विखण्डित अवस्था म ह पर किल की प्राचार आर अन्दर उन महला क खण्डहरा से इसकी भव्यता व स्थापत्य वभव का अन्दाज लगाया जा सकता ह कि यह दुर्ग अपने समय म अवश्य ही महत्वपूर्ण रहा हागा।

राव मालदेव द्वारा निर्मित सोजत नगर के परकोटे[२०] के कुछ अवशेष अब भा शष ह। इस परकाटे के सात दरवाजे हैं जिनका नामकरण उन सात शहरा क आधार पर किया गया ह जिनकी ओर उनका मुह है।[२१] साजत के किले के समाप स्थित दूसरा पहाड़ा पर महाराजा विजयसिंह की पासवान गुलाबराय न[२२] एक किल का निर्माण करवाना पारभ किया परन्तु यह किला पूरा नहा बन सका। उस अधूरे किल की प्राचार अब भी स्थित है। मड़ता का दुर्ग मालदेव द्वारा ध्वस्त किया गया एव मडता म राव मालदव न मालकोट बनवाया।

जालोर दुर्ग—

जालोर का दुर्ग पश्चिमी राजस्थान का अत्यधिक विशाल आर सुदृढ दुर्ग माना जाता हे। यह दुर्ग अरावली पर्वत श्रृखला की सानगिरि पहाडा पर स्थित ह जिसका ऊचाई २४०८ फीट हे।[२३] पहाड़ा क शाषभाग पर ८०० गज लम्बा आर ४०० गज चाड़ा समतल मैदान ह।[२४] इसक चारा आर विशाल बुर्जा वाला मजबूत प्राचार स यह दुर्ग बहुत सुरक्षित ह तथा नीच से देखने पर दुर्ग की स्थिति का दर्शक का थाड़ा भा ज्ञान नहा हाता। गरीब की पूजी का तरह यह विशाल दुर्ग पहाड़ा श्रेणिया के कठोर आचल म यत्नपूर्वक सिमटा हुआ ह।[२५]

दुर्ग की रचना गोल बिन्दु के आकार की हे जो दा आर स पहाडी भाग से घिरा हुआ है। दुर्ग का मार्ग सकरा टेढ़ा मढ़ा व बड़ा विकट ह। किले के मार्ग म चार विशाल दरवाज बने हुए है। किले का प्रथम द्वारा बड़ा सुन्दर तथा धनुषाकार छत वाला है जिस पर छाट छाट मकान बने है। दरवाज के सामन एक बडा सा दीवार स्थित ह जा तापा का साधा मार स दरवाज का बचाने क लिए बनाई गया ह। दरवाजे क नाचे के अन्त पाश्वा पर रक्षका क निवासस्थल हैं।[२६] यहा स लगभग आधा माल की दूरा पर प्राचीर द्वारा सुरक्षित पहाड़ी मार्गा स युक्त मार्ग स आग दूसरा दरवाजा स्थित ह। जहा मार्च बन्न हतु पर्याप्त व्यवस्था की गया ह। तीसरा दरवाजा जा किल का मुख्य द्वार ह सबस विशाल आर शानदार बना हुआ हे। इसस ५० फाट का दूरा पर चाथा द्वार ह।

क्लि का प्राचीर म स्थान स्थान पर सुदृढ़ बुर्ज हे किले के परकोटे से हटकर कुछ बुज म्वतत्र रूप से अलग खड़ी ह । दोनो ओर की गहराई ऊपर स देखन पर बड़ा भयानक लगता हे ।[२७]

दुर्ग के भीतर मुसलमान सन्त मलिकसाह की मस्जिद हे ।[२८] मस्जिद के स्थापत्य का देखने स यह ज्ञात होता ह कि किसी मन्दिर को तुड़वाकर इसका निर्माण करवाया गया ह । उसकी दीवारो म लगे पत्थर भी हिन्दू मन्दिर के अवशेष लगते हे । मस्जिद के समाप ही दा मजिल का जन मन्दिर ह जिसके निज मन्दिर म महावार स्वामी की मूर्ति ह तथा आस पास दूसरे जन तीर्थकरो की मूर्तिया हे । मन्दिर के स्तम्भ सरल ह तथा कला की काई बारीकी दृष्टिगाचर नही होती ।[२९] इसके अतिरिक्त किले म बने चार जैन मन्दिर आर है ।

क्लि म बने राज प्रासाद बड़ भव्य आर विशाल हे परन्तु इन महला की स्थापत्य कला म अलकरण का अभाव ह सर्वत्र सादगी तथा सरलता ही दृष्टिगोचर होता ह । महला के अन्त भाग म फव्वारे जलकुड स्थित हे तथा कई स्तम्भा से युक्त एक सभा-कक्ष भा बना हुआ हे ।

दुर्ग क भात्तर जल-भण्डारण हेतु विशाल कुड व बावडिया बनी हुई ह जिनम झालर बावड़ी व कोलर बावडा प्रमुख ह । इसक अतिरिक्त जलधरनाथ जी क पगलियो का जार्ण शीर्ण मदिर देवा मदिर, दहिया की पोल व वारमदेव की चोका आदि स्थल बने हुए ह । भाज्य सामग्री के भण्डार व सनिको के निवास स्थान भी बन हुए है ।

मध्यकाल मे इस दुर्ग म कोई महत्वपूर्ण नवीन निर्माण कार्य होने का उल्लेख नहा मिलता । सभवत मुगला से निरन्तर सघर्ष करने के परिणामस्वरूप इस दुर्ग मे विशिष्ट निर्माण का कार्य नहा हो पाया हो परन्तु सुरक्षा का दृष्टि से इस दुर्ग का उपयोग आलाच्य काल म हाता रहा जिसस यह कहा जा सकता ह कि इस दुर्ग की मरम्मत आदि का कार्य समय समय पर अवश्य होता रहा । कालान्तर म महाराजा मानसिंह ने इस दुर्ग म काफा समय विताया अत एक पूर भवन का नामकरण उनक नाम पर ह आर उसे महाराजा मानसिह के महल के नाम से जाना जाता ह ।

नागोर दुर्ग—

नागार दुर्ग की स्थापत्यकला मारवाड के अन्य दुर्गा से भिन्न ह । मारवाड मे स्थित प्राय सभा महत्वपूर्ण दुर्ग गिरि दुर्ग हे । पहाड का चोटी पर बन हुए ह जबकि यह दुर्ग भूमि पर बना हुआ ह । अत भूमि दुर्ग क रूप म इस का निर्माण मनु आर काटिल्य द्वारा निर्दशित नियमा क आधार पर किया गया ह । इसक निर्माण कला का एक विशषता यह ह कि बाहर से छोड़ा हुआ तोप का गाला प्राचार पर स होकर क्लि के महला का काई नुकसान नहा पहुचा सकता यद्यपि महल प्राचार स ऊपर उठ हुए है ।[३०]

नागोर का यह दुर्ग दुहरे परकोटे से घिरा है। पहले परकोटे की दीवार की ऊंचाई २५ फीट तथा दूसरे की ५० फीट है। पांच हजार फीट लम्बी प्राचीर में स्थान स्थान पर २८ बुर्जे बनी हुई है। परकोटे की दीवार का आधार की चौड़ाई करीब साढ़े तीस फीट है और शेष भाग करीब साढ़े ग्यारह फीट चौड़ा है।[31] दुर्ग के चारों ओर जल से युक्त खाई बनी हुई है जो सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

किले के भीतर स्थित राजप्रासाद कचहरी फव्वारा इत्यादि बने हुए हैं जिनमें अलंकरण व चित्रकारी की गयी है। रनिवास या जनाना महल स्थापत्य की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। यहां के भित्ति चित्र चित्रकला की अनुपम निधि है। चित्रण की बारीकी और कला की वैयक्तिता और सुन्दरता के कारण नागोर को विशिष्ट चित्रकला की शैली माना जाती है।[32] यहां के अधिकांश महल व चित्र आदि राव अमरसिंह के समय के है। कालान्तर में बखतसिंह ने भी कुछ निर्माण कराया।

आलोच्यकाल मे ही इस दुर्ग मे अकबरी महल व अमर महल का निर्माण हुआ। किले के भीतर की अधिकांश इमारतें इस काल की है। बादल महल के भीतर की चित्रकारी व इसके भित्ति चित्र बहुत आकर्षक है। वास्तव में यह महल मुगल कला व राजपूतकला का सुन्दर नमूना कहा जा सकता है। इसमें कलाकारों ने जो चित्र बनाये वे बड़े जीवन्त और उस काल के इस मरुभूमि के शासकों की जीवन के प्रति जो सुरुचि थी उसको अभिव्यक्त करने वाले हैं।

इन महलात में मुगल शैली के बाग बगीचों व स्नानागारों एवं तरणताल का भी निर्माण करवाया गया जो आज भग्नावशेष व उजड़ी दशा में होते हुए भी पर्यटक पर अपने पूर्व वैभव का प्रभाव डालकर प्रभावित करते है। दुर्ग के भीतर जलभण्डार हेतु छोटे छोटे तालाबों के अतिरिक्त जमीन को खोदकर टांके बनवाये गये थे जिनमें वर्षा का पानी एकत्र होता और वर्ष भर उसका उपयोग किया जाता। पानी की असाधारण व्यवस्था जिसके अन्तर्गत बावड़ी से पानी निकाल कर महल के भीतरी भागों जनाना महलों को गर्मियों में ठंडा रखा जाता आज के इंजीनियरों व तकनीशियनों को आश्चर्यचकित करने वाला है। नागौर दुर्ग के भीतरी महलों की ठण्डक हेतु उसकी ग्रीष्म शाला का निर्माण व स्थापत्य देखने योग्य है।

दुर्ग के भीतर बने पांच महत्वपूर्ण महल जिनका निर्माण राव अमर सिंह व महाराजा बखतसिंह ने किया उसमें से तीन महल अब भी उस काल के स्थापत्य के दर्शनीय स्थल है तथा जिसमें सत्रहवी शताब्दी के भित्ति चित्रों के भी बहुत सुन्दर उदाहरण है। इनके नाम इस प्रकार है (१) राव अमरसिंह का महल जिसे बादल महल व आभा महल के नाम से भी पुकारा जाता है (२) हाडारानी महल जिसे माता महल भी कहते है। (३) अकबरी महल या शीशमहल (४) पट्टरानियों का महल व (५) अन्य रानियों के महल।

महाराना अखतसिंह न जाधपुर का भाति नागार दुर्ग म भा निर्माण काय करवाया जिसम नागार किले की मरम्मत शहरपना (इसम मस्जिद व छतरिया था जिनका तुड़वाकर मुदृढ़ परकोटा बनवाया) किले क पास त्रिपालिया किले क भातर मर्दाना डयोढ़ा का पाल आर उसक ऊपर क महल मातीमहल अखखास महल बाग व बगाच क भातर नान नय महल बाग क ऊपर भानसाल जनाना महल व रगमाल जनाना डयोढ़ा म पहल बन समान क काठार का निर्माण प्रमुख है।[33]

इस दुर्ग क छ दरवाज सिर पाल बिचला पोल कचहरा पाल सूरजपाल धसा पाल व राजपाल है। किले म एक पुराना मंदिर (जा सभवत भगवान कृष्ण का) व मस्जिद ह। मस्जिद का निर्माण मुगल सम्राट शाहजहा न करवाया था। किले क अन्दर विविध भण्डारगृह ह जिनम आज भी चमड़ के बड़े बड़ घी भरन क ढाल पड़ हुए ह।[34]

इसक अतिरिक्त दुर्ग क भीतर खुला पवलियन तथा बागदरा बना हुई ह। दुर्ग क पश्चिमी भाग म परकोट पर चामुण्डा देवा गणेश हनुमान व भैरू क मन्दिर बन हुए ह। दुर्ग क एव शहर क शहरपना के बाहर राव अमरसिह की छतरा बना हुई ह। यह छतरी मध्यकालान मारवाड के स्थापत्य कला का एक सुन्दर नमूना ह।

जोधपुर दुर्ग—

राव जाधा न १२ मई सन् १४५० ई का इस दुर्ग की नाव डाला आर अपन नाम पर जाधपुर नगर बसाया।[35] चिडिया टक पहाड़ा पर लगभग ४०० फाट का ऊचाइ पर यह दुर्ग स्थित ह। पहाड़ी का ऊचाई कम हान क कारण विशाल ऊची ऊची प्राचार का इसका सुरक्षार्थ निर्माण करवाया गया जहा बाच बीच म बुर्ज स्थित ह। दुर्ग का इन प्राचीरा का ऊचाई २० १२० फीट तक ह। इन प्राचारा न चारा आर फलकर १५०० फाट लबा आर ७५० फीट चौड़ी भूमि को घर रखा ह।[36]

इन प्राचीरा क ऊपर तापा क मोर्च बन हुए ह। इनका सुरक्षा व्यवस्था का सुदृढ करन क लिए तथा राजप्रासाद का अलकृत करने क लिए यहा क विभिन्न शासका न समय समय पर इसम निर्माण कार्य करवाया। पहल जाधपुर दुर्ग का विस्तार राव जाधा क फलसे तक ही था। राव मालदेव ने अमृत पोल तथा महाराजा अजातसिह न फतह पाल का निर्माण करवाया। किले म अब ऐसी ६ पाल (दरवाज) है।

जाधपुर के दुर्ग म जा राजप्रासाद बने ह व लाल पत्थर स निर्मित है। माता महल सरसिह द्वारा फतह महल अजीत सिंह द्वारा तथा फूल महल अभयसिंह द्वारा बनाया गया। इन महलो का स्थापत्य कला दखने योग्य ह। लाल पत्थर का काटकर सुन्दर स्तम्भ बारीक जालिया व झरोखे बनाये गये है। महला का उत्कृष्ट कला कृतिया स सजाया हे। फूल बेल पत्त देवी देवताआ क चित्रा स इन महला का सुसज्जित किया गया ह। फलमहल की छत बारीक सुनहरी जाला स अलकृत हे। दीवान आम आर

दावान खास तथा जनाना महलो तथा अन्य कई जगह भी काड़ी क चिकन प्लास्टर स युक्त दावार व फर्श सगमरमर की भाति चमकीला प्रतीत होता हे । ऐस प्लास्टर का यहा उपयाग अधिक हुआ है जिसकी निर्माण विधि काफी श्रमसाध्य व खर्चीली हुआ करता था अत इसका प्रयोग राजामहाराजा या धना लागा तक हा सामित था ।

जाधपुर दुर्ग की स्थापत्यकला बडी भव्य हे तथा विभिन्न शलिया का उसम समावश देखने का मिलता हे । पत्थर की कारीगरी म इतनी बारीकी नही हे फिर भी उसके स्थापत्य म एक पनापन हे जो इस दुर्ग का विशालता और भव्यता का परिचायक ह । अपना सुदृढता विशालता ओर निर्माण-कला की दृष्टि से जोधपुर दुर्ग का गणना राजस्थान के प्रसिद्ध दुर्गा म हाता हे ।

राव मालदेव ने राव जोधा द्वारा निर्मित जोधपुर दुर्ग का जीर्णाद्धार करवाकर सुरक्षा का दृष्टि स उस सुदृढ किया । दुर्ग के ऊपर जो महल गिर गय थे उनका व साल दरीखाना ईमरती पाल (आधी) लाहा पोल व इन दोना पोला के बीच का कोट नया करवाया । जाधपुर शहर क चारा और मालदेव ने राव जोधा द्वारा करवाये गये परकोटे (शहरपना) का पुन नया निर्माण करवाया । फुलेलाव (जूनी चादपोल के पास) प्राचान मडतीया दरवाजा के पास नाबाज की हवेली क समीप व नागारा दरवाजे साजा के तक्यि क पास तान नया पालें बनवायी । ब्रह्मपुरी की पोल का निर्माण भी राव मालदव के समय हुआ ।

जाधपुर क अतिरिक्त राव मालदेव ने पोकरण सातलमेर व मेडते के वीरमदव का काट गिराकर मालदव ने तीनो जगह नये काट बनवाये । मड़ता का काट मालकोट कहलाता ह । साजत का कोट रायपुर के पहाड पर मालगढ़ सावाणा क पास पीपलाद क पहाड पर कोठार व महलात बनवाये । भाद्राजूण नाडोल व सावाणे के चारो आर परकोटा बनवाया । मालदेव ने पाला परगने के गूदाज (गुदवच) गाव म मेड़ता परगने क राया गाव मे सीवाणा के समीप कुडल गाव में कोट करवाये । फलाधा म कोट का जीर्णाद्धार करवाकर पाल बनवाई । धुनाडा गाव मे कोटडा चाटसू म कोट नाडोल गाव (परगने गाडवाड़) के चारा ओर परकोटा अजमर वीटली के ऊपर कोट व बुरजे बनवाई ।

राव मालदव क किलेदार ने जाधपुर दुर्ग के ऊपर गापाल पाल बनवाई ।[३७] राव मालदेव क समय पापाड के ठाकुर महस धडसिंघोत ने पीपाड म काटडी करवाई । राव चन्द्रसन न सावाण क दुर्ग म नवचाकिया और एक पाल बनवाई ।[३८]

महाराजा सूरसिंह न दुर्ग पर सूरजपाल जनाना ड्याढी सिणगार चाकी सभा मण्डप वाड़ा क महल राव मालदव क महल का उखाडकर मातीमहल बनवाया । सूरसागर के बाग मे महल बनवाये ।[३९] इसके अतिरिक्त तलहटा के महल (वि स १६७२ में करवाय पर अधूरे रह) राव जाधा द्वारा लाहापोल क भातर बनी साला का उखाडकर फिर से रनवाया । दुर्ग म हवा महल व वि.स १६६८ म जनाना महला का निर्माण सूरसिंह के

शासनकाल म हुआ ।[४०] महाराजा सूरसिंह क शासन काल म हा सूरसागर क पास ८४ मिरत्गारा खवासा पासवाना मुत्सद्दिया न अपन अपन अलग अलग आवास गृह नवाये । इसके लिए राज्य की ओर से जमीन दा गई आर इस सारे निर्माण कार्य म भाटा गायन्ददास का महत्वपूर्ण प्ररणा रही ।

महाराना गजसिह न मडार म अपने पिता की स्मृति म सूरसिंह का दवल नवाया ।[४१] इन्हा क समय म पोपाड़गढ़ म खीवा आर कहन न वि स १६८८ म गढ का पाल का निमाण करवाया । इसका शिलालख आज भी पोल क दाहिना तरफ उत्कार्ण ह ।[४२]

महाराजा जसवन्तसिंह न किले म अगरणी का महल (जहा आजकल दालतखाना का चाक ह) मडोर मे महाराजा गजसिह का देवल सूरसागर के बाग की इमारता का क्मरा (वि स १७०६ स प्रारभ वि स १७३० म सम्पूर्ण) सूरसागर क पट्ट क महल करवाये ।[४३]

महाराजा अजीत सिंह ने गापालपाल से फतेहपोल तक का काट व फतहपाल (वि स १७७४ म) का निर्माण करवाया । वि स १७७५ म दालतखाना का महल फतहमहल दालतखान क ऊपर वाला बिचला महल खावका रा महल जनाना का रगसाल व जनाना म अलग अलग २४ आवासगृह बनवाय ।[४५]

महाराजा अजात सिह न मडोर म इकथभाया महल जनाना बाग म काटड़िया (जनाना आवास) काटडिया क सामने की साल मडोर क बगाच का सिरेपाल दावानखाना व दवताआ की साल बनवाई । नागादडी पर जसवन्तसिह का देवल बनवाया ।[४६]

महाराना अभयसिंह ने जोधपुर शहर के चारा आर काग का पहाड़ी से लेकर सुतरखाने तक (मडतिया दरवाजा के पास) का परकोटा पक्का बनवाया । चाकलाव म दो काठार, बाग मे सामान के लिए निर्मित करवाये । किले म फतहमहल के ऊपर फलमहल सभामण्डप के ऊपर कछवाहा जी का महल लोहापाल के नाच गोल का घाटी का आर स तीन बुर्ज (जा अधूरी रहने क कारण बखतसिह न पूरी का) पूरे किले की मरम्मत करवायी ।[४७]

महाराजा अभयसिंह न चाखा म बगाचा व बगीचे क चारा आर परकोटा ओर बाग क भीतर के सारे महलात मडार क नगारखाने की बड़ी पोल सिरेपोल क उत्तर का आर का दरीखाना व साल महाराजा अनातसिह का दवल (पूरा न हा सका) अजमर म पुष्कर म घाट त्रिपोलिया साल व पुष्कर म रहन का निवास स्थान अनासागर के बगीचे क महला का निर्माण करवाया ।[४८]

महाराजा तखतसिह ने जोधपुर दुर्ग पर वाड़ा के महलो के समीप नया जनाना ड्योढ़ी जोधपुर शहर के चारो ओर का परकोटा जिस महाराजा अभयसिह ने प्रारंभ तो करवा दिया था परन्तु पूर्ण नही कर पाये थे आगे का पहाड़ो से लेकर मेडतीया दरवाजे तक व नागोरी दरवाजे से मेड़तीया दरवाजे तक का शहरपनाह बहुत शीघ्रता से पूरा करवाया। कोतवाली चबूतरा तलहटी के महलो से अलग स्थान पर अन्न के कोठार और खजाने रो कारखाना तलहटी के बीच के महल का निर्माण करवाया।

महाराजा विजयसिंह ने किले में बाबाजी आत्मारामजी के ऊपर महल बनवाया तुवरजी के झालरे के पास स्थित बागर को हटाकर नागौरी दरवाजे के पास बनवाई क्योंकि शहर का विस्तार हो गया था।[49] महाराजा विजयसिंह ने सोजत का कोट पक्का बनवाया गढ़ और शहर के बीच का परकोटा व घुड़साल का निर्माण करवाया। महाराजा विजयसिंह की पासवान गुलाबराय ने जोधपुर में वि स १८३२ में महिलाबाग के महल बनवाये।[50]

महाराजा भीमसिंह ने लोहापाल के ऊपर झरोखे फतहमहल फूलमहल के कोठार व कोटड़िया बालसमद बगीचे की पोल व उसके ऊपर का महल बालसमद तालाब के पट्ट के ऊपर की व बगीचे के अन्दर की साला का निर्माण करवाया।

मारवाड के उपर्युक्त दुर्गों की स्थापत्यकला को देखने से यह दृष्टिगोचर होता है कि यहा दुर्गों के निर्माण विधि में कई तरह की साम्यता है। नागौर को छोडकर अन्य सारे दुर्ग गिरिदुर्ग है जो पहाड की चोटी पर बनाए गए है। मध्यकाल में सुरक्षा व सुदृढता के लिए पहाड़ी दुर्ग ही ज्यादा उपयुक्त समझे गये। मुसलमानो के भारत आगमन के पश्चात् इस दिशा में अधिक ध्यान दिया गया क्योंकि उनके आक्रमणो का प्रतिरोध करने के लिए सुदृढ़ दुर्ग एक आवश्यक कारक माना गया।

यहा के डिंगल काव्य में दुर्गों की महत्ता उपयोगिता और निर्माण कौशल का सुन्दर वर्णन मिलता है। किलो की अजेयता निर्माणकर्ता की प्रशंसा उसमें लड़े गये युद्धो उसके रक्षकयोद्धाओ आदि को आधार बनाकर लिखा गया यह साहित्य बड़ा अनूठा है। इस प्रसंग में कविराजा बाकीदास ने "भुरजाल भूषण" में जो उद्‌गार प्रकट किये उसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है

समर सजण सू सो गुणा दुरग तजण रा दाख।
मरद दुरग जाता मरे मिले जिका नू साख॥

इस प्रकार यहा दुर्गों का बड़ा महत्ता रहा है तथा उसके साथ यहा के शासको का ही नही आम जनता का भी भावात्मक सम्बन्ध जुड़ा हुआ था। दुर्ग मारवाड़ के निवासियों की अजेय भावना व गौरव के प्रतीक थे। जिनकी अद्‌भुत स्थापत्य और भव्यता आज भी दर्शक के मन पर एक अमिट छाप छोड़ता है।

उच्चवर्ग के आवास गृह —

यहा के राजप्रासाद व उच्च वर्ग के आवास गृह पूर्व म सादे ढग स निर्मित होते थे हालांकि वे भव्य व विशाल हुआ करते परन्तु जब यहा के शासको का सम्पर्क मुगलो से हुआ तब स यहा के राजप्रासादो को रोचक एव चमकदमक वाले बनाने का क्रम आरम्भ हुआ। उनमे फव्वारे छोटे बाग पतले खम्भे और उन पर बेल बूटो का काम तथा सगमरमर का प्रयोग होने लगा। राजप्रासादो का अलकरण विशेषरूप स आरम्भ हुआ। बारीक खुदाई व कुराई का काम अलकृत छज्जे गवाक्ष आदि राजस्थानी राजप्रासादो की अपनी विशेषता रही है।[५२]

मुगलो स सम्पर्क बढने स मुगलो की शान के अनुरूप अपने राज प्रासादो के स्थापत्य को ढालने म उनकी रुचि बढती गई। मुगल स्थापत्य का यहा प्रभाव अधिक बढने का एक प्रमुख कारण यह भी रहा कि मुगलो के पतन के पश्चात उनके आश्रित शिल्पकारो को यहा के शासको ने प्रश्रय दिया। उनके आश्रय म उन कलाकारो ने अपना कार्य पुन प्रारभ किया अत उनकी कला म मुगल प्रभाव आना स्वाभाविक था। इतना ही नही अपितु सामन्तो व जागीरदारो के महलो के स्थापत्य म भी हम यह प्रभाव देखने को मिलता है। इस प्रकार मुगल शैली का प्रभाव यहा के स्थापत्य म समय पाकर विस्तार पाता गया।

उच्चवर्ग के आवास गृह के अन्तर्गत राजप्रासाद व उनके प्रमुख सामन्तो जागीरदारो व उच्च राजवर्गीय अधिकारियो के आवास सम्मिलित किये जा सकते है। इसमे राजप्रासादो की भव्यता व स्थापत्य सौन्दर्य बडा अनूठा हुआ करता था। इन महलो की दीवारो पर चित्रकारी पत्थर की जालियो की नक्काशी झरोखे कलात्मक खभो के अतिरिक्त इस काल मे बने राजप्रासादो म हौज फव्वारे इत्यादि की व्यवस्था भी होती थी जिन पर मुगल स्थापत्य का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। चित्रकारी म फूल बेल बूटे नारी सौन्दर्य ओर धार्मिक महापुरुषो या ग्रथो के विविध प्रसग के चित्र अधिकतर बनाये जाते थे। जिनमे चमकीले रगो का प्रयोग किया जाता था। छत व अलकरण मे सुनहरा रग का प्रयोग राजप्रासादो की अपनी विशेषता कहा जायगा। इसके अतिरिक्त लाल गुलाबी हरा व आसमानी रग मुख्यतया प्रयोग म लाया जाता था।

राजप्रासाद म शाही शानो शौकत व भव्यता का पूरा ख्याल रखते हुए मर्दाना व जनाना महल अलग अलग बनाये जाते थे। राजा के दरबार, कचहरी दीवान के बैठने की जगह रहने का निवास सोने का कमरा व रानियो के रनिवास का अलग अलग व्यवस्था होता थी।

राजप्रासादो की भाति राजा के दीवान प्रमुख सामन्तो व उच्चाधिकारियो के आवास गृह भी बडे भव्य और अलकरण युक्त हुआ करते थे। जो उसके पद एव एश्वर्य

की गरिमा के अनुकूल होते थे। उच्च राजवर्गीय लोगों के लिए बड़ी बड़ी हवेलियाँ बनती थी जिसमें कई कमरे बने होते जो आवश्यक साज सज्जा की सामग्री से युक्त होते। इन हवेलियों में उनके नौकरों के रहने के लिए अलग से आवास गृह बने होते थे। हवेलियों के स्थापत्य व अलंकरण में राजप्रासादों का अनुकरण किया जाता था।

राजा के सामन्तो व बड़े जागीरदारों के आवास गृह बड़े सुदृढ़ एवं विशाल हुआ करते थे। अधिकांश सामन्तो के आवास गृह प्राय गाव के मध्य में ऊंचे स्थान पर बहुत सी जगह घेर कर बनाये जाते थे और उनके चारो ओर परकोटा भी निर्मित करके उसे छोटे दुर्ग की भांति बनाया जाता था। मुख्य द्वार बड़ा व विशाल बनाया जाता जिसके समीप दोनो ओर बुर्ज बनायी जाती थी। इनके आवास को "गढ़" या "कोट" के नाम से पुकारा जाता था। कई लोग स्थानीय भाषा में उसे "रावळा" भी कहते थे। इन गढ़ और कोट मे एक राजा के दुर्ग की भांति ही छोटे स्तर पर सब प्रकार की आवश्यक सामग्री व उसके रखरखाव हेतु भवन निर्मित होते थे। ठाकुर के आवास गृह व जनाना महल अलग अलग बने होते थे। इसके अतिरिक्त हर कोट या गढ में कचहरी लोगो के बैठने के लिए "दरीखाना" व घोड़ो के लिए "घुड़साल"[63] आदि की व्यवस्था होती थी।

उच्चवर्ग के आवास गृह मुख्यतया पत्थर द्वारा निर्मित होते थे। इसमे चूने आदि का कार्य भी किया जाता था। कई अन्य वस्तुएं मिलाकर चूने के प्लास्टर को बहुत ही चिकना (संगमरमर की तरह) बनाया जाता था। कहीं कहीं संगमरमर का प्रयोग भी मिलता है परन्तु इसका प्रयोग बहुत ही कम जगह और कम मात्रा में किया जाता था।

मध्यम वर्ग के आवास गृह--

मध्यम वर्ग के आवास गृह अपेक्षाकृत छोटे होते थे उसमे "पोळ" के आगे खुला आंगन होता था जिसे "चोक" के नाम से पुकारा जाता है। इसके आगे रहने व सोने के लिए "साळ" व "ओरे" बनाये जाते थे। रसोई व सामान रखने के लिए अलग से कमरे बने होते थे। घर के पीछे पालतू पशु बाधने के लिए प्राय जगह बनी होती थी जिसे "बाड़ा" कहा जाता। इस वर्ग के मकानो में ईटो व जहां सुलभ था स्थानीय पत्थर का प्रयोग किया जाता था। कच्ची व पक्की दोनो प्रकार की ईटे काम मे लायी जाती थी। साधन सम्पन्न लोग पक्की ईटो व पत्थरो का मकान बनाने में प्रयोग करते थे। साधारण स्तर के लोग कच्ची ईटो व गारे गोबर से लिपे पुते मकानो में रहते थे। मध्यमवर्ग के परिवारो में दोहरा मंजिल के मकान तो किसी किसी के ही पाये जाते थे जिसे "मेड़ी" या "माळिया" कहा जाता था।

इस वर्ग के लोग अपने मकान की छत प्राय मिट्टी के बने कलुओ से ढका करते थे जो गाव के कुम्हार द्वारा निर्मित होते थे। प्रत्येक वर्ष वर्षा से पूर्व उस छत की जांच की

जाता था टूटे फूट कलू हटाकर उसकी जगह नये केलू रखे जाते थे। इन केलुओ या "थेपड़ो के नावे बास अथवा स्थानीय पेड़ा की लकड़ी बिछान के लिए प्रयुक्त होती था। साळ आर आरा म खिड़किय छोटी आर कम हुआ करती थीं किन्तु उसम "आळे अवश्य बने हाते थे। इन आळा म एक आळा कुलदेवी या अन्य देवी देवताआ का पूजापाठ हेतु नियत हाता था। होली दीपावली जैसे बड़े पर्वो क पूर्व घर की लिपाई पुताई और सफाई का कार्य हुआ करता था। चूने मुड्डु व रजमी का प्रयोग पुताई के लिए किया जाता था व विभिन्न प्रकार क माडणा से आगन चौक मुख्यद्वार आदि को अलकृत किया जाता था। मुख्यद्वार के दोना आर चबूतरी या चाका अवश्य बनायी जाती थी।

निम्नवर्ग के आवास गृह—

निम्नवर्ग के आवास गृह बहुत छोटे व गारे-गोबर व कच्ची ईटा से निर्मित होते थे। मध्यम वर्ग की भाति मकान की छत केलू की बनी होती थी केवल एक या दो कमरेनुमा ओरे बनाकर उसी स काम चलात थे।परन्तु इस वर्ग के कई लोग अपने आवास हेतु झूपड़े का प्रयोग भा करते थ जो घास फूस का बना होता था। झूपड़े के निर्माण म आक सणिया आदि यहा क स्थानीय पाधे व घास का प्रयोग करते थे। घर के आगे खुला आगन (चाक) अवश्य हाता था जिसका प्रयोग बैठने-सोने व अपने गाय बैल भैस आदि पशुआ का बाधने क लिए किया जाता था। इस वर्ग के आवास गृह सादे व अलकरणहीन होते थ परन्तु हाला दीपावली क अवसर पर अपने आवास को लीप पोत कर व भलीभाति बुहार कर रखत थ। पर्व या शादी विवाह क उत्सव पर रजमी मुड्डु आदि से पुताई की जाता था।

मध्यम वर्ग का भाति इस वर्ग के कुछ लोगो म भी अपने आवास-गृहा के मुख्यद्वार के दोना आर चौका (चबूतरी) बनाने का रिवाज था यह परम्परा गावों मे आज भी देखने को मिलती ह। चौक के इर्द-गिर्द मिट्टी की कच्ची ईटो से निर्मित दावार जिसे स्थानीय भाषा म चादा कहत थे क ऊपरी सिरे पर सिणिया व घास इत्यादि रखकर मुड्डु या मिट्टी डाला करत थ जिस यहा पलाणी" देना कहा जाता था। ऐसा इसलिए किया जाता था जिसस बरसात का पानी सीधा दावार म न उतरे व दीवार गिर नही।

मकराने के सगमरमर का स्थापत्य कला म योगदान—

मारवाड़ म मकराना कस्बे से निकलने वाला कीमती ईमारती पत्थर सगमरमर यहा के स्थापत्य म अपना महत्वपूर्ण भूमिका रखता ह। यह सफेद रग का चमकीला पत्थर कीमता होने क कारण यहा क आवासगृहा में तो कम प्रयुक्त हाता ह फिर भी राजप्रासादो व मुख्य इमारता म इसका प्रयाग दखन को मिलता है। इस पर बारीक खुदाई का कार्य बड़ा सुन्दर व मनमोहक लगता ह किन्तु मध्यकाल म न तो इतने कल कारखाने थे न यत्र व विकसित उपकरण थ तथा यातायात के साधना का कमी और महगा हान के कारण

का जार्णोद्धार किया । ठाकुर मूलनायक जी का मदिर जा गन्ग माहल्ले म ह आरगजव के राज्यकाल म नष्ट कर दिया गया था उसका सन् १७१८ १९ म पुनरुद्धार किया ।[६२] जोधपुर की जूनी धानमण्डा के निकट घनश्यामजा के मदिर का निर्माण महाराजा अजातसिह ने करवाया इस पचदवरिया भा कहत ह ।[६३] राव गागा द्वारा निर्मित गगश्यामजी का मदिर जो जसवतसिंह का मृत्यु क पश्चात नष्ट कर दिया गया था आर उसके स्थान पर मस्जिद बनवा दा गयी था । अजातसिह न जाधपुर पर जब अपना प्रभुत्व स्थापित किया तो यहा पुन मदिर बनवाया ।[६४]

महाराजा विजयसिह वष्णव धर्म क अनुयायी थे आर अपनी धर्मपरायण नाति क कारण उन्होने यहा कई मदिरो का निर्माण व जार्णोद्धार करवाया जिसका उल्लख आगे यथास्थान किया जायेगा ।

यहा के शासको की भाति उनक सामन्तो व जागारदारा न भा अपना जागारा म कई मदिरों का निर्माण व उसके पुनरुद्धार क कार्य मे रुचि ली । १७ वा आर १८ वी शताब्दा मे वैष्णव धर्म से सबधित मदिर यहा अधिक सख्या म बन । इसका कारण यह था कि मुगलो की कट्टर धार्मिक नीति के कारण उत्तर भारत स अनेक मठो व मदिरा क आचार्य (धर्म एव सम्प्रदायो के आचार्य) राजस्थान के शासको स आश्रय पाने के लिए राजस्थान में चले आये । उस समय मारवाड़ क शासको ने भी जिनके आश्रय म महन्त या आचार्य आये उन्हे भूमि आदि भेट की ।[६५]

यहा के शासक ही नही अनेक रानियो ने भी मदिरो क निर्माण मे रुचि ला[६६] तथा यहा अनेक मदिर बनवाये । महाराजा अजीतसिंह की रानी राणावत जा न गोल म तवर जी के झालर के पास शिखरबन्द मदिर बनवाया ।[६७]

मध्यकाल में मदिरा के स्थापत्य व निर्माण मे सुरक्षा का भी ध्यान रखा जाता ता । सुरक्षा की दृष्टि से गढा दुर्गा आर शहरपनो आदि का निर्माण किया जाना उस समय *सामन्य बात थी परन्तु मदिरों की रक्षा क लिए भा इसा प्रकार की व्यवस्था*[६८] *की जान* लगी आर कई मदिरों के चारा ओर सुदृढ़ प्राचार व बुर्ज आदि आज भी देखने म आता हे । कस्वा ओर गावो मे छोटे बड़े मदिरा का निर्माण इस काल मे अवश्य हुआ है परन्तु शिलालेखो क सुरक्षित न रह पाने क कारण उनक बार म निश्चित जानकारी देना बडा कठिन ह ।

हिन्दू मदिरा के अतिरिक्त यहा जेन मदिरा का स्थापत्य दर्शनीय ह । विवच्यकाल म यहाँ नये जैन मदिरा का निर्माण भले हा कम हुआ हा पर पुनर्निर्माण व जार्णोद्धार का कार्य किसी न किसी रूप म अवश्य हाता रहा ह । हिन्दू मदिरा की अपक्षा जन मदिरा म सगमरमर के पत्थर का उपयाग अधिक मात्रा म हुआ हे तथा उनके मदिरा म स्थापत्य कला का बाराका व अलकरण का अनुपम छटा का अपना महत्व है । यहा क जन मदिरा

म आसिया नाकाडा रणकपुर क मदिर प्रमुख ह। गोडवाड़ म रणकपुर क अतिरिक्त मुछाला महावीर जा नारलाई नाडोल आर वरकाणा क मन्दिर जन पचतीर्थ के नाम से पुकार जाते ह। उत्कीर्ण सान्दर्य के लिए दलवाडा का जन मदिर आर रचना शिल्प के लिए रणकपुर का मन्दिर अनुपम है।[६९]

मध्यकाल मे मारवाड के विभिन्न स्थाना पर यहा के शासका सामन्ता राजवर्गीय सदस्या तथा धार्मिक आस्था वाल सम्पन्न लोगा ने जो मदिर बनवाय व इस प्रकार ह -

महाराना सूरसिह न वाडी क महला म ठाकुरजी का व नागणचिया जा का मदिर बनवाया।[७०] हरक्वाई इत्यादि जा सतिया हुई उनका सता मदिर बनवाया। महाराजा गजसिह न कवरपदा के महला क ऊपर आनदघन जी का मदिर बनवाया। वि.स १७१७ मे "पचेटिये भाखर क ऊपर सिक्दार सोभावत भगवानदास ने माता जी का मदिर बनवाया जिसकी कीमत राज्य से लगा।[७१] महाराजा जसवन्तसिह न ठाकुरजी श्री मुरली मनोहरजी श्रा आणदघन जी व श्री माताजी हीगलाज की चादी की खड़ी मूर्तिये बनवाई।[७२]

महाराजा अजातसिह ने गूदा क मोहल्ले म मूलनायक जी क मदिर का पुनर्निर्माण करवाया जिसे मुगला ने पूर्व म गिरा दिया था। ठाकुरजा गगश्यामजा के मदिर का भी जीर्णाद्धार करवाया। मडोर मे दवताआ की साल बनवाकर उसके अन्दर बड़ आकार की दवताओ की मूर्तिय उत्कीर्ण करवायी। यही वि स १७७६ म भरूजी का बावड़ी के पास जो भैरूजी का छाटा मदिर था उसे बडा बनवाया। काले गोरे भरू की तथा गजानन्द जा की बड़ा मूर्ति उत्कीर्ण करवा कर स्थापित की।[७३]

महाराजा अभयसिंह ने देवकुण्ड क ऊपर माताजी श्री हिंगलाज जा के लिए चबूतरा बनवाया जा पूरा नही करवा पाय।[७४] महाराजा अभयसिंह के धाय भाई रावत ने रावत बावड़ी क ऊपर माताना का मदिर बनवाया।[७५] महाराजा बखतसिह ने नागार दुर्ग मे जिस महल मे राव अमरसिंह रहते थ वहा ठाकुरजी का मदिर, नागार शहर म मुरली मनोहर जी का मदिर व गाव मूडवा म तालाब क किनार ठाकुरजी का मदिर बनवाया आर वहा बगीचा भी लगवाया।[७६]

महाराजा विजयसिंह के काल म जाधपुर म मदिरा के निर्माण व जीर्णाद्धार का कार्य सर्वाधिक हुआ। गगश्यामजी क मदिर का उखेड़कर पुन बनवाया। शिखरबद (गुम्बज वाला) पोल सूर्य व महादव के मदिरा का निर्माण करवाकर उसके चारा आर परकोटा बनवाया। तलहटी क महला क नीच वल्लभकुल के, बालकिशन जा व श्यामजी क मदिर निर्मित करवाय। जाशा की हवेला क पास ठाकुरजी श्री महाप्रभु, खरवा की हवली क पास नटवरजा का मदिर व श्री कुजबिहारा जी का मदिर बनवाया। दाऊजा का मदिर जिसका निर्माण महाराना अभयसिंह न करवाया आर वि.स १७८६ म काटा से गुसाई

का लाकर यहा विट्ठलराय का प्रतिष्ठित किया था। इसका महाराना विनयसिंह न विस्तार करक निर्माण कार्य सम्पन्न करवाया।[७७]

मारवाड क शासका द्वारा हा नहीं अन्य जागारदारा व धर्मप्राण लागा द्वारा भा मारवाड़ क विभिन्न स्थाना पर मन्दिरा का विवेच्यकाल म निर्माण व जार्णाद्धार का कार्य करवाया जाना रहा। मारवाड़ क नीबाज ठिकान क सस्थापक नगराममिह (वि म १६ १७६७) न नीबाज गढ क भातर राधामुकुन्द जा का मन्दिर निर्मित करवाया। नाबाज गढ़ म जगरामश्वर महादेव का मदिर भी स्थित ह।[७८]

जालार क चाहान शासक चाचिगदव ने सूधापर्वत पर जा चामुण्डा दवा का मन्दिर बनवाया उसम समय समय पर निर्माण कार्य हाता रहा। मन्दिर म लिख शिलालख स ज्ञान हाता ह कि इस मदिर म वि स १७२७ आषाढ़ कृष्ण ३ क दिन श्रा जातनाथ जा न कलश चढ़ाया व झराखा बनाया।[७९]

पापाड म वि स १६५९ म भण्डारा माला क पुत्र रायमल न उपासरा बनाया जिसक शिलालख का प्रतिलिपि यहा द्रष्टव्य हे [८०]

राजा श्रा महाराजाधिराज महाराजा श्री सूरसिघजा विजयराज्य राना श्रा रामजा रतनसिघान राज उपमिरा श्री सघस राय भण्डारा माला सुत भण्डारा राइमल नमाहाडा उपामरा हार कराया। सूत्रधार नगा उपासरो कीया सवत १६५० वर्ष श्रावण सुदि १३ वार शुभ शुभदिन।

मन्दिरा क निर्माण मे यहा की स्त्रिया का भूमिका महत्वपूर्ण रहा ह। कवल रानियो आर महारानिया न हा नहा राजकुमारियो गाव क ठाकुरा का ठकुरानिया आदि न भा इस आर अत्यधिक रुचि दर्शायी जिसका स्पष्ट प्रमाण मध्यकाल म उनके द्वारा निर्मित एस अनक मन्दिर आज भा देते ह। नाबाज म स्थित राधामाहन जा का मदिर ठाकुर दालतसिह का पुत्रा राजकुवरा न आर सिरे बिहारा जा का मदिर ठाकुर सुल्तानसिंह का पुत्रा सिरेकुवर बाई न बनवाया।[८१] नाबाज मे ही सीताराम जा का मदिर (रघुनाथ जी का मदिर) ठाकुर शम्भुसिह की धर्मपत्नी खगारोत जा न बनवाया।[८२]

मारवाड क मदिरा के स्थापत्य मे मूर्ति अकन का वशिष्टय विशषरूप स उल्लखनाय ह। मदिरा म दवा दवताओ का मूर्तियो क अतिरिक्त नारा नर्तक मण्डला व विविध प्रकार क पशु पक्षिया का आकृतिया भा उत्कार्ण हे जिसम नारा मर्तिया का बहुलता ह। इन मर्तिया स तत्कालान वाद्य यत्रा व वेशभूषा रहन सहन आदि का जानकारा मिलता ह। मदिर धार्मिक भावना क कन्द्र सामाजिक भावना क पाषक व सास्कृतिक विरासत क मूर्तिमान प्रताक ह।

मन्दिरा क अतिरिक्त छाट पजागृह प्रत्यक ग्राम आर घर म इस काल म भा परम्परा क अनुसार बनन रह इनम जझार मता भामिया पितर आदि या कुलदवा आदि क पजागृह गिनाय जा सकत ह इनका बनावट प्राय सादा हाता था।

मस्जिदें—

हिन्दू उपासना गृहों (मन्दिरों) की भांति मारवाड़ में मुस्लिम उपासना के केन्द्र के रूप में मस्जिदों का निर्माण हुआ। मस्जिदों का निर्माण इस्लाम की धार्मिक भावना से प्रेरित था साथ ही हिन्दू धर्मावलम्बियों के प्रति विद्वेष व विरोध से उत्प्रेरित भी। इसी कारण मध्यकालीन मारवाड़ की अधिकांश मस्जिदें मन्दिरों को तुड़वाकर[83] उसके स्थान पर निर्मित की गयीं। यह उन आक्रान्ताओं की धर्मान्धता का ही परिणाम था। पूर्व मध्यकालीन धार्मिक कट्टरता का यह स्वरूप धार्मिक आन्दोलन के पश्चात् यद्यपि कम हुआ और सौहार्द व सामंजस्य स्थापित होने पर हिन्दुओं ने भी मुस्लिम उपासना गृहों को पवित्र मानकर उनका आदर करना प्रारंभ किया। इतना ही नहीं मेड़ता की जामा मस्जिद जो पर्दे में बन्द पड़ी थी उसे मेड़ता के राजा सुजानसिंह नामक हिन्दू शासक ने नमाज के लिए पुनः खुलवायी तथा उसका जीर्णोद्धार करवाया जिसका उल्लेख मेड़ता की जामा मस्जिद में लगे फारसी शिलालेख[84] में हुआ है जो शाहजहां के समय में यहां निर्मित हुई। इससे यह ज्ञात होता है कि खुदा की इबादत को नेक व पुण्य कर्म मानकर हिन्दुओं ने उनके उपासना गृह के प्रतीक मस्जिदों को इज्जत ही नहीं बख्शी कई अवसरों पर उसकी सुरक्षा का भार भी सहर्ष स्वीकार किया।

मस्जिदों का वास्तुशिल्प भी अपने ढंग का एक निश्चित आकार प्रकार वाला होता था जिसकी ऊंची मीनारें व गुम्बद दूर से ही उसकी पहचान करवा देते थे। मारवाड़ में मुगल शासकों द्वारा व उनके सूबेदारों द्वारा निर्मित मस्जिदें बड़ा व विशाल आकार प्रकार लिये होती थी। उनका नामकरण भी प्रायः उसके निर्माणकर्ता के आधार पर किया हुआ मिलता है। जैसे बाबरी मस्जिद, अकबरी मस्जिद, जहांगीरी मस्जिद आदि। जिस मुगल सम्राट के काल में यह मस्जिद निर्मित हुई प्रायः उसी के आधार पर अकबरी व जहांगीरी मस्जिद आदि नामकरण देने का भी यहां रिवाज रहा है। शम्सतालाब पर नागौर के सूबेदार शम्सुद्दीन द्वारा निर्मित शमशाह जामा मस्जिद, शाहजहां के काल में निर्मित तहसील चौक नागौर में स्थित शाहजहानी मस्जिद जिसका निर्माण ताहिर खां ने हिजरी सन् १००६ में करवाया तथा नागौर दुर्ग में स्थित मस्जिद किला नागौर बादशाह शाहजहां के जमाने में सिपहसालार खानखाना महावत खां ने हिजरी सन् १०४१ में बनवाई।[85]

विशाल व भव्य आकार वाली मस्जिद को जामा मस्जिद के नाम से पुकारा जाता था। मेड़ता की जामा मस्जिद व नागौर के गिनानी तालाब पर स्थित अकबरी मस्जिद जो जामा मस्जिद के नाम से जानी जाने वाली मस्जिदें हैं इसी प्रकार की हैं। नागौर और मेड़ता की भांति मध्यकाल में मारवाड़ के अन्य स्थानों पर भी अनेक छोटी बड़ी मस्जिदों का निर्माण हुआ जिनमें जोधपुर, पाली, नाडोल, मानते आदि स्थानों की मस्जिदें प्रमुख हैं।

जलाशय—

भारतीय धर्म में जलाशय निर्माण को एक बहुत बड़ा पुण्य कार्य माना गया है। किन्तु इस आध्यात्मिक भावना का भौतिक महत्व भी था क्योंकि जलाशय एक ओर सिंचाई के श्रेष्ठ साधन बनते हैं वहां दूसरी ओर जन सामान्य को पेयजल की कठिनाई से मुक्त भी करते हैं।[86] मारवाड़ के शासकों व उनके सामन्तों ने जलाशय निर्माण में पर्याप्त रुचि ली थी। मध्यकाल में दुर्ग निर्माण सुरक्षा की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण आवश्यकता थी तो जल स्रोत उन दुर्गों की अभेद्यता का महत्वपूर्ण कारक था। इसलिए अटूट जल भण्डारण हेतु प्रत्येक दुर्ग में जलाशयों का होना एक अनिवार्यता थी। यहां निर्मित प्रत्येक दुर्ग में प्राकृतिक जलस्रोत के अभाव में कृत्रिम रूप से जल भण्डारण हेतु विभिन्न तालाबों बावड़ियों झालरों व टांकों का निर्माण किया गया। जल मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है और फिर मारवाड़ जैसे प्रदेश में जहां की प्राकृतिक दशा के अनुकूल जल की विकट समस्या बनी रहती है जहां जल को जीवन माना गया है वहां ऐसे जलाशयों का निर्माण एक पुण्यकर्म ही माना जायेगा।

यहां तालाबों के अतिरिक्त बावड़ियों झालरों व कुओं का निर्माण भी कराया गया जो जन कल्याण की भावना से उत्प्रेरित तो थी ही यहां की जरूरत भी थी। तालाब या अधिकांश बड़े जलाशयों का निर्माण यहां के शासकों ने करवाया क्योंकि इनका निर्माण बड़ा खर्चीला होता है अतः धनी व्यक्ति ही ऐसे कार्य सम्पन्न करवा सकता था। शासकों की भांति यहां की कुछ रानियों ने भी तालाब बावड़ियों व कुओं का निर्माण करवाकर पुण्यलाभ कमाया।

बावड़ियों व झालरों तथा कुओं के निर्माण में अलंकृत शैली का शिल्प विधान देखने को मिलता है। बावड़ियों के लिए प्रायः समीपस्थ स्थित या उपलब्ध पत्थर का प्रयोग किया जाता था। बावड़ियां बड़ी विशाल बनती थी जिनके ऊपर कई पोल बनाया जाता तथा इनमें प्रयुक्त होने वाले खम्भों छज्जों पर विविध तरह का अलंकरण देखने योग्य होता है। सीढ़ियां बड़े गहरे तक बनी होती थी।

बावड़ियां व कुओं के अलावा यहां झालरे भी बनाये जाते थे जो जल संग्रह के लिए ही होते तथा बावड़ीनुमा होते थे। इसके तीनों ओर या चारों तरफ सीढ़ियां बनी होती ऐसे झालरे प्रायः नगरों में अधिक देखने को मिलते हैं जबकि बावड़ी व कुए आदि बस्ती से दूर निर्जन स्थानों पर रास्ते के समीप देखने को मिलते हैं।

जोधपुर में बालसमन्द गुलाबसागर, सूरसागर चोकलाव रानीसर पदमसर फतेलाव शेखावत जी का तालाब इत्यादि जलाशय व चांदबावड़ी तापी बावड़ी झालरा बावड़ी इत्यादि विशाल बावड़ियां व अनेक झालरे आज भी अच्छी स्थिति में हैं तथा उनका स्थापत्य दर्शनीय है।

आलोच्यकाल म मारवाड़ म विभिन्न प्रसिद्ध जलाशया का निर्माण हुआ उनका विवरण प्राचान ख्याता विगत एव अन्य पुस्तका म मिलता ह । उसका यहा उल्लेख किया जा रहा है—

राव मालदव न झरना चाकलाव तालाब तथा रानासर तालाब क चारा ओर परकोटा करवाया । पातालाया बेरा (कुआ) जिसे "नयसरा व "मलायाव" नाम स भी पुकारा जाता था का निर्माण करवाया । हनुमान भाखरा आर पुरान मड़ताया दरवाज के बीच मानासर तालाब बनवाया ।[८७]

महाराना सूरसिंह ने अपन नाम पर सरसागर तालाब का निर्माण करवाया जिसकी प्रतिष्ठा वि स १६६४ वशाख सुदा २ का की गयी । इसके अतिरिक्त सूरजवेरो सूरजकुड इत्यादि का निर्माण भी महाराजा सूरसिंह ने करवाया ।[८८]

महाराजा जसवन्तसिंह के समय म वि स १७११ म पुष्करणा आसनाय की माता न जाधपुर से चार मील दूर सालावास क मार्ग पर एक बावड़ी बनवाई जो व्यास री बावड़ा क नाम से प्रसिद्ध ह । खटुकडी क पास वि.स १७११ मे हा मुहणात नैणसी ने एक बावडी का निर्माण करवाया । चादपाल के बाहर पचोली मोहनदास न एक बावड़ी बनवाई ।[८९] महाराजा अजातसिंह की राना जोडेची जा ने चादपोल क बाहर झालरा बनवाया ।[९०]

तिवारी सुखदेव ने वि.स १७७६ म जाड़चा जी के झालर क पास भडारी रुगनाथ न रामेश्वर जी के मदिर के पीछे बावड़ा इसक समीप ही पुष्करणा ब्राह्मण रिणछोडदास न एक कुआँ (पुराहित जी का कुआँ) व नाजर दालतराम न दाऊजी के मन्दिर के पीछे एक बावडा का निर्माण करवाया ।[९१] महाराजा अभयसिंह ने अभयसागर तालाब[९२] का पक्का पट्टा बनवाया जिसम ३ लाख रुपय व्यय हुए । उदयमदिर म स्थित नवलखा झालरा तालाब देवकुड गोल क ऊपर पक्का बधवाया । जोधपुर दुर्ग मे चोकलाव म पहाड़ा के भातर सुरग लगाकर कुआँ खुदवाया । चोखा गाव म बगीचे क अदर कुआ बनवाया ।

महाराजा बखतसिंह ने बखतसागर तालाव वि स १८०० में खुदवाना प्रारभ किया पर पूरा नहा बनवा सके । महाराजा विजयसिंह का पासवान गुलाबराय ने महिलाबाग मे एक झालरा व अपने पुत्र तेजसिंह के नाम पर तजसागर[९४] तथा स्वय अपने नाम पर वि स १८४५ मे गुलाबसागर बनवाया ।[९]

मदिरा व जलाशया क निर्माण म धार्मिक भावना का महत्व सदा रहा ह आर इस भावना से प्रेरित होकर ही अधिकाश मारवाड़ वासिया न उनका निर्माण करवाया । जलाशया क निर्माण म सार्वजनिक हित भा स्पष्ट दृष्टिगोचर होता ह । यहा यह बात भा उल्लेखनीय ह कि मध्यकालीन मारवाड़ का साधन सम्पन्न महिलाआ की मदिर आर

जलाशयो के प्रति विशेष रुचि रही तथा कई मन्दिरों व जलाशयों के निर्माण का श्रेय भी उन्हीं को जाता है।

स्मारक एवं मूर्तिकला—

स्मारकों के निर्माण में राजस्थान प्राचीनकाल से ही अग्रणी रहा है। स्थानीय शासकों सामन्तों एवं सम्पन्न वर्ग के लोगों की स्मृति में यहां स्मारक बनते रहे हैं साथ ही धर्माचार्यों के स्मारक बनाने की परम्परा भी रही है।[96] मध्ययुगीन स्मारक स्तम्भों पर योद्धा और उसके युद्ध सम्बन्धी सामान तथा उसके पीछे होने वाली सतियों का अंकन रहता था। १७ वीं शताब्दी तक ऐसे स्मारक स्तम्भ उपलब्ध हुए हैं। मुगलों से सम्पर्क होने के बाद छतरियां बनाने का प्रचलन हो गया जिसमें मुगल शैली की प्रधानता दी जाने लगी।[97]

मारवाड़ में ऐसे स्मारकों का बाहुल्य है। स्मारक स्तम्भों में सती स्मारक स्तम्भों की अधिकता है। छतरियों का प्रचलन हालांकि यहां बाद का माना गया है परन्तु इसका मूल हम प्राचीनकाल में निर्मित स्तूप चैत्य में ढूंढा जा सकता है। स्तूप और चैत्य दोनों का उद्देश्य प्रायः एक सा था दोनों ही अतिप्राचीन काल से मृत्यु और शव समाधि से सम्पर्क रखते थे।[97] स्तूप पहले केवल मृत्यु सम्बन्धी थे और उनका उपयोग शव अथवा मृतक की अस्थियां रखने में होता था।[98] इसी आधार पर यहां देवल थड़े छतरियां समाधि चबूतरे व सती स्मारक स्तम्भों का निर्माण भी इसी परम्परा में यहां हुआ। सती स्मारक छतरियां देवल आदि मृतक के दाह स्थल पर स्मारक के रूप में बनते थे।

किसी व्यक्ति की स्मृति में तीन प्रकार के भवन बनाये जाते हैं —थड़ा छतरी व देवल। देवल स्मारक भवनों में सर्वश्रेष्ठ होता है। यह अधिकतर तीन मंजिल का होता है जिसमें विभिन्न कक्ष सीढ़ियां व छज्जे बनाये जाते हैं और सम्पूर्ण भवन में पच्चीकारी का काम खूब रहता है इनका निर्माण मंदिर की ही शैली में किया जाता है। मन्दिर की तरह इसमें लम्बा शिखर होता है। अन्तर केवल इतना ही रहता है कि मन्दिर देवताओं को समर्पित होते हैं तथा देवल उस व्यक्ति को जिसकी स्मृति में उसका निर्माण किया जाता है।

मंडोर में मारवाड़ के कई शासकों के देवल बने हैं।[99] अजीत सिंह अपने पूर्वजों की भांति अपने पिता जसवन्त सिंह की स्मृति में एक देवल सन् १७१८ ई० में मंडोर में बनाया।[100] साधारणतया देवल उसी स्थान पर बनवाया जाता है जहां स्वर्गीय व्यक्ति का दाह क्रिया होता है परन्तु जसवन्त सिंह की मृत्यु चूंकि पेशावर में हुई थी अतः इसका निर्माण दाह क्रिया के स्थान पर नहीं हुआ। जसवन्त सिंह का देवल भूमि से लगभग सात फीट ऊंचा विस्तृत वर्गाकार चबूतरे पर स्थित है। यह तीन मंजिला है परन्तु सीढ़ियां केवल नीचे की मंजिल के लिए ही हैं दूसरी मंजिल पर सामने तथा दोनों ओर छज्जे बने हुये हैं। देवल में स्तम्भों का प्रयोग बहुलता से किया गया है परन्तु स्तम्भ बिल्कुल सादे

बने हुये हैं। स्थान के परिमाण के अनुसार इसके दो भाग हैं सभामण्डप तथा भीतर का कक्ष दाह स्थान का बना। सभामण्डप के ऊपर गुम्बद बना है तथा भीतर के कक्ष के ऊपर लम्बा शिखर बना हुआ है। इस स्थान में गुम्बद के अन्दर के भाग तथा शिखर में सुन्दर पच्चीकारी हुई है।[99]

थड़ा भी किसी व्यक्ति की स्मृति में उसके दाह क्रिया स्थल पर बनाया जाने वाला स्मारक है। इन स्मारकों में स्वर्गीय व्यक्ति की नियमित पूजा पाठ की व्यवस्था होती है और उस व्यक्ति को देवयोनि में माना जाता है।

छतरियाँ भी एक ऐसा ही स्मारक है जो व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात उसकी यादगार में निर्मित होता है। छोटे और बड़े होना ही रूपों में यहां छतरियाँ मिलती हैं जो व्यक्ति की आर्थिक स्थिति के अनुसार बनती थीं। छतरियों के रचना शिल्प में प्राय समानता दृष्टिगत होती है उनमें प्राय एक वर्गाकार चबूतरा बनाया जाता है जिस पर एक छोटा वर्गाकार अथवा गोलाकार चबूतरा रहता है और उस पर गोलाई से चार छः आठ अथवा बारह खम्भों पर आश्रित गोलाकार गुम्बद बना रहता है। ये गुम्बद मन्दिरों के सभामण्डप पर बने हुए गुम्बदों के समान ही होते हैं इनके खम्भे विभिन्न कोणीय आकृतियों तथा गोलाकृतियों में बने होते हैं। खंभों पर विभिन्न रेखाकृतियों द्वारा अलंकरण भी किया जाता रहा है। गुम्बदों के ऊपर आमलक भी बनाया जाता था। गुम्बदों की छत प्राय सादी हुआ करती थी किन्तु कभी कभी छतों में भी विभिन्न आकृतियां उत्कीर्ण की जाती थी। कहीं कहीं छतरियों में सम्बंधित व्यक्ति की आकृति से युक्त पाषाण पट्टिका लगी मिलती है इन पाषाण पट्टिकाओं के अधोभाग पर लेख भी उत्कीर्ण करवा दिया जाता था।[10] यह लेख स्वर्गीय व्यक्ति के सम्बन्ध में होता तथा जिसके स्वर्गवास की तिथि मिति अंकित होती है और उस छतरी के निर्माणकर्ता का भी कहीं कहीं नामोल्लेख होता है। ये स्मारक अभिलेख सम्बंधित व्यक्ति या सती के ऐतिहासिक प्रमाण के रूप में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। मेवाड़ के प्रायः सभी गांवों में तालाब की पाल पर ऐसी छतरियों का समूह देखने को मिलता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

राजसिंह कूंपावत का द्वितीय पुत्र जगतसिंह शत्रुदल से वीरता पूर्वक युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ जिसका स्मारक हरसोलाव नामक गांव के गुणगार तालाब पर बना हुआ है। इसके पीछे उनकी तीन रानियाँ सती हुई। पुतली के शिलालेख में संवत् १७०७ पोष सुदि ८ शुक्रवार के दिन राजसिंह के पुत्र जगतसिंह के पीछे महासती रांणडी लालबनी महासती के प्राहा नरूका फलकवरी महासती सिसोदणी लाडकुवरी के सती होने का उल्लेख है।[10]

आसोप ठाकुर नाहरखान का देहावसान वि. स. १७११ में हुआ। आसोप में नाहरखान की स्मृति में आसोप ग्राम में विशाल छतरी का निर्माण करवाया गया।[106] आसोप ठाकुर नरसिंह (नाहरखान का ज्येष्ठ पुत्र) के वीरगति प्राप्त करने पर वि

में १७०२ महाराज मुकुन्द की आसोप नाम के तालाब आगर पर छतरी में गोमतियाँ बनी हुई। इस स्थान पर विशाल छतरी बना है।[105] कुँवर आसकरण के पुत्र भारतसिंह के वि. सं. १७०७ में गजसिंहपुर में जहाँ उनकी दाहक्रिया हुई वहाँ एक विशाल छतरी का निर्माण कर स्मारक बनाया गया।[106] इसी प्रकार वि. सं. १८१५ में नागौर ठाकुर कल्याण सिंह की स्मृति में नागौर के बड़े बाग में स्मारक बनाया गया।[107]

ऐसी छतरियाँ ठाकुरों और सामन्तों के अतिरिक्त सुथार, सेठ, भोमिया आदि के लिए भी बनाया जाता था। केवल हिन्दुओं में ही स्मारक बनाने की परम्परा नहीं थी अपितु मुसलमानों में भी स्मारक बनाने की परम्परा थी। शाही कब्रिस्तान हजिरा[108] कहलाता था। शाही परिवार के लोग जहाँ दफनाये जाते वहाँ पर स्मारक अवश्य बनाया जाता था। अपने प्रिय प्रभावशाली व विशिष्ट सम्बन्धी की कब्रगाह में मुगल बादशाह व नवाबों द्वारा जो स्मारक बनाये जाते वे मकबरे[109] के नाम से जाने जाते थे। सूफी सन्तों व मुसलमान फकीरों की स्मृति में बने स्मारक को दरगाह[110] कहा जाता था जिन पर की स्थानीय हिन्दू व मुस्लिम जनता समान रूप से श्रद्धा से देखती थी।

मूर्तिकला—

मारवाड़ की स्थापत्य कला में मूर्तिकला का सामंजस्य देखने को मिलता है। विवेच्यकाल में यहाँ सोने, चाँदी व पत्थर की मूर्तियाँ निर्मित होने के उदाहरण मिलते हैं। चाँदी जैसी बहुमूल्य धातु मूर्तियों का निर्माण यहाँ के शासकों व अति सम्पन्न लोगों तक ही सीमित था। इसी प्रकार पत्थर की मूर्तियों में संगमरमर की मूर्तियाँ विशेष उल्लेख्य हैं। महाराजा अजीतसिंह की रुचि केवल स्थापत्य कला तक ही सीमित नहीं थी। उसके शासनकाल में हमें मूर्तिकला के भी उदाहरण मिलते हैं उसने पत्थर व चाँदी की कई मूर्तियाँ बनवाई थी। किले में मुरलीमनोहर जी की चतुर्भुज हिंगुलाजमाता महादेव तथा पार्वती की पूरे कद की चाँदी की मूर्तियाँ सन् १७१०-२० में बनवाई थी।[111] मंडोर में भैरूजी की मान की नवीनीकरण करवाया।[112] भैरूजी की बावड़ी की मरम्मत करवाया और गणेशजी की छोटी मूर्ति के स्थान पर बड़ी मूर्ति की स्थापना करवाई। इसके साथ काला व गोरा भैरू की नई मूर्तियाँ भी स्थापित की गयी। भैरूजी की साल के निकट ही वीरों की साल है जिसे तैंतीस करोड़ देवी देवताओं की साल भी कहते हैं। यह एक लम्बा बरामदा है जिसमें पहाड़ी को काटकर १६ आदमकद मूर्तियाँ बनाई गई हैं। इनमें से दो देवियों की चामुण्डा तथा महिषासुर मर्दिनी की और एक श्री गुसाई की शेष में से मल्लिनाथ पाबू, रामदेव हड़भू, गोगा और मेहा नामक छः वीरों[113] की मूर्तियाँ हैं। शेष सात ब्रह्मा सूर्य रामचन्द्र कृष्ण महादेव जलन्धरनाथ तथा गणेश की।[114]

इस साल के निर्माण के विषय में मतभेद है। पं. रामकर्ण आसोपा[115] के अनुसार इस सम्पूर्ण साल का निर्माण महाराजा अजीतसिंह ने ही करवाया था किन्तु कुछ विद्वान

इस अभयागम द्वारा निर्मित बनाते है।[116] ये विश्वकर्मामत के अनुसार नाग की मूर्तियों का निर्माण अजीतसिंह के समय हुआ था तथा देवताओं की मूर्तियां अभयसिंह ने बनवाई थी।[117] संभवतः यह मतभेद इसलिए उत्पन्न हुआ कि इसमें नाग को व देवताओं की साल की नाग की साल व देवताओं की मूर्तियां बनी हुई है यदि साल को भागों में विभाजित करके देखा जाय और यह मान लिया जाय कि महाराजा अजीतसिंह व अभयसिंह ने प्रत्येक साल को अलग से निर्माण करवाया तो समस्या का समाधान हो सकता है। यह समस्या इसलिए उत्पन्न हुई होगी कि इस साल में एक [illegible] है और नाग की तथा देवताओं की साल का विभाजन [illegible] नहीं होता।

इन मूर्तियों में प्रत्येक मूर्ति लगभग पन्द्रह फीट ऊँची है और इनमें सौन्दर्य के स्थान पर शौर्य व वीरत्व पर अधिक ध्यान दिया गया है। इन प्रतिमाओं की आकृति निजी विशेषता रखती है। इनमें वीरता एवं शौर्य दिखाई देता है इसके अतिरिक्त नाग के कपड़ों की सलवटों का प्रदर्शन चेहरे की बनावट आभूषण तथा मुकुट इनकी कुछ अन्य विशेषताएं हैं परन्तु मूर्तियों में सूक्ष्म विस्तारों तथा भावात्मक पक्ष की कमी है कलात्मकता का नितान्त अभाव है।[118] यह निजी अवधारणा है जिसे सत्य मानकर स्वीकार नहीं किया जा सकता। मारवाड़ की संस्कृति और सामाजिक परिवेश से हटकर देखने से ही किसी अनभिज्ञ को इनमें भावात्मकता व कलात्मकता का अभाव दृष्टिगोचर होता है।

मारवाड़ में स्मारक निर्माण के साथ ही लोक मूर्तिकला का उद्भव हुआ था। विशेषकर छतरियों व स्मारक स्तम्भों के रूप में इनका विकास हुआ। लोक प्रतिमाओं के अंगों की सुडौलता तथा अंग प्रत्यंग की रचना पर यहां विशेष ध्यान नहीं दिया गया। इनका निर्माण लोकभावना से अधिक निकट था इसलिए लोक प्रतिमाएं स्थानीय लोगों की भावना प्रदर्शित करती है। शासकों एवं सामन्तों के स्मारकों में कलात्मकता का पुट देखने को मिलता है। क्योंकि लोक प्रतिमाएं आम आदमी के मान्यतापूर्ण जीवन को चित्रित करती है।

शासकों सामन्तों व धनी के बड़े नागरिकों के स्मारकों में भी लोक प्रतिमाओं की भांति पाषाण पट्टिका पर इनकी प्रतिमाएं उत्कीर्ण की जाती थी। परम्परा यह रही है कि एक व्यक्ति के साथ जितनी पत्नियां और रखैल सती होती थी उस पुरुष प्रतिमा के साथ उतनी ही नारी प्रतिमाएं भी उत्कीर्ण की जाती थी। पुरुष प्रतिमा को अश्वारुढ़ अथवा सिंहासनारूढ़ दिखाया जाता था। कभी कभी पुरुष प्रतिमा को स्थानक (खड़ा हुई) भी बनाया जाता था। सतियों को समस्त आभूषणों से युक्त प्रदर्शित किया जाता था क्योंकि सती होते समय व वैधव्य वेश के स्थान पर सुहागिन के समान वस्त्राभूषणों सहित सती हुआ करती थी। ये लोक प्रतिमाएं स्थानीय वेशभूषा एवं शस्त्रास्त्र की जानकारी की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।[119]

इसके अतिरिक्त यहां मिट्टी की मूर्तियों का निर्माण परम्परा भी थी किन्तु इसका प्रचलन कम व ग्रामीण जनता तक ही सीमित था। मृत्तिका मूर्तियों में ईसर व गणगौर की मूर्तियां विशेष रूप से प्रचलित थी। लकड़ी में निर्मित ईसर और गणगौर की मूर्तियां भी यहां बनती थी।

इस प्रकार मारवाड़ की स्थापत्यकला मध्यकाल में दो शताब्दियों तक (१६ वीं से १८ वीं) संघर्षपूर्ण युग में भी पल्लवित होती रही। कला के विकास हेतु शान्ति आवश्यक है। विवेच्यकाल में यह स्थिति नहीं रही विपरीत परिस्थितियों में भी यहां के शासकों की रुचि स्थापत्य की ओर बनी रही तथा उसके विकास को उन्होंने यथासम्भव प्रयास किया। यहां की स्थापत्य कला प्रत्येक युग की राजनैतिक हलचल से अत्यधिक प्रभावित हुई साथ ही यहां की आर्थिक स्थिति का भी उस पर प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

यहां की स्थापत्य कला का दिग्दर्शन यहां के दुर्गों विभिन्न वर्ग के आवास गृहों मन्दिरों मस्जिदों, बाग बगीचियों विभिन्न प्रकार के जलाशयों (तालाब, बावड़ियां झालरों) स्मारकों (देवल थड़े छतरियां स्मारक स्तम्भ) में होता है। यहां के दुर्ग राजपूतों के अद्भुत शौर्य और वीरत्व के प्रतीक, विभिन्न वर्गों के आवास गृह यहां के सामाजिक परिवेश व सांस्कृतिक विशेषता के उदाहरण मन्दिर व मस्जिदें यहां की जनता की धार्मिक आस्था के केन्द्र जलाशय लोक कल्याण की भावना के अभिव्यक्ति स्थल तथा स्मारक अपनत्व के मूर्तिमान स्वरूप के रूप में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं।

मारवाड़ के स्थापत्य में मुगल प्रभाव भी दृष्टिगत होता है जो मुगलों के सम्पर्क के बाद यहां विशेष रूप से स्वीकारा गया पर इसका यह अर्थ नहीं कि यहां की अपनी मौलिक शैली व रचना शिल्प को पूर्ण रूप से त्याग कर दिया गया हो। मुगल प्रभाव यहां इतना कभी हावी नहीं हो सका कि यहां की निजी शिल्पगत विशेषताओं की पहचान मिटा दे। नाना रचना विधानों के सुन्दर सामंजस्य व मिश्रण से यहां की कला में अनूठा नवीनता का [illegible] भव अवश्य हुआ।

कहने [illegible] तात्पर्य यह कि यहां का स्थापत्य मारवाड़ के सांस्कृतिक धरातल से जुड़ा रहा। बाह्य [illegible] भावों को अंगीकार करने के बावजूद भी वह यहां की मौलिक विशेषताओं की अभि[illegible]व्यक्ति भली प्रकार करने में सक्षम है। मंदिर, मस्जिदें व जलाशयों का निर्माण यहां की धार्मिक लोकोपकारक व जनकल्याण की भावना से सम्बद्ध रहा है। स्मारकों तथा मूर्तिकला का भी यहां की लोकधारणा व विचारधारा से गहरा सम्पर्क रहा उसमें यहां की सांस्कृतिक विशेषताओं व ऐतिहासिक उपाख्यानों की अभिव्यक्ति को जो मूर्तिमान स्वरूप प्रदान किया गया है वह विशिष्ट और विश्वसनीय है।

चित्रकला—

चित्रकार द्वारा बहिर्जगत की किसी वस्तु या स्वरूप अथवा अन्तर्जगत के भावों को जो अंकन रेखा और रंग के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है, वह चित्र कहलाता है।

यत रायकृष्णदास ने ठीक ही लिखा है कि किसी एक तल पर जो सम या समतल पानी तल अथवा अन्य माध्यम में घोल अथवा सूख एक वा एकाधिक रंग को रखा गया रंगसाजी द्वारा किसी रमणीय आकृति के अंकन को और उसी प्रसंग में निम्नोन्नत तथा एकाधिक तल और पहल स्थान का चित्रण कहते हैं और ऐसी प्रस्तुत वस्तु को चित्र। उक्त आधारभूत सतह मुख्यतः भित्ति पत्थर काष्ठ पकाया मिट्टी के पात्र व फलक हाथीदांत चमड़ा कपड़ा ताडपत्र या कागज होता है।[१२०]

भारतीय चित्रकला के मूल सिद्धान्त षडांग (छः अंग) का वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में उल्लेख किया है।[१२१]

रूपभेदा प्रमाणानि भावलावण्ययोजनाम्।
सादृश्य वर्णिकाभंग इति चित्र षडांगकम् ॥

अर्थात् प्रत्येक चित्र में रूपभेद (बनावट का स्वरूप) प्रमाणानि (आकार वगैरा) भावलावण्य (भावपूर्ण सौन्दर्य) योजनानि (चित्र की आयोजना वगैरा), सदृश्य (अनुरूपता) और वर्णिकाभंग (रंगों का संयोजन) इन छः अंगों का भारतीय चित्रकला में निर्वाह होता रहा।

भारतीय चित्रकला संसार की चित्रकला में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अजन्ता के जगत् प्रसिद्ध भित्तिचित्र इस कला की अमर धरोहर है। बौद्ध और जैन कलाओं तथा पाल गुजरात अपभ्रंश राजस्थानी मुगल पहाड़ी आदि शैलियों ने भारतीय चित्रकला के गौरव को ईसा पूर्व दूसरी शती से आज तक सुरक्षित रखा है। चित्रकला के इतिहास की इस शृंखला में अजन्ता की परम्परा को निभाने वाली राजस्थानी चित्रकला का अपना निजी सांस्कृतिक परिवेश और इतिहास है।[१२२]

राजस्थान की चित्रकला के नामकरण पर विद्वानों में मतभेद है। कोई इसे राजपूत चित्रकला और कोई राजस्थानी चित्रकला के नाम से पुकारते हैं। आनन्द कुमार स्वामी ब्रेसिल ग्रे वाचस्पति गैरोला और पर्सीब्राउन आदि विद्वान् इसे राजपूत पेंटिंग के नाम से सम्बोधित करते हैं। आनन्द कुमार स्वामी ने राजपूत पेंटिंग [१२३] नामक अपनी पुस्तक में राजस्थानी चित्रकला का वैज्ञानिक विभाजन करते हुए उन्होंने इसे दो भागों में बांटा— (१) राजस्थानी अर्थात् राजपूताने से सम्बन्धित तथा (२) पहाड़ी। अर्थात् जम्मू, कांगड़ा गढ़वाल बसोली चम्बा आदि पहाड़ी रियासतों से सम्बन्धित। इन रियासतों के अधिकारी प्रमुखतया राजपूत राजा होने के कारण इसे राजपूत चित्रकला के नाम से अभिहित किया गया। राजपूताना विभिन्न वंशों रियासतों का केन्द्र था तथा अनेक राजपूत शासकों द्वारा शासित इन रियासतों में राजपूत चित्रकला का विस्तार था अतः राजपूत पेंटिंग नाम सार्थक है।[१२४] वाचस्पति गैरोला[१२५] ने राजपूत शैली के अन्तर्गत केवल राजस्थान की चित्रकला को ही स्वीकार किया है जबकि ब्रेसिल ग्रे[१२६] ने इसका विस्तार

बुन्देलखण्ड से लेकर गुजरात तथा अनेक पहाड़ी राजपूत रियासतों तक माना है। आनन्दकुमार स्वामी[127] के अनुसार राजस्थानी चित्रकला का विस्तार बीकानेर से गुजरात की सीमा तक और जोधपुर से ग्वालियर और उज्जैन तक रहा है तथा आमेर, ओरछा, उदयपुर, बीकानेर, उज्जैन आदि कला केन्द्र रहे हैं।

रायकृष्णदास जी आनन्दकुमार स्वामी के मत से सहमत नहीं हैं उनका कथन है कि डॉ. स्वामी ने अर्वाचीन भारतीय चित्रकला के प्रमुखतः दो वर्ग माने हैं। (१) राजपूत शैली और (२) मुगल शैली। किन्तु राजपूत शैली मानने की कोई गुंजाइश नहीं है। यद्यपि राजपूत जाति एक शासक जाति थी तो भी एक ऐसी जाति का प्रभाव समष्टि रूप से कला पर नहीं पड़ सकता जिसके देश भर में भिन्न भिन्न केन्द्र हों।[128]

राजस्थानी चित्रकला नामकरण पर बल देने वाले कला ममज्ञों में सर्वश्री रायकृष्णदास, रामगोपाल विजयवर्गीय, डॉ. मोतीचन्द्र, कार्ल खण्डालवाला, के. संग्रामसिंह, आनन्दकृष्ण प्रभृति विद्वानों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।[129]

इस प्रसंग में डॉ. वी.एस. भार्गव का यह कथन द्रष्टव्य है[130] अनेक विद्वान राजपूत चित्रकला और राजस्थानी चित्रकला को पर्यायवाची मानते हैं और इसलिए राजस्थान के विभिन्न भाषायी राज्यों में उत्पन्न और विकसित हुई कला को राजस्थानी चित्रकला न कहकर राजपूत चित्रकला कह देते हैं। ब्राऊन आदि विद्वान इसी भ्रामक बात के शिकार है। ब्राउन का तो ख्याल था कि केवल राजपूत राजाओं अथवा उनके जमींदारों के संरक्षण में ही चित्रकला पनपी थी पर वास्तव में राजस्थान में चित्रकला को सेठ साहूकारों तथा धार्मिक संस्थाओं, कला प्रेमियों और साधारण लोगों के द्वारा भी प्रोत्साहन दिया गया था इसलिए राजपूत चित्रकला कहना युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता। वास्तव में राजस्थान में चित्रकला की जिस शैली का उत्कर्ष और विकास हुआ उसे राजस्थानी चित्रकला कहकर पुकारना चाहिए।[130]

इस प्रकार राजस्थान की चित्रकला को लेकर उसके नामकरण के विषय में विद्वानों में मतभेद है पर यहाँ की चित्रकला को राजपूत शासकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता अतः यहाँ की चित्रकला को यदि राजपूत पेंटिंग नाम दिया जाता है तो वह आधारहीन नहीं है और इस क्षेत्र की सम्पूर्ण कला को व्यापक आयाम प्रस्तुत करने के लिए यदि राजस्थानी चित्रकला कहकर पुकारा जाता है तो भी कोई विशेष अन्तर नहीं पडता क्योंकि राजस्थानी चित्रकला की विवेचना राजपूत पेंटिंग के बिना पूर्ण नहीं कही जा सकती।

राजस्थानी चित्रकला को कोई अपभ्रंश[131] कोई गुजराती[132] और कोई जैन शैली से प्रभावित हो नहीं पोषित और उत्पन्न मानते हैं। सर यदुनाथ सरकार[133] के अनुसार जब राजपूत राजा मुगल बादशाहों के संपर्क में आए तब राजस्थानी चित्रकला का जन्म

हुआ। लेकिन यह धारणा ऐतिहासिकता के प्रतिकूल है। राजस्थान में (पाषाण युग) प्रागैतिहासिक काल से ही चित्रकारी होती रही है।[१२४] तिब्बती इतिहासकार तारानाथ ने मरुप्रदेश (मारवाड़) में ७ वी शती में श्री रंगधर (श्रृंगधर) नामक चित्रकार की चर्चा की है।[१३५] पाचवी शती से १२ वी शती तक का काल राजस्थान के इतिहास में महत्वपूर्ण युग था अतः यहाँ अन्य कलाओं के उत्थान के साथ चित्रकला भी विकास पाती रही।[१३६]

इस प्रकार मुगलकाल से इसका प्रारम्भ मानना युक्तिसंगत नहीं है क्योंकि उसके पूर्व भी यहा चित्रकला की सुदीर्घ परम्परा रही है। यह बात अवश्य स्वीकार की जा सकती है कि मुगल सम्पर्क से राजस्थानी चित्रकला में कुछ नये परिवर्तन स्वीकृत हुए जिससे उसमें नवीनता आई। इसका कारण यह था कि यहा के शासकों का मुगल दरबार में निरन्तर आना जाना होता रहा जिससे राजस्थानी चित्रकला में मुगल प्रभाव अधिकाधिक बढ़ता गया। फलस्वरूप राजस्थान की शास्त्रीय शैली की पूर्व प्रधानता समाप्त होने लगी तथा चित्रकला की मुगल तकनीक ग्रहण करने के प्रति रुचि बढ़ने लगी।[१३७] संभवतः इसीलिए कतिपय विद्वानों[१३८] को भ्रान्ति हो गयी कि राजपूत शैली का जन्म मुगल चित्रकला से हुआ। मुगल शैली का प्रभाव होने के बावजूद भी यहा की चित्रकला ने अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखा।[१३९]

राजस्थानी चित्रकला का जन्म राजस्थान प्रान्त मे ही हुआ। अन्य भारतीय चित्रशैलियों से प्रभावित होती हुई वह स्वतन्त्र रूप से राजस्थान के चारों प्रदेश में पल्लवित हुई। राजस्थान के जितने भी प्राचीन नगर, राजधानिया तथा धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतिष्ठान हैं वहा चित्रकला पनपी और विकसित हुई। विभिन्न रियासतों के चित्रकारों ने अपने तौर तरीकों से जो चित्र बनाये वे अपनी स्थानीय विशेषताओं के प्रतीक बन गये। इस प्रकार अनेक शैलियों का जन्म हुआ।[१४०]

मेवाड़ मारवाड़ बीकानेर किशनगढ़ जयपुर, हाड़ौती इत्यादि राजस्थान की प्रमुख शैलियाँ हैं।[१४१] डा मोतीचन्द्र मेवाड़ किशनगढ़ और बूंदी शैली को ही प्रमुख मानते हैं। हरमन गोट्ज कार्ल खण्डालवाला रामगोपाल विजयवर्गीय आदि विद्वानों ने मारवाड़ बीकानेर, कोटा और जयपुर शैली का वर्गीकरण और जोड़ दिया है। कु संग्रामसिंह ने राजस्थानी चित्रकला को भौगोलिक दृष्टि से चार भागों में विभाजित किया है[१४२]-

१ मेवाड़ (उदयपुर, नाथद्वारा प्रतापगढ़ आदि)

२ मारवाड़ (जोधपुर, बीकानेर, नागौर किशनगढ़ आदि)

३ हाड़ौती (बूंदी कोटा)

४ ढूंढाड़ (जयपुर, अलवर, उणियारा)

जोधपुर शैली (मारवाड़ शैली) —

प्राचीन मारवाड़ एवं राठौड़ वंश जोधा द्वारा स्थापित जोधपुर राज्य और यहाँ के विभिन्न ठिकानों में पल्लवित होने वाली चित्रकला मारवाड़ या जोधपुर शैली के नाम से जानी जाती है।[६६] मेवाड़ की भांति मरुप्रदेश ने भी अपनी शैली की परम्परा का निर्वाह किया है। मारवाड़ में भी अजन्ता शैली का प्रवेश लगभग उसी समय हुआ था जिस काल में वह मेवाड़ में प्रविष्ट हुई थी।[६६] मारवाड़ में जो हमें प्रारंभिक चित्र अपनी शैली और स्वरूप में अजन्ता के चित्रों से मिलते जुलते हैं। इसका पूर्व रूप मंडोर के द्वार की कला से आंका जा सकता है।[६]

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि ७वीं शताब्दी में मरुप्रदेश में शृंगधर नामक चित्रकार हुआ था। इससे मारवाड़ की पूर्व परम्परा का ज्ञान होता है।[६]
यह परम्परा अनवरत रूप से विकसित होती रही और कालान्तर में यहाँ प्रचलित चित्रशैली पर अनेक जैन ग्रन्थों को चित्रित किया गया। १०००ई से १ ०० ई तक इस शैली के आधार पर ताड़पत्र और भोजपत्र पर चित्रित चित्र कल्पसूत्र व अन्य ग्रन्थों की कुछ प्रतियाँ महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश फोर्ट जोधपुर तथा जैसलमेर के ज्ञान भण्डार में सुरक्षित है।[६] इस काल में यहाँ की चित्रकला पर जैन शैली का प्रभाव अत्यधिक रहा।[६६]
इसके पश्चात कुछ साल तक मेवाड़ी शैली की यहाँ की चित्रकला पर प्रभाव रहा।

मारवाड़ की चित्रकला को सांस्कृतिक परम्परा एवं यहाँ के कलात्मक परिवेश को नया रूप देने का श्रेय राव मालदेव[६७] (१ ३१ १ ०) को है। राव मालदेव ने मारवाड़ की शौर्य युग प्रधान कर चित्रकला के क्षेत्र में न केवल मेवाड़ शैली के प्रभाव को कम किया वरन् मारवाड़ की स्वतन्त्र शैली को पुनः प्रचलित किया।[७०] इसलिए कुछ विद्वान[७] मारवाड़ की चित्रकला का प्रारंभ ही राव मालदेव से मानते हैं। इस शैली के आधार पर १० १ ई में उत्तराध्ययन सूत्र चित्रित किया गया जो बड़ौदा म्यूजियम में सुरक्षित है। राव मालदेव की कलात्मक रुचि की अभिव्यक्ति जोधपुर के मेहरानगढ़ में चोकेलाव के महल में चित्रित चित्रों में हुई है जहाँ राम रावण के युद्ध तथा सप्तशती के दृश्यों को अवतरित किया गया है। किन्तु मोटाराजा उदयसिंह (१ ३ १) द्वारा मुगल सम्राट अकबर से सन्धि किए जाने के समय से मारवाड़ की चित्रकला पर मुगल प्रभाव का प्रारंभ होता है।[७]

राजा सूरसिंह (१ १६२० ई) के समय के अनेक चित्र आर्ट एण्ड पिक्चर गैलरी बड़ौदा में तथा के सवाई मानसिंह जयपुर के निजी संग्रहालय में उपलब्ध हैं। १६१ ई में चित्रित भागवत पुराण मारवाड़ की अनेक स्थानीय विशेषताओं से युक्त है।[७]
इसमें कृष्ण अर्जुन की आकृतियाँ स्थानीय शैली की हैं जबकि उनकी वेशभूषा मुगलों के समान है। गोपिकाओं के चित्रों में उनकी वेश भूषा मारवाड़ी है जबकि उनके आभूषण

मुगलो का तरह क ? इस ग्रन्थ म पाटशाला और आख मिचोना क दृश्य स्थानाय ह।[१५६] नाला मास्र क चित्र म स्थानाय शला के साथ मुगल शला का प्रभाव भा झलकता ?। इसम चित्रित ढाला की पगड़ी जहागारा शला की ह लकिन सम्पूर्ण चित्र स्थानाय शला का मालिकता म युक्त ह। स्वय महाराना सूरसिह क्र जा चित्र उपलब्ध हाता ह वह भा मुगल शला का ह। १६१८ २८ ई म बना बिलावल रागिना चित्र परम्परागत शला का ह जिन स्थापत्य म महराब का प्रयाग मुगल शला के आधार पर हुआ ह।[१५६] कुछ चित्र एस भा मिलत ह जा विशुद्ध रूप स स्थानाय शला म निर्मित ह तथा मुगल प्रभाव स सर्वथा अछूत ह। इसस यह ज्ञात हाता ह कि मारवाड की चित्रकला न मुगल शला का स्वाकारत हए अपना निजा विशपता व मालिकता का पूर्ण परित्याग नहा किया। १७ वा शता क प्रारभ म मारवाड़ शला क अनक चित्र बन हुए मिलत ह जिनम मुगल प्रभाव का छाप हात हए भा मालिकता उल्लखनाय ह।[१५७]

राजा गजसिह (१६१० १६३८ ई) तथा महाराना जसवतसिह (१६३८-१६७८ ई) क काल म मुगल शला का प्रभाव अधिक दृष्टिगाचर हाता ह। महाराना जसवतसिह क अपन ४० वर्षा क शासनकाल का अधिकाश समय मुगल दरबार म बाता अत उनक समय म मुगल शला का विशष प्रात्साहन मिला। अपना वतन जागीर स लम्बे समय तक दूर रहन तथा मुगल दरबार क मनसबदार क रूप म अपना महत्वपूर्ण सवाए दन क उपरान्त भा महाराना जसवतसिह न मुगल कलाकारा का जाधपुर म आमत्रित किया तथा स्थानाय चित्रकारा का राज्याश्रय दकर चित्रकला क विकास म यागदान दिया।[१५८] १६६२ ६३ ई क लगभग निर्मित महाराजा जसवतसिह का एक चित्र जा बडादा म्यूजियम म सुरक्षित ह इसम उनक सिर पर दक्षिण भारताय पगडा चित्रित की गया ह। यह समय उनक दक्षिण भारत क अभियान का रहा ह अत दक्षिण भारताय पगडी का चित्रण हुआ ह। चित्र म रगा का चयन आभूषणो का बनावट वेश भूषा पृष्ठाकन के भवन व उपवन का सजावट हुक्का आदि जहागीर क काल की परम्परा क अनुरूप है।[१५९]

इसा प्रकार १६४० ई के आस पास बना महाराजा जसवतसिंह का चित्र भा इसी शला म निर्मित ह जिसम उन्ह शाहा दरबार की पाशाक पहन हुए तथा हाथ म फूल लिय हुए दर्शाया गया है। पृष्ठभूमि म सफद सगमरमरा स्थापत्य तथा बाग का सजावट मुगलशला जेसा हे परन्तु स्त्रिया का वश भूषा मारवाडा ह। चमकदार रगो से युक्त यह चित्र बड़ा आकर्षक ह।[१६०] इस समय क बन चित्रा के विषय विभिन्न है। तत्कालान समय म प्रचलित प्रम कथाआ साहित्यिक कृतिया पर आधारित चित्र विभिन्न ऋतुआ का चित्रण (बारहमासा) आर विभिन्न राग रागनिया (रागमाला) क अतिरिक्त धार्मिक विषय भागवत एव पचतत्र का भी चित्रित करन का प्रयास किया गया। इसक अलावा जानवरा क अकन म विशपतया ऊट आर घाड़ा का अकन तथा रगा म लाल पाल काल

का वर्णन कम किया गया। यदि हुआ भी ता उसम कृष्ण का वह सुकुमार चित्रण नही मिलता ना झगडा व यदा का चित्र शलिया म मिलता ह।[१६८] व्यक्ति चित्रो का भी निमाण जारी रहा। महाराजा अजातसिह एव विभिन्न ठाकुरा आर जागारदारा तथा उनक रगागिया क कई चित्र मिलत ह। राठाड़ दुर्गादास चित्रकारा का सर्वाधिक प्रिय था। व्यक्ति चित्रा क अतिरिक्त पशु-पक्षिया का भी चित्रण किया गया इनम गाय व ऊटा का चित्रण सर्वाधिक हुआ ह। गाड माट भर हुए पुट्ठा स युक्त एव अलकरण स सज्जित हात थ। चित्रा की पृष्ठभूमि म प्रकृति क विभिन्न उपकरणा सरिता सरावर, उद्यान तथा भवना का सुन्दर छटा दखन को मिलती ह। वृक्ष म आम का चित्रण सर्वाधिक हुआ ह।[१६९]

मारवाड़ क चित्रकार लम्ब कद का जा अधिक आकर्षक प्रतात हाता थी आकृतिया बनात थ। इन चित्रा म लम्बी आर सर्जादा आख तथा काना तक कशा का लटे चित्रित का गया ह। उनका पाशाक म सफद जामा आर सफद पायजामा तथा कमरबध दिखाए गय ह। सिर पर पगडी ह जिसम परिवर्तन आत रह ह। पगड़ा पर तुर्रा कलगी सरपच तथा शरार क दूसर भागा म नकलस पहल चित्रित किया गया हे। पुरुषा को कटार, ढाल आर तलवार लिए चित्रित किया गया है।[१७०] पुरुष आकृति सुकुमार न होकर कुछ कठार दिखाइ गई ह। इनकी आकृतिया कद म छोटा एव स्थूलकाय सिर गोल एव मस्तक पाछ का आर झुक दाढ़ा घनी व मूछे कान तक खिंचा हुई चित्रित की गई ह। वस्त्रो पर मुगल प्रभाव विशप रूप स पडा। पुरुष अधिकतर लम्ब जाम पहिन हुए अंकित किय गय। इनकी पगडा का चित्रण निजी विशेपता रखता ह ये विशष भारी एव ऊचा चित्रित का गई। कमर म लटकता तलवार तथा हाथ म भाले का चित्रण विशप रूप स मिलता ह। सभवत यह राजपूता की वीरभावना का परिणाम ह।[१७१]

स्त्रिया का अत्यधिक रुचिकर नाक-नक्शा (Feature) म चित्रित किया गया ह। इनका आकृति हृष्ट पुष्ट ह। इनक बाल लम्बे ओर घन है। भुजाए भी लम्बी ह। माथे पर बिन्दा लगा हुई बताई गई हे व हाथा म महदा ह। कमर कुछ चोडा ह। इनका लाल नील पाल आर नारगी आदि विभिन्न रगा का वेशभूषा पहन हुए चित्रित किया गया ह।[१७२] स्त्रिया का आकृति पुरुषा का अपेक्षा लम्बी दिखाई गई। उनक वस्त्रा आर आभूषणा पर भी अब मुगल प्रभाव पड़ गया। घाघर, चाटी आदि म काल फुदना का चित्रण अधिकता से किया गया। नेत्रा की खजनाकृति जोधपुर चित्र शली का निजी विशपता ह।

जोधपुर शैला क चित्रा म चटकील रगा का प्रयाग किया गया जसा कि राजपूत शला म सर्वत्र मिलता ह। इस शला क चित्रो म पाल रग का सवाधिक प्रयाग हुआ है। चित्रा क किनारे लाल एव उनकी सामान्त रखाए पील रग का बनाइ गइ ह। किनारा पर

कभी कभी पक्षियों का चित्रण भी हुआ। बहुधा गोलाकार या काले अथवा नीचे बादलों का चित्रण किया गया जिसमें लाल अथवा सुनहरे रंग से विद्युत रेखाएं सर्पाकार चल खाती हुई तथा प्रखर प्रकाश से युक्त चित्रित हुई है।[१७३]

इस प्रकार अजीतसिंह के राज्य के आरंभिक लगभग छत्तीस वर्षों में यद्यपि चित्रकला के क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं हुई परन्तु अन्तिम दो वर्षों में इस क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति हुई। जोधपुर राज्य में मुगल चित्रकला से प्रभावित चित्र बनाये ... इसी काल में जन। उनके उत्तराधिकारियों के समय में चित्रों में पुनः स्थानीय चित्र शैली की विशेषताएं उभरने लगी थी।[१७४]

१८ वीं शताब्दी में जोधपुर में रामा नाथू, छज्जू, कृपाराम आदि कई प्रमुख हिन्दू चित्रकार हुए। इसके अतिरिक्त नूर मोहम्मद सफ आदि मुस्लिम चित्रकार भी थे।[१७५] हमें समकालीन ग्रंथों में राजकीय संरक्षण प्राप्त कलाकारों के नाम मिलते हैं जिनमें चाद तय्यब रायसिंह रामनारायण दो साहिबा रामबक्श आदि के नाम उल्लेखनीय है।[१७६]

महाराजा अभयसिंह (१७२४ १७५० ई) बहादुर और वीर होने के साथ ही कलाप्रेमी व साहित्यिक रुचि वाला था। उसके काल में जन दरबारी चित्रों का बाहुल्य है जिस पर मुगल प्रभाव झलकता है। महाराजा अभयसिंह के स्वयं के कई व्यक्ति चित्र उपलब्ध होते हैं जिसमें उसे शराब पीते हुए, नृत्य देखते हुए चौपड खेलते हुए, पूजा करते हुए जनाना (रनिवास) में बैठे हुए तथा शिकार खेलते हुए दिखाया गया है। ये चित्र सरदार म्यूजियम जोधपुर व म्यूजियम ऑफ फाइन आर्टस बोस्टन के संग्रह मे संगृहीत हैं।

महाराजा अभयसिंह रामसिंह व बख्तसिंह के शासनकाल में भी चित्रकला का विकास होता रहा किन्तु इस काल में मुगल शैली की बजाय स्थानीय शैली का प्रचार प्रसार अधिक हुआ।

१८ वीं शताब्दी के अन्त में महाराजा विजयसिंह (१७५२ १७९३ ई) के काल में भक्तिरस और श्रृंगाररस के चित्र अधिक मिलते हैं। सम्भवतः इसका कारण यह था कि विजयसिंह ने वैष्णव धर्म में पुष्टिमार्ग की दीक्षा ले ली थी।[१७७] जिससे भक्तिरस के चित्र प्राथमिकता से बने और मुगल प्रभाव तथा दरबारी विलासिता के प्रभाव में श्रृंगार रस के चित्रों को बल मिला।

जोधपुर शैली के अन्तर्गत पाली कलम और नागौर कलम के चित्र महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन दोनों स्थानों पर जोधपुर शैली की चित्रकला स्थानीय विशेषताओं की अभिव्यक्ति में युक्त होकर विकसित हुई।

पाली कलम—

मारवाड़ शैली या जोधपुर शैली के अब तक उपलब्ध चित्रों में पाली स्कूल का सबसे प्राचीन चित्र सन् १६२३ ई का मिलता है। इसकी रचना वीरजी नामक चित्रकार ने की थी। यह चित्र रागमाला से सम्बंधित है और कुंवर संग्रामसिंह जयपुर के संग्रह में सुरक्षित है।[१७८] मारवाड़ शैली में रागमाला चित्र का यह सबसे प्राचीनतम उदाहरण है। वीरजी नामक चित्रकार ने पाली में विट्ठलदास चांपावत के लिए जो रागमाला के चित्र बनाए उन्हें देखने से पता चलता है कि उस समय मारवाडा शैली पूर्व विकसित हो चुकी थी।[१७९]

इससे यह ज्ञात होता है कि १६ वीं तथा १७वीं शताब्दी में पाली और उसके आस पास के क्षेत्र में चित्रकला का समुचित विकास हो चुका था। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में मधुमालती की चित्रित प्रेमकथा की हस्तलिखित दो प्रतियां एक सन १७८८ ई (१८४५ वि स) ओर दूसरा सन् १७९६ (१८५३ वि स) सुरक्षित हे। मध्यकालीन इस प्रेमगाथा का सकलन (Composed) चतुर्भुजदास ने पाली में ही किया था। यह कार्य किसी राजकीय प्रश्रय में नहीं हुआ अत जनता की अभिरुचि का परिचायक है। इसमे चित्रित चित्र उच्च स्तर के नहीं है उस समय के प्रचलित मिट्टी के रंगों (Water colour) का प्रयोग हुआ है तथा चित्र को रखाए भी इतनी कुशलता व प्रवीणता से नहीं बनाई गया है। इसमें मानव की आकृतियां छोटी हे जो खिलौनो जेसा प्रतीत होता है। पेड़ो की सुन्दर सजावट इसमें देखने को मिलती है। चिडिया व पशुओं का चित्रण चित्रकार ने अधिक सफलता के साथ किया है। इससे तत्कालीन रीति रिवाज एव सामाजिक मान्यताओं पर भी प्रकाश पड़ता है।

नाडोल घाणराव आदि स्थानों के भित्तिचित्र भी अवलोकनीय है। इससे यह ज्ञात होता है कि मारवाड में सिर्फ शासक (राजा) ही नहीं प्रमुख सामन्त जमींदार व ठाकुर लोग भी चित्रकारों को प्रोत्साहन देने में पीछे नहीं रहे।[१८०]

नागौर कलम—

जोधपुर शैली की चित्रकला को पाली के अलावा दूसरा प्रमुख केन्द्र नागौर रहा है। नागौर कलम विशेष रूप से भित्तिचित्रों (Frescose Painting) के लिए प्रसिद्ध है। व्यक्ति चित्रों (Portrait painting) के अतिरिक्त यहां भित्ति चित्रों की भी सुदीर्घ परम्परा रही है।

भित्ति चित्रण चित्रकला की आदिम प्रवृत्ति है। प्रागैतिहासिक गुहा चित्र इस कथ्य के साक्षी है। अजन्ता एलोरा बाघ आदि गुफाओं के भित्ति चित्रों ने संसार के अनेक कला मर्मज्ञों को अपना और आकर्षित किया है। समय समय पर मन्दिर राजमहलों छतरियां किलो आदि में भी भित्ति चित्रण होता रहा है।[१८१]

इसा परम्परा म नागार दुर्ग क भातर जन राजप्रासादा म दावारा पर विविध रगा वाल सुन्दर चित्र बन ह । नागार किल का रनिवास कलाकृतिया का अमल्य खजाना ह । यहा कि भित्ति चित्र चित्रकला का अनुपम निधि ह । चित्रण का बाराका आर कला का वयक्तिकता आर सुन्दरता क कारण नागार का विशिष्ट चित्रकला शला माना जाता ह ।[१८२]

मारवाड़ क विभिन्न किला छतरिया ठिकाना गढ़ा हवलिया मठा व मन्दिरा म भित्तिचित्र पाय जात ह । भित्तिचित्रा क उदाहरण नागार व जाधपुर क किल म मुख्य रूप म दखन का मिलत ह । नागार का दुर्ग जाधपुर से भा अधिक पुराना ह आर किल क इन भित्ति चित्रा क अवशेष अब भी विद्यमान ह । नागार किल क इन भित्तिचित्रा का सजावट का श्रय महाराजा बखतसिह (सन् १७२४ १७५० ई) का जाता ह ।

नागार किल क भातर बादल महल आर हवामहल इन दा महला म भित्तिचित्र अकित ह । बादल महल जिस अमरसिंह राठाड का महल भा कहत हे इसम पदल घुडसवारा व हाथिया पर सवार लागा का सैनिक साज सज्जा क परिवश म चित्रण किया गया ह । छत पर सुन्दर चित्रकारा म फूल बेल व पत्तिया का अकन किया गया ह । पखा स युक्त परिया का चमकाल रगा से चित्रित किया गया ह । इन सभा आकृतिया का हाथ म वाणा ढालक मजीर शहनाई क साथ नृत्य का भावभगिमा म चित्रित किया गया ह । गाल घर म आवद्ध इन परिया क अतिरिक्त मध्य का खाला जगह व बार्डर पर भा बल बटा का अलकरण किया गया हे ।

मारवाड़ म्यरल्स नामक पुस्तक क लखक अग्रवाल[१८३] का यह मानना ह कि प्रारभिक भित्तिचित्र जा साफ आर अच्छी दशा म बादल महल क खुले बरामद मे तथा दूसरा मजिल क एक कमरे म सुरक्षित ह । इनम विभिन्न प्रकार क दृश्य आर आकृतिया चित्रित ह परन्तु व एक दूसर स समानान्तर व मिलती जुलता नहा ह । जनाना ड्याढी क सार चित्र डिस्टम्बर द्वारा पुताई हो जाने स खराब हा गय ह कवल एक दा चित्र बच ह । शाशमहल क चित्र भी चूने का सफदी करन से साफ हा गय हे । इसमे बादलमहल म चित्रित नारा आकृतिया की भाति भित्ति चित्र अकित किय गय ह ।[१८४]

हवा महल के भित्ति चित्रा म नारा चित्रो का प्रधानता ह । नायिका का विभिन्न मनादशाआ व अवस्थाआ का प्रभावकारा चित्रण किया गया ह । कई चित्र एस भा ह जा सामाजिक उत्सवो व दैनिक क्रिया कलापा स सम्बन्ध रखत ह । इस महल मे चित्रित जल विहार का चित्र बडा आकर्षक हे जिसम जलकुण्ड म स्त्रिया का स्वच्छन्द रूप स जलक्राड़ा करत हुए दर्शाया गया हैं । जलकुण्ड क पास एक कमरा बना हुआ ह जिसम एकओरत मद्यपान करत हुए दिखाई गयी ह जिसक सामन एक स्त्रा वाद्ययत्र लिए सगात गान का मुद्रा म खड़ी ह । कुण्ड मे नहाती हुई १२ स्त्रिया को विभिन्न प्रकार की तरता

हुई व स्नान करती हुई मुद्रा म चित्रित किया गया है जिनके केवल अधोवस्त्र ही पहन हुए ह उपरा अग वस्त्र विहीन दर्शाया गया ह । कुण्ड क दोना किनारा पर अलग अलग सिरा पर कुण्ड का तरफ पीठ किय हुए तथा हुक्का पाते पुरुष वठ हुए दर्शाये गय हे ।

इसक अतिरिक्त नायक क साथ मदिरापान करत हुए, हुक्का पाती हुई नायिका हाली खलत ढफ वजाते नाग म झूला झूलता स्त्रिया घूमर नृत्य के आकार म छत पर पखयुक्त नारी आकृतिया सगीत सुनत हुए, दो युगल सहलिया इत्यादि विभिन्न प्रकार क भित्तिचित्र नागौर के किले म स्थित इन महला म चित्रित है । बादल महल की पखा वाला नारी आकृतिया का वेशभूषा का फारसी प्रभाव युक्त मानते हुए आर.ए. अग्रवाल[१८५] ने पर्सियन गाऊन की सज्ञा दी है । हवामहल के भित्तिचित्रा म गुलदस्तो पहलवाना (कुश्ता का दृश्य) व नृत्य क दृश्य उत्कृष्ट ह तथा नागार का दुर्ग मारवाड़ के भित्तिचित्रा के सम्बध म रोचक आर महत्वपूर्ण जानकारा प्रदान करन वाला एक सग्रह स्थल ह । इसक अधिकाश भित्तिचित्र मिट गए हे किन्तु मध्यकालान भित्तिचित्रा के अध्ययन क लिए आज भा उनका महत्व ह ।

मारवाड का चित्रकला म व्यक्तिचित्रा तथा भित्तिचित्रा के अलावा पटचित्र व पाथी चित्र भा मिलत ह । भारत म पटचित्रा का बहुत प्राचान परम्परा रहा है । पटचित्रा के सम्बध म बाद्ध धर्म क तान्त्रिक ग्रन्थ आर्य मजुश्री कल्प म कहा गया ह कि स्वच्छ श्वत कपड पर चित्र अकित करना चाहिय । उसक दाना आर किनारिया हो । रशमी कपड़ा उसक लिए सर्वथा त्याज्य ह । [१८६]

पटचित्रा का परम्परा यहा पिछवई आर पड दाना म दखन का मिलता ह । पिछवई शैली म कृष्णलाला क चित्रा का अधिकता ह । पिछवई स भा ज्यादा यहा पड चित्रण की परम्परा लाक समाज म ज्यादा लाकप्रिय रहा ह । पडा म यहा लाकदवता पाबूजा का पड़ व देवजी की पड़ का प्रचलन अधिक दखन का मिलता ह । कपड पर चित्रित पाबूजा व दवजा क प्रमुख जावन प्रसगा का अभिव्यक्त करन वाल चित्र बने हाते ह । जतर नामक वाद्ययत्र के साथ भील जाति क भापा द्वारा पाबूजी की पड (यशगान) सारा रात गान का परम्परा आज भा यहा के ग्रामीण समाज म प्रचलित ह ।

पटचित्रा के अलावा यहा पाथाचित्र भी उपलब्ध ह । भाजपत्र आर ताड़पत्र पर पाथी चित्र बनान की यहा प्राचान परम्परा का अनुकरण हुआ ह । भोजपत्रीय आर ताड़पत्रीय अनक ग्रन्थ यहा क सग्रहालया म सुरक्षित ह । ताड़पत्रीय ग्रथा म सर्वाधिक जन ग्रथ उपलब्ध हात ह । १८ वा शताब्दी तक ताडपत्रीय ग्रथा का प्रचलन यहा विशपरूप स रहा । इसक पश्चात् कागज पर ग्रथा क अकन का परम्परा अधिक प्रचलित हुई । वस कागज का आविष्कार १२ वा शताब्दी म हा गया था इस आविष्कार न ग्रथा क चित्रण म एक क्रान्ति सी ला दी ।[१८७] कागज एक एसा माध्यम ह जिसम काव्य एव चित्र दोना

का अंकन सहजता और विस्तार के साथ हो सकता है। कागज की चित्रोपयोगिता ने पोथी चित्रण की परम्परा को अधिक प्रचलित कर दिया। इस परम्परा को विस्तार देने का श्रेय सगुण भक्ति के आन्दोलन एवं मुगल शासन के संस्थापकों को है।[188]

मुगल शासन की स्थापना से ग्रन्थ चित्रण की परम्परा को विशेष बल मिला। चित्रकला के प्रेमी और पारखी बादशाह अकबर ने दरबार में बसावन, दसवन्त, सावलदास, फार्रूख बेग, मुराद आदि प्रमुख चित्रकारों को प्रश्रय दिया जिन्होंने बाबरनामा, अकबरनामा, रज्मनामा, तूतीनामा आदि के अतिरिक्त महाभारत, अनवार ए सुहाली (पंचतंत्र) आदि भारतीय ग्रंथों का कलात्मक चित्रण भी किया।[189]

जोधपुर शैली में भी रामकाव्य, कृष्णकाव्य, प्रेमकाव्य, बारहमासा, ऋतुवर्णन और राग रागिनी आदि पर आधारित पोथीचित्र व लघुचित्र मिलते हैं तथा ऐसे चित्रों से युक्त कई हस्तलिखित सचित्र ग्रंथ यहां के संग्रहालयों में उपलब्ध हैं।

इस प्रकार जोधपुर शैली की चित्रकला विवेच्यकाल की दो शताब्दियों तक विभिन्न उतार चढ़ावों को झेलते हुए निरन्तर विकास की ओर अग्रसर होती रही। जोधपुर शैली राजपूत शैली का ही विकसित स्वरूप है जिस पर मुगल प्रभाव होने के बावजूद स्थानीय रंगत (Local colour) का अभाव नहीं है। अन्य शैलियों से प्रभावित होने के बावजूद भी मारवाड़ शैली की अपनी निजी विशेषताएं हैं।

इस शैली के पुरुष गठीले बदन के होते हैं। उनके गलमुच्छे ऊंची पगड़ी राजसी वैभव के वस्त्राभूषण आदि का अंकन विशेष रूप से हुआ है। स्त्रियों के अंग प्रत्यंगों का अंकन भी गठीला है। उनकी वेशभूषा में लहंगा, ओढ़नी और लाल फुंदनों का प्रयोग प्रमुख रूप से हुआ है। लाल और पीले रंगों का विशेष प्रयोग सामन्ती जीवन के अतिरिक्त सामान्य जन जीवन का चित्रण आदि मारवाड़ शैली की कुछ विशेषताएं हैं। राजा रानी, सामन्त, रानसी वैभव, सवारी, महल, शिकार, जनाना (रनिवास) आदि के अतिरिक्त मजदूर, किसान, माली, भिश्ती, ग्वाला आदि का अंकन भी मारवाड़ शैली में हुआ है।[190]

जोधपुर शैली में चित्रित चित्रों में विषय वैविध्य, वर्ण वैविध्य के साथ देश काल की अनुरूपता के अनुसार भाव प्रवणता का प्राचुर्य भी देखने को मिलता है। मुगलशैली से प्रभावित यहां के दरबारी चित्रों, युद्ध व शिकार विषयक दृश्यों व विविध अवसरों व उत्सवों के अंकन में हमें विशेष साज सज्जा युक्त चित्रण तो देखने को मिलता है साथ ही श्रृंगार व प्रेम की भावनाओं को बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रांकन किया गया है जिससे यहां की कला शौर्य प्रदर्शन के साथ ही साथ रसप्रधान बन पड़ी है। नारी सौन्दर्य बड़े ही मनोहारी व प्रभावकारी रूप में यहां के प्रवीण कलाकारों द्वारा अंकित किया गया है। उनकी आकृति, रूपलावण्य, अंग प्रत्यंगों का दिग्दर्शन वेशभूषा व आभूषणयुक्त

श्रृगारिक व प्रमाख्याना क दृश्या का अधिकता पाया जाता ह। चटकाल व चमकदार रगा म इन चित्रा का सुन्दरता म चार चाद लग गय ह। राजसा वभव व प्रश्रय म पल यहा क कलाकार (चित्रकार) का कल्पना व यथार्थ चित्रण का शाना हा प्रवृति प्रखर रूप म अभिव्यक्त हुइ। यहा क गजदरबार क आलावा भक्ति व श्रृगारिक चित्रा क सान्दर्य का भी कलाकार न रखाआ अभिव्यक्त करन का प्रयास किया ह जा युग सापक्ष मनावृत्ति क अनुरूप ह।

दरबारा सस्कृति म परिपोषित हान क कारण जाधपुर शला क चित्रा म विशयकर राजसा व सामन्ता सभ्यता व सस्कृति का चित्रण अधिक ह फिर भा मारवाड का चित्रशला स लाकतत्व पणतया विलग नहा हआ। यहा का चित्रकला का लाकजावन स सम्बन्ध जुडा रहा। यहा नहा कई बार ता राजसा वभव क बाच भा लाकजावन का दृश्याकन करन म यहा का कलाकार नहा चका। प्रमकथाआ क चित्रण म लाकतत्व का प्रबलता (प्रमुखता) दृष्टिगाचर हाता ह जिसस यह ज्ञात हाता ह कि इन प्रमगाथाआ का लाकजावन का शला म प्रस्तुत किया जिसस उन्ह यहा क जनसमाज म अधिक लाकप्रिय हान का अवसर मिला। परा प्रमगाथा म लाकजावन का भावनाआ का प्राबल्य यह सिद्ध करता ह कि यहा का कला लाकजावन म जुडी रही जिसम उसकी निजा विशषताए बहुत हद तक कायम रहा आर लाकजावन पर आधारित चित्रा म जा रग रखाआ क माध्यम स भावा का अभिव्यक्ति का जिस प्राकृतिक सरल व सारगर्भित रूप स सयाजन हुआ ह वह दखन हा बनता ह। इसक साथ हा लाक भावनाआ आर धारणाआ से सान्निध्य स्थापित हान क कारण मारवाड का चित्रशला म सान्दर्यबाध क साथ ही सास्कृतिक दिग्दर्शन दखन का मिलता ह।

विवच्यकाल का (मध्यकालान) मारवाड का चित्रकला म राजपत सस्कृति का तथा तत्कालान सामाजिक जावन का जाता जागता चित्रण विशष द्रष्टव्य ह। दुर्ग राजप्रासाद मन्दिर भव्य हवलिया दरबार क विभिन्न दृश्या रनिवास उपवन बाग बगीच बारह मासा राग रागनिया आदि क माध्यम म राजपूता वभव का अभिव्यक्ति दखा जा सकता ह। उत्सव त्याहार भक्ति श्रृगार आर प्रम कथाआ तथा वाराख्याना क विशिष्ट दृश्या का पट्टरूप म अकन आदि क माध्यम स लाक सस्कृति का बडा हा सभ्य आर सजाव झाका दखन का मिलता ह। राजसा चित्रकला म वभव कल्पना सजावट कृत्रिमता तथा मुगल प्रभाव झलकता ह जबकि लाकजावन क चित्रण म सादगी सरलता आर उनक वास्तविक जावन का अनुभूति का आभास हाता ह। इस शला का चित्राकन परम्परा स तत्कालान सामाजिक जावन व सास्कृतिक पहलू का यथार्थ स्वरूप ज्ञात हाता ह।

सगीत—

सगात का उत्पत्ति क मूल म क्या कारण रह इसक सम्बन्ध म विश्व क चिन्तका न अपन अपन ढग स अनक कल्पनाए का ह। हमार यहा समस्त कलाआ दर्शना आर

ज्ञान का उत्पत्ति वेदों में मानी गयी है और पुराणों तथा उपनिषदों में इन धारणाओं को परिपुष्ट किया गया है। भारतीय संगीत के इतिहास के लेखक उमेश जोशी का यह मानना है कि — वेदों के निर्माता ब्रह्मा जी द्वारा संगीत की उत्पत्ति हुई। ब्रह्माजी ने यह कला शिवजी को दी और शिव के द्वारा देवी सरस्वती को प्राप्त हुई। सरस्वती से संगीत कला का ज्ञान नारदजी को प्राप्त हुआ और नारदजी ने स्वर्ग के गन्धर्व किन्नर एवं अप्सराओं को संगीत की शिक्षा दी। वहां से ही भरत नारद और हनुमान प्रभृति ऋषि संगीत कला में पारंगत होकर भू लोक पर संगीत कला के प्रचारार्थ अवतीर्ण हुए।[१९१]

संगीतोत्पत्ति की यह भारतीय परिकल्पना है। दुनिया के दूसरे देशों में भी संगीत के जन्म सम्बन्धी कई धारणाएं प्रचलित हैं। कुछ लोग संगीत का उद्गम नारी सौन्दर्य ज्ञान ईश्वरोपासना व प्रकृति से मानते हैं। प्रकृति और ईश्वरोपासना संगीतोत्पत्ति के आधारभूत तत्व माने जा सकते हैं। विहगों का उषाकालीन कलरव शिशुओं की निर्बाध हंसी का गूंज भावविभोर भक्त की गतियां और रसपेशल प्रणय की मुखरता इसी आनन्द के नाद की भिन्न अभिव्यक्तियां हैं जो संगीतज्ञ द्वारा स्वर, लय में निबद्ध होकर प्रकाश पाता है। मानव ने इस नैसर्गिकी अभिव्यंजना को शास्त्रीय परिधान पहनाया और विभिन्न प्रणालियों से बहती हुई स्वरधारा ने मनुष्य की उद्दाम और उदग्रवृत्तियों को कोमल और सुसंस्कृत बनाने का प्रयास किया।[१९२]

जब स्वर और लय व्यवस्थित रूप धारण करते हैं तब एक कला का प्रादुर्भाव होता है और इस कला को संगीत म्यूजिक या मोसीकी कहते हैं। भारत से बाहर अन्य देशों में केवल गीत और वाद्य को संगीत में गिनते हैं। नृत्य अथवा नृत एक अलग कला थी किन्तु धीरे धीरे गान वाद्य और नृत्य तीनों का संगीत में अन्तर्भाव हो गया गीत वाद्य च नृत्य त्रय संगीतमुच्यते।[१९३] संगीत शब्द में गीत नृत्य और वाद्य इन तीनों कलाओं का समावेश माना जाता है।[१९४]

संगीत शब्द की व्युत्पत्ति सम् + गै + क्त (सम् उपसर्गपूर्वक गै धातु से क्त प्रत्यय लगकर) से हुई है जिसमें संस्कृत गै धातु प्रधान है जिसका अर्थ गायन होता है। इस प्रकार संगीत में गीत वाद्य और नृत्य तीनों का समाविष्ट किया गया है पर तीनों कलाओं में गीत की प्रधानता होने के कारण संगीत यही अभिधान उसे दिया गया।[१९५]

नाद और स्वर संगीत के मुख्य तत्व हैं।[१९६] नाद ध्वनि विशेष को कहते हैं।[१९७] सम्पूर्ण जगत नाद के अधीन है। पंच महातत्व पृथ्वी जल तेज वायु एवं आकाश में व्याप्त है। जहां नाद है वहां जीवन है तथा जहां जीवन है वहां नाद अर्थात् ध्वनि है। जड़ चेतन एवं चर अचर सभी में नाद व्याप्त है। नाद की इस महत्ता के कारण नाद को नाद ब्रह्म कहा गया है।[१९८]

भारतीय संगीत में दो पद्धतियां हैं (१) हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति और (२) कर्णाटकी संगीत पद्धति। जो एक दूसरे से भिन्न है।[१९९] कर्णाटकी संगीत पद्धति का प्रचार प्रसार

मैसूर कर्नाटक और मद्रास प्रान्तों में है शेष सम्पूर्ण भारत में उत्तर भारतीय हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति का ही चाल रहता है। [00]

सा रे ग म प ध नि यह स्वर सप्तक हिन्दुस्तानी भारतीय संगीत पद्धति में समस्त उत्तर भारत के शास्त्रीय संगीत में सर्वत्र प्रचलित है। भारतीय संगीताचार्यों ने विभिन्न राग रागनियों का भी विवेचन किया है। रागनियों के भेदापभेद में कुछ भिन्नता मिलती है फिर भी यहां छः राग और छत्तीस रागनियां प्रमुखता के साथ स्वीकार की गयी उसका विवरण इस प्रकार है—

राग नाम
रागिनी नाम—

१ भैरव भैरवी रामकली गुजरी खट, गाधारी आसावरी

२ मालकोस वागीश्वरी तोड़ी देशी सुहा सुधराई मुल्तानी

३ हिंडोल पुरिया बसन्त ललित पंचम धनाश्री मारवा

४ श्री गौरी पूर्वी गौरी त्रिवण मालश्री जैताश्री

५ मेघ मधुमास गौड़ शुद्ध सारंग बड़हंस सामंत सोरठ

६ नट छायानट हमीर, कल्याण केदार, बिहागड़ा यमन। [२०१]

इन रागों का निश्चित प्रहरों में एवं विशिष्ट ऋतुओं में गाये जाने के भी नियम और परम्पराये है। सप्तक सा रे ग म प ध नि सा को सा रे ग म तथा प ध नि सा - इन दो भागों में विभाजित करके पूर्व राग और उत्तर राग अथवा पूर्वांगवादी राग तथा उत्तरागवादी राग कहा जाता है तथा २४ घण्टों के एक दिन में किन किन रागों को किन किन विशिष्ट प्रहरों में गाया जायगा यह भी नियम व परम्परा से सुनिश्चित है। [२०२]

जैसे चित्रकला के लिए रंग तूलिका आदि मूर्तिकला के लिए हथौड़ा छैनी आदि उपकरण काम में लाये जाते है उसी प्रकार गायन-वादन आदि में भी भिन्न भिन्न उपकरणों का प्रयोग होता है। पंच महावाद्यों में एक ईश्वर निर्मित एवं नैसर्गिक कंठरूपी यंत्र है। शेष चार का निर्माण मनुष्य ने किया है। [२०३] भारतीय संगीतशास्त्र की परिभाषा के अनुसार वाद्ययंत्र चार प्रकार के हैं - [२०४]

१ ततवाद्य जो वाद्य तांत अथवा तार के सहयोग से बजाये जाते है। जैसे वीणा सितार आदि।

२ वितत वाद्य - जो वाद्य चर्माच्छादित करके बजाये जाते है। जैसे तबला मृदंग आदि। उन्हें वितत अथवा आनद्ध वाद्य कहते हैं।

३ शुषिरवाद्य जो वाद्य वायु द्वारा बजते है जैसे वंशी शंख हारमोनियम आदि वे शुषिर वाद्य कहलाते हैं।

४ घन वाद्य व वाद्य जो धातुनिर्मित होते है और आघात करके बजाये जाते है । जैसे घण्टा, जलतरग करताल आदि उन्हे घन वाद्य कहा जाता है ।

सगीत के द्वारा उत्कृष्ट अभिव्यजना का जितना अधिक विस्तार वाद्य सगीत म है उतना गान एव नृत्य म नही । कण्ठ सगीत म काव्य का योग यद्यपि उसे सार्थक बना देता है किन्तु साथ ही सगीत की दृष्टि से उसका स्तर भी गिर जाता है । जब गायक भजन गजल गीत आदि का गान करता है तब शब्दो का महत्त्व काफी बढ जाता है । इस प्रकार ख्याल म सगीत की प्रमुखता एव काव्य की गौणता और भजन आदि म काव्य की प्रमुखता एव सगीत की गौणता स्पष्ट परिलक्षित होती है ।[२०५]

राजस्थान मे उत्तरभारतीय हिन्दुस्तानी सगीत पद्धति का विकास हुआ । राजस्थान का सगीत अपनी विशेषताओ के लिए प्रसिद्ध है । यज्ञ माथुर[२०६] के शब्दो म

Rajasthan is one of the most traditionalistic regions in the world There are songs for every occasion with almost an endless variety of tunes Most songs and their tunes a collective creation of the people retain their traditional form and character and pass on from one gener ation to another and have thus became a part of Rajasthan s intellecual culture

मध्यकाल मे कला के चहुमुखी विकास हेतु राजकीय सरक्षण आवश्यक था । यहा कला को राजकीय प्रश्रय देने की सुदीर्घ परम्परा रही है । मुस्लिम आक्रमणकारियो के समय भी राजकीय प्रश्रय की यह परम्परा चलती रही हा इसमे एक परिवर्तन यह अवश्य हुआ कि वे अपनी कला के विकास हेतु अधिक सचेष्ट रहे फिर भी कई उदार शासको ने सहृदयतापूर्वक कलाकारो को प्रश्रय व प्रोत्साहन प्रदान किया । अकबर के काल म हिन्दुस्तानी सगीत की स्थिति म हम आश्चर्यजनक परिवर्तन पाते है ।[२०७] मुगल बादशाह अकबर ने सगीत को बहुत अधिक प्रोत्साहन दिया ।[२०८] परन्तु औरगजेब सगीत का कट्टर शत्रु था । मुसलमान पैगम्बरो के आदर्श पर औरगजेब ने सगीत और नृत्य को नष्ट करने की पूरी कोशिश की उसे सगीत से अत्यन्त घृणा थी ।[२०९] औरगजेब की इस कठोर नीति से असन्तुष्ट होकर सगीतज्ञो ने देश के अन्य भागो म प्रश्रय पाने को पलायन किया । एस समय म राजस्थान के शासको ने भी उन्हे प्रश्रय देकर सगीत परम्परा को अक्षुण्ण रखा । उत्तरी भारत म सगीत की प्रवहमानता को यथावत् रखने और उसके विकास म सहयोग देने वालो म जयपुर के सवाई जयसिह की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही । सकटकाल म सगीतकारो को प्रश्रय देकर उसने सगीत की बडी सेवा की । जयपुर के ही महाराजा प्रतापसिह (सन् १७७० १८०४ ई) ने देश भर के सगीतज्ञो को एकत्र किया तथा सबकी परामर्श म सगीतसार[२१०] नामक ग्रथ का निर्माण करवाया ।

विख्यात विद्वान अनमत न विश्व क इतिहास का डायरा म लिखा ह गजपन नितन शरवार य उनन हा बड़ सगात प्रमा भा थ। व सगीतकारा का आन्र करना भलाभाति जानत थ। उनक न्रबार म अनक सगातज्ञा का आश्रय मिला करता था। उनका छत्रछाया म अनक कलाकार अपना कला का विकास करत थ। इस युग क नय कलाकारा का विकास राज्याश्रयप्राप्त करन पर ही हा सका। इस युग का सगात अधिकतर राज्याश्रय क सरक्षण म ही उन्नति का मजिल पर बढ सका।[२११] न्सवा ग्यारहवा शताब्दी म सगात क घराना का प्रादुर्भाव हुआ था वह इस काल म आ आत सुदृढ हुआ। मामा म आबद्ध सगात जनसाधारण का भावनाआ का प्रतिनिधित्व करन की बजाय अपना परम्परा का अक्षुण्ण रखन का अधिक सचष्ट था। इसका सकाण मनावृत्ति का लकर इसालिए कइ विद्वाना न इसका आलाचना की ह पर युग का प्रवृत्ति क अनुरूप घराना न अपना अलग पहचान रखत हुय भा सगात क सरक्षण व सवद्धन म जा सहयाग प्रदान किया वह कम महत्वपण नहीं ह।

मध्यकाल म खास तार स मुगल साम्राज्य क अन्तिम दिना म तथा उसके पतन क पश्चात् सगातज्ञा का राज्याश्रय प्रदान करन म मारवाड़ क शासका की भी अपना भमिका ह। मारवाड क शासका का अधिकाश समय युद्धा म व्यतीत करता था उन्ह बराबर बाह्य आक्रान्ताआ व भातरा उपद्रवकारिया स जझना पडा। मुगला क अधिकतर सघर्ष जारा रखन क परिणामस्वरूप व कलाआ क विकास पर अधिक ध्यान नहीं द सक। मुगला क साथ सहयाग क युग म भा उन्ह अधिकतर अपने वतन जागीर मारवाड़ स बाहर ही रहना पड़ता था अत शास्त्राय सगात का यहा विशष प्रश्रय दन के लिए परिस्थितिया अनुकूल नहीं रहा।

समय समय पर यहा क कलाप्रमा शासका न विभिन्न कलाआ की भाति सगात कला का भा प्रात्साहन दिया आर सगातज्ञा का राजकाय सरक्षण प्रदान कर सगात कला का सम्मान किया।

यहा क सग्रहालया क हस्तलिखित ग्रथा म सगात का काई अति विशिष्ट या उल्लखनाय ग्रथ ता उपलब्ध नहीं हाता किन्तु हिन्दुस्तानी सगीत परपरा के क्रम म स्वर राग रागनिया इत्यादि का वणन अवश्य मिलता ह—

सारा गम पध ना षड्ज रापभ गधार
मध्यम पचम धईवत नापाद।[२१२]

षट रागा का नाम इस प्रकार उल्लिखित ह—

भग्व मालवकास का दापराग हिन्डाल।
मगराग श्री राग पनि ए षट राग किलाल।[२१३]

विभिन्न रागों के संबंध में यहां कई नाम प्रचलित हैं। उदाहरणार्थ कुछ पंक्तियां यहां उद्धृत की जाती है—

काट काटकर काफी करो सब रागन को सार।
भूपाळी मन भावणी गाई गुणी गंभार॥
सोरट तब ही गाइये जब सांपा पड जाय।
ज्यूं ज्यूं रात गळती त्यूं त्यूं मांठी थाय॥
रागां रो पत सोरठो बाजां रो पत वाण।

इसी प्रकार छत्तीस राग रागनियों व वाद्ययंत्रों का नामोल्लेख भी कई हस्तलिखित ग्रंथों में देखने को मिलता है।[२१४] वाद्य यंत्रों के सम्बन्ध में निम्नांकित पंक्तियां यहां द्रष्टव्य है—

जग में सब सुरता कहे बाजे साढे तीन।
खाल तार अरू फुकनि अरध ताल सुर हीन॥१
खाल नगारो ढोल ढफ और पखावज जान।
तार तंबूरा बीन है बहुर बाव वखान॥२
फुकन फारा बांसुरा सहनाई कर नाय।
ताल खजरा झांझ सब बाजे न्याय बताय॥३

यहां के लोकवाद्य इस प्रकार है (१) भरूजा या घूघरा (२) मुरला (३) नागफनी (४) बांकिया (५) अपंग (६) घटा (७) घुघरू (८) रावणहत्था (९) रन तारा (१०) मोरचंग (११) ढोल (१२) डफ (१३) जन्तर (१४) मंजीरा (१५) डेरू और धाव (१६) डक्ल (१७) कमायचा (१८) पखावज (१९) सारंगी (२०) जोगिया सारंगा (२१) सुरिन्दा (२२) सिंधी सारंगा (२३) चिंपिया (२४) ढोलक (२५) बांसुरी (२६) सला (२७) पावरा (२८) नगाडा (२९) बड़ा ढोल (३०) शहनाई (३१) सतारा (३२) मादल (३३) थाली (३४) अल्गोजा (३५) खरताल आदि।[२१५]

मरुमन्दाकिनी मीरां और चन्द्रसखी के पदों की संगीतात्मकता सर्वविदित है। संगीत की दृष्टि से मीरां के पद जहां एक ओर तत्कालीन शास्त्रीय संगीत के आधार को ग्रहण करते हुए परोयो कल्याण बागेश्वरी दरबारी जैजवन्ती आनन्दभैरो जैसी रागों में बंधे हैं वहां अनेक पद कनरो लावणी इत्यादि लोकगीतों की धुनों पर भी रचे गये हैं। *कहा जाता है कि मीरां बाई की मल्हार (मल्हार राग का एक प्रकार) का निर्माण मीरां* बाई ने किया था। संगीत की तन्मयकारिणी शक्ति से मीरां ने पूर्ण लाभ उठाया। गीत वाद्य और नृत्य इन तीनों को उसने अपने इष्टदेव के साथ परमाभाव के निर्वाह का माध्यम बना लिया था। वह पग घुंघरू बांध कर नाचती थी। एकतारा या तानपुरा उसका वाद्य था

स्वरा का आधार प्रदान करता था और अपने प्रेम की पीड़ा को सकोच रहित होकर गाता म इस प्रकार ढाल देती थी कि उस दरद दीवानी का दर्द सार्वजनीन बन जाता था। कला मीरा का साध्य न होकर साधना का माध्यम मात्र थी।[२१६] सम्भवत इसीलिए मीरा के सगीत की गुलदियां आध्यात्मिकता और भक्ति के क्षेत्र म आज भी अक्षुण्ण बनी हुई हे और न केवल मारवाड म ही बल्कि समस्त देश मे जगती के तापो से सतप्त हृदयो को मरुमलाकिनी मीरा के पद असीम आनन्द और चरम शांति प्रदान कर रहे हे। मीरा के अतिरिक्त "चन्द्रसखी भी मध्ययुग की प्रमुख सगीतज्ञा थी और राजस्थान की मरुभूमि म सगीतकार के रूप म बड़ा लोकप्रिय थी और उसने राजस्थानी शुष्क वातावरण को सगीतमय बना कर अद्वितीय कार्य किया।[२१८]

इनके अलावा यहा के शासको की कई महारानिया भी नृत्य और सगीत कला की ममज्ञा थी। उमेश जोशी का यह कथन उपयुक्त ही है कि 'राजपूत रमणिया सगीत म बडी निपुण होती थी। राजपूत युग म अनेक ऐसी नारियां हो गयी है जो अद्वितीय वीर थी और साथ ही साथ अपूर्व सगीतज्ञा थीं। जोहर करते समय नखशिख श्रृगार और सगीत के माध्यम से अग्नि मे प्रवेश करती थी। राजपूताने का पनघट सगीत की मधुर लहरियो स गूज जाया करता था।[२१८] यहा के लोकगीतो मे सगीत रसा बसा हे जिसने मरुवासियो के जीवन को सदा एक नयी रगानी व ताजगी दी ह जिसका विवेचन आगे चलकर यहा की लोककलाओ के अन्तर्गत किया जायगा।

सगीत के सवर्द्धन म राज्याश्रय से तो सहयोग मिला ही पर साथ ही सतो व भक्तो ने भी इस दिशा म अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ह। सरल व सीधी सादी भावाभिव्यक्ति करके यहा के कई सतो न अपने पद विभिन्न राग रागनियो के आधार पर बनाये जिनका रसास्वादन कर युगो तक यहा का जनमानस आह्लादित होता रहा ह।

उत्तरी भारत म भक्ति आन्दोलन के पश्चात् भजन कीर्तन म सगीत का अधिक उपयोग होने लगा। इन सकीर्तनो द्वारा भारतीय सगीत की जो आध्यात्मिक पृष्ठभूमि सुदृढ़ हुई उसका सहज प्रचलन ओर विस्तार यहा भी हुआ। वैष्णव सम्प्रदाय म सगीत एक प्रमुख माध्यम बन गया। ब्रह्मसहोदर कहकर इसे ब्रह्म तक पहुचने का साधन माना गया। सूफी सन्तो ने भारतीय सगीत को अपने ढग व अपनी शैली से विकसित किया। जिसस यहा के सगीत की दार्शनिक पृष्ठभूमि सुदृढ़ हुई।[२१९] इसी पृष्ठभूमि को आधार बनाकर यहा के भक्तो ने ईश्वर के दिव्य स्वरूप की भजनो की लड़ी म गूथकर आम जनता म उसे बहुत लोकप्रिय बना दिया। इन भजनो द्वारा जहा एक ओर सगीत का प्रचार हुआ वहो दूसरी ओर ईश्वरीय ज्ञान भी आम जनता म फैला।[२२०] परिणामस्वरूप इस काल म यहा के लोगो का नैतिक चरित्र ऊपर उठा और सगीत साधना के प्रति भी उनका रुझान बढ़ा।

विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में भी संगीत एक आवश्यक उपादान के रूप में स्वीकार किया गया और अपने आराध्य की पूजा अर्चना इसके बिना अधूरी समझी। इस दिशा में वल्लभ सम्प्रदाय की भूमिका महत्त्वपूर्ण कही जायेगी क्योंकि इस सम्प्रदाय के अनेक संतों ने संगीतात्मक पदों की रचना ही नहीं की अपितु उनको गाने का विधान कर संगीत पूजन अर्चन में परमावश्यक तत्त्व के रूप में स्वीकारा गया इसीलिए संगीत की अपनी एक अलग ही परम्परा कायम हुई ... ताल स्वर और राग के बिना वल्लभकुल के भजनों की कल्पना पूर्ण नहीं रहती। कृष्ण भक्त कवियों ने कई संगीत ग्रन्थों का निर्माण किया। भक्तिकाल के कई संतों आचार्यों व भक्तों की संगीतात्मक पद रचना मध्ययुग के मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ती नजर आती है।

जैन कवियों में रागबद्ध पदों की रचना करने का प्रचलन रहा है। जैन मुनि संगीत का भी ज्ञान रखते थे। जैन कवियों की संगीतप्रियता इस बात से और भी स्पष्ट हो जाती है कि वे अपनी सभी काव्यकृतियों को किसी न किसी प्रकार रागों अथवा गीतों में बाँधकर गाया भी करते थे। जैन सम्प्रदाय में रागमाला के अतिरिक्त गीत रास तथा बारामासा सभी प्रचलित गायन शैलियों में ग्रंथ उपलब्ध होते हैं। उदाहरणार्थ – प्रास्ताविक गीत उतराध्ययन गीत चेतन सुमति गीत अजापुत्र रास सिंहचक्ररास जंबू स्वामी रास नेमराजुल बारामासा आदि।

इसके अतिरिक्त जैन सम्प्रदाय में ढाल व सज्झाय संज्ञक रचनाएँ भी बहुलता में देखी जाती है। जैन ग्रंथों में अनेक गीत ऐसे भी मिलते हैं जो लोकगीतों की शैली पर आधारित हैं। जैन सम्प्रदाय में गायन कितना प्रचलित था इसका अनुमान इस बात से सहज ही लगाया जा सकता है कि गीतकारों ने स्वरलिपि समझाने के लिए प्रसिद्ध प्रचलित गीतों का उदाहरण देकर उसकी ढाल (स्वरलिपि) निर्दिष्ट की है।

संगीत की विद्यमानता से मारवाड़ का समूचा सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन विगत में गतिशील उदार और बहुत ही सवेदनशील था। संगीत के जादू ने जातीय भेदभाव से ऊपर उठा दिया था। मारवाड़ की लंगा जाति जो प्रारंभ में हिन्दू रही और कालान्तर में इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया वह यहाँ के लोकसंगीत की बहुत बड़ी गायक है और वे लोग हिन्दुओं के शादी विवाह के अवसर पर विशेष रूप से गायन करते हैं। इतना ही नहीं उनके मुँह से राम कृष्ण शिव और गजानन की स्तुति सुनकर भावविभोर हुए बिना नहीं रहा जाता। इस प्रकार संगीत ने जो मानवीय संप्रेषणीयता यहाँ हासिल की है वह अनूठी है।

इस युग में भारतीय संगीत का फैलाव उच्चवर्ग से लेकर मध्यम व निम्नवर्ग तक हुआ। इसके विस्तार व फैलाव में विभिन्न सम्प्रदायों के संतों व भक्तों की भी महती भूमिका रही। नियम सम्पन्न संतों की वाणियाँ भी स्मरणीय हैं। इस प्रकार मुगल प्रभाव

के कारण भारतीय संगीत में ख्याल, कव्वाली, गजल, रेख्ता इत्यादि का प्रचलन मुख्य रूप से हुआ और इसका स्वरूप और अधिक निखरा जैसा कि वन्डार प्रमता का मानना है कि यह हम मानना पड़ेगा कि मुस्लिम संस्कृति से मिलकर भारतीय संगीत का माधुर्य समृद्धिशाली हुआ और उसमें एक ऐसी मन्त्र मुग्धक अपूर्वता आ गया कि जिससे भारतीय संगीत की आकर्षण शक्ति का अभिवृद्धि हुई और वह अधिक लोकप्रिय बना। [113]

लोक कलाएं—

लोक कलाओं में कला के शास्त्रीय विवेचन की दुरुहता के स्थान पर सहजता को स्वीकारा गया है। भावप्रवणता, जीवन्तता और मानवीय स्पन्दन से लोककला ने सजीव व सशक्त स्वरूप धारण किया। उत्साह, आनन्द और जीवन का चिरन्तन अनुभूति और मौलिकता ने लोककला को अधिक लोकप्रिय बना दिया। इसमें भावों की वह सूक्ष्म प्रांजलता नहीं मिलेगी, गूढ़ विवेचन नहीं होगा, नहीं और सिद्धान्तों की बोझिल चर्चा नहीं होगी। केवल हृदय से सहज उद्‌गार अभिव्यक्त होंगे और उन्हें भी विशेष अलंकरण द्वारा सुसज्जित करने की आवश्यकता नहीं होगी।

राजस्थान लोककलाओं की दृष्टि से बड़ा सम्पन्न है। एक ओर वे लोकमंगल की माधुर्यपूर्ण भावनाओं की अभिव्यक्ति करती है तो दूसरी ओर व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी वस्तुओं में अपनी दक्षता को प्रदर्शित करने का अवसर भी प्रदान करती है। साथ ही जनता के रहन सहन की आंचलिक विशेषताएं भी इनसे स्पष्ट होती है। मध्यकालीन मारवाड़ की प्रमुख लोककलाओं पर यहां संक्षेप में प्रकाश डाला जा रहा है।

मंडन कला—

मंडन का शास्त्र विवेचन कलाओं में चित्रकला के अन्तर्गत ही रखा जायेगा क्योंकि यह एक प्रकार से चित्रकला का लोक स्वीकृत रूप है। इसे लोकचित्रकला भी कहा जा सकता है। सभी कलाओं की तरह मंडन कला का लक्ष्य भी सौन्दर्य की प्रतिष्ठा रहा है। इसमें मंडनकार विविध आधारों पर अपनी प्रतिभा से रंगों द्वारा सौन्दर्य को मूर्तिमान करता है। मंडन जातीय चेतना का प्रस्फुटन भी होता है।

लोककला के एक रूप रेखाचित्रों का बोधक बन जाने के उपरान्त "माडणा" उसी अर्थ का वाचक नहीं रह गया। श्रृंगार और मंगल के साथ माडणे विशिष्ट सांस्कृतिक भावों के प्रतीक भी है। उनके साथ लोकमंगल की भावना भी जुड़ी रहती है। मंडनकला विशिष्ट कलात्मक व्यवस्था भी है, मस्तिष्क की कल्पना का प्रतिफलन भी है, ललित निर्माण भी है, भावों का चित्रात्मक लेखन भी है और सज्जापूर्ण फैलाव भी है। मंडन के मूल में मानव समाज संस्कार की प्रवृत्ति रही है। अतः घर द्वार, आंगन, शरीर के अंग

वस्त्र अस्त्र शस्त्र पात्र आदि सभी वस्तुओं पर उनको सजाने सवारने के लिए ना रखात्मक आलेखन तैयार किये जाते हैं व सब मडनकला में स्थान पाते हैं।[२२४]

मडनकला के मूल आधार इस प्रकार हैं —

(१) आगन व भित्ति (२) वस्त्र (३) शरीर के अवयव (४) पात्र एव (५) अन्य।

मारवाड की यह सास्कृतिक परम्परा है कि आगन धोने के बाद या लीपने के बाद उस खाली नहीं रहने दिया जाता क्योंकि इसे अपशकुन माना जाता है। अत आगन मे या तो माडणा माडा जाता है या फिर मूग चावल जौ और गेहू मे से कोई मागलिक वस्तु *थोडी सी फैला दी जाती है इसे शुभ माना जाता है।*[२२५] *भूमि अलकरण का प्रारंभिक* रूप जो कुछ भी रहा हो किन्तु आज जिस रूप मे यह उपलब्ध है वह कल्पना द्वारा बनाया सवारा रूप है। इन माडणो मे स्त्रियो के धार्मिक विचारो एव भावनाओ का योगदान भी होता है।[२२६] माडणो मे रूपायित विभिन्न आकृतियां विशिष्ट भावो की प्रतीक कही जायेगी।

(१) आगन व भित्ति पर माडणे

आगन के माडणो के बनाने मे सफेद खडिया हिरमिच या गेरू का प्रयोग किया जाता है। खड़िया को पानी मे घोलकर उस घोल मे छोटे कपडे का टुकड़ा भिगोकर अनामिका से भूमि पर माडणे बनाये जाते हैं। माडणो को हमेशा केन्द्र से शुरु करके *बाहर की ओर बढाया जाता है। इनकी अपनी बधी हुई इकाइयां हैं जिनके आधार पर* उन्हे कम ज्यादा बढा कर बनाया जाता है जिनको चारण जुआ झवरा बल भरत और फुलड़ा कहते हैं।[२२७]

उत्सवो तथा पर्वो की दृष्टि से इन माडणो का विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है। जैसे श्रावण मास के त्यौहारो पर पाच फूल चौपड़ सात फल व फुलडा। मकरसक्रान्ति पर फाणया इत्यादि। होली पर चग खाडा ढालकी। गणगौर पर गौर का बसणा गुणा इत्यादि। चैत्र मे नवरात्रि पर माता और पथवारी। शीतलाष्टमी पर शीतला माता।[२२८] घर मे किसी के जन्म होने पर पगल्ये तथा शादी विवाह और घर मे किसी नवागन्तुक के आगमन पर पगल्ये बैलगाड़ी रथ तथा अन्य सजावट के माडणे जैसे हटडी चौक गलीचा और फुलडिये इत्यादि बनाये जाते हैं।[२२९]

मारवाड़ के ग्रामो मे आज भी इस प्रकार के माडणो की प्राचीन परम्परा का निर्वाह देखा जा सकता है। मध्यकाल मे जब पक्के मकान बनाने के साधन नहीं थे। कच्चे मकानो की शोभा इन्ही से बढ़ाई जाती थी।

घर का मुख्य द्वार माण्डणो के लिए सबसे अधिक उपयुक्त और महत्वपूर्ण स्थान था। मुख्य द्वार के दोनो और द्वार मडन के लिए शुभ एव मगल प्रतीको से सुसज्जित किया जाता था। गृहस्वामी को आगन्तुक के प्रति या किसी पर्व सस्कार उत्सव के प्रति

हर्ष उल्लास एव आह्लाद की व्यजना का सन्निपात यहा स होता ह । गृहस्वामिनी क हृदय का आनन्द उमडकर माडणा क रूप म प्रकट होता था । मुख्य द्वार क अतिरिक्त मुख्य कक्ष (अतिथि कक्ष) शयन कक्ष इत्यादि स्थान माडणा स सुसज्जित किय जात थ ।

दावारा क माडणा का परम्परा भी बहुत प्राचान ह । पर्वा व मागलिक अवसरा पर आगन क माडणा क साथ साथ घर क मुख्य द्वार चन्दनवारा क अतिरिक्त विभिन्न रग क सुन्दर माडणा स सजाय जात थ । शहरा तथा कस्बा म कुछ स्थानीय या परम्परागत चित्रकार माडणा का कार्य करत थ पर गावा म यह काय स्त्रिया अपन हा हाथा स करती था । दावार क माडणा म कुवल्या कलश सुआ मारडा चापड सवरा गमला आदि हात थ ।[२३०] हाथा आर घाडा इत्यादि क माडण मागलिकता क साथ साथ सम्पन्नता क भा प्रतीक समझ जात थ । आजकल माटर रलगाडा व हवाई जहाज भी बनाय जान लग ह ।

(२) वस्त्र पर आलखित माडणे

वस्त्रा पर कढाइ बधज आर छपाई क माध्यम क माडण बनाय जात थ । कढाई म सामान्य रशमा व कलाबत आर गाट क माडण बधज म वस्त्रा का बाधकर बधज द्वारा चन्डा पामचा लहरिया आदि विभिन्न आकृतिया क माडण बनाय जात थ तथा वस्त्रा का आकर्षक बनान हतु सुदर छापा क माडण छाप जात थ । ओढणा म हसा क जाड माडन का पुरानी परम्परा रहा ह ।

(३) शरीर के अगा पर आलेखित माडणे -

अग सज्जा क लिए अस्थाई आर स्थाया दा प्रकार क माडणा का प्रयाग किया जाता था ।[२३१] अस्थाया माडणा म गाराचन कुकुम चन्दन कर्पूर आदि द्वारा सभ्रान्तवर्गीय महिलाए अपना मुखाकृति का सुसज्जित करता था ।

निम्नवग आदिवासा आर आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग क लागा के पास शृगार प्रसाधन क लिए न ता पर्याप्त धन था आर न ही उन्ह इसक लिए इतना समय मिलता था अत शृगार का अपना भूख व शरार पर स्थाई माडण आलखित करवा कर पूरी करत थ । अपन शरार पर गुदन गुदवाकर स्थाई माडण आलखित करवात थ । य माडण एक आर जहा रूपसज्जा क प्रतीक थ वही दूसरा आर ये स्त्री पुरुषा की आभूषणा की इच्छा का सतुष्टि प्रदान करत थ । सार शरार क अगा म विभिन्न प्रकार क गोदने गुदवाय जात थ । ललाट म चाद तिलक व आड व नत्रा का तार क समान पना बनान हतु नीच का पलक क साथ "माटया" गुदवाया जाता था । ग्रावा का सान्दर्य बढाने कठमाल गल का शाभा बढान क लिए धानूदर पूजा सम्बन्धा गादना म दवमूर्ति जस कृष्ण गणश सरन हनुमान रामदव का पगल्या शिव आदि या अस्त्र शस्त्र त्रिशल मन्दिर गुदवाय जात थ । विभिन्न आभूषणा व पशु पक्षिया का आकृतिया क गादना का प्रचलन

रहा है । इस प्रकार निर्धन नारी अल्प व्यय में ही अपने सम्पूर्ण शरीर के अंगों को अलंकृत कर लेती थी ।[232]

अंगों के माडणों में मेहन्दी के माडणों का विशिष्ट महत्त्व रहा है । स्त्रियों के श्रृंगार में मेहन्दी के माडणों के बिना श्रृंगार अधूरा ही समझा जाता था । मेहन्दी की गिनती नारी के षोडश श्रृंगार में होती रही है । महावर व मेहन्दी विशेषतौर से सौभाग्यवती स्त्रियाँ और कुमारियाँ लगाती थीं । तीज श्रावणी दीवाली होली ओर गणगौर आदि त्योहारों पर स्त्रियाँ मेहन्दी अवश्य लगाती थी । विधवाओं के लिए मेहन्दी रचाना वर्जित था । पर्वों के अनुरूप मेहन्दी के माडण हाथ की हथेली में बनाये जाते थे । गणगौर पर चनडी पड़ा गुणों के माडण तीज पर लहरिया और घेवर के माडण दीपावली पर पान व गलीचा के माडण होली पर चौपड़ चार कानणों के माडण प्रायः बनाये जाते थे । इसके अतिरिक्त त्योहारों पर्वो तथा मांगलिक अवसरों पर स्त्रियाँ अपनी रुचि के अनुकूल फूल पत्तियाँ बेल बूटों के मेहन्दी के माडण बनाकर अपनी कोमल हथेलियों की सुन्दरता को निखारती थी[233] । यह सामाजिक दृष्टि से भी शुभ और मांगलिक मानी जाती थी । पीहर से ससुराल जाते समय स्त्रियाँ प्रायः मेहन्दी अवश्य रचाती थी । यहाँ के लोकगीतों में मेहन्दी का खूब बखान किया गया है तथा सोजत व मालव की मेहन्दी मारवाड़ में बहुत प्रसिद्ध और लोकप्रिय रही है ।

(४) बर्तनों पर आलेखित माडण

बर्तन एवं अन्य पात्रों को सजाने के लिए उन पर भी स्थायी रंग से माडण बनाये जाते थे । कभी कभी कुछ पात्रों पर टांकी से भी विशिष्ट माडण आलेखित किये जाते थे । ऐसे बर्तनों में कटोरदान पानदान तश्तरियाँ आदि प्रमुख है । गिलास और लोटों पर भी माडण आलेखित (टंकित) किये जाते थे । मारवाड़ के नागौर जिले में पीतल और कांसे के बर्तनों को व उस पर माडणों का कार्य होता रहा है और इसके लिए उन्होंने विशेष प्रकार के स्वनिर्मित औजार भी बना रखे थे । कलाप्रिय मारवाड़ निवासियों को पीतल और कांसे के बर्तनों पर ही नहीं मिट्टी के विभिन्न बर्तनों पर भी माडण प्रिय रहे है । ये माडण बर्तन बनाने वाले कुम्हार स्वयं भी बना लेते थे । आज भी यह परम्परा यहाँ के गाँवों में देखी जा सकती है ।

(५) अस्त्र शस्त्र व अन्य पात्रों पर आलेखित माडण

पत्थरों मिट्टी की पट्टियों ढालों तलवारों पर भी अनेक प्रकार के माडण बनाये जाते थे । म्यान के पानों से ढाल कटार तलवार आदि पर माडण बनाने का रिवाज था । तलवार की मूठ पर प्रायः सिंह की मुखाकृति उत्कीर्ण की जाती थी ।[6] मारवाड़ के सिकलीगर इस कार्य में बड़े दक्ष थे । आजकल उपयोग न होने के कारण अस्त्र शस्त्र पर माडणों के आलेखन की यह प्रथा समाप्त होती जा रही है ।

यहा के सामाजिक जीवन क विभिन्न सस्कारा पत्रा उत्सवा आदि म यह मडन कला रसा बसी है ।[२३५] जिन वस्तुआ को जीवन क अन्तर्गत शुभ तथा मागलिक स्वीकार किया गया उन्ह ही मडन क रूप म यथास्थान प्रयुक्त किया गया । यहा क लाकगीता म भा यह भावना अनेक प्रकार स अभिव्यक्त हुई उदाहरणार्थ ना पक्तिया यहा द्रष्टव्य है —

लीप्या घृप्या आगणियो म्हारा
सस माडणा माडू जी ।[२३६]

माडणा स गृह का शाभा म ता अभिवृद्धि हाती ही था साथ ही माडणे उस प्राचीन भारतीय आतिथ्य परम्परा क उल्लास क भी परिचायक है जिसम अतिथि के स्वागतार्थ प्रवशद्वार एव घर आगन को विभिन्न प्रकार क शुभ आर मागलिक माडणो से अभिमडित किया जाता था ।[२३७]

लोक सगीत—

मध्यकाल म यहा क रजवाड़ा का स्थायित्व मिला इसक साथ ही आर्थिक सम्पन्नता हासिल का । यहा क रजवाड़ा न शास्त्रीय सगीत का जहा प्रश्रय दिया वही लोकसगीत का भी अच्छा विकास हुआ । उस काल का परिस्थितिया को लेकर अनेक लाकगीत बने जिनमें लाक-सगात की सहज छवि का देखा जा सकता है । सगीत जब राजकीय वैभव में घराना क घरा म आवद्ध हाकर शास्त्रीय परम्पराआ क दायर म सीमित और सकुचित होकर राजमहला ओर धनाढ्या का अनुरजन करन म मशगूल हा गया उस समय लोक सगीत का विस्तार हुआ । लाकसगात क साथ जनसाधारण का जुड़ाव होने के कारण इसमे सरलता व सहजता पाया जाती है जिससे इसका प्रचार प्रसार जन समाज में अधिक हुआ । आम आदमी ने सभवत इसीलिए शास्त्रीय परम्पराआ क झमेले म उलझना ठीक न समझा आर लाकसगात के माध्यम से ही अपने मनोगत भावा को सहज रूप मे अभिव्यजित करना उचित समझा ।

पाच ललित कलाओ में स्थापत्य मूर्ति एव चित्रकला की सीमाए उतनी विस्तृत नही हाता जितना काव्य आर सगात की हाती है । काव्य आर सगीत का प्रभाव क्षेत्र अन्य कलाआ का अपक्षा अधिक विस्तृत होता है । ठाक उसा प्रकार लोक-सगीत का प्रभाव क्षत्र भी शास्त्रीय सगीत से अधिक विस्तृत होता हे क्योकि उसका आधार शब्द आर नाद ह । यहा क लाकगाता म लोकसगात सशक्त ढग से मुखरित हुआ है ।[२३८] लाकगीता म सगात एव काव्य दूध और पानी का तरह घुल मिल गया है । यहा के लाकगाता क विषय घरेलू, ऋतु सबधा त्यौहार, उत्सव व रातिरिवाजा स सबधित होने क कारण व जावन क सभी क्षेत्रा को किसा न किसी रूप म प्रभावित करते रह ह ।

शास्त्राय सगीत को समझन क लिए राग रागनिया आराह अवराह ताल लय आर आलाप तान आदि कितन हा सगात क अगा का पूरा ज्ञान हाना जरूरा हे । जबकि

लोकसगात का स्वरलहरिया म उसका आर उतना ध्यान दिय बिना हा आनन्द लिया जा सकता ह।[२३९] लाकसगात का यह छटा लाकभजना हरजसा व लाकगाता म द्रष्टव्य ह। भजना व हरजसा म भक्तिभाव व पद रचना प्रमुख ह सगात का तो सहारा लिया गया ह। सगात क लिए यहा भक्तिपूर्ण पदो का रचना का ध्यय कभा नहा रहा फिर भा इन पदा का लोकप्रिय ओर अत्यधिक जनप्रिय बनान मे सगात तत्व का महत्वपूर्ण सहारा मिला ह।

स्वर तत्व का दृष्टि स हरजस एक प्रकार क लाकगात हा हे। इनम किसा शास्त्राय राग रागिना का प्रयोग न हाकर सुगम देशी सगात का प्रयाग मिलता ह जिसम किसा प्रकार का जटिलता अथवा स्वर विस्तार न हाकर सरलता व्याप्त रहता ह। ये लय एव धुन प्रधान होते ह। प्राय हरजसो म प्रथम पक्ति के अनुसार ही सभी कड़िया (पक्तिया) गाई जाती ह ओर उनमे अन्तरा नही रहता। प्रत्येक कडी के प्रारभ या अत म हा आ रामा मेरा राम "हरे राम म्हारा सावरिया गिरधारी गोविन्द गिरधारी आदि क प्रयाग भक्ति का सरस वातावरण बनाते है। प्रत्यक हरजस का अपनी स्वतत्र धुन हाती हे आर वह लोकसगीत की एक चीज क रूप म प्रतिष्ठित रहती हे। परन्तु अनेक पारिवारिक लोकगीता की मधुर धुन क आधार पर समय समय पर नए हरजस भी समाज में बनत और प्रचलित होत रहे ह।[२४०]

हरजस भजन व लाकगीता को गाने के विशेष अवसर हात ह। विभिन्न त्याहारो पर्वो उत्सवा ओर सस्कारो से सबधित उनके लोकगीत निर्धारित ह वे गाय जात है। हरजस अधिकतर स्त्रिया गाती है आर इसम प्राय विभिन्न अवतारा की लालाआ का वर्णन लौकिक शली मे बडी सहजता से किया हुआ मिलता हे। सगुण भक्ति के रस से सराबार इन हरजसो मे ईश्वरीय लाला का अनुभूतिजन्य अभिव्यक्ति म जनसाधारण की मालिक सहज ओर मार्मिक भावनाय उद्घाटित हाती हे।

भजना म मध्यकालीन भक्ति साहित्य बहुत ही सुन्दर ढग से उद्वलित हुआ ह। सगुण आर निर्गुण दोनो ही प्रकार की भक्ति के भजनो का यहा प्रचलन रहा परन्तु भजन अधिकतर निर्गुण भक्ति क परिचायक हे। कई प्रसिद्ध सता आर भक्ता ने विभिन्न प्रकार की राग-रागनियों आर शास्त्रीय परपराआ क आधार पर भजना का निर्माण किया जो निर्दिष्ट ताल ओर लय के अनुरुप ही गाये जाते हे।

धार्मिक पर्वो ओर लोकदेवताआ के उत्सवो पर भजन गाय जाते थ। वैस पुण्य अर्जित करन व पापा का विनाश करन हतु ग्यारस पूनम आदि धार्मिक तिथिया पर भा भजनो का आयाजन किया जाता था। यहा की ग्रामाण जनता म अधिकतर दादू कबार आदि के भजन प्रचलित थे। इसक साथ हा रामदेवजा पाबजा आदि लाकदवना आचल विशष क जूझार, भामिया व सतिया क भजन राताजगा दकर गाय जान थ। पश्चिमी

ारवाड मे तालादे रूपादे आदि की वेल आज भी रातीजगा के भजनो म गाये जाने का प्रचलन है ।

भजनों की भाति लोकगातो म भी लय गति ताल आदि का ख्याल रखा गया हे । वैसे इनमे विलावल काफी दश खमाज एव पीलू मुख्यतया प्रयुक्त होती हे । इनमे भी विलावल आर काफी का प्रयाग अधिक मिलता ह । इस प्रकार कुछ शास्त्रीय नियमो का निर्वाह भी लोकगीतो मे होता रहा ह । यहा की एक लोकगीत पद्धति माड' को कई लाग शास्त्रीय रागिनी का कोटि म भी रखते हे । मारवाड़ मे माड रागिनी का विशेष प्रचार रहा ह आर गाव की जनता से लेकर उच्च वर्ग तक के लोग माड गायकी को बहुत पसन्द करते रहे है ।

यहा के लोकसगीत मे जिन लोक वाद्यों का प्रयाग किया जाता है उनमे ढोलक ढोल मजीरे नगारे, चग डफ आदि मुख्य है । रावणहत्थे और इकतार पर सामूहिक गान हो या एकलगान यहा के लोग मस्त होकर गाते है । लोकगीतों के गायन के साथ कमायचा मोरचग आदि वाद्यो का प्रयोग भी किया जाता ह । भजनो मे तम्बूरा वीणा का प्रयोग भी होता ह । यहा क लोक वाद्यो के सम्बन्ध म यह भी द्रष्टव्य ह कि इनका निर्माण भी यही किया जाता रहा ह आर जो गायक जातिया ढोली ढाढी लगा आदि है वे वाद्यो के निर्माण कार्य को भी कुशलता से सम्पन्न करते थे ।

लोकनाट्य और ख्याल–

लोकजीवन में लोकनाटया का महत्वपूर्ण स्थान रहा ह । ख्याल स्वाग आर लीलाओ आदि के रूप में प्रस्तुत ये लोकनाट्य विशेषकर ग्रामीण जनता का स्वस्थ मनोरजन करने मे अपनी भूमिका प्रमुखता से निभाते रहे है । भरतमुनि ने लोकनाट्या को अलग से परिभाषित नही किया है किन्तु उनके द्वारा नाट्य की परिभाषा में जिन लोकधर्मी रूढ़ियों [२४१] का उल्लेख हुआ है वही लोकनाट्य का प्रमुख आधार ह । हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी लोकप्रवृति को नाटक की सफलता की मुख्य कसौटी माना हे । [२४२]

लोकनाट्य स तात्पर्य नाटक क उस रूप से है जिसका सम्बन्ध विशिष्ट शिक्षित समाज से भिन्न सर्वसाधारण के जीवन से हो और परम्परा से अपने अपने क्षेत्र के जनसमुदाय के मनोरजन का साधन रहा हो । [२४३] डा महेन्द्र भानावत ने लोक नाट्य की परिभाषा देते हुए लिखा ह "लोकधर्मी रूढ़ियों की अनुकरणात्मक अभिव्यक्तियां का वह नाट्य रूप जा अपने अपने क्षेत्र के लाकमानस का आह्लादित उल्लसित एव अनुप्राणित करता ह लोकनाट्य कहलाता है । [२४४]

लोकनाट्य किसा शास्त्रीय सिद्धान्ता का अनुसरण नहा करते इनम परम्पराओ का पूर्ण निष्ठा स पालन करन का प्रयास रहता है । इस सदर्भ म श्री देवीलाल सामर का यह कथन ध्यान दने याग्य ह कि - "लाकनाट्य किसी के द्वारा रचा नही जाता । न उसके

सवाद या गात हा काई लिखता ह आर न उसका काई पर्वाभ्यास हा हाता ह । फिर भा रगमच पर वह नाटक अपना प्रबल परम्परा क कारण कभा असफल नहा हाता । नाटक का धुन पहल स सबका कठस्थ रहता ह । रगमचाय प्रस्तुताकरण वशभषा का निर्धारण गान नाच क प्रकार ढाल नक्कार का ताल किसा लम्बा परम्परा स हा सबका याट रहता ह । .. दर्शक स्वय इन परम्पराआ मे रग पग हात ह ।.... परम्परा स काई हटना नहा चाहता । पाशाका मे ता किसा प्रकार का परिवर्तन हा हा नहा सकता । कई महानुभाव इन लाकनाटया का परिवर्तित रूप म पश करन का काशिश करत ह परन्तु व किसा का ग्राह्य नहा हाते । [२४५]

इस प्रकार क नाटयो के कथानक प्राय पारम्परिक हा हात है ।व एस ही नाटक का पकडत ह जिसका सामुदायिक महत्व हा । किसा परिवार विशष व्यक्ति विशष या वर्ग विशष क व्यक्तित्व पर एस नाटक का नायक वहा व्यक्ति बनता हे जा किसा न किसा रूप म सबक दिल म समाया हुआ हा । वह धार्मिक व्यक्ति भा हो सकता ह आर अनाखा प्रमा भी । वार, महात्मा आर चमत्कारा पुरुष ता इन नाटका के विषय बनत हा ह । राजस्थान क प्राय सभा लाकनाटय अपना परम्परा स बाहर नहा निकल हे । शास्त्राय एव आधुनिक नाटया का तरह उसक अग सर्वागाण दिशा म विकसित नहा हात । दर्शक नाटक क समस्त कथानक एव तत्वगत सिद्धान्ता स पूर्णरूपण अवगत हात ह जा बात रगमच पर प्रस्तुत नहा हाता उस व अपना कल्पना स पूरा कर लत हे । [२४६]

लाकनाटय सदा हा क्षेत्राय भाषाआ म रच जाते ह जिन लाकनाटया म क्षत्राय रग न हा वे लाकनाटय का दर्जा प्राप्त नहा करत ।[२४७] जहा तक लाकनाटय क प्रचार प्रसार का बात ह यह उसक नायक ओर उसका कथावस्तु पर हा अधिक निर्भर करता ह । लाकनाटया के क्षत्र क सम्बन्ध म डा महन्द्र भानावत का भा यहा विचार ह ।[२४८]

लाकजावन क सहज सस्कार इन लाकनाटया क स्रात हुआ करत ह । आपसा सद्भाव धार्मिक आयाजन मल उत्सव लाकानुरजन क विभिन्न साधना स लाकनाटया की अन्त सलिला प्रस्फुटित हाता ह । सामहिक जावन का परम्पराय इसम विस्तार पाती ह आर जनसाधारण का सरलतम प्रवृत्ति का यह आत्मिक विस्तार धार धार सामूहिक अभिव्यक्ति का एक ऐसा आडम्बरहान जनमच प्रस्तुत करता ह जहा जनसस्कृति आर जनमगल क समस्त क्रियाकल्प मान्यताए, विश्वास धर्म आर श्रुतिया अपन जनपदाय आनन्दाल्लास का खुलकर प्रदर्शन करता ह । लाकनाटया का यह स्रात सामूहिक जावन स बनता जुडता आर विकास पाता हुआ अपना रूढ परम्पराआ तथा प्रवृनिया का सुरक्षित रखता ह ।[२४९]

राजस्थान क लाकनाटया क जितन विविध रूप दखन का मिलत ह उतन शायद हा कहा दखन का मिल । य नाटय ख्याल स्वाग तथा लालाआ क रूप म विशष प्रसिद्ध

गए है । [०] मध्यकालीन मारवाड के परिप्रेक्ष्य मे इनका यहा विवेचन करना समीचीन होगा ।

ख्याल—

ख्याल की परिभाषा देते हुए डा महेन्द्र भानावत ने लिखा है लोकनाट्य का वह रूप जो परम्परागत रथा रथाई रगशाला मे लोकजीवन मे प्रचलित आख्यानो का प्रदर्शन कर सामान्य जनता का मनोरजन करता है ख्याल कहलाता है । [२५१]

मध्यकाल मे प्रचलित रास चर्चरि, फागु आदि खेलो से श्री अगरचन्द नाहटा ने ख्यालो की पूर्व परम्परा जोडने का प्रयास किया । उनके अनुसार जन साधारण मे जो मध्यकाल मे रास चर्चरि, फागु आदि रमे व खेले जाते थे वही पीछे से रमत रामत खेल ख्याल के नये रूप मे प्रकटित हुए । [२५२]

लोकनाट्य परम्परा के प्रारभ व उसके राजस्थान मे प्रवेश के सबध मे देवीलाल सामर का मत है कि- सत्रहवी शताब्दी मे आगरा के निकट ख्यालो की एक लोकधर्मी परम्परा शुरु हुई जिसका दायरा केवल काव्य रचना तथा किसी एतिहासिक तथा पौराणिक व्यक्ति से सम्बधित काव्य रचना की प्रतियोगिता तक ही सीमित था । इसी परम्परा ने प्रथम बार १८ वी शताब्दी मे राजस्थान के जन जीवन को आह्लादित किया । यह "ख्याल सर्वप्रथम कल्पना और विचारो से उत्पन्न कवित्व रचना का ही दूसरा नाम था परन्तु जब से वह रगमच पर खेल तमाशे का रूप धारण करने लगा यह खेल व ख्याल कहलाया । [२५३]

राजस्थानी लोकजीवन मे इन ख्यालो को खेल तमाशा स्वाग नाटकी माच रम्मत रामत आदि विभिन्न नामो से जाना जाता है । डा. महेन्द्र भानावत ने लिखा है कि इन मौखिक नामो के अलावा लिखित रूप मे नाटिक ब्यावला नासाणी लीला मासिका लावणी रसिया कथा कीर्तन सिलोका धमाल बहार, चरित्र टप्पा आदि नाम भी ख्याल के रूप मे प्रयुक्त होते पाये जाते है । [२५४] डा महेन्द्र भानावत का यह मत ग्राह्य नही है क्योकि इनमे से नाटिक ब्यावला व लीला आदि नाम ही ख्याल के पर्याय या समान अर्थी शब्द के रूप मे स्वीकार किये जा सकते है किन्तु लावणी नासाणी सिलोका धमाल टप्पा आदि तो लोकसाहित्य की विभिन्न विधाए है इनको ख्याल नही कहा जा सकता । इतना जरूर है कि विधाओ का प्रयोग ख्यालो मे कभी कभी देखने को मिलता है ।

ख्याल लोकनाट्यो मे से ही एक परिष्कृत रूप है । [२५६] जिसमे नाटकीय तत्व अधिक रहता है । इनकी विषयवस्तु का प्रमुख आधार लोकजीवन मे प्रचलित कथा और आख्यान होते है । जनसाधारण का मनोरजन और लोकसस्कृति का उद्घाटन इनका प्रधान लक्ष्य है । ख्यालो के माध्यम से सामाजिक सौहार्द और उन्नत भावनाओ के विकास मे भी सहायता मिलती है । मारवाड मे इनमे से माच के ख्याल कुचामणी ख्याल नागौरी ख्याल

स्थानको के अतिरिक्त यहा के ख्याला म मुस्लिम प्रमाख्यान भी मिलत है। गजल का यहा के ख्याला म जो प्रयाग दखनू का मिलता है वह मुस्लिम सम्कृति का हा एक प्रभाव व प्रतिफल कहा जायगा। यही बात 'छेल टटाऊ मानाराणी का ख्याल' का इस एक गजल स स्पष्ट होता है—

अथ गजल म्हांनी के रूप की
सरसत सीमरू सारदामाय सदा करा नी मरी साय।
गवरी सुत माय बुध बताय कवीयण गाव चित लाय।
म पठाण हू दिली करा इसक लाग्या म्होना से मरा।
दख्या नगर अमदावाज ज्या तो है पठाण को राज॥
ऐस हरम लटी रहे नाव उसी कू म्हाना कहे।
उनकी है वारीयाणी जात नीरमल अग सोवना गात॥
प्यारी तणा इसा परगास अधारा मे हुव उजास।
निलवट आउ विराजे खूब चदन वदन मुखड़ा महबूब।
वाली और तीमणिया जार चुन्या जड्यो सीस पर बार॥

इसक अतिरिक्त नागार जनपद म चिड़ावा ख्याला का प्रचार-प्रसार भी खूब रहा जिनके आधार पर कालान्तर मे कुचामणा ख्याल शली का विकास हुआ जिसकी परम्परा आज तक विद्यमान है।

कठपुतली के ख्याल—

आदिकाल से ही जादू टाना तथा प्राकृतिक प्रकोपा से बचने क लिए सास्कारिक पुतला का प्रयोग किसी न किसा रूप मे मानवीय जीवन म होता रहा है। न कवल भारत बल्कि विश्व क अन्य देशो म भी मानव न अपनी आदिम अवस्था में इन प्रताका का सहारा लिया। ये पाषाण काष्ठ एव मिट्टी से निर्मित पुतले पारिवारिक एव जातीय देवताओ के रूप मे प्रतिष्ठित हात रहे। इनम दुखी जना की मनाकामनाए पण करन की क्षमता माना गयी थी। उस समय मानव की सुरक्षा के लिए इन प्रतीका का सहारा[२५८] लेना स्वाभाविक था।

आदिम मानवीय आस्थाओ और मान्यताओ की अभिव्यक्ति का प्रतीकात्मक रूप धारण करन वाली य पुतलिया मानवाय आकृतिया म प्रस्तुत न हाकर केवल प्रतीक रूप म था। इस सम्बन्ध म दवालाल सामर का यह कथन द्रष्टव्य ह

मानवाय आराध्य के विविध पुतल मृतात्माओ के प्रतीकस्वरूप विविध पूर्वजा का मूर्तिया लोकदेवताओ का काष्ठ मिट्टी तथा पाषाण निर्मित प्रतीकात्मक मूर्तिया मृतका की समाधि पर अंकित विविध आकृतिया महापुरुषा क जावनाकित पट चित्र आदि एस पुरातन प्रतीक है जा पुतलिया क प्रारभिक प्रकार है। व प्रारभ मे मनोरजन प्रदाता नहा

थ बल्कि उनके लिए मनोरंजन का व्यवस्था होती था। वे किसी भी जाति के लिए व्यवसाय के माध्यम नहीं थे बल्कि उनका अविरत परिचर्या के लिए व्यवसाय किया जाता था। वे किसी पात्र के रूप में अवतरित होकर किसी का गुणगाथा नहीं कहते थे बल्कि उनका गुणगाथा के लिए विविध आयोजन किये जाते थे। वे अनेक गीत नृत्य पर्व उत्सव त्योहारों के प्रेरक थे। वे संरक्षक त्राता सक्टहर्ता तथा निर्विघ्न जीवन के प्रणेता थे।[२५९]

धीरे धीरे इन पुतलियों का विकास होता रहा और ज्यों ज्यों उनमें निखार आया तो उनकी आराधना के प्रतीक भी बदले। पुतलियाँ कालान्तर में मात्र प्राकृतिक शक्तियों तक ही सीमित नहीं रहीं वे मानव के सामाजिक जीवन के नानारूपों की अभिव्यक्ति का माध्यम भी बनीं। काष्ठनिर्मित ये पुतलियाँ कठपुतलियों के नाम से अभिहित होकर प्रसिद्ध हुई। उसके विविध सांस्कारिक प्रतीक, आकार आदि सुस्पष्ट एवं निश्चित स्वरूप धारण करने लगे।

हमारे देश में कठपुतलियों की बहुत ही प्राचीन परम्परा रही है। मानवी अभिनेता ने रंगमंच संभाला उससे पूर्व ही कठपुतलियाँ रंगमंच पर अपना प्रभुत्व जमा चुकी थी। भारत मिश्र यूनान रोम तथा चीन में तो सभी धार्मिक तथा ऐतिहासिक व्यक्तित्व एवं उनके कृतित्व कठपुतली के माध्यम से ही अभिनीत होते थे।[२६०]

कठपुतली का परिभाषा उसकी आकृति व वेशभूषा का वर्णन करते हुए डा महेन्द्र भानावत ने लिखा है काठ के धडवाली बिना पाँव की वह गुड़िया जो अपने गाल चपटे चेहरे लंबी मोटी आँख उभरे ऊँचे कान फूले हुए नथुने लटके खुले ओठ तथा चपटी चौड़ा कनपटी लिए रंग बिरंगी वेशभूषा में अपना रूढ़िगत रूप सज्जा एवं आकार प्रकार के साथ लचक ली हुई होती है कठपुतली कहलाती है। इसमें राजाओं की पुतलियाँ लम्बे झग्गे का पहने होती है। ये झग्गे रूपहली सुनहली चौड़ी तथा पतली कोर से सजे होते हैं। झग्गो के ऊपर साधारण कपड का पोतिया पहना रहता है। इनके एक हाथ में तलवार तथा दूसरे में ढाल रहता है। ये पुतलियाँ १४"-१६ लम्बी होती है। राजदरबारी तथा अन्य पुतलियाँ अपेक्षाकृत इनसे छोटी होती है। कठपुतली नचाने वाला सूत्रधार अपने मुँह में एक विशेष प्रकार की सीटी रखता है जिससे कठपुतलियों की बोली निस्सृत होती है। इस ढोलक बजाने वाली महिला अपनी बोली में उथलाती है।[२६१]

राजस्थानी पुतलियों में अतिरंजना एवं प्रतीकवादिता की पराकाष्ठा होती है। चेहरे का आकार शरीर से बड़ा आँखें अनुपात से बड़ी वक्षस्थल अत्यन्त लघु एवं उभरा हुआ तथा पाँवों की अनुपस्थिति इनकी अपनी विशेषता है। राजस्थानी पुतलियों के पुरुष पात्र लहंगनुमा अंगरखा पहनते हैं जिससे उन्हें पाँवों की आवश्यकता नहीं होती। सूत्रों द्वारा

सचालित होन क कारण इनका दाय बाय झलन तथा ऊपर नाच फुदकन का क्रियाए अत्यन्त सजाव हाता है आर इसस कठपुतलिया का सचालन अत्यन्त प्राणवान बन जाता है।[२६२]

कठपुतलिया क सूत्रधार आर स्थापक प्राय नट आर भाट जाति क लाग हुआ करत थ। नट आर भाटा न कठपुतला क ख्याला का अपनी आजीविका का साधन बनाया तथा लाकानुरजन का भावना स उनका कला परम्परावादा लीक पर विकास पाती रही। इन नटा व भाटा क लिए कठपुतलिया आजाविका का साधनमात्र ही नहीं सवस्व था। य लाग अपन पूर्वजा का कठपुतलिया का दवताआ का भाति पूज्य समझा करत थ आर इनक वशधर अपन इस पतृक धध का परम्परा का पाढा दर पाढ़ी जारी रखन का प्रयास करत थ। पुतलिया क प्रति आज भा उनक हृदय म इतना आदर आर सम्मान ह कि व पुरानी व काम म न आन वाला जाण शाण पुतलिया का इधर उधर या हा नहा फक्त जल म प्रवाहित करत ह। परम्पराआ तथा जाताय बधना म बध हुए भाट आज भी अपनी पुतलिया म सशाधन आदि का सुझाव नहीं मानत।[२६३]

मध्यकाल म इस कला का राजकाय सरक्षण तथा प्रोत्साहन रहा। विशिष्ट राजाआ की जीवन गाथाए इन कठपुतलिया की कथावस्तु बना उनम (१) विक्रमादित्य क समय का सिंहासन बतासी (२) पृथ्वाराज चाहान क समय का "पृथ्वाराज सयागिता आर अमरसिंह राठौड़ क जावन पर आधारित अमरसिंह राठाड़ का खेल विशेष उल्लेख नाय है। उपर्युक्त इन रचनाओ म स मारवाड़ म आज कवल अमरसिंह राठाड का खल हा रूपान्तरित अवस्था म शष बचा ह।[२६४] राजस्थान क सभी कठपुतला भाट प्राय अमरसिंह राठाड का खेल ही प्रदर्शित करत ह।[२६५]

नागार क राव अमरसिंह राठाड का शार्य कथानक न केवल कठपुतलिया म बल्कि राजस्थाना ख्याला म भी बड़ा लोकप्रिय रहा है।[२६६] अमरसिंह राठाड के जीवन का घटना जो सन् १६४४ के आस पास का ह कठपुतला के खेल का पर्याय बन गई ह।

लीलाए–

राजस्थाना लाकनाट्या का एक स्वरूप लीलाआ क रूप म भी अभिव्यक्त हाकर लाकजावन आर लाकसस्कृति का एक अभिन्न अग बन गया है। लीला की परिभाषा करते हुए डा. महन्द्र भानावत न लिखा है - "अवतारा के चरित्र का अभिनय दिखाने उन्ह रिझाने तथा उनका गुणगान करन के लिए जो स्वरूप नृत्य तथा गायका प्रदर्शित का जाता है उसे "लाला कहत ह।"[२६७]

भरतमुनि न अपन नाट्यशास्त्र म रासक क विभिन्न भदापभेदा का उल्लेख किया ह यहा रासक (रास) आग चलकर विविध लालाआ क सृजन का आधार बना। इन्हा पर आधारित रामलीला आर रासलाला का प्रचलन मारवाड़ म अधिक दखन का मिलता

हे । लोकजावन मे प्रयुक्त हान वाला प्रत्यक लाला के विषय अवतारचरित्र हुआ क्र
हे आर वे अपने पूज्य अवतारा का रिझाने व उसके प्रति श्रद्धा एव भक्ति को प्रदर्शि
करन के लिए उनके जीवन चरित्रा को लीलाओ के माध्यम से उद्घाटित करते ह
राजस्थान मे मुख्यत रासलीला रामलीला समयासनक्रादिका की लीलाए, गरासिया व
गोर लीला रावता की रामत गवरी रासधारा आदि लालाआ के कई रूप प्रचलित रहे
[२६८] जिसम से मारवाड़ म आलाच्यकाल मे रामलीला रामलाला आर नृसिंहलीला व
प्रचलन मध्यकाल म अधिक था ।

रासलीला —

रासलाला के प्रवर्नक हित हरिवश मान जाते ह । सगुणभक्ति की सरस रस धार
जनमानस मे प्रबल वेग स हिलारे लने लगी तब श्रीकृष्ण का लीला वर्णन केवल
भजन कार्तन तक ही सीमित नहा रहा आर वह नाना भावाभिव्यक्तिया क रूप मे प्रक
होने लगा । इसी क्रम मे रासलाला का प्रादुर्भाव हुआ एव कृष्ण क भजन कीर्तन के सा
कृष्णलाला की विभिन्न झाकिया भावपूण मुद्राआ म प्रस्तुन का जान लगी । रासलील
म विभिन्न वाद्य यन्त्रो व राग रागनिया पर सूर नन्द माधादास मारा आदि भक्तो के पद
भा गाय जाने लग । वास्तव म रासलाला का गातिनाटय क रूप म मन्दिरो में सर्वप्रथम
वल्लभाचार्य ने प्रचारित किया ।[२६९] इस प्रकार हितहरिवश वल्लभाचार्य आदि महा
त्माआ ने लोकप्रचलित जिस शृगारप्रधान रास म धम क साथ नृत्य व सगीत की पुन
स्थापना के साथ रसिकशिरोमणि श्रीकृष्ण की जावनलीला का समावेश किया वही राधा
तथा गोपियों के साथ श्रीकृष्ण की शृगारपूर्ण क्रीडाआ से युक्त होकर वह रासलीला के
नाम से अभिहित हुआ ।[२७०]

रासलीला मे कृष्ण की विविध लीलाए दिखाई जाती था । कृष्ण राधा व गापिकाओ
के भावपूर्ण नृत्य रावक ढग स अभिनीत किये जात थे । इसमे भाग लने वाले अभिनेता
"स्वरूप" कहलात थ ।[२७१] रासलीला में धार्मिकता क साथ कला व सगीत की
प्रधानता[२७२] भी होती था । सगीत व कला के साथ कृष्णलीला म लोकजीवन का कल्पित
धारणाआ का सम्मिश्रण हुआ आर रासलीला म इनके मिश्रित रूप से मचित हाने के
कारण उसके प्रसग लोकजावन म अधिक रुचिकर व प्रिय बन गये । मथुरा वृन्दावन की
रासलीला यहा भा लोकप्रिय हुई ।

रामलीला—

रामलाला क बारे म एसा प्रचलित ह कि इसका प्रारभ गास्वामा तुलसादास ने
सर्वप्रथम अपन निर्देशन म काशा म किया था ।[२७३] उनके द्वारा रचित रामचरितमानस
ग्रथ जिसम राम की सम्पूर्ण लाला दर्शाया गया ह बहुत हा लाकप्रिय हुआ । रासलाला
का भाति रामलाला म राम का विविध लालाए चित्रित हाता थी । रामलाला क

प्रचार प्रसार मारवाड़ म रासलीला के बाद म हुआ । यहा यह बात उल्लेख योग्य है कि रामलीला स रामकथा ने मध्यकालीन मारवाड़ के लोकजीवन म व्यापक लोकप्रियता हासिल की और कालान्तर मे भी यह क्रम जारी रहा। रामलीला म तुलसीकृत रामचरितमानस की चौपाइया भी अभिनय के साथ पढी जाती थी । मारवाड़ म रामलीला का मचन अधिकतर दीपावली के आस पास हुआ करता था । यह परम्परा देहातो व कस्बों म आज भी प्रचलित है ।

नृसिंह लीला—

चौबीस अवतारो म नृसिंह को भी एक अवतार माना गया है । रामलीला म राम और कृष्णलीला मे कृष्ण की जीवन झाकी प्रदर्शित होती थी उसी भाति नृसिंहलीला मे नृसिंह अवतार की झाकी प्रदर्शित की जाती थी जिसम भक्त प्रह्लाद की हिरणाकश्यप से रक्षा की गया । नृसिंहलीला रामलीला व रासलीला की भाति विस्तृत नही है और न ही उनके जैसा उसका लोकजीवन मे प्रचार-प्रसार हुआ । मारवाड़ राज्य मे अनेक गावो म इन नृसिंहद्वारा स ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र मे नृसिंह भगवान का व्यापक प्रभाव रहा होगा । जोधपुर नगर म नृसिंह चतुर्दशी का आज भी मेला भरता है जिसे "मलूके का मेला" नाम स भी पुकारा जाता है ।

स्वाग—

दूसरे का रूप धारण करने के लिए जो वेश धारण किया जाता है उसे स्वाग कहते है । दूसरे शब्दो मे रूप धारण करने की वह क्रिया जो किसी रूप को अपने म आरोपित कर उसका प्रतिरूप प्रस्तुत करती है स्वाग कहलाती है । इन स्वागो के अनुकरण के रूप म मूल की प्रतिछाया रहती है । अनुकरणकर्ता उपर्युक्त वेश परिवर्तन करके अपने खेल तमाशे इस ढग स प्रदर्शित करता है कि कभी कभी मूल और अनुकरण का भेद करना भी कठिन हो जाता है ।[२७४]

मारवाड़ मे विवाह शादी के अवसरो पर तथा कई उत्सवो व त्योहारों पर लोकानुरजन के लिए कई तरह के स्वागो के आयोजन की परम्परा रही है । शादी विवाह के अवसरो पर महिला वर्ग की ओर से विविध प्रसगो पर स्वाग आयोजित किये जाते थे ।[२७५] गीतो के सम्पुट के साथ हास्य विनोद के वार्तालापो से युक्त ये स्वाग महिला समुदाय के मनोविनोद के प्रमुख माध्यम तो थे ही साथ ही इन स्वागो के माध्यम स आलोच्यकाल की लोक-धारणाओ का भी पता चलता है । गणगौर के पर्व के पश्चात् जोधपुर म धीगा गवर का जो मेला आयोजित होता है उसम आज भी विविध स्वाग व प्रहसन महिलाओ द्वारा ही आयोजित होते है ।

पुरुषो द्वारा पर्वो पर आयोजित स्वागो म नृसिंह चतुर्दशी पर जोधपुर म मलूके की सवारी का स्वाग होली के पर्व के पश्चात् ब्यावर व पाली म बादशाह की सवारी का

है। लाकजीवन म प्रयुक्त हान वाली प्रत्यक लाला क विषय अवतारचरित्र ह
हे ओर वे अपन पूज्य अवतारो का रिझाने व उसके प्रति श्रद्धा एव भक्ति का
करन के लिए उनक जावन चरित्रा को लीलाओ के माध्यम से उद्घाटित व
राजस्थान म मुख्यत रासलाला रामलीला समयासनकादिका की लीलाए, गर्रा
गार लीला रावतो की रामत गवरा रासधारा आदि लालाओ क कई रूप प्रचलि
[२६८] जिसमे स मारवाड़ म आलाच्यकाल मे रासलाला रामलाला आर नृसिहल
प्रचलन मध्यकाल म अधिक था।

रासलीला –

रासलीला के प्रवर्तक हित हरिवश मान जात है। सगुणभक्ति की सरस र
जनमानस म प्रबल वग से हिलार लने लगी तब श्रीकृष्ण का लीला वर्णन
भजन कीर्तन तक हा सीमित नहा रहा आर वह नाना भावाभिव्यक्तिया के रूप म
होने लगा। इसी क्रम मे रासलाला का प्रादुर्भाव हुआ एव कृष्ण क भजन कीर्तन
कृष्णलाला की विभिन्न झाकिया भावपूण मुद्राआ म प्रस्तुत का जान लगी। राम
मे विभिन्न वाद्य यन्त्रो व राग रागनिया पर सूर नन्द माधादास मारा आदि भक्ता
भा गाय जान लग। वास्तव मे रासलाला का गातिनाटय क रूप म मन्दिरा म स
वल्लभाचार्य ने प्रचारित किया।[२६९] इस प्रकार हितहरिवश वल्लभाचार्य आदि
त्माआ ने लोकप्रचलित जिस शृगारप्रधान रास म धम क साथ नृत्य व सगीत क
स्थापना के साथ रमिकशिरोमणि श्रीकृष्ण की जावनलीला का समावेश किया वह
तथा गोपियों के साथ श्राकृष्ण की शृगारपूर्ण क्रीडाआ से युक्त हाकर वह रासला
नाम से अभिहित हुआ।[२७०]

रासलीला म कृष्ण की विविध लीलाए दिखाई जाती था। कृष्ण राधा व गापि
के भावपूर्ण नृत्य रोचक ढग स अभिनीत किय जाते थ। इसम भाग लेन वाले अ
स्वरूप कहलात थे।[२७१] रासलीला मे धार्मिकता क साथ कला व सगीत
प्रधानता[२७२] भी होती था। सगीत व कला क साथ कृष्णलाला म लोकजीवन की क
धारणाआ का सम्मिश्रण हुआ आर रासलाला मे इनके मिश्रित रूप से मचित हा
कारण उसक प्रसग लोकजावन म अधिक रुचिकर व प्रिय बन गय। मथुरा वृन्दाव
रासलीला यहा भा लाकप्रिय हुई।

रामलीला–

रामलीला क बारे म ऐसा प्रचलित है कि इसका प्रारभ गास्वामा तुलसादा
सर्वप्रथम अपन निर्देशन मे काशी म किया था।[२७३] उनके द्वारा रचित रामचरितम
ग्रथ जिसम राम का सम्पूर्ण लाला दर्शाया गया है बहुत हा लाकप्रिय हुआ। रास
का भाति रामलाला म राम का विविध लालाए चित्रित हाता थी। रामलाल

मे भी) बना हुआ है। वस्त्राभूषणों के प्रति चाव और लगाव की मूलभावना तो वही है परिवर्तन हुआ है तो केवल विविध युगों में उनके स्वरूपों में।

आभूषण—

आभूषण के प्रति मानव के आकर्षण के कारण निम्न कहे जा सकते हैं —

सबसे प्रथम तो यह कि वह अपने सौन्दर्य में वृद्धि करने हेतु इनका प्रयोग किया करता है। दूसरा कारण वैभव प्रदर्शन को माना जा सकता है। तीसरी मान्यता है कि विशेष प्रकार के रत्नों से जटित विविध धातु के आभूषण पहनने से ग्रहों की कुदृष्टि या अन्य प्रकार के अनिष्टों से बचाव होता है तथा विशेष प्रकार के नगीनों से युक्त अंगूठी इत्यादि धारण करने से धन-सम्पदा एवं वैभव में वृद्धि होती है। लोगों की इस प्रकार की कई विचारधाराएं आभूषणों के प्रचलन में निस्संदेह सहायक रही होगी। वैदिक युग के आर्यों की भी यह धारणा थी कि स्वर्ण धारण करने से आयु की वृद्धि होती है। इसी प्रकार कई देशों के प्राचीन चिकित्सकों ने विविध रत्नों तथा धातुओं में रोगों को नाश करने की शक्ति भी बताई थी। जैसे प्राचीन काल में यह विश्वास था कि एशब नाम के संग को पहिनने से हौल दिल का रोग दूर हो जाता है। अथर्ववेद के अनुसार सुवर्ण से यक्ष्मा का रोग नष्ट होता है।[१७९]

मध्यकाल में आभूषण धारण करने के पीछे सौन्दर्यवृद्धि, वैभव प्रदर्शन एवं लोगों की रुचि आदि प्रमुख कारण रहे हैं। आभूषणों के आकार प्रकार और उनके प्रयोग के पीछे हमारी सांस्कृतिक परम्पराएं व सामाजिक मान्यताएं और लोक-संस्कार एवं उनकी भावना का इतिहास छिपा है। इससे हम अपनी सांस्कृतिक धरोहर की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

मरुप्रदेश में जहां धन की विपुलता नहीं है वहां भी गहनों के प्रति असाधारण लगाव दिखाई पड़ता है। इसका मुख्य कारण यह जनभावना है कि गहना बनवाना आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से भी उपयोगी माना जाता रहा है। मारवाड़ में एक कहावत प्रसिद्ध है गणा भूखा रा भाजन अर धाया रौ सिणगार हुवे अर्थात् गहना दुर्भिक्ष आदि असामान्य परिस्थितियों में गरीब लोगों के लिए भोजन जुटाने में सहायक सिद्ध होता है वहां अमीरों के लिए शृंगार का काम देता है।

मध्यकालीन मारवाड़ में आभूषणों का प्रयोग आम था। महिलाएं ही नहीं यहां के पुरुष भी आभूषणों का प्रयोग करते थे। कुण्डल, हार, बाजूबन्द, मुद्रिका का प्रयोग पुरुष व महिलाएं दोनों ही करते थे।[१८०] पुरुष कानों में लूंग मुरकियां जाला झाला गले में डोरा कठला हार, हाथ में मोठिया अंगुलो में बींटी सिर पर सिरपेच कलंगी आदि का प्रयोग करते थे। राजपरिवार व सामन्तों व जागीरदारों में पांव में सोने का कड़ा पहिनने का रिवाज भी था परन्तु इसका प्रयोग तो नामी सिरदार और राज्य की ओर से स्वीकृत

स्वाग यहा बड़े पैमाने पर आयोजित होते थे जिसकी परम्परा का क्रम आज भी स्मावश नारी है।

पेशेवर लोगों द्वारा भी विभिन्न प्रकार के स्वाग बनाने का रिवाज था। विवाह एवं अन्य हर्ष के अवसरों पर भाड जाति के लोगों द्वारा भाडाई करके नेग के रूप में अपना नेगाचार लेने का उल्लेख मिलता है। कुछ लोग स्वाग से ही अपना आजीविकोपार्जन करते थे। ऐसे भाडो को यहा "बहुरूपिया" के नाम से जाना जाता है। जोधपुर के भाड सिर्फ नकल ही उतारा करते थे। जोधपुर का रामाभाड इसमें सिद्धहस्त था। उसके पुत्र धनरूप को महाराजा भीमसिंह (१७९३ १८०३ ई सन्) ने भाड का खिताब दिया था।[२७६]

कच्चा घोड़ी नामक स्वाग भी पेशेवर लोगों द्वारा प्रस्तुत किया जाता था जिसमें लकड़ी की बनी घोड़ी को कमर में पहनकर आदमी नाचा करता था। कच्छी घोड़ी जिसके पाव नहीं होते थे पाव की जगह चारों ओर कपड़े का झूल लगा होता था जिससे नाचने वाले व्यक्ति के पाव दिखाई नहीं देते थे। कच्छी घोड़ी को नचाने का काम ढोली कुम्हार, सरगड़ा भी मुसलमान बावरी आदि जाति के लोग करते थे। इस कार्य में दक्ष व्यक्ति ढोल की सुमधुर ध्वनि पर शादी विवाह के अवसरों पर बड़ा मनोहारी नृत्य प्रस्तुत करता था। कहा कहीं कच्छी घोड़ी के नाच के साथ स्त्री स्वागिया भी होती। इन दोनों के बीच परस्पर मीठे रोचक, सरस शृगारमूलक व हास्यप्रधान चुटीले सवाल जवाब चलते रहते[२७७] जिससे दर्शकों का भरपूर मनोरंजन होता था।

मध्यकाल में ख्याल कठपुतली लीलाए, स्वाग आदि लोकनाट्यों के इन विविध रूपों की मारवाड़ में अपनी महत्ता रही है। उस समय जब लोकानुरंजन के आज जैसे विकसित साधन उपलब्ध नहीं थे तब देहातों में मनोरंजन के मुख्य साधन लोकनाटक ही होते थे। ऐतिहासिक सामाजिक धार्मिक व शृगारिक प्रसगो आदि पर आधारित इन लोकनाटकों के कथानक व कथावस्तु गायकी एवं नृत्य से परिपूर्ण होते थे। रामलीला रास आदि के माध्यम से जनजीवन में भक्तिभावना का प्रचार प्रसार उस काल में होता रहा है और अनेक लोगों की आजीविका का साधन भी ये लोकनाटय रहे हैं।

वस्त्राभूषण व साज सज्जा—

मनुष्य का वस्त्राभूषण साज सज्जा व अलकरणों के प्रति स्वाभाविक आकर्षण प्रारभ से ही रहा है। भारतीय तो प्राचीनकाल से आभूषण प्रेमी रहे हैं। यह मानना सर्वथा भूल है कि मनुष्य जब असभ्य था उस काल में ही आभूषण धारण करता था और ज्यो ज्यो वह सभ्य हुआ उसने इनका परित्याग किया। आज भी अमेरिका तथा फ्रास जैसे सभ्य देशो मे भी आभूषणो के प्रति आकर्षण कम नहीं हुआ है।[२७८] इससे स्पष्ट होता है कि आभूषणों के प्रति मानव का सहज आकर्षण आदियुग से लेकर आज तक (वर्तमान

म भी) बना हुआ ह । वस्त्राभूषणा क प्रति चाव आर लगाव का मूलभावना ता वहा ह परिवर्तन हुआ ह ता केवल विविध युगा म उनक स्वरूपा म ।

आभूषण—

आभूषण के प्रति मानव क आकर्षण क कारण निम्न कह जा सकत ह —

सबस प्रथम ता यह कि वह अपन सान्दर्य म वृद्धि करन हतु इनका प्रयाग किया करता ह । दूसरा कारण वभव प्रदर्शन का माना जा सकता ह । तासरा मान्यता ह कि विशेष प्रकार क रत्ना स जटित विविध धातु क आभूषण पहनन स ग्रहा का कुदृष्टि या अन्य प्रकार के अनिष्टा स बचाव हाता है तथा विशेष प्रकार क नगाना स युक्त अगूठा इत्यादि धारण करन स धन सम्पदा एव वभव म वृद्धि हाती ह । लागा की इस प्रकार का कई विचारधाराए आभूषणा क प्रचलन म निस्सदह सहायक रही होगा । वदिक युग के आर्यो का भा यह धारणा थी कि स्वर्ण धारण करन स आयु का वृद्धि होता ह । इसी प्रकार कई दशा क प्राचीन चिकित्सका न विविध रत्ना तथा धातुआ म रागो को नाश करने का शक्ति भा बताई था । उस प्राचान काल म यह विश्वास था कि एशब नाम के सग का पहिनन स हाल दिल का राग दूर हा जाता ह । अथववद क अनुसार सुवण स यक्ष्मा का राग नष्ट होता ह ।[२७९]

मध्यकाल म आभूषण धारण करन क पाछ सान्दर्यवृद्धि, वभव प्रदर्शन एव लागा का रुचि आदि प्रमुख कारण रह ह । आभूषणा क आकार प्रकार आर उनक प्रयाग क पाछ हमारा सास्कृतिक परम्पराय व सामाजिक मान्यताए आर लोक सस्कार एव उनका भावना का इतिहास छिपा ह । इससे हम अपना सास्कृतिक धराहर की जानकारी प्राप्त कर सक्त ह ।

मरुप्रदेश म जहा धन का विपुलता नहा ह वहा भी गहना क प्रति असाधारण लगाव दिखाई पड़ता है । इसका मुख्य कारण यह जनभावना ह कि गहना बनवाना आर्थिक सुरक्षा का दृष्टि से भा उपयागा माना जाता रहा ह । मारवाड म एक कहावत प्रसिद्ध है "गणा भूखा रा भाजन अर धाया रा सिणगार हुव" अथात् गहना दुर्भिक्ष आदि असामान्य परिस्थितिया म गराब लागा क लिए भोजन जुटान म सहायक सिद्ध होता ह वहा अमीरो के लिए शृगार का काम दता ह ।

मध्यकालान मारवाड म आभूषणा का प्रयाग आम था । महिलाए ही नहा यहा क पुरुष भा आभूषणा का प्रयाग करत थ । कुण्डल हार, बाजूबन्द मुद्रिका का प्रयाग पुरुष व महिलाए दाना हा करत थे ।[२८०] पुरुष काना म लूग मुरकिया बाला झला गले म डाग कठला हार, हाथ म माठिया अगुला म बाटा सिर पर सिरपच कलगा आदि का प्रयाग करत थ । राजपरिवार व सामन्ता व जागारदारा म पाव म सान का कड़ा पहिनन का रिवाज भी था परन्तु इसका प्रयाग ताजामा सिरदार और राज्य की आर स स्वाकृत

जागीरदार हा किया करते थ । सोन का कड़ा पहिनन का जिन्ह छट हाता वह साना नवेसा जागारदार कहलाता । सान के आभूपणा का रिवाज कवल राजपरिवार, सामन्त जागारदार व राज्य द्वारा स्वाकृत जाति व लोगा का हा था । अन्य लागा के साने के आभूपणा क प्रयाग पर प्रतिबध था । अत सान क स्थान पर व चादा व अन्य धातुआ क आभूपणा का प्रयाग करत थे । इसस अलकरण के प्रति अनावश्यक हाड़ म वृद्धि नहा होता था । छोटे बच्चा का भा लूग क्ड़े हायला झाझर आदि आभूषण पहिनाये जात थ ।

आभूपणा का प्रचलन यहा क जन जावन में अत्यधिक रहा ह । विशेषकर यहा की महिलाआ मे आभूपणो के प्रति विशेप लगाव व चाव रहा हे । मध्यकालीन मारवाड़ की महिलाओ क आभूपणो की बनावट अनूठी हे । इन आभूपणो का वर्णन यहा के साहित्य म यत्र तत्र उपलब्ध होता है [२८१] साथ ही तत्कालान चित्रो व मूर्तिया स भी उस काल क आभूषणों की जानकारा प्राप्त होती हे । इतना ही नही यहा के लाकगीता म महिलाओ का आभूषण के प्रति उत्कठा प्रखर रूप स उद्घाटित हुई हे तथा कुछ गात ता आभूपणो के सम्बन्ध में हा प्रचलित हे (झूटणिया) जो यहा क जनजीवन की आभूषण प्रियता का ही प्रतीक ह ।

सूरजप्रकास राजविलास सयोगबत्तीसी अभयविलास बाकीदास की ख्यात आर्य रामायण गजगुणरुपकबध दस्तूर कोमवार, नाम मजरी आदि [२८३] साहित्यिक व ऐति हासिक कृतियों तथा विविध बाता स यहा प्रचलित आभूषणों की जानकारी मिलती है । चन्दकृत आभूषण बत्तीसी [२८४] (रचनाकाल वि स १७७६) में जिन आभूषणों का वर्णन किया है वह इस प्रकार ह

(१) हथ साकलो (२) अकोटा (३) सहेलड़ी (४) हाथ आरसी (५) पगपान (६) हाथ वाडलो (७) नखला (८) पचलड़ी नकबेसर (९) काबी (१०) गजरा (११) चपकली (१२) नवसरहार (१३) जेहड़ (१४) निलाड़ टीका (१५) बाजूबध (१६) सीसफूल (१७) रमझोळ (१८) चूडी (१९) घूघरा (२०) मुद्रिका (२१) चाढ (२२) चदणहार (२३) मोतीसिरी (२४) पग पाउटा (२५) गूजरी (२६) करणफूल (२७) मादळिया (२८) जव (२९) माला (३०) हथपान (३१) पाउटा

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश फोर्ट जोधपुर म स्थित जवाहर खाना की एक बही म [२८५] उल्लिखित स्त्रिया के कुछ आभूषणा के नाम—

तोडा कड़ला बेडिया दावणिया डोरा पोलरिया अगठिया साटा कड़ा चौकिया चूड़ा री पत्तिया कातरिया गूजरिया मादळिया टोटिया दात के बीलियो की तीब बिछुडिया करणफूल जवलिया पगपाना चूडिया बाजूबन्द गाखरू जूटाणिया टुसिया पायल छापा बीठिया सबिया काठला मुरकिया फूल दुपिया जाजरिया नागरिया बोर हेसलिया छडा तिमणिया आदि ।

आभूषणा के नामा का सख्या प्रकार व आकृति भी उनके प्रयोग से बढ़ती गयी। मध्यकालान मारवाड़ का महिलाआ क आभूषणा का अध्ययन की सुविधा क लिए निम्न भागा म बाटा जा सकता ह—

(१) सिर क आभूषण (२) कान के आभूषण (३) नाक क आभूषण (४) गले के आभूषण (५) बाहू व कलाई के आभूषण (६) अगुली के आभूषण (७) कटि के आभूषण आर (८) पर क आभूषण।

(१) सिर क आभूषण टीका रखड़ी बार, शाशफूल आदि।

(२) कान क आभूषण - कणफूल झूमका झूमर, झेल बूद लूग टाटिया आगनिया तुगला व विभिन्न डिजाइन क एरिग।

(३) नाक के आभूषण - बसर, नथ वाळी चुनी आदि।

(४) गल के आभूषण - विभिन्न प्रकार के हार, तेवटा तिमणिया आड मादळिया कठी आदि।

(५) बाहु व कलाई के आभूषण - बाजूबन्ध या भुजबन्ध पाट कड़े टड्डे कगन चुड़ी गाखरू पुणच नागरी।

(६) अगुली के आभूषण - अगूठी बीटी मुदड़ी दमणा (युगल अगूठी) हथपान हथफूल सोवनफूल आदि।

(७) कटि के आभूषण - कन्दोरा आदि।

(८) पर के आभूषण पाजेब पायल नूपुर, घूघरू झाझरिया रमझाळ, कडा छेलकडा छड़ा जाडा आवला नेवरा पगपान बिछिया अणवट अनाता पालरा फुलडा छल्ला आदि।

साधारण व निम्नवर्ग का महिलाय भा लगभग इसी प्रकार के सारे आभूषणा का प्रयाग करती थी परन्तु उनके आभूषण चादी के बन या किसी ओर धातु कासी आदि के बन हात थे। स्वणाभूषणो का प्रयोग राज परिवार व धनीवर्ग तक ही सीमित था। साधारण वर्ग की महिलाए गहनो का प्रयोग प्रतिदिन नही करके उत्सवा त्याहारो आदि विशिष्ट अवसरा पर ही करती थी फिर भी कुछ गहने जैसे नाक कान सिर व पाव क आभूषण हमशा पहिना करता थी। ये आभूषण उसक सुहाग का निशानी [२८६] समझी जाती रहा है। विधवा स्त्रिया आभूषणा का प्रयोग नही करती थी। आदिवासी व निम्न वर्ग का आरता मे भी गहना क प्रति अत्यधिक चाव था व पीतल व अन्य धातुआ क गहन पहिना करती थी। कुछ महिलाये मोतिया आदि स आभूषणा का अपने हाथ से निमाण करके गहनो का चाव पूरा करता थी। लाख व काच की चूडिया का प्रचलन भी था। बहुत सी निर्धन स्त्रिये जो धातु आदि के आभूषण बनाने में असमर्थ आर अक्षम

हुआ करता थी व आभषणा का आकृति क गुत्न गुत्वाक्र अपन गहना का शाक पूरा करता था।

वस्त्र—

मध्यकालान मारवाड़ क निवासिया क जावन म आभूषणो का तरह विभिन्न प्रकार क वस्त्रा का प्रचलन रहा हे। यहा क निवासिया क चाह व अमार हा चाह गरात्र सभी को वस्त्रा के प्रति लगाव रहा ह। आर उनका इस रुचि क परिणामस्वरूप हा यहा क लागा का जावन क्ठार प्रकृति आर विषम भागालिक स्थितिया के वाट भा रगान *(Colourful) नजर आता ह। यहा क मध्यकालीन वस्त्रा सबधा जानकारा समकालान* साहित्य पुरातात्विक रिकाड्र्स स्थापत्य चित्रित हस्तलिखित ग्रथा एव पटिंग म प्रचुर मात्रा म उपलब्ध हे।[२८७]

उच्चवर्गीय लागा के वस्त्र—

राजवर्गीय व उच्चवर्गीय लागा के वस्त्र प्रारभ म साधारण व कम सजाल थे परन्तु मुगल प्रभाव क पश्चात् उसम परिवर्तन आया। विशेषकर राजपरिवार क लागा के वस्त्र बहुमूल्य कामता महग साज सज्जा व कसीदाकारी स अधिक अलकृत हुए। इनक वस्त्र उनका धन सम्पदा एश्वर्य व वैभव को प्रदर्शित करन के अनुकूल हात थ। राजा राजपरिवार व राजवर्गीय लोगा की कीमता व भड़कीला पोशाक समाज म उनकी अलग ही पहचान बनाता था।

पुरुषा के पहिनने के विभिन्न प्रकार के वस्त्र थे जिनम जामा, वागा झग्गा धाती पाग आदि प्रमुख थे। इस काल की विभिन्न साहित्यिक कृतिया[२८८] मे धाती दावडा डगळी आदि वस्त्रा का उल्लेख मिलता है।

वागा एक लम्बे कोट या लम्बी अगरखी का भाति का हुआ करता था। जामा ऊपर सीने पर चिपका हुआ तथा नीचे पावा तक चारो आर घरदार हुआ करता था। जाम का प्रचलन सोलहवी शताब्दा म अधिक था इसका अनुमान उस काल क मिलने वाले चित्रो को दखकर सहज ही लगाया सक्ता है। झग्गा[२८९] स्कर्ट का तरह का हाता था। डगळा शरीर क ऊपरी हिस्स पर पहनी जाती था। दावडा दाहर माड के साथ ऊपर आढा जाता था। डगळा सर्दिया में कोट क ऊपर पहना जाती थी। जामा वागा झग्गा आदि उच्च वर्ग के लाग उत्सवा व त्याहारा पर पहना करत थे। इनका डिजाइन आर कट उच्च व *निम्न स्तर क अधिकारिया का भिनता का स्पष्ट करती था। मुगला क ढाल काट* टकुचिया (Takauchiya) पशवाज (Peshwaz) दोहती (Dutahi) क्वाबा (qaba) और गाडर (gadar) आदि विभिन्न नामा स पुकारे जाते थे। एस लम्ब कोटो क लिए लगभग दा थान कपड़ा लगता था जिसम आठ गिरह का बार्डर बनता था।[२९०] यह सामन्त वर्ग म अधिक प्रचलित था जिस पर मुगल प्रभाव सहज हा देखा जा सकता ह।

सिर पर बाधने की पगडा के सम्बन्ध म निश्चित रूप स यह नहा कहा जा सकता कि उच्च वग क लाग १६ वा शताब्दी क पूर्व किस प्रकार का पगडिया प्रयाग म लात थ। १६ वीं शताब्दा म सिर ढकन क लिए जा चमकाल रग का कपडा प्रयाग म लाया जाता था उसका आटदार ऊचा स्वरूप विकसित हुआ आर उसका स्टाइल तय हुयी। १७ वी और १८ वा शताब्दा म प्रयुक्त हान वाल साफ या पगडा पाग चारा आर खागा (खजरदार) आदि विभिन्न नामा स पुकार जान लग।[२९१]

मारवाड़ म पडन वाली तज धूप व अत्यधिक गर्मी क बचाव क लिए पगड़ा का प्रयाग सभवत प्रारभ हुआ हागा। धारे धीर इसक बाधन की विविध विधिया विकसित हुई और उसके अनुसार उनका नामकरण भी हुआ। जोधपुर की विजयशाही पाग प्रसिद्ध रही है। रगा आर बनावट क आधार पर भी पागो के विभिन्न नाम यहा का बहिया मे मिलते है। महाराजा विजयसिंह के शासनकाल के कपड़ा के काठार की बही मे गुरुपाघ भाम पाघ सुकर पाघ सोमपाघ पाघ तासरी सोने री पाघ सफेद बुध पाघ पाघ कसुमल पाघ कसुमल बाधणु, पाघ लाल इक्दाणी पाघ जुमरदी चीकनरी आदि विभिन्न नामा का उल्लख ह।[२९२] इसक अलावा चदेरी सेला साहगद मालिया तनजब री बादलिया आबासाई आदि पागो का भी विवरण मिलता है।[२९३]

यहा पर मासम व उत्सव एव पर्वा पर विशेष प्रकार की रगीन आर चमकाला पाग बाधने के प्रचलन था। वर्षाऋतु मे हरे रग की सर्दियों म कसूबी रग की पगड़िया साधारणतया बाधी जाता थी। तीज के त्याहार पर लहरिया रग की पाग दशहरे पर मादिल आर फूला की डिजाइन वाली सुनहरी पाग होली के त्याहार पर सफेद या पाले रग की पाग प्राय बाधी जाती थी। इन पागा म तुर्रा सरपच बालाबदी दुगदुगी गोसपेच लटकन फत्तेपेच इत्यादि विभिन्न प्रकार का अलकृत सामग्री से पागा का और अधिक आकर्षक बनाया जाता था।[२९४]

मुगल शासकों द्वारा यहा क राजाआ का इसी प्रकार की पागो को अलकृत करने वाली सामग्री जसे - बालाबदी गोसपेस सरपेच कानपच तुर्रा कलगी आदि भटस्वरूप प्रदान की जाती थी। पगडिया के अलकरण क इस तरीक का यहा मुगल फशन के बाद और अधिक प्रचार-प्रसार हुआ तथा मुगल बादशाहा की भाति यहा क शासका ने भी भट स्वरूप य वस्तुए देनी प्रारभ की। महाराजा विजयसिंह ने सन् १७७२ ई म हसन कुला बग का बालाबदा सरपेच आर कलगी भट किए।[२९५]

कसरिया रग की पाग का यहा अधिक प्रचलन था तथा विभिन्न अवसरा पर पाग इनायत करन का उल्लख विशषरूप स यहा का बहिया म मिलता ह। पागा क इस प्रसग म यहा यह बात भा द्रष्टव्य है कि नागार का बनी पागा का भी यहा प्रचलन काफी था। विशषकर राजघरान व कर्मचारिया क लिए नागार स ही पाग मगवाई जाता था।[२९६]

नागार की पाग नागारण नाम स पसिद्ध था। पागा म मासमिया रग की पाग अधिक लोकप्रिय था।[२९७] डा जा एन शर्मा न दूल्ह आर सना क अफ्सरा हेतु मोडा (Moda) से युक्त विशेष प्रकार का पगड़िया का भा उल्लख किया ह।[२९८]

इसके अतिरिक्त वेशभूषा म रूमाल गुलाबद, दुपट्टा, फटा कमरबन्दा[२९९] अग रखा जाघिया धाती अगाछा सूथण आदि का प्रयाग भी किया जाता था।[३००] इन वस्त्रा क निर्माण म जो कपड़ा काम मे लाया जाता था उसमे कीमखाप[३०१] सबस कामती था। इसक अतिरिक्त जरी का थान सादा थान गिग्दा का थान नौरगजबिया थान छींट का थान कुड़ता का थान सेला का क्सूमल थान मलमल कुसुमल दरायाइ थान बालाबधी[३०२] आदि थाना का प्रयाग हाता था। छीटो म बुरहानपुर की छाट, मुल्तानी छींट,[३०३] सबसे महगी व कीमता थी। उस समय विभिन्न परगनों व सूबा से अनेक प्रकार क कपड़े जोधपुर म मगवाय जात थ जिनम नागार का पाग पाली की छाट, बुरहानपुर स बुरहानपुरा छींट, बुरहानपुर स चदरा दुपट्टा स्याहगढ से पाग चदेरी।[३०४] मुल्तान से मुल्तानी छींट[३०५] जिसक किनारे पर सोने क गोटे का प्रयोग किया जाता था प्रसिद्ध थी। गुलबदन नामक थान का उल्लेख मिलता ह।[३०६] राजपरिवार व उच्चवर्ग क लोग प्राय कीमती आर महग कपड़ो का प्रयाग अपने वस्त्रो क निर्माण मे किया करत थे। रेशमी वस्त्रो का भी प्रयाग होता था। मेड़ता के रेशमी वस्त्र का उल्लेख द्रष्टव्य है रेशम कारमची खरीद मेड़ता सु आया तिण मायलो सु डारो १ मराज कवार श्री फतेसिंघजी रे चाकी रो कीया ६६ परवाना रा डोरा कीया जरद पीसताखी हस्ते धन्ना।[३०७]

उत्तम प्रकार क रेज का प्रयोग भी किया जाता था। कद के रेजे का प्रयोग देवस्थाना क लिए उस पवित्र मानकर सभवत किया जाना था- रेजो कद रो कसुमल श्रीमाताजा रे वसतरा मायलो। देवस्थाना तालुक श्री देवीजर (दईजर) माताजा रे आसाजी न्णहरा वणार पधराया ताणा म गाघरा २ ने काचला २ सारू कपडा पधराया।[३०८]

मुगल सम्पर्क के कारण उत्तर मध्यकाल मे सलवार, पायजामा इजार आदि वस्त्रा का भी यहा प्रचलन हुआ। यहा के शासकों ने १७ वा आर १८ वी शताब्दी मे मुगल दरबार के कई वस्त्रा को अपनाया।[३०९] राजपरिवार के लिए अगरखा बनाने के लिए सला चन्देरी खीनखाप अतलस मिसरू मुलमुल व फुल गुलाबी का कपड़ा प्राय प्रयोग म लाया जाता था। तकाया आदि बनाने क लिए खीनकाप नामक कपड़ा खरीदा जाता था। पायजामा बनाने क लिए गुलबदन नामक कपड़े का व धाती के लिए मलमल का प्रयाग हाता था।[३१०] उस समय प्रचलित अन्य कपड की किस्मा म मोळीया मासरू पूरवा गुजराता कनात धोता रेशा मुलमुल थान फूलमाला रामराखडा गुलाल दरीया व छींट मुल्ताना व छींट जाधपुरी[३११] आदि प्रमुख था।

महिलाओ के वस्त्र—

महिलाए कुर्ती काचली अगिया लहगा घघरी या घाघरा तथा विविध प्रकार का ओढ़निया व साड़िया पहिना करती थी। पुरुषा की पागो व जामो को जिस प्रकार से जरी आदि से सुसज्जित व अलकृत किया जाता था उसी प्रकार एव उससे भी कही ज्यादा जरी आदि का कार्य महिलाओ के वस्त्रो को अधिक आकर्षक बनाने के लिए किया जाता था। ओढ़नियो म तार गोटा का प्रयोग किया जाता था तथा चूनडी लहरिया पचरगा पोमचा मोठड़ा आदि विभिन्न प्रकार की डिजाइनो व रगो स युक्त ओढनिया बड़ी आकर्षक व सजीली हुआ करती थी। कुर्ती व अगिया मे सजावट के लिए काच के टुकड़ जड़ने का भी रिवाज़ था। साड़ी का भी प्रयोग होता था जो सुनहरी पट्टीदार रगीले पल्लो स युक्त हुआ करती थी साडी लाल कीरमची ने सोनैरी पट्टीदार पला बुटीरो गुल रूप री बरकी रो।[३१२]

महिलाआ क वस्त्रा का वर्णन करते हुए डा जा एन शर्मा न लिखा ह— Women robed themselves in garments and had different modes of putting of the on During the early mediaeval period the use of bodice to cover their breasts and arms was optional A thight fitting bodice or choli converd ing the breast and leaving the lower part of the abdomen exposed and covering the arms up to the elbows was in vogue In order to keep breasts in position laces were fastened at the back They covered their heads with a big scarf now called odhani [३१३]

जिस प्रकार पुरूषा के वस्त्रा की डिजाइन व आकार प्रकार म मुगला क सम्पर्क मे आने से परिवर्तन आया उसी प्रकार महिलाआ के वस्त्रा के फशन म वदलाव आया। कालान्तर मे महिलाओं की चोली या कचुकी पूरी आस्तीन की जगह आधी वाहो वाली बनने लगी। उसकी लम्बाई भी घटकर छाती तक सीमित हो गया। इस प्रकार उसम नवीन फैशन व परिवर्तन आया तथा कुछ समय पश्चात् चोली के रूप मे सशोधन होकर कुर्ती का प्रचलन हुआ।[३१४] मारवाड़ की उच्चवर्गीय व मध्यमवर्गीय महिलाओ मे कुर्ती काचली दोना पहनने का रिवाज था किन्तु निम्न व साधारण वर्ग की औरते केवल कचुकी ही पहिना करती था। आज तक इस परम्परा का प्रचलन यहा के गावो म देखने का मिलता है।

यहा यह भी द्रष्टव्य है कि मुगल प्रभाव के कारण हिन्दू महिलाओ मे पायजामा घरदार घाघरा स्कर्ट तथा ओढ़नी आदि का प्रयोग होन लगा। राजपूता की जनाना ड्याढ़ी म मुगल प्रभाव से युक्त कपड़ा का प्रचलन विशेष रूप स हुआ। महिलाओ म नई डिजाइन की चोली व घेरदार घाघरा का प्रचलन अधिक था।[३१५] यहा अस्सी कली का

घाघरा विशेष प्रतिष्ठा का सूचक माना जाता था। घाघरे के ऊपर पटिया भी बाँधने का प्रचलन था। आरती के समय में महिलाएं वाला स्कर्ट आदि विभिन्न आकार प्रकार के डिजाइन का हुआ करता था और हर वस्त्र में कई तरह की किस्म (Varieties) थी। उदाहरणस्वरूप माड़ी की कई किस्में जैसे लाल नागाल दुक्ल पट, अनमुख चार पटोरा चौरसा आदना जुल्ड़ा आदि। अंगिया की भी कालना कंचुकी गावला कुर्ती आदि कई नामों से पुकारा जाता था। घाघरा घघरा और लहंगा स्कर्ट्स के ही विभिन्न रूप थे। उच्च वर्ग की महिलाएं साड़ियों में कसमारी शब्द का प्रयोग किया करती थीं। इसके अतिरिक्त उच्च वर्ग की महिलाओं के वस्त्र विशेषकर महारानियां राजकुमारियों के वस्त्र हार जवाहरात सुनहरी व रूपहले फीतों व मलमा सितारों व जरी गोटों से सज्जित होते थे।[३१६] ये वस्त्र विभिन्न रंगों व डिजाइनों के हुआ करते थे तथा फूल, बेलबूटे इत्यादि से आकर्षक बनाये जाते थे। मध्यम वर्ग के लोगों के कपड़े प्राय सादे होते थे फिर भी उनमें डिजाइन व रंगों का बाहुल्य था। कीमती आकर्षक सजावट की जगह इस वर्ग के लोग कोर, गोटा व कसीदाकारी से इनको सुसज्जित करते थे। निम्न वर्ग की महिलाओं के वस्त्र मोटे कपड़े द्वारा बने होते थे तथा उनमें रंगों की विविधता तो पाई जाती थी पर वह चमक व डिजाइन देखने को नहीं मिलती जो उच्च व मध्यम वर्ग की महिलाओं के वस्त्रों में होती थी।

मारवाड़ की महिलाओं में दामणी जो एक ओढ़नी की ही प्रकार था उसका खूब प्रचलन था। दामणी संभवत उर्दू के दामन शब्द का ही विकृत रूप है और इसी के आधार पर दामणी शब्द ओढ़नी के लिए प्रयुक्त होने लगा। इसका प्रचलन मध्यमवर्गीय महिलाओं में अधिक था। दामणी लाल रंग की ओढ़नी हुआ करती थी जो विभिन्न रंगों के धागों की कसीदाकारी व डिजाइन से सज्जित होती थी। संभवत अलंकरण के प्रति महिलाओं के स्वाभाविक आकर्षण ने ही दामणी को मध्यम वर्ग में अधिक लोकप्रिय बनाया तथा इसका उद्भव और निर्माण मुगल प्रभाव का ही परिणाम कहा जा सकता है।

१७ वीं व १८ वीं शताब्दी के चित्र और रेकर्ड्स यह प्रकट करते हैं कि उच्चवर्ग की स्त्रियां रंगीन मंडिल (जूतियां) पहिना करती थीं जो नुकीली व सुनहरी तारों से अलंकृत हुआ करती थीं। गरीब महिलाएं चित्रों में नंगे पाँव ही दिखाई गयी हैं।[३१७]

मारवाड़ के रंगीले सजीले वस्त्र यहां के निवासियों की सुरुचि के परिचायक रहे हैं। विभिन्न आकार प्रकार डिजाइन व रंगों फूलों व बेल बूटों से सज्जित यहां के वस्त्र बड़े ही आकर्षक हुआ करते थे तथा इनके साथ मात्र वैभव प्रदर्शन का ही भाव नहीं जुड़ा था उसके साथ लोकरुचि व लोकभावना का भी सम्बन्ध अत्यन्त गहरा था। लोक समाज में कपड़ों की लोकप्रियता का उदाहरण इस बात से और भी पुख्ता हो जाता है कि यहां

विभिन्न प्रकार क कपडा का बड़ा सुन्दर वर्णन कपडा बत्तीसा ३१८ नामक काव्य म किया गया ह। कपड़ा बत्तीसी क कुछ दाह यहा द्रष्टव्य ह जिसस तत्कालान समाज म प्रचलित विभिन्न प्रकार क कपड़ा का जानकारी प्राप्त होता ह।

सिरदाजी जामा वणिया पाटु सूथण पाव।
साहब घर पधारिया गळ विलूबी आय ॥१
अतलस अत साभा दीय पहर पिया क अग।
सुदर ऊभा मल म चापड खल चुग ॥३
गवर रम सब कामणी गाव गीत रसाळ।
सारी पहिर अटा की आई पीतम पास ॥६
मछी पटण मन भावता कचु दीया सावाय।
पीतम पाढा पलग पर सुदर सेउ वाव ॥१३
सुण सुदर साहब कह लाजो अग लगाय।
कचु मुलताणी तणा पहरत अधिक सुहाय ॥२८

वस्त्र मानव का मूलभूत आवश्यकताआ म से एक ह आर मध्यकालीन मारवाड़ क निवासियो ने अपन परम्परागत वस्त्रा का करीन से सजाया सवारा हा नहा उनसे अपनी प्रादशिक प्राकृतिक वषम्य की नयनाभिराम छटा के अभाव को भी बहुत हद तक पूरा किया। उस काल के लोग प्राय अपना जाति आर समाज मे स्वीकृत आर प्रचलित वस्त्रा का हा प्रयोग करत थे। इसलिए वस्त्र देखकर ही व्यक्ति की जाति का अनुमान लगाया जा सकता था। वस्त्र प्रत्येक वर्ग की पहचान का एक चिह्न या आधार था। मध्यकालान मारवाड़ क वस्त्र साज सज्जा डिज़ाइन स्टाइल व उपयोगिता का दृष्टि स महत्वपर्ण थ।

सौन्दर्य प्रसाधन के साधन—

मारवाड़ म सोलह शृगार का प्राचीन परम्परा रही ह—

अग शुचा मजन वसन माग महावर कश।
तिलक भाल तिल चिबुक म भूषण महदी वश।
मिस्सी काजल अरगजा वीरा आर सुगध।

अर्थात् अगा म उबटन स्नान स्वच्छ वस्त्र धारण माग भरना महावर लगाना बाल सवारना तिलक लगाना ठोढ़ा पर तिल बनाना आभूषण धारण करना मेहदी रचना दाता म मिस्सी आखा म काजल लगाना आदि सुगधित द्रव्या का प्रयाग पान खाना माला पहनना लीला कमल धारण करना। अपने देश म आदि काल से ही स्त्री पुरुष दोनों सान्दर्य प्रसाधना का प्रयाग करते आय है आर इस कला का यहा इतना व्यापक प्रचार था कि प्रसाधक आर प्रसाधिकाआ का एक अलग वर्ग ही बन गया था। प्राय सभी

प्रचलित शृगारा क दृश्य हम विभिन्न महला व भवन क भातर आर द्वार स्तम्भा पर अंकित मिलत है। मध्यकाल में भी इसका यहा अत्यधिक प्रचार व प्रचलन था।

Toileting was considered as ornaments Bath anointment with unguents and perfumes were popular with all classes [319]

यहा स्मृतियो और पुराणा म निर्दिष्ट स्नान करने की विधि का पालन प्राय सन्यासी ब्राह्मण व अन्य धार्मिक लोग किया करते थे। स्नान के अनेक प्रकार काव्यो म वर्णित हैं पर इनमे सबस अधिक लाकप्रिय जलविहार या जलक्रीडा था। अधिकाशत स्नान क जल को पुष्पा से सुरभित कर लिया जाता था।[३२०] सम्पन्न व्यक्तियो क स्नानघर उनके मकान म ही बने होते थे। स्नान करन वाला लकडी या पत्थर क ऊचे आसन पर वैठ जाता था और उसके सेवक सुगधित तल से उसक शरीर की मालिश किया करत थे। राजा महाराजाओ को स्नान करान क लिए यहा जा सवक नियुक्त होते थे उन्हे अगाळिया[३२१] नाम स जाना जाता था। स्नान क पश्चात् शरीर पोछने क लिए तौलिये का प्रयोग किया जाता था जिस 'अगाछा कहा जाता था। इत्र व सुगधित पदाथा का प्रयोग धनिक वर्ग तक ही सीमित था। स्त्रिया भा स्नान स पूर्व सुगधित उबटन का उपयाग करती थी तथा राजवर्गीय स्त्रियो के स्नान क लिए सविकाए नियुक्त होती था[३२२] जा उनका केश विन्यास व शृगार भी किया करता था। उनका स्नानघर शृगार-प्रसाधन का सामग्री से सजा धजा होता था।

साधारण व्यक्तियो के लिए स्नानघर की अलग से व्यवस्था नही था। व खुले म स्नान करते थे।[३२३] इसके लिए व नदी तालाब कुए बावड़ा नाडा नाडी आदि के जल का उपयोग करते थे जो इनके हिन्दुत्व का प्रतीक था।

स्त्रिया मे कशविन्यास के विभिन्न ढग व प्रकार प्रचलित थे। लम्बे बाल नारी सौन्दर्य का प्रतीक थे जिनम तल डालकर कघा करक प्राय एक वेणी गथने का प्रचलन अधिक था। बाल सवारने के कई तरीके थे। सुख बालो का धूप आर चन्दन के धुए से सुगधित कर अनेक प्रकार की वेणियो अलकों आर जूड़ा स सजाया जाता था। बाला मे मोता और फूल गूथने का आम रिवाज था। विरहणिया आर परित्यक्ता वधुए सुखे अलकां वाली थी काव्य म वर्णित की गयी है व प्रसाधन नहा करता थी। स्नान के उपरान्त सभी सुहागिन स्त्रिया सिंदूर से माग भरती था। स्नान क पहल उबटन का बहुत प्रचार था। इसका दूसरा नाम अगराग है। अनेक प्रकार के चन्दन कालायक अगरू आर सुगन्ध मिलाकर इस बनात थे। जाड़े आर गर्मी के प्रयोग हतु यह अलग अलग प्रकार का बनाया जाता था। सुगधि और शातलता के लिए स्त्री पुरुष दाना ही इसका प्रयाग करत थे।[३२४] डॉ जी एन. शर्मा न भी लिखा है कि—

In order to improve on the gift of nature ladies in particular and men in general utilized several artifices for the beautification of the face

Pastes commonly termed chova abhir amber argaja were applied to keep the body soft and scented They were generally prepared out of plants and trees Several kinds of oils and sweet smelling scents were prepared out of flowers like rose and jasmine and plants like sandal wood Black unguents termed Kajala (Collyrium) were applied to the eyes [325]

स्त्रिया म महावर लगान की रीति प्रचलति थी। त्योहारो व मागलिक अवसरा पर इससे नाखून आर पर क तलव ता रचाए हा जाते थे साथ ही इसे ओठा पर लगाकर आधुनिक लिपिस्टिक का काम भी लिया जाता था। निम्न वर्ग की स्त्रिया म सुगन्धित द्रव्यो की अपेक्षा मुल्तानी मिट्टी से सिर धोने का रिवाज था तथा इस वर्ग की नारिया अपन बाला को गूथकर रखती थीं जिसे कई दिना नक वापिस सवारने की आवश्यकता नहीं होता थी। वे अपना चोटी म कई प्रकार क फूदे आर लालें आदि पिरोकर उस आकर्षक बनाती था। महदा माडन की कला यहा बहुत लोकप्रिय रही ह आर गरीब आर क्या अमार सभा इसका प्रयाग करत थे जिस पर पहल विस्तार से प्रकाश डाला जा चुका है।

सन्दर्भ सूची

१ डा. ईश्वरीप्रसाद एव शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारतीय सस्कृति, कला, राजनाति, धर्म तथा दर्शन पृ. १९८ ९९

२ मानियर विलियम्स सस्कृत इगलिश डिक्शनरी कला शब्द

२ डा. रामदत्त भारद्वाज काव्यशास्त्र की रूपरेखा, पृ. ८ से उद्धृत

४ जयसिंह नीरज राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्ण काव्य, पृ. १

५ वासुदेवशरण अग्रवाल कला और सस्कृति, पृ २२७-३५

६ जयसिंह नीरज राजस्थाना चित्रकला और हिन्दी कृष्णकाव्य, पृ २

७ उर्मिला शर्मा तथा डा. रामनाथ शर्मा भारतीय सस्कृति पृ २०२

८. डा. ईश्वरीप्रसाद एव शैलेन्द्र शर्मा प्राचीन भारताय सस्कृति कला, राजनाति धर्म तथा दर्शन पृ २०० २०३

९. वही पृ २००

१० डा. वी. एस. भार्गव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण पृ २०२

११ डा. कालूराम शर्मा डा. प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४३७

१२ डा. पा. एन. शर्मा ऐतिहासिक निबन्ध राजस्थान पृ ०३

१३ डा. वा. एस. भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण पृ २०[illegible]

१४ डा. वा. एस. भार्गव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण पृ. २०७

१५ डा. वा. एस. भार्गव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण, पृ २०८

१६ वही पृ २०८

१७ डा. कालूराम शर्मा और डा. प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४ ८

१८ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ४

१ डा. शर्मा और व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४३९ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ६

२ प गौरीशंकर हीराचन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास पृ ३२५

२१ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ७६

२२ वही पृ ७७

२३ वही पृ ७९

२४ गौड राजस्थान पृ १२६७

२५ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ७९

२६ वही पृ ८०

२७ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास खण्ड १ पृ ५४

२८ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास खण्ड १ पृ ५७

२ *रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ८१*

३० वही ६८

३१ वही पृ ६०

३२ वही पृ ६९

३३ *मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग* पृ ५७०

३४ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ७०

३५ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड पृ २२

३६ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ६३

३७ *मारवाड़ रा परगना री विगत भाग-१* पृ ५६१

३८ वही पृ ५६२

३९ वही पृ ५६३

४० मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग, पृ ५६४

४१ वि स १६६९ में यह निर्मित हुआ।

४२ शिलालेख की प्रतिलिपि इस प्रकार है—श्री सुखरायजी मत महाराजाधिराज महाराजा श्री गजसिंह जी विजयराज्ये सवत् १६८८ वरषे आसोज मासकृष्णपक्ष दशम्या तिथौ रविवार पुष्यनिखत्र राजिश्रीषीवाजी राजि श्री कहनजी कसबे पीपाड़ री पोलि कराई सूत्रधार षगार पीथा पालि कोधी सुभ भवतु *कल्याण* । प रामकर्ण आसोपा इतिहास नीबाज-पृ २६७

४३ मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ५६५

४४ इस पूर्व में अजीतविलास कहा जाता था।

४५ मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग, ५६४ ६५

४६ मारवाड़ रा परगना री विगत, प्रथम भाग पृ ५६६

४७ डा. प्रेम एग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२४

४८ मारवाड़ रा परगना रा विगत प्रथम भाग, पृ ६८
४० मारवाड़ रा परगना रा विगत, प्रथम भाग- ७१
७ वहा पृ ७४
५१ वहा पृ ५७२
५२ डा. कानूराम शर्मा ना प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४४०
५३ इस स्थानाय भाषा म नरना क नाम स पुकारा जाता था।
५४ डा. कालूराम व्यास व ना प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास, पृष्ठ ४४१
५५ डा. भगवतशरण उपाध्याय का कला नामक लेख हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास भाग प्रथम, पृ ६६
५६ वहा पृ ५६५
५७ हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास प्रथम भाग पृ ६८
५८ डा. कालूराम शर्मा ना प्रकाश व्यास राज का इतिहास पृ ४४२
५९. वहा पृ ४४२ ४४३
६० डा. वा. एस. भार्गव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण पृ २७४
६१ वहा पृ २७
६२ आझा जाधपुर राज्य का इतिहास खण्ड २ पृ ०
६३ रऊ मारवाड़ का इतिहास, भाग-१ पृ ३३०
६४ मारा मित्र अजातसिंह एव उनका युग पृ २७७-७८
६५ डा. कालूराम शर्मा डा. प्रकाश व्यास राज. का इतिहास पृ ४४
६६ मारा मित्र अजीतसिंह एव उनका युग पृ २७६
६७ आझा जाधपुर का इतिहास भाग २ पृ ००
६८. डा. कालूराम शर्मा डा प्रकाश व्यास राज. का इतिहास पृ ४४
६९. देलवाड़ा रो कोतरणा न रणकपुर रा माण्णा
डा. कालूराम शर्मा व डा. प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४६०
७० मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ६३
७१ वहो पृ ५६४
७२ वही पृ ५६४
७३ मारवाड़ रा परगना रा विगत प्रथम भाग पृ ५६६
७४ वहा पृ ५६७
७ वहा पृ ६८
७६ वहा पृ ५७०
७७ मारवाड़ रा परगना रा विगत प्रथम भाग पृ ७१
प रामकर्ण आसापा इतिहास नीराज पृ २ ८
डा. भगवतालाल शर्मा श्री सुधामाता तार्थ पृ ७४

८१ प रामकर्ण आसोपा इतिहास नीबाज,पृ २४९
८२ वही पृ २४८
८३ जालोर दुर्ग में मस्जिद का बनावट से यह स्पष्ट परिलिक्षित होता है कि हिन्दू मंदिर के स्थान पर उसका निर्माण करवाया गया। यहा अनेक ऐसी मस्जिदें और भी मिल जायगी जिनका स्थापत्य हिन्दू मन्दिर होने का स्पष्ट प्रमाण देता है
८४ मेड़ता की जामा मस्जिद में लगे इस फारसी शिलालेख का हिन्दी में अनुवाद मुझे मेड़ता के वर्तमान शहरकाजी व मस्जिद के मौलवी साहब से मेड़ता भ्रमण के दौरान प्राप्त हो सका। वस राजा सुजान सिंह के इस कृत्यका उल्लेख जामा मस्जिद के बाह्य खम्भ की दीवार पर मारवाड़ी में लिखा हुआ है पर वह स्पष्ट पढ़ने में नहीं आता है।
८५ पारजादा रौनक उस्मानी दिल्ली गेट नागौर से हुई बातचीत व प्राप्त जानकारी के आधार पर।
८६ डा. कालूराम शर्मा व डा. प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४४४
८७ मारवाड़ परगना रा विगत प्रथम भाग ६१
८८ वही पृ ५६३
८९ वही ५६५
९० मारवाड़ रा परगना री विगत, पृ ५६५
९१ वही पृ ५६७ मीरामित्र महा अजातसिंह का युग पृ २७
९२ वर्तमान में इस तालाब का यहा अस्तित्व नहीं है।
९३ मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ५६८
९४ जो आजकल फतहसागर कहलाता है।
९५ मारवाड रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ५७२
९६ डा. कालूराम शर्मा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान की स्थापत्य कला पृ ४४५
९७ डा. जी एन. शर्मा राजस्थान का इतिहास पृ ५५७ ५८
९८ राजबली पाण्डेय हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास प्रथम भाग, पृ ७५
९९ कुमार स्वामी हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इडोनेशियन आर्ट पृ १
९८ आर्कियोलोजीकल सर्वे आफ इंडिया भाग २३ पृ ७५
९९ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग पृ २७८
१०० ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास खण्ड २ पृ ५९९
१०१ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग पृ २७८
१०२ डा प्रकाश व्यास मेवाड राज्य का इतिहास पृ ५५७ ५८
१०३ राव शिवनाथसिंह कूपावत राठौड़ों का इतिहास पृ २
१०४ वही पृ २३९
१०५ वही पृ २४२
१०६ वही पृ २४४
१०७ प रामकर्ण आसोपा इतिहास नीबाज पृ १२८
१०८ पारजादा रौनक उस्मानी दिल्ली गेट, नागौर के कथनानुसार

१०९ नागार के सूबेदार शम्सखान की स्मृति में नवाब फिरोजखा खानजादा ने शम्स तालाब पर मकबरा ए सम्सखान बनवाया।

११० उदाहरणार्थ दरगाह सूफी हमीदुद्दीन सुल्तानुत तारकीन ख्वाजा अब्दुल सलाम साहब अहमद अली साहब वाके पहलवान आदि का दरगाह नागार शहर में स्थित है इसी प्रकार मारवाड़ के कई मुस्लिम बहुल कस्बों में भी सूफी सन्तों की दरगाहें बनी हुई हैं।

१११ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग, पृ २८०

११२ रेऊ मारवाड़ का इतिहास, भाग-१ पृ ३३०

११३ मल्लिनाथ के अतिरिक्त य पाचा यहा लोकदवता के रूप में प्रसिद्ध है।

११४ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग, पृ २८०

११५ प रामकर्ण आसोपा मारवाड़ का मूल इतिहास पृ २२४

११६ आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इंडिया भाग-२३ पृ ८५ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग पृ २८०

११७ रेऊ मारवाड़ का इतिहास, भाग-१ पृ ३३०

११८ मीरा मित्र महाराजा अजीतसिंह एव उनका युग पृ २८१

११९ डा कानूराम शर्मा डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४४६ इस काल में निर्मित छतरियों स्मारकों व सती स्थलों पर एसी मूर्तिया मारवाड़ के अनेक स्थानों पर द्रष्टव्य है।

१२० रायकृष्णदास भारत की चित्रकला पृ १

१२१ धारेन्द्रनाथ वर्मा अजन्ता की गुफाए पृ ३८ पर उद्धृत

१२२ जयसिंह नारज राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्णकाव्य, पृ २३

१२३ आनन्द कुमार स्वामी राजपूत पेन्टिंग पृ २ ३

१२४ बेसिल ग्रे राजपूत पेन्टिंग पृ २

१२५ वाचस्पति गैरोला भारतीय चित्रकला, पृ १५३

१२६ बेसिल ग्रे राजपूत पेन्टिंग, पृ २

१२७ आनन्द कुमार स्वामी राजपूत पेन्टिंग पृ ३

१२८ रायकृष्णदास भारत की चित्रकला पृ ५९

१२९ जयसिंह नीरज राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्णकाव्य पृ

१३० डा वी एस. भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण पृ २८०

१३१ रायकृष्णदास भारतीय चित्रकला पृ ५८

१३२ मार्ग ११/२ १९५८

१३३ डा यदुनाथ सरकार स्टडीज इन मुगल इंडिया, पृ २९२

१३४ डा वी एस. भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण, पृ २९०

१३ मार्ग ४/१ १ ५१ पृ ६३

१ ६ राजस्थान भारती वर्ष ८ अंक १ पृ ११

१३७ डा जी एन शर्मा राजस्थान स्टडीज, पृ १४६

* नलखा खण्ड अक १ २ पृ ४ प्रा नान मुखर्जी का लख नि आरा न आप रा नस्थाना पन्टिग

काल खण्डलवाला आनन्द कुमार स्वामा का पुस्तक राजपूत पन्टिग का फार र पृ १

४० जयसिंह नारज राजस्थाना चित्रकला आर हिन्दा कृष्णकाव्य पृ ४

१४१ डा वा एस भागव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण पृ २०३

१४२ जयसिंह नारज राजस्थाना चित्रकला आर हिन्दा कृष्ण काव्य पृ २६

१४३ यहा पृ ८

१४४ डा गापानाथ शमा भारताय चित्रकला आर राजस्थान ललित कला अकादमा वार्षिकी ६ ७ पृ २४

१४ आनन्द कुमार स्वामा हिस्ट्री आफ इंडियन आर्ट पृ ८७

१४६ जयसिंह नारज राजस्थानी चित्रकला आर हिन्दा कृष्ण-काव्य पृ ३८

१४७ डा कालूराम शर्मा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४०३

१४८ जयसिंह नारज राजस्थाना चित्रकला आर हिन्दा कृष्ण काव्य पृ ३८

१४९ वही पृ ३८

१५० डा कालूराम शमा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४९३

१ १ डा निर्मलचन्द्र राय महाराज जसवन्त सिंह का जावन व समय पृ १४४

१ २ मार्ग भाग ११ अक २ १ ५८ पृ ४ ४६

१ ३ जयसिंह नारज राजस्थाना चित्रकला व हिन्दा कृष्ण-काव्य पृ ९

१ ४ डा कालूराम शर्मा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४ ४

१५५ जयसिंह नीरज राजस्थाना चित्रकला व हिन्दा कृष्ण काव्य पृ ३९

१५६ डा कालूराम शमा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४ ७

१५७ जयसिंह नारज राजस्थाना चित्रकला व हिन्दा कृष्ण काव्य पृ

१५८ डा कालूराम शर्मा व प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४९४

१५९ मार्ग भाग ११ अक २ १९५८ पृ ४ पर प्रकाशित चित्र

१६० डा कालूराम शर्मा व डा प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४ ५

१६१ राजस्थान भारता भाग ४ अक २ पृ ८

१६२ मीरा मित्र महाराजा अजितसिंह एव उनका युग पृ ७२

१६३ मार्ग भाग ११ खड २ १९ ८ पृ ४६

१६४ मारा मित्र अजातसिंह एव उनका युग पृ २७४

१६५ डा मुल्कराज आनन्द एलबम आफ इंडियन पेन्टिंग पृ १३

१६६ मार्ग भाग ११ खड २ १९५८ पृ ४६

१६७ रामगापाल विजयवर्गीय राजस्थाना चित्रकला पृ ३०

१६८ रामगापाल विजयवर्गीय राजस्थानी चित्रकला पृ ३२

१६९ वहा पृ ३

१७ डा वा एस भार्गव राजस्थान क इतिहास का सर्वेक्षण पृ २ ३

१७१ रामगोपाल विजयवर्गीय राजस्थानी चित्रकला, पृ ११

१७२ डा वी. एस. भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण पृ २९३

१७३ रामगोपाल विजयवर्गीय राजस्थानी चित्रकला, पृ १

१७४ डॉ मारा मित्र अजातसिंह एवं उनका युग पृ २७६

१७५ डा वी एस भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण पृ ३४

१७६ वही पृ ४

१७७ डा. कालूराम शर्मा व डा. प्रकाश व्यास राजस्थान का इतिहास पृ ४०६

१७८ ललितकला न ७

१७९ डा वी एस. भार्गव राजस्थान के इतिहास का सर्वेक्षण, पृ २९०

१८० वही पृ २९०

१८१ जयसिंह नारज राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्णकाव्य पृ १३

१८२ रतनलाल मिश्र राजस्थान के दुर्ग पृ ६१

१८३ आर ए अग्रवाल मारवाड़ म्यूरल्स पृ २९

१८४ वही पृ २०

१८५ वही पृ ४०

१८६ वाचस्पति गैरोला भारतीय चित्रकला पृ ६

१८७ राजस्थान ललित कला अकादमी वार्षिकी ६३ पृ ११

१८८ डॉ जयसिंह नारज राजस्थानी चित्रकला एवं हिन्दी कृष्ण काव्य पृ १३

१८९ रायकृष्णदास अकबरकालीन चित्रित ग्रंथ और उनके चित्रकार कलानिधि अक-३ पृ २७

१९० डा जयसिंह नारज राजस्थानी चित्रकला और हिन्दी कृष्ण काव्य पृ ४०

१९१ उमेश जोशी भारतीय संगीत का इतिहास पृ १

१ भगवतशरण श्रीवास्तव प्राचीन भारत में संगीत पृ ५

१ डा शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे भारतीय संगीत का इतिहास पृ १

१९४ प विष्णुनारायण भातखण्डे उत्तर हिन्दुस्तानी संगीत नी संक्षिप्त एतिहासिक समालोचना पृ २

१ गोविन्दराव राजुरकर संगीतशास्त्र पराग पृ १४

१९६ डा लालमणि मिश्र भारतीय संगीत वाद्य पृ ३

१९७ श्री प्राणकृष्ण चट्टोपाध्याय संगीत सुधा सागर (भाग-१) प्रस्तावना पृ ख

१९८ गोविन्दराव राजुरकर संगीतशास्त्र पराग पृ ८

१९९ प विष्णुनारायण भातखण्डे उत्तर हिन्दुस्तानी संगीत नी संक्षिप्त एतिहासिक समालोचना, पृ २

२० डा उमा मिश्र काव्य और संगीत का पारस्परिक संबंध पृ ८६

२०१ प विष्णुनारायण भातखण्डे उत्तर हिन्दु संगीत ना संक्षिप्त एतिहासिक समालोचना पृ ४२

२०२ गोविन्दराव राजुरकर संगीतशास्त्र पराग पृ १०

२० डा लालमणि मिश्र भारतीय संगीत वाद्य पृ

२०४ विमलकान्त राय चौधरी भारतीय संगीत कोश पृ ११९

०५ डा लालमणि मिश्र भारतीय सगीत वाद्य पृ ११
२०६ यू बी माथुर दि साउण्ड आफ म्यूजिक इन राजस्थान, पृ ८
२०७ श्रा भातखण्डे ए शार्ट हिस्टोरिकल सर्वे आफ दि म्यूजिक आफ अपर इडिया पृ २५
२०८ हिन्दी विश्वकोश भाग ११ पृ ३५८
२०९ उमेश जोशी भारतीय सगीत का इतिहास पृ २८१
२१० हिन्दी विश्वकोश भाग ११ पृ ३५९
२११ उमेश जोशी भारतीय सगीत का इतिहास पृ १९३
२१२ सप्तसुरनाम (हा. ग्र) ग्रथाक ६६४३ रा. शो स चोपासनी
२१३ नाममाला (रागाग्क) ह. ग्र ग्रथाक ३८७९ रा. शा स चौपासनी
२१४ बतीस राग के नाम (ह ग्र) ग्रथाक ६६४३ रा शा स चौपासनी
२१५ यू बी माथुर दि साउण्ड आफ म्यूजिक इन राजस्थान पृ ८३ ९१
२१६ डा उमा मिश्र काव्य और सगीत का पारस्परिक सबध पृ १३५
२१७ उमेश जोशी भारतीय सगात का इतिहास पृ ३२५
२१८ वही पृ १८८
१९ उमश जोशी भारतीय सगीत का इतिहास, पृ २२३
२० वही पृ २२४
२२१ भक्तों का हवेली सगीन इसा परम्परा का परिचायक कहा जा सकता है।
२ भटनागर शृगार युग म सगात काव्य पृ २२
२ बन्गा प्रमन्ना दि न्यु आउटलुक आफ इडियन कल्चर, पृ २०
२४ गगा कारानी राजस्थानी मण्डनकला की पारिभाषिक शब्दावली पृ ५
५ रामनिवास वर्मा राजस्थानी माडणा, पृ ६
२२६ गगा कौरानी राजस्थानी मडनकला की पारिभाषिक शब्दावली पृ ६
२२७ रामनिवास वमा राजस्थानी माडणा, पृ ७
२ ८ वही पृ ८
९ वही पृ ८
२३० रामनिवास वर्मा राजस्थानी माडणा, पृ ८
२३१ गगा कौरानी राजस्थानी मडनकला की पारिभाषिक शब्दावली पृ ८
२३२ वही पृ ९ १०
२३३ रामनिवास वर्मा राजस्थानी माडणा, पृ ९
२३४ गगा कौरानी राजस्थानी मण्डनकला की पारिभाषिक शब्दावली पृ १०
२३ वही पृ १२
२३६ एक राजस्थानी लोकगीत की पंक्ति ।
२ ७ गगा कौरानी राजस्थानी मडनकला की पारिभाषिक शब्दावली पृ १४
२ ८ परम्परा वर्ष १ भाग १ पृ ५६

३९ परम्परा वर्ष १ भाग १ पृ ६५

२४० वही भाग ४३ ५४ पृ २०

२४१ इसके अनुसार वही नाट्य लोकनाट्य कहलाता है जो लोक स्वभाव से उत्पन्न होकर लोकचित में रमता हुआ लोकधर्म के निर्वाह के साथ लोकसिद्धि को प्राप्त करता है ।
डॉ. महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तियाँ पृ ३

२४२ हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय नाट्यशास्त्र की परम्परा और दशरूपक पृ २

२४३ डॉ. श्याम परमार लोकधर्मी नाट्य परम्परा, पृ ३० ३१

२४४ डॉ. महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तियाँ पृ ३

२४५ देवीलाल सामर लोकनाट्य परम्परा और प्रवृतियाँ (अनुवचन) पृ ७

२४६ देवीलाल सामर लोकनाट्य परम्परा और प्रवृतियाँ (अनुवचन) पृ ६

२४७ वही पृ ९

२४८ डॉ महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृतियाँ पृ ३

२४८ वही पृ ३

२४९ वही पृ ४

२५० वही पृ ५

२५१ डा महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया, पृ २२

२५२ लोककला निबंधावली भाग १ पृ ९४

२५३ दृश्य-नरंग वर्ष १ अंक १ में राजस्थान के ख्याल नामक देवीलाल सामर का लेख

२५४ डॉ महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ २२

२५५ वही पृ २०

२५६ डॉ. महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ ६८

२५७ वही पृ ६८

२५८ देवीलाल सामर कठपुतली परम्परा और प्रयोग पृ १

२५९ वही पृ ४

२६० देवीलाल सामर कठपुतली कला और शिक्षा भूमिका १

२६१ डॉ महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ ७४

२६२ देवीलाल सामर कठपुतली परम्परा और प्रयोग, पृ

२६ वही पृ ४८

२६४ देवीलाल सामर कठपुतली परम्परा और प्रयोग, पृ ४८

२६५ डा महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ ५

२६६ वही पृ ५४

२६७ डॉ महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तियाँ पृ १

२६८ डॉ महेन्द्र भानावत लोकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ १०४

२६९ वही पृ १०५

२७० प्रधान सपा धारेन्द्र वमा हिन्दी साहित्यकाश पृ ६५५

२७१ डा महेन्द्र भानावत लाकनाट्य परम्परा और प्रवृत्तिया पृ १०६

२७२ वहा पृ १०७

२७३ वही पृ १०७

२७४ डा महेन्द्र भानावत लाकनाट्य परम्परा आर प्रवृत्तिया पृ ३३

२७५ वहा पृ ७

२७६ रिपार्ट मर्दुमशुमारी राजमारवाड तासरा हिस्सा ३ ५

२७७ डा महेन्द्र भानावत लाकनाट्य परम्परा आर प्रवृत्तिया पृ २

२७८ डा रायगाविन्द चन्द्र वैदिक युग क भारताय आभूषण भूमिका, पृ ३

२७९ वही (भूमिका) पृ ४

२८० डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १५४

२८१ शोधपत्रिका वर्ष २१ अक १ पृ ६२

२८२ द्रष्टव्य सूरजप्रकास भाग-२ पृ १४४ रा प्रा वि प्र जाधपुर

२८३ डा जी एन शर्मा साशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ १ ४ ५८

२८४ हस्त ग्रथाक ८१४३ (१४) आभूषण बत्तासी रा प्रा वि प्र जोधपुर

२८५ जवाहरखाना री बही न ४०० (ह ग्र) महा मा पु प्र जोधपुर

२८६ सुहाग के चिह्नों में माथे का रखडा नाक की नथ कान-गले व हाथ पाव के गहना क अलावा चूड़ा-चूंदड़ी प्रमुख थे । प्रत्येक सुहागन का उसक चूड़ा-चूंदडी अमर हान अर्थात् उसक दीर्घकालीन सुहाग जीवन का शुभकामनाए बड़ी बूढ़ा आरतों द्वारा प्रेषित करन का परपरा यहा आज भी पायी जाती है ।

२८७ द्रष्टव्य डा जी एन शर्मा साशल लाइफ इन मिडा राज पृ १४३

२८८ अचलदास खीची री वारता गजगुणरूपक राजरूपक गवरतनसिंघ रा वचनिका अभयविलास आदि राजस्थानी साहित्यिक कृतियां म विविध प्रकार क वस्त्रा का वर्णन द्रष्टव्य है ।
डा जी एन शर्मा साशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १४४

२८९ ए कुमार स्वामी राजपूत पेन्टिंग, प्लेट १२बी ।

२९ डा जी एन शर्मा साशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १४४

२९१ वही पृ १४

२९२ जवाहरखाना रा वही न ७ महा मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर

२९३ कपड़ा रा काठार रा बही बनी न ४ महा मा पु प्र जाधपुर

२९४ डा जा एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडा राजस्थान पृ १४६

२९५ वहा पृ १४७

२९६ जवाहरखाना री बही न ३०० पृ ३अ म मा पु प्रकाश जोधपुर

२९७ कपडा र काठार री बही न १ म मा पु प्र जाधपुर

२९८ डा जा एन शर्मा साशल लाइफ इन मिडा राजस्थान पृ १४८

२९९ वही पृ १४७

गौरीशंकर राना (परम्परा) पृ ३८

जवाहरखाना रा बही न पृ २९ (अ) म मा पु प्र जाधपुर

जवाहरखाना रा बही न १४१ पृ (अ) म मा पु प्र जाधपुर

जवाहरखाना रा बही न ७ पृ ११ अ व ४९ अ म मा प्र पु

कपड़ा रा काठार री बही न ४ म मा पु प्र जाधपुर

मुल्तानी मिट्टी विशेष लोकप्रिय रहा । लोकगीतों में भी उसका उल्लेख हुआ है — छोंटा मायना छाट भला र मुल्तानी जाडा री जला

कपड़ा रा काठार री बही न १ म मा पु प्र जोधपुर

७ जवाहरखाना रा बही न ० पृ २२७ ब

८ वही पृ ४४ ब

९ डॉ जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १४८

० कपड़ा रा काठार री बही बही न ४ म मा पु पु जाधपुर

१ कपड़ा रा कोठार री बही बही न १४ म मा पु पु जाधपुर

२ जवाहरखाना रा बही १४१ पृ १०६ अ म मा पु पु जाधपुर

३ डॉ जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १५०

४ वही १५१

५ आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट्स आफ राजस्थान पृ ३८

६ डॉ जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १५२

७ वही पृ १५३

८ ह प्र प्रथाक २०६ कपड़ा बतीसी रा दूहा रा शा स चोपासनी

९ डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १५८

२० हिन्दी विश्वकोश भाग ११ पृ ३४४

२१ राजस्थानी सबद कोस, प्रथम खण्ड (प्रथम सस्करण) पृ ६

२२ डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १५९

२३ सोसायटी एण्ड कल्चर इन वेस्टर्न राजस्थान जर्नल आफ इण्डियन म्यूजियम वाल्यूम १ १२ सन् १९५६ ६९ ७१

२४ विश्व हिन्दी कोश भाग ११ पृ ३४४

२५ डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १६०

◆ ◆ ◆

साहित्य

साहित्य मनुष्य के भावा आर विचारा की समष्टि ह ।[1] उसम मनुष्य की रागात्मक चष्टाआ का समावश हाता ह इसी कारण सामाजिक मूल्या का निरूपण हम साहित्य म किया हुआ मिलता ह । साहित्य आर समाज का अनन्य सम्बन्ध हान क कारण साहित्य म सामाजिक विवचन का यह प्रवाह हर युग म कुछ न कुछ मात्रा म दखन का मिलगा किन्तु यह वर्णन इतना प्रत्यक्ष नही होता कि तत्कालान सामाजिक परिवश क सपूर्ण घात सघाता का अध्ययन किया जा सके फिर भी जा वर्णन मिलता ह उससे युगान सामाजिक चतना[2] के दर्शन किय जा सकते ह । अत सास्कृतिक अध्ययन क आधार क रूप म साहित्य भी एक महत्वपूर्ण साधन स्रात का कार्य करता है ।

साहित्य म सहित का भाव हाता ह ।[3] साहित्य का अर्थ ह शब्द आर अर्थ का यथावत् सहभाव अर्थात् साथा हाना । इस प्रकार सार्थक शब्दमात्र का नाम साहित्य ह । साहित्य की यह परिभाषा अत्यन्त व्यापक ह और इसम मनुष्य का सारा साधन आर भावन चष्टा समाविष्ट हा जाता ह तथा समस्त ग्रन्थ समूह साहित्य के अन्तगत आ जाते ह ।[4] गद्य आर पद्य सब प्रकार की रचनाए इसम सम्मिलित हाती ह ।

राजस्थान का प्राचीन कलात्मक वैभव सर्वविख्यात ह । विभिन्न कलाआ का प्रश्रय देने वाली इस भूमि का प्राचीन साहित्यिक गारव भी किसी प्रान्तीय भाषा क साहित्यिक गारव से कम नही है ।[5] यहा जितना साहित्य सृजन हुआ उसका शताश भी अब तक प्रकाश मे नही आया है और ज्ञात अज्ञात स्थाना पर हस्तलिखित ग्रथा म छिपा पड़ा ह या फिर लाक जिह्वा पर कुछ जीवित ह ।

मारवाड़ अथवा मरुदश की भाषा (जिसका प्राचान नाम मरुभाषा था) समूच राजस्थान प्रान्त की प्रधान भाषा ह । यह भाषा मध्यकालीन राजस्थान का साहित्यिक भाषा था जा थाड़ बहुत स्थानीय परिवतना क साथ समूचे प्रदेश म प्रचलित था ।[6] आज यही भाषा राजस्थानी क नाम से समूच राजस्थान म थाड़ बहुत हर फर क साथ व्यवहृत हाती है ।

मरुभाषा का प्राचीनता ज्ञात करन क लिए विविध भाषा शास्त्रिया न प्रयास किय ह आर अब तक उसका प्राचीनता का प्रामाणिक उदाहरण वि.स. ८३५ म मारवाड़ क जालार

नगर म उद्योतन सूरि द्वारा लिखित कुवलयमाला नामक ग्रन्थ म मिलना ह । कुवलय माला नामक इस ग्रन्थ म अठारह देशी भाषाओ का उल्लेख हुआ ह उनम मरुभाषा भी एक ह ।[७] मरुभाषा का उद्धरण निम्नलिखित ह—

अप्पा तुप्पा भणिरे अह पेच्छइ मारुए तता
न उरे भल्लउ भणिरे अह पेच्छइ गुज्जर अवर[८]

अब्बुलफजल न आईने अकबरी म प्रमुख भारतीय भाषाओ म मारवाडी का भी उल्लेख किया है । यहा क जनकवियो न भी अपन ग्रन्थो की भाषा को मरुभाषा क नाम स सम्बोधित किया ह । राठौड पृथ्वीराज का वेलि की भाषा को मरुभाषा कहा ह ।[९] इस प्रकार मरुभाषा का उल्लेख हम कई जगह देखन को मिलता है ।

मरुभाषा को मरुभूम भाषा[१०] मारुभाषा[११] मारुदेशीय भाषा[१२] तथा मरुवाणी[१३] आदि नामो स भी पुकारा जाता रहा है । मरुभाषा एक व्यापक नाम ह जिसम राजस्थानी भाषा का तथा उसकी समस्त बोलिया[१४] व उपबोलियो का समावेश किया जा सकता ह ।

उत्तर मध्यकाल म मरुभाषा क अलावा यहा पिंगल नामक भाषा का भी विकास हुआ । *मरुभाषा म व्रजभाषा क सम्मिश्रण स जो भाषा बनी वह पिंगल कहलायी ।* अनक चारण कवियो ओर सत कवियो न इस काल म बहुत सी रचनाओ का सृजन इस भाषा क माध्यम से भी किया परन्तु उसमे भी मरुभाषा की छाप बहुत गहरी है । पिंगल भाषा जिस भाट भायखा (भाषा) भी कहत हे इसका सृजन करन वाल अधिकाश भाट जाति क लोग रहे हे जो चारणो स सर्वथा भिन्न हे ।[१५] डिंगल पढ लिख चारणो की भाषा रही हे जिनका बहुत बडा सम्मान राज दरबारो तक म रहा था । इसम छन्द अलकार रस ध्वनि आदि का उतना ही ध्यान रखा गया है जितना कि व्रजभाषा म । राजपताने मे अधिकतर साहित्य इसी म रचा गया हे । *यह लोकभाषा ही नही अपितु शिष्ट समाज की* आर साहित्य की भी भाषा था ।[१६]

राजस्थान का इतिहास बडा गोरवपूर्ण रहा हे आर सामान्यतया राजस्थानी साहित्य को वीररस का साहित्य माना जाता है । यह धारणा यथार्थ एव सुदृढ होत हुए भी एकागी ह क्योकि वीरभमि राजस्थान मे भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओ के समान राजस्थानी म भी शृगार आर भक्ति रस की अत्यन्त वेगवती धाराए प्रवाहित हुई ह । वीर रस क साथ साथ भक्ति आर शृगार रस स राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल गोरवान्वित ह । मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य एव मध्यकालीन गुजराती साहित्य म अत्यधिक साम्यता व निकट का सम्बन्ध रहा हे । वस्तुत आदिकालीन राजस्थानी एव गुजराती साहित्य सामग्री एक ही वस्तु ह आर मध्यकाल म भी यह पर्णरूप स विभक्त न होकर काफी समय तक मिला जुला रहा हे ।[१७] दोनो प्रांतो का जन जीवन एकरस रहा ह । इस कारण

यन्त का साहित्यिक सामग्री म समान परम्परा‌ओ का पालन हुआ ह तथा विषय वस्न म ममरूपता दृष्टिगोचर होना ह । मीरा और ईसरदास राजस्थान म जितन लोकप्रिय ह उतन हा गुजरात क जन कंठा म बस हुए ह ।

मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य म वीर, भक्ति और शृगार की त्रिवेणी क इस अपर्व सगम क साथ यहा क साहित्य की एक और विशेषता उल्लेखनीय है । यहा एस अनक कवि हुए ह जिन्होन वीररस क साथ साथ भक्ति की भी उच्चकोटि की रचनाए प्रस्तुत की ह । भक्तकवि ईसरदास का हरिरस भक्ति का महत्वपूर्ण ग्रन्थ ह तो उनकी रचना हाला झाला रा कुडलिया वीररस की श्रेष्ठ कृतिया म गिनी जाती ह । इसी प्रकार पृथ्वीराज राठौड न वलि क माध्यम स वीर, भक्ति और शृगार रस की धाराए एक साथ प्रवाहित की ह वह सर्वविदित ह । ऐसी स्थिति म मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य का कोई विशिष्ट नामकरण नहीं किया जा सकता । इस युग म राजस्थानी साहित्य की अनक प्रकार की धाराए प्रवाहित हुई ह अत इस युग क साहित्य का नाम मध्यकाल ही उचित ह ।[१८] मध्यकालीन इस राजस्थानी साहित्य की विविध प्रमुख धाराओ की सस्कृति सापेक्ष विवेचन हम उसक विभाजन क बाद ही भलीप्रकार स कर सकत है ।

भाषा मनुष्य क विकास का सबस महत्वपूर्ण साधन ह ।[१९] और उसकी विकासो न्मुखी गतिविधियो और रागात्मक प्रवृत्तियो की अभिव्यजना हम साहित्य म दखन को मिलती ह । सम्पूर्ण प्राचीन राजस्थानी साहित्य को उसकी शलीगत भिन्नता क आधार पर प्राय चार भागो म विभाजित किया गया ह और इसी विभाजन को अधिकतर विद्वानो न स्वीकार किया ह (१) जन साहित्य (२) चारण साहित्य (३) भक्तिसाहित्य और (४) लोकसाहित्य ।[२०] डा हीरालाल माहेश्वरी[२१] न-(१) जन शली (२) चारण शली (३) सत शली और (४) लौकिक शली नामो स यहा की साहित्यिक शलियो को अभिव्यक्त करत हुए उसके ये चार प्रमुख विभाजन दर्शाय ह ।

वस्तुत राजस्थानी साहित्य क इस विभाजन को पूर्ण वज्ञानिक नहीं कहा जा सकता । अध्ययन की सुविधा क लिए राजस्थानी साहित्य का विभाजन निम्न प्रकार स किया जाना उचित ह—

(१) सम्भ्रान्तवर्गी साहित्य

(२) धार्मिक साहित्य और

(३) लोक साहित्य ।

(१) सम्भ्रान्तवर्गीय साहित्य

सम्भ्रान्तवर्गीय साहित्य स तात्पर्य उस शिष्ट साहित्य स ह जिसका सृजन शास्त्रीय परम्पराओ क अनुरूप किया गया हो । चकि एस साहित्य का सृजन और पठन पाठन

चारण साहित्य प्रधानतया वीर रसात्मक है। वीर रसात्मक चारण साहित्य प्राय सारा का सारा ऐतिहासिक है। इनके अलावा अन्य रसों में भी सुन्दर रचनाएं हुईं। चारणों में उच्च कोटि के भक्त भी हुए। बारहठ ईसरदास, सांया झूला, माधोदास दधवाड़िया आदि ऐसे ही हरिभक्त कवि हैं। इस साहित्य में अनेक विषयों की रचनाएं मिलती हैं नीति, शृंगार, वैराग्य, व्यावहारिक, धर्म आदि आदि विषयों को भी अछूता नहीं छोड़ा गया है।[3]

डिंगल गीत, नहीं चारणों की अपनी उपज है। वेलि, झमाल, छप्पय, कुंडलिया, दोहा आदि छन्दों पर उनका एकाधिकार दृष्टिगोचर होता है। भाषा में प्रवाह और ओज ऐसे अनुपम गुण हैं जो हिन्दी वीरकाव्य में कम देखने को मिलते हैं। इसलिए भारतीय वाङ्मय को मारवाड़ के इन चारणों की विशिष्ट देन है। साथ ही स्वाधीनता की भावना को उजागर करने में उनकी महती भूमिका है।

(२) चारणतर साहित्य

चारणों के अतिरिक्त राजपूत, मोतीसर, भाट, ब्राह्मण, ओसवाल, ढाढ़ी, ढोली, सेवग आदि चारणेतर जातियों के कवियों ने जो रचनाएं शिष्ट शैली में लिखी उस चारणेतर शिष्ट साहित्य के अन्तर्गत माना जा सकता है। यहां यह बात द्रष्टव्य है कि शिष्ट साहित्य के निर्माण में चारणेतर जातियों के रचनाधर्मियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है और राजस्थानी के शिष्ट साहित्य की कई प्रमुख रचनाओं का सृजन इनके द्वारा ही हुआ है। चारण कवियों की एक विशिष्ट परम्परा रही है और अधिकांश कवि उस परम्परा के अनुरूप साहित्य सृजन करते रहे जबकि चारणेतर शिष्ट साहित्य में हमें चारण शैली के साथ साथ भावों का अभिनव व्यंजना, विषय वैविध्य, प्रसंगानुकूल विशिष्ट शब्द योजना एवं सांस्कृतिक गरिमा की जो अनुपम छवि देखने को मिलती है वह इस साहित्य की अपनी विशेषता है। राजस्थानी की क्लासिक रचनाओं में चारण कवियों की अपेक्षा चारणेतर जातियों के कवियों की रचनाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उदाहरणार्थ वेलि कृष्ण रुकमणी री की रचना राठौड़ पृथ्वीराज ने तथा माधवानल कामकन्दला व ढोला मारू री चौपई जैसी शिष्ट साहित्यिक कृतियों की रचना इन कवियों ने की है।

३ धार्मिक साहित्य

उत्तरी भारत में सोलहवीं शताब्दी के अन्तर्गत जो भक्ति की लहर उठी उसका प्रभाव राजस्थान पर भी पड़ा। राम और कृष्ण भक्ति का यहां एक जोर शोरों से प्रादुर्भाव हुआ। जनता और राजघराने दोनों ही इससे एक साथ प्रभावित हुए। राम और कृष्ण की सगुण भक्ति ने यहां के जनमानस को जहां सर्वाधिक आन्दोलित किया वहां सन्तों की वाणियों ने निर्गुण ब्रह्म के प्रति जनता की आस्था ... गया और उन्होंने कर्मकाण्ड तथा बाह्याचार आदि का विरोध ही नहीं किया अपितु समाज में जाति पाति के बन्धनों को तोड़कर एक

गमानता क भाव का जाजारापण भा किया। गदूपथी कबारपथा गमस्नहा विश्नाई तथा । म्बार्क सम्प्रदाय यहा विशपरूप स पनप ।

इन धार्मिक सम्प्रदायों क प्रचार प्रसार और समाज म नवजागरण का सन्दश मुखर करन म इस काल म हुए कविया का विशष यागदान रहा। भक्त आर सन्त कविया क अतिरिक्त जन कविया न भा अपन ढग स समाज का आध्यात्मिक शक्ति बढान म विशष यागदान दिया ह। अहिसा क प्रचार प्रसार क साथ उन्हान आचरण का शुद्धता पर जा बल दिया ह वह पर समान क लिए उपयोगा सिद्ध हुआ ह। अधिकाश जन साहित्य प्रचारात्मक है परन्तु उसम भा कुछ कवि इस काल क साहित्य म विशिष्ट स्थान रखत हे उनका भी उल्लेख यहा करना समाचान हागा। धर्म क प्राधान्य वाल यहा क धार्मिक साहित्य का मुख्य रूप मे निम्नलिखित तान भागा म बाटा जा सकता ह—

(१) सत साहित्य

(२) भक्ति साहित्य आर

(३) जन साहित्य।

(१) सन्त साहित्य

यहा सन्त साहित्य स तात्पर्य ऐस साहित्य स हे जिसमे अधिकतर निर्गुण भक्ति का गुणगान मिलता ह। यहा का सत साहित्य उत्तरा भारत की सत परपरा स प्रभावित हान क बाद भा उसका एक *विशेषता यह हे कि उसका झुकाव अधिकतया निर्गुण भक्ति का* आर रहा ह। यहा क सत कवियों न यहा का भाषा म नवान उपमाओ आर उत्प्रेक्षाओ आदि क माध्यम स अपने भावा का अभिव्यक्ति का जा नया रूप दिया ह वह बड़ा हा प्रभावात्मक ओर सरस ह।[२८]

सत शला म बालचाल का राजस्थानी क अलावा पडोसी प्रान्ताय भाषाओ आर खडा बाला क शब्दा का मिश्रण भा पाया जाता हे।[२९] देशाटन क कारण विविध स्थाना का भाषा स सता का सपर्क हाता आर सतो का रचनाओ म उस भाषा क शब्द भा सहजता म आ जात आर उनकी भाषा एक खिचड़ा भाषा बन जाता था जिसे सधुक्कडा भाषा क नाम स अभिहित किया गया हे। सत साहित्य के निर्माण मे यहा विभिन्न धर्मावलम्बियो आर मत मतान्तरा क अनुरूप पथाय साहित्य सरचना अधिक हुई आर उसमे अपन सम्प्रदाय का गुरु परम्परा गुरुवाणा आराध्य अर्चना ईश्वरा माया रूप गुण का गुणगान तथा जगत् की मिथ्या बाता स दूर रह कर कल्याणकारा आचरण का साख इसम प्राय देखन का मिलता है। सत साहित्य म अध्यात्म का सरल उदाहरणा द्वारा जा सहज अभिव्यजना का गया हे वह उसका अपना विशपता ह आर साधारण प्रयास का आवश्यकता नही हाता। सत साहित्य मे यहा कबीर दादू गारखनाथ रदास आदि सता क भजना का प्रभाव अधिक दृष्टिगाचर हाता ह इसक अतिरिक्त स्थानाय सता क भजन भा अपन अपन क्षत्र म बड चाव स गाय जात थ।

निर्गुण ब्रह्म की जो अवधारणा है वह सगुण से कुछ विलग है परन्तु इन संतों में ऐसी प्रतिभा थी कि स्वरचित उपमाओं रूपकों और दृष्टान्तों के माध्यम से उसे सरल और बोधगम्य बना दिया। संतों ने सांसारिकता त्याग दी थी। संसार के भौतिक सुखों को तिलांजलि देकर उसमें विरक्त हो गये थे परन्तु संसार के कल्याण की कामना से वे कभी विमुख नहीं हुये और इस प्रकार संत सदा समाज के विभिन्न अंग बने रहे। उनके त्यागी व तपस्वी जीवन के कारण संतों का महत्व परिजनों से भी अधिक था तथा समाज के सभी वर्गों के लोग उनका अत्यधिक मान सम्मान व आदर करते थे।

मध्यकाल में यहाँ संतों द्वारा लोक शिक्षण का जो कार्य किया गया वह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। मध्यकाल में जब प्रमुख प्राचीन भारतीय शिक्षण संस्थाओं का आक्रान्ताओं द्वारा विध्वंश व विनाश हो चुका था और लोक-शिक्षण की सारी व्यवस्था चरमरा गयी थी उस समय संतों ने शिक्षक की महत्ती भूमिका निभाई। त्याग और अपरिग्रह भावना को समाज में फैलाने का कार्य इन्हीं के द्वारा अबाध गति से सम्पादित होता रहा। अपनी वाणियों के द्वारा उन्होंने जनकल्याण का निरन्तर प्रयास किया और लोगों को आचरणगत व शिष्टाचार की शिक्षा देकर उन्हें मानवीय गुणों से संस्कारित करने में संतों व संत साहित्य की प्रमुख देन रही है।

भक्ति साहित्य—

धार्मिक साहित्य के अन्तर्गत निर्गुण भक्ति का साहित्य संत साहित्य की अनुपम देन है तो सगुण भक्ति के अन्तर्गत राम और कृष्ण भक्ति की ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी दोनों ही प्रकार की शाखाओं का यहाँ प्राबल्य रहा है। संतों की निर्गुण निराकार ईश्वर की परिकल्पना की अपेक्षा अवतारी राम और कृष्ण की लीलाएं यहाँ के जनमानस को अधिक सरस और रोचक प्रतीत हुई। इसलिए इन दोनों के चरित्रों पर उनकी आराधना व पूजा के लिए बहुत सा भक्ति साहित्य लिखा गया। मध्यकालीन परिस्थितियों के परिणामस्वरूप सगुण भक्ति की ओर यहाँ के लोगों का झुकाव अधिक रहा और संभवतः लोकदेवताओं लोकदेवियों झूंझारों भोमियों पितरों सतियों आदि के प्रति विशेष आकर्षण का कारण भी तत्कालीन परिस्थितियाँ ही रही होंगी। इन सबके गुणगान और महिमा वर्णन में यहाँ बहुत सा साहित्य लिखा गया।

भक्ति साहित्य की सरसता ने मध्यकालीन मारवाड़ की राजनैतिक उथल पुथल संघर्ष और नैराश्यपूर्ण स्थितियों में यहाँ के जनमानस में शान्ति और आशापूर्ण वातावरण का निर्माण करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। तुलसी सूर और मीरां आदि भक्तों के पदों ने यहाँ की जनता में आत्मप्रेरणा प्रदान की और उनके साहित्य ने जन मन में आशा के दीप जलाकर भक्ति की मन्द पड़ती लौ को पुनः प्रज्ज्वलित किया। मध्यकाल में यहाँ राम और कृष्ण की भक्ति यहाँ के जनमानस के साथ अन्तरंगता से जुड़ी हुई थी और

जिस प्रकार ग्नर प्रदेश म तुलसी व सू रा रचनाओ का बड चाव स पढा जाता था ग्सा भाति ग्न भक्ता का रचनाआ का यहा विशप प्रचलन था। विवच्यकाल म यहा गम आर कृष्ण भक्ति का राज्याश्रय भा मिला। विभिन्न राजवर्गीय व साधन सम्पन्न लागा द्वारा अपन अपन इष्टदेव गम आर कृष्ण क बड बड मन्दिर बनवाय गय। जन सहयाग स भी कई मन्दिरा का निमाण हुआ। राम आर कृष्ण स सम्बधित धार्मिक महत्व क ग्रन्था का अनवाद व टाकाए आदि लिखा गया जिसम गाता आर रामचरितमानस प्रमुख ह। राम कथा क आधार पर यहा अनक काव्य ग्रन्थ लिख गय। रघुवरजसप्रकाश रघुनाथरूपक आदि ग्रन्था म रामकथा के माध्यम स छन्द व अलकारा का वर्णन किया गया ह।

मारवाड म नाथ सम्प्रदाय का प्रभाव प्राचानकाल स रहा ह। यहा नाथा क अनक आसन है। प्राय यहा क प्रत्यक बड गाव म नाथपथ का एसा आसन मिल जायगा। इस सम्प्रदाय क चमत्कारा साधुआ का यहा क शासको स हा नहा छोट बड जागीरदारा से भा जमान आदि दान म प्राप्त हुई। दान म प्राप्त एसा जमान का यहा डाळा नाम स पुकारा जाता रहा ह। जिस गाव मे नाथ पथ का एसा आसन या गद्दा हाता उस गाव क किसान आदि भी वहा अपना श्रद्धानुसार कुछ न कुछ दान अनाज क रूप म प्रदान करत थे। कुछ गावो म यह परम्परा आज भी प्रचलित हे परन्तु अब यह विलुप्त हाती जा रहा ह। मध्यकालीन मारवाड म नाथा का अच्छा सम्मान मिला हुआ था तथा उनक तात्रिक चमत्कारा क कई किस्स लाकजीवन म प्रचलित रहे ह। इस पथ क जागा घर घर आकर भिक्षाटन स अपना उदरपति करत थ। व अपन इकतार पर गापाचन्द भरथरा आदि राजाआ का कथा व शिव ब्यावला आदि लाक काव्य का सरस भावभूमि म गा गाकर उन्ह लाकप्रिय बनान स पीछ नहा रह।

यही कारण ह कि यहा शेव मत का प्रचार प्रसार बहुत ही व्यापक आर शिव भक्ति यहा बहुत लाकप्रिय रहा। मारवाड का कठार जलवायु आर मध्यकाल क सघर्षपर्ण जावन म शकर सा महादव हा यहा क लागा की जन आकाक्षा आर जीवन म नव उत्साह आर चेतना जागृत कर उनकी धार्मिक आस्था का उपयुक्त कन्द्र बिन्दु बन सकता था। यहा क अभावग्रस्त व कष्टसहिष्णु लागा द्वारा शिव का पूजा अर्चना करना आसान व सरल था।

इसा प्रकार यहा एस अन्य दूसर पथ व सम्प्रदाया का भक्ति क प्रति जनमानस अधिक आकृष्ट हुआ जिसम सद्धान्तिक विवचना का गूढता व कर्मकाण्डा की बहुलता क विपरात सरल अनापचारिक व बहुत हा सहज जिनके नियम थ। इनमं कबार, दादूपथ का प्रभाव अधिक रहा इसक अतिरिक्त रामस्नेही विश्नाई निम्बार्क निरजना आदि अन्यान्य सम्प्रदाया क प्रति भा यहा क लागा का रुझान काफा था।

यहा क विभिन्न ग्रामा म जिस सख्या म शिव मन्दिर बन मिलत ह जिस शव धर्म क प्रचार प्रसार का अनुमान सहज हा लगाया जा सकता ह प्राय प्रत्येक गाव म एक बड़ा शिवालय बना हुआ ह। शिव क शिवालय व प्राचान मंदिरा म जा प्राय विजन प्रदश या पहाड़ा क्षत्रा म बन हुए ह वहा भा मारवाड़ का जनता अपन भक्तिभाव का प्रदर्शित करन व आराध्य की पूजा अचना क लिए जाना रहा ह शिवभक्ति का रामभक्ति क साथ तुलसा न जो समन्वय स्थापित किया उसका सहज अनुभूति हम मध्यकालान मारवाड़ की जनता क भक्ति साहित्य स दृष्टिगाचर हाना ह। रामलाला आर कृष्ण लाला के मचन का परम्परा स राम व कृष्ण भक्ति का यहा लाकप्रियता हासिल हुइ आर इस भक्तिभावना का यहा प्रचार प्रसार अत्यधिक हुआ। गाव क ठाकुरा सठ साहूकारा व धर्मपरायण श्रद्धालु भक्ता द्वारा चातुर्मास म रामचरित मानस व गाता भागवत आदि धर्म ग्रन्था क पाठ का आयाजन भा करवाया जाता था जा यहा क लागा का भक्ति परायणता का ही प्रतीक कहा जायगा। यहा भक्ति भावना यहा क भजना व हरजसा म भा अभिव्यक्त हाती ह।

विवच्यकाल म मारवाड़ क राठाड़ शासका द्वारा विशषकर कृष्ण भक्ति का प्रश्रय मिला। जाधपुर क शासक महाराजा जसवन्तसिह प्रथम क समय आरगजब क मूर्तिभजक प्रयास स भयभात हो वृन्दावन से श्रानाथजा का विग्रह जाधपुर क समाप कदमखण्डा आर चापासना म लाया गया और कुछ समय तक यहा रखन क बाद मवाड़ का आर ल जाया गया।[30] यह इतिहास प्रसिद्ध घटना सर्वविदित ह। यहा क अन्य राजाआ सामन्ता जागारदारा व गाव क कइ ठाकुरा ने अपना धमपरायणता व भक्ति भावना प्रदर्शित करत हुए मंदिरा व पवित्र धार्मिक स्थला का व्यवस्था हतु द्रव्यदान क अतिरिक्त जमान व कुआ का दान दिया। यहा क शासका द्वारा हा नहा रानिया द्वारा भा मंदिरा क निर्माण व उनका पूजा का नियमित व्यवस्था हतु बहुत सा द्रव्य दान किया गया। इतना ही नहा ठकुरानिया मानिया पड़दायता व पासवाना तक न मन्दिरा का निर्माण करवाया।

यहा का शासकाय इकाई व आम जनता चाह किसा भा मतमतान्तरा म विश्वास रखन वाला या पथ या सम्प्रदाय स सम्बन्ध रहा हा शक्ति का उपासना म उसका आस्था सदव बना रही। राम या कृष्ण चाह किसा म श्रद्धा रखन वाल यहा क शासका द्वारा शक्ति आर शार्य का प्रतीक दुगा अम्बिका आदि दविया का उपासना भा का जाना रहा ह। राजपूत आर चारण ता सदव शक्ति उपासक रह हैं। मारवाड़ क राठाड़ राजपूता का कुलदवा नागणेचिया रहा ह।[31] इसा प्रकार अन्य राजपूता आर विभिन्न जातिया का अपना कुलदवा क प्रति अगाध आस्था रहा। जा आज तक भा कइ अशा म विद्यमान ह। मारवाड़ म चारणा द्वारा दुगा का स्तुति म ता उसका लाला का गान अपन साहित्य

म बहुत अधिक मात्रा म किया गया है । जैन यतियो द्वारा भी दुर्गा की स्तुति म यहा कई काव्य रचे गये ।[3]

आदि शक्ति के विभिन्न स्वरूपो के साथ चारण समाज म उत्पन्न विभिन्न देवियो जैसे करणी आवड़ आदि का भी यहा बडा वर्चस्व रहा है । मध्यकाल के जनजीवन पर इन देवियो का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है । इनसे न केवल यहा के शासको ने वरन् आम नागरिक आत्मबल व प्रेरणा प्राप्त कर विधर्मियो से अपने धर्म व संस्कृति की रक्षा करने हेतु सदैव प्रयत्नशील रहे ।

मध्यकाल की राजनैतिक उथल पुथल के उस अस्थिर माहौल म जनता की आशा का केन्द्र उसकी ईश्वर के प्रति आस्था और भक्ति म ही रह गया था । इस युग म यहा भक्ति साहित्य का खूब सृजन हुआ । सगुण व निर्गुण नाना तरह के भक्तिमार्ग यहा पनपे परन्तु सगुणधारा का बोलबाला अधिक रहा । इसके फिर कई विभाजन रामाश्रयी कृष्णाश्रयी प्रेममार्गी ज्ञानमार्गी आदि किये जा सकते है पर मूल बात यह है कि यहा के लोकमानस म ईश्वर की आराधना व परमेश्वर की अनुकम्पा प्राप्त कर इस मोहमाया से भरे भवसागर स पार उतरने हेतु भक्ति रूपी सहज नाव का सहारा लिया गया । इस क्रम म यहा के विभिन्न लोकदेवताओ की आराधना भी जारी रहा । यहा वहा यहा अनेक ऐसे भक्तजनो का प्रादुर्भाव भी हुआ जिसके निर्मल आचरण व पवित्र भक्ति स आने वाली पीढ़िया युगो तक इस निवृत्ति मार्ग की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा लेती रही । भक्ति साहित्य के सृजन म नरहरिदास ईसरदास माधोदास दधवाड़िया पृथ्वीराज राठौड चूडा दधवाड़िया आदि कई प्रमुख रचनाकार अग्रणी थे । मीरा करमाबाई धन्ना भगत इत्यादि ऐसे अनेक भक्त शिरोमणि इस क्षेत्र म उत्पन्न हुए कि यह वीर भूमि संतो व भक्तो की क्रीडास्थली बन गई । उनका जीवन स्वय प्रेरणा का स्रोत था एव उनकी रचनाए आज तक यहा के जनमानस के हृदयो को आलोडित करती है ।

जैन साहित्य--

जैन शैली का साहित्य या जैन साहित्य अधिकांश जैन यतियो जैन साधुओ और उनके अनुगामी श्रावको द्वारा लिखा गया है । उसम उनके धार्मिक नियमो और आदेशो के कई प्रकारो का गद्य और पद्य म वर्णन है । यह साहित्य बहुत बड़े परिमाण म लिखा गया है और प्रारम्भिक राजस्थानी साहित्य की तो वह बडी धरोहर है ।[33] जैन शैली का अधिकाश साहित्य जैन धर्म से संबंधित है । कथा साहित्य की विपुलता और प्रचुर गद्य का निर्माण इसकी विशेषता है । इस शैली म अइ और अउ रूपो का प्रयोग अधिक हुआ है जो १७वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचनाओ तक म देखने को मिलता है । विषय भिन्नता के अतिरिक्त जैन शैली की शब्दावली और भाषा का स्वरूप भी चारण शैली से काफी भिन्न है । कई जैनेतर विद्वानो ने भी इस शैली म रचनाए की है ।[34]

राजस्थान के हस्तलिखित ग्रन्थालया म सुरक्षित कृतिया म जन विषयक सामग्री का ाहुल्य हे। जनागम क मूल ग्रन्था क अतिरिक्त टीकाए, ालावबाध टब्बा ढाल सिज्झाय रास स्तवन स्तात्र चाढालिय सिलाक वार्तिक इत्यादि नामा स उल्लिखित कृतिया म जैन विषयक पुष्कल सामग्री सकलित ह।[३५] गय रचनाआ म स्थानाय राग रागनियो का सम्मिश्रण भी उल्लखनाय है। सस्कृत प्राकृत अपभ्रश आर आधुनिक भारताय भाषाआ सभी म लिख हुए जैन साहित्य म विषय वस्तु की एक एसी समानता मिलता ह जो उस अपना एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व प्रदान करती है। यह समानता प्राय बहुत कुछ नारस ह। जेन कवि क सामने कथानक का स्वरूप प्राय निश्चित रहता था प्रतिभा सम्पन्न कवि परम्परा म बधी कथा म काव्यानुकूल प्रसगा पर कवित्व का प्रदर्शन करते है अन्यथा बहुसख्यक रचनाआ म नवानता बहुत कम मिलती है।[३६] जेन चरित काव्य आर अन्य उपदश प्रधान लाकप्रिय कथाकाव्य प्राय अप्रकाशित अधिक ह आर साहित्य के विद्यार्थिया द्वारा इन कृतिया का भलीप्रकार मूल्याकन अब तक नही हुआ ह।

जन शली की रचनाआ म जन धर्म की प्रधानता तो परिलक्षित होती ही है साथ ही इस शली की रचनाआ म चरित काव्या का अधिकता परिलक्षित होती ह। चरित चउपई आर रास आदि नामा स युक्त इन रचनाआ म केवल आकार आर शला का अन्तर भले हा मिल इनके धर्मप्रधान स्वर म विशाष भद नही हे। जन शली के रचनाकारा न पाराणिक पात्रा लाककथाआ प्रसिद्ध वार आर दाना आर धार्मिक प्रवृत्ति क नायका व्रतकथाआ धार्मिक उपदशा आदि नाना प्रकार के प्रसगा को अपनी कल्पना आर प्रतिभा सम्पन्नता क साथ अपनाया ह। मारवाड़ म जन धर्मावलम्बा अनक दीवान आर उच्चवर्गीय राज अधिकारा भा हा चुक हे जिससे जन साहित्य का यहा प्रसार आर रक्षण पर्याप्त मात्रा मे हुआ ह। अच्छे कस्वा म अनक जेन मदिर आर उपासरे आदि भी मध्यकाल म निर्मित हात रह है जिनम रहकर जन साधु धर्म आर साहित्य का साधना निरन्तर किया करते थ।

(३) लोकसाहित्य

लाक-साहित्य अग्रजी क फाक लिटेचर क पर्याय के रूप म ग्रहण किया गया ह। पाश्चात्य सभ्यता की दृष्टि स इस शब्द का अर्थ केवल उन्ही का ज्ञान कराता हे जा नागरिक सस्कृति तथा विधिवत् शिक्षा स बाहर ह जा निरक्षर अथवा कम पढे लिखे ह *आर ग्रामा म निवास करत ह।*[३७] *समाज म नागरिक आर ग्रामीण दा भिन्न सस्कृतिया* का प्राय उल्लेख किया जाता ह पर लाक दोना म विद्यमान है।[३८] लाक हमार जीवन का महासमुद्र ह उसम भूत भविष्यत वर्तमान सभी कुछ सचित रहता ह। लाक राष्ट्र का अमर स्वरूप ह।[३९] लाकशब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नही ह वल्कि नगरा आर ग्रामो म फली समस्त जनता ह जिसक व्यावहारिक ज्ञान का आधार पाथिया नही ह।[४०]

इस प्रकार लाक का तात्पर्य उस सामान्य जन समह स है जा अपना नैसर्गिक प्रकृति क सान्दर्य का त्व्यि ज्याति स कल्याणमया सस्कृति का निर्माण करता ह जिस लाक सस्कृति कहत ह ।

लाक साहित्य लाक सस्कृति का अभिन्न अग ह । लाक्साहित्य जन सस्कृति का सच्चा प्रतिनिधित्व करता ह । वह जन सस्कृति का दर्पण ह । लाकसाहित्य की महत्ता का अनुमान इसा बात स किया जा सकता ह कि वह सब साहित्यों का उत्पादक ह । उदाहरणार्थ लाक गात समस्त प्रकार क सुष्ठु काव्य का जननी ह । किसी दश का लाक साहित्य उस दश की अशिक्षित जनता का परिष्कृत भावनाआ भावुकतापूर्ण अभिव्यक्तिया तथा जनसस्कृति का उद्घाटक हाता ह ।[४१]

लाकभाषा आर लाकिक शैली म लिखा साहित्य लोक साहित्य कहलाता हे । किसा देश या प्रान्त का लाक साहित्य वहा क जन जावन से निस्सृत स्वाभाविक भावाद्रेक को व्यक्त करता ह ।[४२] इसम लाक-मानस की सहा झाका दिखाई देती हे । लाक की युग युग का वाणी साधना इसमे सुरक्षित हाता ह । इसम लाकिक प्रमकाव्य लाकगीत लाककथा एतिहासिक अर्द्ध एतिहासिक काल्पनिक पाराणिक आदि विविध प्रसगा पर आधारित लाकप्रचलित गय आर श्रव्यकाव्य सम्मिलित ह । इनकी भाषा तत्कालान जनसाधारण का वालचाल की भाषा हे जिसम कही कहा राजस्थानी की विविध बोलियो का मिश्रण पाया जाता हे परन्तु सत शेला का भाति इसम खडी बोली का प्रयाग नहा पाया जाता । लोकिक शैली क छन्दो म गय पद दाहा आदि प्रमुख रहे ह ।[४३] कितने हा अज्ञात जन कविया न अपनी सरल आर सरस वाणा म अपने लाकिक अनुभवा को जनसाधारण की निधि बना दिया ह । लाकगात पवाडे लाक-कथाए, कहावत मुहावर आदि राजस्थानी लाकसाहित्य क अमूल्य रत्न ह । लाक साहित्य जितन बड़े परिमाण म यहा सुरक्षित ह उतना शायद हा किसी अन्य भारताय भाषा म उपलब्ध होगा ।[४४]

हरजस प्राय स्त्रिया द्वारा गाय जाते हे और इनमे राम कृष्ण आदि अवतारो की लीला का महिमा लाक शली मे वर्णित हाती हे । ईश्वराय अवतारा के अतिरिक्त विभिन्न देवी देवताआ लाकदवताआ और जूझारा भामिया व सतियो से सम्बधित भा हरजस मिलत ह । हरजसा में य चरित्र लाक समाज म रस बस कर बिल्कुल एक हा गये हे आर लाक जीवन का स्पष्ट याका उसम दृष्टिगाचर हाती ह । हरजसो म वर्णित इन ईश्वरीय और दव लालाओ का चित्रण इतना सहज आर स्वाभाविक रूप स किया गया ह कि य चरित्र आम आत्मा की हा तरह सार कार्य करत हुए दर्शाय गय ह । उनका ईश्वराय तत्व उनमे विद्यमान हात हुए भा जनमानस क दैनिक जावन स जुड हुए ह आर उनके बाच काई दूरा परिलक्षित नहा हाता । आध्यात्मिक विषय (भक्ति) का लकर लिख गय लाकिक शला क इन हरजसा म सहज रागात्मक आत्मायता का भाव बडा हा प्रमुख आर

प्रभावात्पत्क है जिसके प्रति यहा के जनमानस का स्वाभाविक आकर्षण है । इस सहज घनिष्टता के परिणामस्वरूप इन लोकभजना (हरजसा) का भावविभार हाकर बड़ चाव स गाया जाता रहा है जिसमे किसी प्रकार का आपचारिकता का पालन नही किया जाता । अपन घरलू कायो का सम्पन्न करत हुए भी ये हरजस गाय जाते है तथा अकेली या दो चार स्त्रिया सामूहिक रूप से बिना किसी विशिष्ट आयोजन के वाद्ययन्त्रा के संगीत की अपेक्षा रख बिना ही सुमधुर कठध्वनि म जाने भी बहुत ही उमग और उमाव स गाती है ।

इस प्रकार लोक साहित्य यहा के लोक जीवन का एसा स्वाभाविक अभिव्यक्ति है जिसमे सतत् जीवन्ता और प्रवहमानता विद्यमान है । लोक-जीवन सुलभ्य प्रभावा व कृत्रिम आपचारिकताओ स परे प्राकृतिक जीवन के कराब है जो सरल अकृत्रिम और अपरिष्कृत है । इस अवस्था म निवास करन वाले लोगा का रुचि विचार और जीवन दर्शन भले ही सभ्य समाज की भाति परिष्कृत न समझ जाये किन्तु मानवीय संस्कारा की विद्यमानता के कारण उनका जीवन सुसंस्कृत कहा जायगा । धार्मिक आस्था और सदाचरण की जो झाकी हम लोक जीवन म दृष्टिगोचर होती है वैसी नगरीय जीवन म कहा देखने को मिलेगी । नगरीय जीवन मे सभ्यता के प्रकाश का चकाचोध देखने को मिल सकता है परन्तु मन के सुकुमार भावों को रिझाने वाली आत्मीयता की अरुणिमा के दिग्दर्शन हम लोक जीवन म ही होगे । लोक साहित्य लोकजीवन का इन सारी विशेषताओ को अपने म समेटे हुए है । लोकगीत लोकभजन हरजस लोककथाओ लोकगाथाओ आदि के रूप म लोकसाहित्य का यह स्वर्णिम आभा अपन अनूठे अन्दाज म उद्घाटित होती है । अहंकार और आडम्बरहीन संस्कृति का यह अक्षुण्ण सरिता लोकवाणी के रूप मे लोकसाहित्य म प्रवाहित हो रहा है जिसम अवगाहन कर यहा का लोकजीवन सदिया स आह्लादित व आनंदित होता रहा है ।

साधनहीन मरुस्थल म जहा पानी तक सरलता स सुलभ नही है लोकगीता और लोकगाथाओ का सहस्र धाराओ स यहा बसे मानवा का संस्कृति का सरस और भावप्रवण बनाते रहे है । शायद ही कोई ऐसा पर्व या जीवन के संस्कारा का अवसर हो जब लोकगीतो का सुमधुर ध्वनि सुनायी न दे । इसम यहा के ढाढी ढोली और भाण्ड आदि का विशिष्ट योगदान भी उल्लेखनीय है जो एस अवसरा पर उपस्थित होकर सारे वातावरण का सरस बना डालते हे । पश्चिमी मारवाड म लंगा मीरासी आदि के लोकगायन बहुत ही चाव स सुन जाते है । इस प्रकार लोक साहित्य का इस युग म असाधारण योगदान रहा है । इस विशाल साहित्य का कुछ विधाओ पर विचार करना यहा समाचीन रहेगा ।

इस प्रकार लाक का तात्पर्य उस सामान्य जन समह स ह जा अपना नसर्गिक प्रकृति क सान्दर्य का त्विव्य ज्याति से कल्याणमया सस्कृति का निर्माण करता ह जिसे लोक सस्कृति कहत हे ।

लाक साहित्य लाक सस्कृति का अभिन्न अग ह । लोकसाहित्य जन सस्कृति का सच्चा प्रतिनिधित्व करता ह । वह जन सस्कृति का त्र्पण ह । लाकसाहित्य की महत्ता का अनुमान इसा जात स किया जा सकता हे कि वह सत्र साहित्यो का उत्पादक ह । उदाहरणार्थ लाक गात समस्त प्रकार क सुप्ठु काव्य का जननी ह । किसी दश का लोक साहित्य उस दश का अशिक्षित जनता की परिष्कृत भावनाओ भावुकतापूर्ण अभिव्य क्तिया तथा जनसस्कृति का उद्‌धाटक हाता ह ।[४१]

लाकभाषा आर लाकिक शली म लिखा साहित्य लोक साहित्य कहलाता ह । किसा दश या प्रान्त का लाक साहित्य वहा क जन जीवन से निस्सृत स्वाभाविक भावाद्रक का व्यक्त करता हे ।[४२] इसमे लाक-मानस का सही झाका दिखाई देती ह । लोक की युग युग का वाणा साधना इसम सुरभित हाती हे । इसम लाकिक प्रमकाव्य लाकगात लोककथा एतिहासिक अर्द्ध एतिहासिक काल्पनिक पोराणिक आदि विविध प्रसगा पर आधारित लाकप्रचलित गय आर श्रव्यकाव्य सम्मिलित ह । इनका भाषा तत्कालीन जनसाधारण का बालचाल का भाषा ह जिसम कहा कहा राजस्थाना का विविध बालियो का मिश्रण पाया जाता ह परन्तु सत शला का भाति इसम खडा बाली का प्रयाग नहा पाया जाता । लाकिक शली के छन्दो म गेय पद दोहा आदि प्रमुख रहे ह ।[४३] कितने ही अज्ञात जन कवियो ने अपना सरल आर सरस वाणा म अपन लाकिक अनुभवो को जनसाधारण की निधि बना त्यिा हे । लाकगात पवाड़ लाक कथाए, कहावते मुहावर आदि राजस्थानी लाकसाहित्य क अमूल्य रत्न ह । लाक साहित्य जितन बड़ परिमाण मे यहा सुरक्षित ह उतना शायद हा किसा अन्य भारतीय भाषा मे उपलब्ध हागा ।[४४]

हरजस प्राय स्त्रियो द्वारा गाय जात है और इनमे राम कृष्ण आदि अवतारो की लीला की महिमा लाक-शला म वर्णित हाती हे । ईश्वरीय अवतारा के अतिरिक्त विभिन्न देवी दवताआ लोकदवताओ आर जुझारो भामिया व सतिया स सम्वधित भा हरजस मिलत ह । हरजसा मे य चरित्र लोक समाज म रस बस कर बिल्कुल एक हा गय हे आर लाक जीवन की स्पष्ट झाकी उसम दृष्टिगाचर हाता ह । हरजसा म वर्णित इन ईश्वरीय आर दव लालाआ का चित्रण इतना सहज आर स्वाभाविक रूप स किया गया ह कि य चरित्र आम आत्मा का हा तरह सार कार्य करत हुए दर्शाय गय ह । उनका ईश्वराय तत्व उनम विद्यमान हात हुए भा जनमानम क दनिक जीवन स जुड़ हुए ह आर उनक बाच काई दूरा परिलक्षित नहा हाता । आध्यात्मिक विषय (भक्ति) का लकर लिख गय लाकिक शला क इन हरजसा म सहज रागात्मक आत्मायता का भाव बड़ा हा प्रमुख आर

प्रभावोत्पादक है जिसके प्रति यहां के जनमानस का स्वाभाविक आकर्षण है। इस सहज घनिष्ठता के परिणामस्वरूप इन लोकभजनों (हरजसों) को भावविभोर होकर बड़े चाव से गाया जाता रहा है जिसमें किसी प्रकार की औपचारिकता का पालन नहीं किया जाता। अपने घरेलू कार्यों को सम्पन्न करते हुए भी ये हरजस गाये जाते हैं तथा अकेली या दो चार स्त्रियां सामूहिक रूप से बिना किसी विशिष्ट आयोजन के वाद्ययंत्रों के संगीत की अपेक्षा रखे बिना ही सुमधुर कंठध्वनि में आज भी बहुत ही उमंग और उमाव से गाती हैं।

इस प्रकार लोक साहित्य यहां के लोक जीवन की ऐसी स्वाभाविक अभिव्यक्ति है जिसमें सतत् जीवन्तता और प्रवहमानता विद्यमान है। लोक जीवन सुलभ्य प्रभावों व कृत्रिम औपचारिकताओं से परे प्राकृतिक जीवन का कराव है जो सरल अकृत्रिम और अपरिष्कृत है। इस अवस्था में निवास करने वाले लोगों की रुचि विचार और जीवन-दर्शन भले ही सभ्य समाज की भांति परिष्कृत न समझे जाये किन्तु मानवीय संस्कारों की विद्यमानता के कारण उनका जीवन सुसंस्कृत कहा जायगा। धार्मिक आस्था और सदाचरण की जो झांकी हमें लोक जीवन में दृष्टिगोचर होती है वैसी नगरीय जीवन में कहां देखने को मिलेगी। नगरीय जीवन में सभ्यता के प्रकाश की चकाचौंध देखने को मिल सकती है परन्तु मन के सुकुमार भावों को रिझाने वाली आत्मीयता की अरुणिमा के दिग्दर्शन हमें लोक-जीवन में ही होंगे। लोक साहित्य लोकजीवन की इन सारी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए है। लोकगीत लोकभजन हरजस लोककथाओं लोकगाथाओं आदि के रूप में लोकसाहित्य की यह स्वर्णिम आभा अपने अनूठे अन्दाज में उद्घाटित होती है। अहंकार और आडम्बरहीन संस्कृति की यह अक्षुण्ण सरिता लोकवाणी के रूप में लोकसाहित्य में प्रवाहित हो रही है जिसमें अवगाहन कर यहां का लोकजीवन सदियों से आह्लादित व आनंदित होता रहा है।

साधनहीन मरुस्थल में जहां पानी तक सरलता से सुलभ नहीं है लोकगीतों और लोकगाथाओं की सहस्र धाराओं से यहां बसे मानवों की संस्कृति को सरस और भावप्रवण बनाते रहे हैं। शायद ही कोई ऐसा पर्व या जीवन के संस्कारों का अवसर हो जब लोकगीतों की सुमधुर ध्वनि सुनायी न दे। इसमें यहां के ढाढी ढोली और भोपों आदि का विशिष्ट योगदान भी उल्लेखनीय है जो ऐसे अवसरों पर उपस्थित होकर सारे वातावरण को सरस बना डालते हैं। पश्चिमी मारवाड़ में लंगा मीरासी आदि के लोकगायन बहुत ही चाव से सुने जाते हैं। इस प्रकार लोक साहित्य का इस युग में असाधारण योगदान रहा है। इस विशाल साहित्य की कुछ विधाओं पर विचार करना यहां समाचीन रहेगा।

सम्भ्रान्त साहित्य के विशिष्ट रचयिता—

आसा बारहट—

मारवाड क भाद्रस गाव क निवासी बारहट गाधा क पुत्र आसा बारहट का जन्म वि स १५६३ क लगभग हुआ था। राव मालदव का यह कृपापात्र था और इनका रूठी राणी जैसलमर का उमाद भटियाणा का इन्ह मनान भेजा गया था। य रूठी राणा का मनाकर भा ल आये थे परन्तु रास्त म जब वह कासाणा गाव क समीप पहुचा तब राणा न मालदव क व्यवहार क सम्बन्ध म पृछा ता आसा बारहट ने उस समय निम्नलिखित दोहा कहा—

माण रख ता पीव तज पाव रख तज माण।
दो दो गयद न बधही अक खभू ठाण॥

इस दाहे का सुनकर राना ने अपन स्वाभिमान की रक्षार्थ प्रण पर अटल रहना तय किया और वह आजीवन राव मालदव से रूठा रही।

राव मालदव न उमाद भटियाणा का चर्चित दासी भारमला जिसक कारण रानी ओर मालदव क बाच मनमुटाव हुआ था उस बाघा कोटडिया के पास लाने हेतु आसा बारहट का भजा। परन्तु दानो के प्रेम व आतिथ्य स प्रसन्न हाकर बारहट बाघा काटडिया का मृत्युपर्यन्त वहा रहा। कुछ दिन उमरकोट क महाराणा के पास भा आसा बारहट रहा परन्तु अपन शष जीवन म वह अपन प्रिय मित्र बाघा काटडिया का याद को कभी विस्मृत नहा कर सका। सवत् १६६०क लगभग उसका मृत्यु हुई।

बारहट आसा द्वारा रचित ग्रथा मे (१) लक्ष्मणायण (२) गागाना रा पडा (३) गुण निरजन प्राण (४) उमाद भटियाणी रा कवित्त (५) बाघजी रा दूहा (६) राव चन्द्रसण रा रूपक (७) रावळ माल सलखावत रो गुण (८) रावळ जाम रा दूहा आदि कृतिया प्रसिद्ध हैं।[४५] आसा बारहट की भाषा मधुर और कविता तलस्पर्शी हे।[४६]

ईसरदास—

रोहडिया शाखा के कारण ईसरदास का जन्म मारवाड क भाद्रस नामक गाव मे हुआ था। इनके जन्म सवत् के सम्बन्ध म मतभद ह। पहल मत के अनुसार[४७] इनका जन्म सवत १५१५ और मृत्यु सवत १६२२ माना गया है जबकि दूसरे मत के अनुसार[४८] इनका जन्म सवत् १५९५ और मृत्यु सवत् १६७५ माना गया हे। दूसरा मत इसम अधिक उचित प्रतात हाता ह आर इनका एतिहासिक रचनाए भा यह सिद्ध करता ह कि इनका जन्म सवत् १५९५ म हुआ। इनक पिता का नाम सूजाजा व माता का नाम अमरबाई था। पण्डित पीताम्बर भट्ट स धार्मिक शास्त्रो का अध्ययन किया।[४९] धार्मिक ग्रन्थो क अध्ययन स भक्ति म आर उनका रुचि अत्यधिक बढता गई आर उनक कृतित्व म

भक्ति की प्रधानता व्याप्त हुइ । ईसरदास का भक्तिपूर्ण रचनाआ का वणन आग चलकर भक्ति साहित्य क अन्तगत किया जायगा परन्तु परम्परागत वीररसात्मक चारण शली को उनका असाधारण दन ह इसलिए उनका यहा उल्लख करना समाचीन हागा ।

मारवाड का यह कवि ग्रास वर्ष का अवस्था म हा जामनगर (गुजरात) चला गया था । वहा क शासक रावल जाम न ईसरदास का अपना पालपात नियुक्त किया । रावल जाम न ईसरदास का लाख पसाव दिया ।[५०] डा. हारालाल माहश्वरा[५१] न रावल जाम द्वारा ईसरदास का अपन यहा आश्रय दकर उस कराड़ पसाव देने का उल्लख किया ह ।

बारहट ईसरदास डिगल क उद्‌भट कवि आर चारण कविया म शिरामणि माने जाते है । डिंगल के प्रसिद्ध कवि आसा बारहट इनके चाचा व काव्यगुरू थे । ईसरदास कृत हाला झाला रा कुडलिया वीररस की उत्कृष्ठ कृति ह । यह वीररस की फड़कती रचना ह और राजस्थानी भाषा का सर्वश्रष्ठ कृतिया म इसका स्थान ह । भाषा मुहावरेदार, सुगठित मौलिक भावा क सामजस्य आर विषयानुकूल शब्दचयन के कारण यह रचना अनूठी बन गई ह[५२]

इस कृति के अलावा ईसरदास के अन्य सारे ग्रथ भक्ति प्रधान हे अत कुछ लागा को यह भ्रम हो जाता ह कि यह रचना ईसरदास की नहा हैं । परन्तु यह भ्रम निरर्थक ह क्योकि यहा के प्रतिभा-सम्पन्न कविया द्वारा एक साथ विभिन्न रसा का श्रष्ठ कृतिया का सृजन करने की परम्परा रही है ।

सवत् १६७५ क आस पास ८० वर्ष का अवस्था म इनका देहावसान हुआ । एसा माना जाता ह कि ४० वर्ष तक जामनगर म रहन क बाद कवि ईसरदास अपन जन्म स्थान भाद्रस चल आय आर लूणी नदा क किनार कुटिया बनाकर मृत्युपर्यन्त वहा रह ।[५३]

दुरसा आढा—

दुरसा आढा का जन्म मारवाड़ राज्य क जतारण गाव म हुआ था ।[५४] डा. मातीलाल मेनारिया[५५] न दुरसा आढा का जन्म जाधपुर राज्यान्तर्गत धूधला ग्राम म हाना माना हैं पन्तु दुरसा आढा क बचपन की घटनाआ क आधार पर उसका जन्म जैतारण म हाना हा ज्यादा उचित प्रतीत हाता ह । दुरसा आढा का जन्म सवत् १५०५ ई म आर स्वगवास सवत् १७०८ म हुआ था ।[५६]

दुरसा आढा क जावन का एक महत्वपूरण घटना का यहा जिक्र करना समाचीत हागा । माटाराजा उदयसिंह न वि.स १६४३ में मारवाड़ के शासका व राजपूत जागारदारा द्वारा बाह्मणा और चारणा का बहुत स गाव छान डाले आर खालसा म दिय थ व किसा गाव स रुष्ट हाकर वापिस ले लिय ।[५७] इस अवसर पर दुरसा आढा का गटाड़ आसकरण [illegible] द्वारा जा दुगला नामक गाव दिया गया था वह भा जब्त कर लिया गया ।

माटाराजा गुजरात क लिए रवाना हुआ आर उसका डरा साजत मे था वहा काजमर महादव नामक स्थान पर चारणा न विराध स्वरूप तागा (आत्महत्या क लिए शगर पर शस्त्र स घाव करना) किया । अखा बारहट क साथ अनक चरणा न आत्महत्या का । दुरसा आढा न भा आत्महत्या का प्रयास किया परन्तु वह बच गया । [८]

राजस्थाना साहित्य म दुरसा आढा का नाम शार्पस्थ कवियो म आता ह । इनक बचपन व जावन का घटनाओ क सम्बन्ध म कई प्रकार का बात प्रचलित ह जिनम जतारण क किसा जन याति द्वारा इनका पढाना लिखाना आर बराम खा स अजमर म मिलन क बाद बादशाह अक्बर स भट करना [५९] आदि प्रचलित हे किन्तु बगडा ठाकुर प्रतापसिंह द्वारा बाल्यावस्था म उसका लालन पालन करना आर याग्य हान पर उस अपना प्रधान सलाहकार बनाना समीचान लगता ह । इस प्रसग मे इस बात का भी उल्लेख किया जाता ह कि अकबर क अहमदाबाद प्रस्थान के समय साजत म उसका पडाव था । साजत स लकर गुन्दाज क डर तक उसका राह का प्रबन्ध बगड़ा ठाकुर क जिम्म था जिसके लिए बगडी ठाकुर न दुरसा आढा को नियुक्त किया । अपने प्रबध चातुर्य से बादशाह अकबर को प्रसन्न कर उससे *परिचय करन का दुरसा आढा के लिए यह उचित अवसर था । यह* घटना अन्य घटनाआ स अधिक सहा व इतिहाससम्मत प्रतात हाता ह । राव चन्द्रसन क समय अजमर म ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की जियारत के पश्चात् अकबर वि स १६२७ म नागोर पहुचा आर वहा उसन अपन सनिका स एक तालाब खुदवाया । [६०] इसक पश्चात् मारवाड मे अकबर का आगमन अहमदाबाद क एतमाद्खा की सहायतार्थ गुजरात जाते समय वि स १६२९ म हुआ । [६१] सभव हे इस समय दुरसा आढा का अकबर से भेट हुइ हा ।

कई विद्वान भी दुरसा आढा आर अकबर अच्छे सबध हान का बात कहते ह किन्तु विरुद छहत्तरी के गाहो से यह प्रतीत नही होता । डा मोतालाल मनारिया [६२] और डा हीरालाल माहश्वरी [६३] न भा इस तथ्य को स्वीकार किया ह । अकबर के साथ उसके कसे भी सम्बन्ध रहे हो पर दुरसा आढ़ा के लिए यह कम गारव की बात नहा थी कि वह अकबर, बीकानेर के राजा रायसिंह सिरोहा के राव सुरताण जाधपुर के राव चन्द्रसेन आर मेवाड के महाराणा प्रताप जस वारा का समकालीन था आर इनम स अधिकाश क निकट सानिध्य म रहन का साभाग्य भा उस प्राप्त हुआ ।

दुरसा आढा न राणा प्रताप राव चन्द्रसन तथा राव सुरताण के दश प्रम आर स्वाधीनता की भावना का यशागान किया हे । यही नही मुगल सना क विरुद्ध जूझन वाल अनक वीर पुरुषा का कार्तिगाथा भी कवि न अपने विभिन्न दोहा गाता आदि म सुरक्षित रखा ह । [६४] दुरसा आढा द्वारा एस वीरो पर लिखे गय गीतो की सख्या बहुत अधिक ह । दुरसा आढा का कविता क सम्बन्ध में डा मातीलाल मनारिया ने लिखा

है- दुरसा जी हिन्दू धर्म जाति और हिन्दू संस्कृति के अनन्य उपासक थे। अपनी कविता मे उन्होंने तत्कालीन हिन्दू समाज की विपन्नावस्था और अकबर की कूटनीति का बडा ही सजीव वीर-दर्प पूर्ण और चुभता हुआ वर्णन किया है।[६५]

दुरसा आढा की (१) विरुद छहत्तरी (२) किरतार बावनी (३) राउ श्री सुरताण रा कवित्त (४) दूहा सोलकी वीरमदे जी रा (५) झूलणा रावत मघा रा (६) झूलणा राव श्री अमरसिंह जी गजसिंघोत रा (७) श्री कुमार अज्जाजीना भूचर मोरी री गजगत आदि रचनाएं है जिनमें विरुद्ध छहत्तरी उनकी सर्वस प्रसिद्ध व चर्चित रचना है। डा माहेश्वरी[६६] ने (१) मरसीया राव सुरताण रा (२) गीत राजि श्री रोहितास रा (३) झूलणा राजा मानसिंह कछवाह रा इन कृतियो को दुरसा आढा रचित माना है। इन रचनाओ के अतिरिक्त अनेक फुटकर गीत छन्द आदि भी दुरसा आढा द्वारा लिखे हुए बडी मात्रा मे मिलते है।

वीठू मेहा—

जोधपुर के राव मालदेव ने वीठू मेहा को खडा गाव प्रदान किया। इसकी रचनाओ मे (१) गोगाजी रा रसावला (२) पाबूजी रा छन्द (३) भाटी सोमसी रतनावत रा छद (४) छद करणी जी रा (५) कवित चौहान करमसी और सावलदास रा (६) दूहा कूपा महराजोत रा नथा (७) चान्दाजी री वेल प्रमुख है।[६७] माढू मेहा की सभी मुख्य रचनाओ के नायक-नायिका राजस्थान के इतिहास के सुप्रसिद्ध व्यक्तित्व है। इसकी भाषा मे ओज और प्रवाह है।[६८]

सादू माला—

सादू माला का समय सन् १५३३ १६२३ के लगभग माना जाता है। इस अपने समकालीन कई राजाओ से धन और सम्मान प्राप्त हुआ जिसमे बीकानेर के राजा रायसिंह ओर जोधपुर के मोटा राजा उदयसिंह का नाम उल्लेखनीय है। सादू माला ने अधिकतर झूलणा छन्द मे अपनी कविता लिखी। उसकी रचनाओ मे (१) झूलणा महाराजा रायसिंह जी रा (२) झूलणा अकबर पातासाह जी रा (३) झूलणा दीवान श्री प्रतापसिंह जी रा (४) झूलणा अचल तिलोकदास रा आदि मुख्य है। इसके अतिरिक्त उसने कई फुटकर गीत नीसाणिया और कवित्त आदि भी लिखे।[६९]

केशवदास गाडण—

केशवदास जोधपुर राज्यान्तर्गत सोजत परगने के चिडिया गाव का निवासी था। इसका जन्म स १६१० मे और देहान्त स १६९७ मे हुआ।[७०] वह गाडण शाखा का चारण था इसके पिता का नाम सदमाल था। सदमाल दूगावत का पुत्र केशवदास गाडण जोधपुर के महाराजा गजसिंह प्रथम का कृपापात्र था। सन् १६२६ मे उसे सारडावास गाव (सोजत परगने मे) प्रदान किया गया। इसकी प्रमुख रचनाए (१) गुनगुण रूपक बध

(२) राव अमरसिंह रा दूहा (३) छन्द महात्व जा रा (४) छन्द गारखनाथ रा ( ) निसाणी विवेकवार आदि [१] गजगणरूपक नाम राजस्थानी वीरकाव्य परम्परा में लिखा गया ग्रन्थ है इसमें कवि ने अपने आश्रयदाता जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंह के अद्भुत पराक्रम रण कौशल व गुण गरिमा का चित्रण किया है।[७२] राव साहा में वर्णन प्रारम्भ करके बाद में गजसिंह के जीवनकाल की विविध घटनाओं का वर्णन करते हुए अन्त में भीम सिसोदिया जो खुर्रम की फौज का कमाण्डर था उसका मुकाबला मुगल बादशाह अकबर की फौज के प्रधान महाराजा गजसिंह का जो युद्ध हाजीपुर के पास में हुआ उसका विस्तृत वर्णन किया गया है। राव अमरसिंह रा दूहा में नागोर के राव अमरसिंह राठोड की वीरता का वर्णन है।[७३] इसके अतिरिक्त उपर वर्णित शेष तीनों रचनाएं भक्ति प्रधान है। केशवदास गाडण के लिखे फुटकर दोहे गीत कवित्त आदि भी मिलते हैं। महाराजा गजसिंह ने इसको लाख पसाव देकर सम्मानित किया।[७४]

जग्गा खिड़िया—

जग्गा खिड़िया एक यशस्वी कवि था। इसका वास्तविक नाम जगमाल खिड़िया था जिसका संक्षिप्त रूप जग्गा खिड़िया भी यहां प्रचलित रहा है।[७५] इसकी रचना वचनिका राठौड रतनसिंह महेसदासोत री एक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध रचना है। इसमें कई एतिहासिक बातों का उल्लेख मिलता है। धरमाट के युद्ध (सन् १६५८) में जो बादशाह शाहजहां की ओर से जोधपुर नरेश जसवन्तसिंह प्रथम और दिल्ली के शासन के लिए आकुल विद्रोही शाहजादों औरंगजेब और मुराद की संयुक्त सेना के मध्य लडा गया। इसी युद्ध में रतलाम नरेश राठौड रतनसिंह ने जसवंतसिंह प्रथम की सेना के नायक के रूप में स्वामिधर्म का पालन करते हुए जिस अदम्य साहस और शौर्य का प्रदर्शन करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए उसका वर्णन कवि ने बडे ही प्रभावी ढंग में किया है। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि इस कवि की जीवनवृत्त सम्बन्धी प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नहीं है। जग्गा खिड़िया की इस महत्वपूर्ण कृति का रचनाकाल डा एल पी टेसीटोरी ने सन १६६० के आस पास माना है[७६] जिसे डा शंभूसिंह मनोहर[७७] ने भी स्वीकार किया है। डा माहेश्वरी के मतानुसार जग्गा खिड़िया की वचनिका राठौड रतनसिंह जी महेसदासोत री वचनिका पर गाडण शिवदास कृत अचलदास खीची री वचनिका आढा किशना के गजरूपक व्याठा सूजा कृत राव जैतसी रा पगड़ी छन्द का अत्यधिक प्रभाव लक्षित होता है।[७८] वीर रस प्रधान इस ग्रंथ में गद्य और पद्य दोनों है यह वचनिका शैली में लिखा गया है। यह ग्रंथ साहित्य रसिकों व इतिहास प्रेमियों दोनों के लिए उपयोगी है।[७९] जग्गा खिड़िया को कुछ लोगों विद्वानों ने जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम का आश्रित माना है। इसके विपरीत कुछ विद्वान् उसे रतलाम के शासक रतनसिंह के पुत्र रामसिंह का दरबारी कवि माना है जहां पर उसने वचनिका का निर्माण किया।[८०]

बारहट लक्खा—

बारहट लक्खा का जन्म मारवाड़ के नानपणाई गाव म हुआ। यह अकबर का समकालीन था और एसा माना जाता है कि अकबर न इस मथुरा के पास अन्तर्वेद का परगना दिया था और मथुरा म एक हवेली दी था। बीकानेर के राजा रायसिंह द्वारा इसे करोड़ पसाव और दो चार हाथी दिये जाने का उल्लेख मिलता है। बारहट लक्खा ने राठौड़ पृथ्वीराज की वेलि पर एक टीका[81] लिखा था जिसका आधार बनाकर सवत् १६७८ म सारंग ने संस्कृत म टीका लिखी। बारहट लक्खा द्वारा रचित पाबूरासो नामक एक ग्रंथ भी बताया जाता है। बारहट लक्खा का जन्म अनुमानत सवत १६०२ म और देहान्त सवत् १७०६ ७ के लगभग हुआ।[82] चारणो म लक्खा बारहट का बड़ा मान था उनकी साहित्यिक प्रतिभा से प्रभावित होकर ही अकबर और बीकानेर के महाराजा रायसिंह ने उन्हे सम्मानित किया था।

शकर बारहट—

मारवाड़ के लानाडा गाव म शकर बारहट का जन्म हुआ था। यह भी अपनी साहित्यिक प्रतिभा के कारण बीकानेर के महाराजा रायसिंह द्वारा सम्मानित हुआ। इसके सम्मान म रायसिंह न सवा करोड़ का पसाव दिया। शकर बारहट की रचना दातार सूर रो सवाद प्रसिद्ध है।[83] इनकी पत्नी पद्मा जो माला सादू की बहिन थी वह भी काव्य प्रतिभा की धनी थी। वह इतनी स्वाभिमानी थी कि सवत् १६४३ म जोधपुर के मोटाराजा उदयसिंह के समय आऊवा ग्राम म चारणो ने जो धरना दिया था किसी कारणवश उस धरणे म सम्मिलित उसका पति शकर बारहट धरना छोडकर चला गया तो उसके स्वाभिमान को इतनी ठेस पहुची कि उसके बारहट लक्खा का परित्याग कर बीकानेर के राजा रायसिंह के छोटे भाई अमरसिंह जो उसका धर्म भाई था उसके पास रहकर अपना शेष जीवन बिताया।

अक्खा बारहट—

अक्खा बारहट बचपन म ही अनाथ हो गया था। पाच साल की अवस्था म माता पिता की मृत्यु के उपरान्त जोधपुर के राव मालदेव की झाली रानी स्वरूप दे ने इनका पालन पोषण किया। मालदेव का पुत्र महाराज कुमार उदयसिंह का यह हमजोली था। उदयसिंह जब जोधपुर की राज्यगद्दी पर बैठे और उनके शासन काल म चारणो का सासण (दान) मे दी गयी जागीरे को छीन लिया गया उसके विरोध म चारणो ने स १६४३ म आऊवा गाव म धरना दिया। उदयसिंह न धरना देने वाले चारणो स सुलह का मार्ग खोजने व बातचीत करने के लिए अक्खा बारहट को भेजा।[84] अक्खा सुलह करवाने की बजाय धरने मे शामिल हो गया और कटार स अपने प्राणो का अन्त किया।

दल्ला आसिया—

यह जोधपुर क खाटावास ग्राम का निवासी था। बचपन म ही पितृविहान हान क कारण किसी नाथपथी जोगा न इसक पालन पोषण आर शिक्षा दीक्षा की व्यवस्था की। इसके बनाय फुटकर गीत मिलत है।[८५]

वीरभाण रतन—

वार भाण रतनू शाखा का चारण एव मारवाड क घडाइ नामक ग्राम का निवासा था। इसका जन्म वि स १७४५ म आर देहावसान सवत् १८०२ म हुआ।[८६] यह जाधपुर के महाराजा अभयसिह का आश्रित कवि था। महाराजा अभयसिह एव गुजरात क सूबदार शेर बुलन्द खा क बीच वि स १७८७ (सन् १७३०) म जा अहमदाबाद का युद्ध लडा गया उसम वारभाण रतनू आर कविया करणादान नामक दोना कवि इस युद्ध म साथ थ आर उन्हाने इस युद्ध का प्रसग लकर क्रमश राजरूपक आर सूरजप्रकास नामक वृहत काव्य ग्रन्थ लिख।

वीरभाण रतनू ओर कविया करणीदान की इन वृहत् रचनाआ को सुनन का महाराजा के पास समय नहा था अत इन्हे सक्षिप्त ग्रथ रचने का कहा गया जिसम सब सार आ जाय। कविया करणीदान न तो सरजप्रकास का सक्षिप्ताकरण विडद सिणगार क रूप म कर दिया पर वीरभाण रतन का यह बात पसन्द नहा आया ओर राजरूपक का सक्षिप्त नही करने स राजकीय सम्मान स वचित रहा।

राजरूपक वृहदाकार एतिहासिक ग्रथ ह। ४६ प्रकाशा (अध्याया) आर ३३१७ छदो[८७] म लिख गये इस ग्रथ मे कवि न परम्परागत काव्य पद्धति का अपनाते हुए सृष्टि का उत्पत्ति स ग्रथ का प्रारभ कर अपन आश्रयदाता महाराजा अभयसिह क पूर्वजा का वर्णन किया ह। महाराजा जसवन्तसिह क पश्चात का उसका सारा वर्णन एतिहासिक आधार पर अधिक आश्रित ह आर इसमे तिथि वार सवत् समय विभिन्न युद्धा म काम आन वाले भिन्न भिन्न लागा क नाम आदि सबका ब्योरा दिया गया हे। छाटी से छाटा घटना भा कवि का निगाह से बच नही सका ह।[८८] तत्कालीन सामाजिक परिस्थितिया क अध्ययन हतु यह काव्यग्रथ बडा उपयोगी ह। वारभाण रतनू का इस एतिहासिक काव्य ग्रथ स अपन आश्रयदाता अभयसिह द्वारा ता यश सम्मान नही मिला वह उपक्षित रहा पर आग चलकर इसा कृति का जाधपुर के महाराजा मानसिह न सम्मान प्रदान किया। वीरभाण रतनू क पुत्र का घडोई गाव इनायत किया।

वारभाण रतनू की राजरूपक के अतिरिक्त एकाक्षरा नाममाला आर भागवतप्र काश नामक दा अन्य रचनाए एव कुछ फुटकर कवित भी मिलत ह।

करणीदान कविया—

जोधपुर क महाराजा अभयसिंह क आश्रित कवि करणीदान का जन्म मवाड़ क शूलवाड़ा गाव म हुआ था। अपन आश्रयदाता अभयसिंह क प्रसिद्ध अहमदाबाद युद्ध अभियान म यह भी उनक साथ था। उसका प्रसिद्ध ग्रथ "सूरजप्रकास" चारण काव्य परम्परा का उत्तम कोटि का ग्रथ ह। वीरभाण रतन क "राजरूपक" की विषयवस्तु तो कविया करणादान क सूरजप्रकास का ह किन्तु भाषा साहित्य आर विस्तार की दृष्टि स यह उसस अधिक पूण ह।[८९] महाराजा अभयसिंह को इस ग्रथ का साराश सुनान क लिए छोटी कृति "विड़द सिणगार" की रचना की जिसम मात्र १२८ पधरी छन्द ह। इस काव्य रचना को सुनकर अभयसिंह न करणादान को लाख पसाव दिया आर उसका इतना मान बढ़ाया कि स्वय तो घाड़ पर चढ़ा आर करणादान को हाथी पर चढ़ा कर उसको जलज (हाजरी) म चला आर कवि को उसक निवास स्थान तक पहुचाया इसविषय का यह दोहा यहा बहुत प्रसिद्ध ह—

अस चढ़िया राजा अभा कवि चाढ़ गजराज।

पाहर हक जलब म माहर चल महाराज।

कविया करणादान सस्कृत डिगल आर पिगल का अच्छा जानकार था। करणीदान बहुआयामी प्रतिभा का धनी था। वह एक कवि राजनीतिज्ञ सैनिक आर विद्वान था। कलम का यह सिपाही युद्ध क मदान म आवश्यकता पड़न पर तलवार हाथ म थामन स भी पीछ नहा रहा। अपन समय क विभिन्न रियासतो क शासको क साथ उसका सम्पर्क था जिनम मवाड़ क महाराणा शाहपुराधिपति उम्मदसिंह डूगरपुर क राव शिवसिंह आदि मुख्य ह। सभी स इनको धन आर यश मिला आर आश्रयदाता अभयसिंह न तो लाख पसाव कविराजा की उपाधि आर आल्हावास की जागीर दकर करणादान का सम्मान किया।

बखता खिड़िया—

यह मारवाड़ क नागार परगन क रणास गाव का निवासी था। इसक पिता का नाम नाथा जी था। महाराजा अभयसिंह क आश्रित दरबारी कविया म वीरभाण रतनू क राजरूपक आर कविया करणादान क सूरजप्रकास व विड़दसिणगार स तो बहुत स लाग परिचित ह पर यह बात बहुत कम लोगो को ही ज्ञात ह कि इन दोनो क साथ बखता खिड़िया भी अभयसिंह का आश्रित कवि था आर अहमदाबाद युद्ध अभियान म यह कवि भी साथ था। बखता खिड़िया न भी अहमदाबाद युद्ध का बहुत ही सुन्दर वणन किया ह जो "अहमदाबाद रा राड़ रा कवित" नाम स अनूपसंस्कृत हस्तलिखित ग्रथो की प्रतियो म सुरक्षित ह।[९०] इस "अभयसिंह रा कवित" नाम स भी उल्लेखित किया गया ह। इसकी दो या तीन हस्तलिखित प्रतिया मिलती ह।

रखता खिड़िया का इस रचना म कुल १६६ कवित्त ह । राजरूपक आर सूरजप्रकास का प्रतिपाद्य हा इसका वर्ण्य विषय ह । रखता खिड़िया न अपना इस कृति म अहमदाबाद क युद्ध का वर्णन जा किया ह वह प्रभावा बन पड़ा ह । काव्य का शली रखता खिड़िया का अपना ह आर ऐतिहासिक प्रसगा का बड़ा कुशलता स अपन काव्यग्रथ म वर्णित किया ह ।

खेतसी सादू—

सादू शाखा क चारण कवि खतसा जोधपुर क महाराजा अभयसिह का आश्रित था । इसन अपन ग्रथ भाषा भारथ म महाभारत क अठारह पवा का साराश डिगल भाषा म लिखा । लगभग तरह हजार छन्दा क इस विशाल काव्य म मातादाम दाहा छप्पय इत्यादि विविध छन्दा का प्रयाग किया गया ह ।[११] कविया करणादान आर वारभाण रतन का समकालान यह कवि तलवार आर कलम दाना का धना था तथा अहमदाबाद क प्रसिद्ध युद्ध म महाराजा अभयसिह क साथ था ।[१२]

हुकमीचन्द खिडिया—

खिड़िया जाति क चारणा का मूलस्थान मारवाड का खराड़ा ग्राम माना जाता ह । जोधपुर क महाराजा विजयसिंह स कवि ने इस गाव म अपना वट लन क लिए प्राथना भा का था पर इसमे वह सफल नहा हुआ । किशनगढ शाहपुरा बदी तथा जयपुर क शासको से उसका सपर्क अधिक रहा व उनस यश सम्मान व द्रव्य प्राप्त हुआ । हुकमाचन्द खिडिया अपन डिंगल गाता क कारण प्रसिद्ध ह । कवि न अपन गाता म अनेक घटना प्रसगा आर विविध वारा का शार्य गाथाआ का बड हा सजाव ढग म व चित्रात्मक शैली म प्रस्तुत किया ह । हुकमाचन्द खिडिया न प्राय सासाणा छन्द का अपनाया आर वह इस शला क लिए आज भा याद किया जाता ह । हुकमाचन्द खिड़िया क गातो को यहा अत्यधिक लाकप्रियता मिला । इस सम्बध म यहा यह कहावत प्रसिद्ध है कि गात गात हुकमाचद कहगा हम गातड़ा हा गावा । उसक गाता का प्रशसा करते हुए किसी ने कहा ह—

खडिये रा आखर खरा रूपक राडि गात ।
हुकमीचद रा हालिया गुरड बचा जिम गात ॥[१५]

सगता सादू—

इसका काल अठारहवा शताब्दा का उत्तरार्द्ध माना जाता ह । सगता सादू मारवाड क खरवा ग्राम क ठाकुर इन्द्रसिंह जाधा का आश्रित कवि था । इसन इन्द्रसिंह रूपक नामक ५१७ छन्दा का एक कृति का सृजन किया । इन्द्रसिंह रूपक नामक इस वर्णात्मक कृति म सन् १७३० क अहमदाबाद युद्ध म जाधपुर का सना का आर स लडत हुए इन्द्रसिंह न जा वारता व शार्य का प्रदर्शन किया उसका विस्तार स उल्लख किया ह ।[१६]

सादू पृथ्वीराज–

सा॰ पृथ्वीरान की कृति अभयविलास" एक वर्णनात्मक रचना ह । इसम महाराजा अभयसिंह जाधपुर जिसन १७२४-१७४९ तक यहा राज्य किया उसका एव पूर्व का वशावला का वर्णन किया हुआ है । सादू पृथ्वाराज महाराजा अभयसिंह का समकालान था तथा उसन अपनी कृति अभयविलास म शिकार, फाग वसन्त आदि का सुन्दर वर्णन किया ह ।

सा॰ रामा (उदयसिंह रा वलि) बारहट अक्खा भानात सिंढायच पूना जाडा महड्, भीमा आसिया चूडा दधवाड़िया चारण भूधरदास कल्याणदास मेहड़, जाडावत गाडण काला महावन आढ़ा किसना दुरसावत बारहट शकर की पत्ना पद्मा सादू, दल्ला आसिया का पत्नी तापन सिंढायच गंपा तुकारा बारहट एजन आदि अनक चारण कवि मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य क महत्वपूण रचनाकार थ । इन सबका राजस्थानी साहित्य के इतिहास म महत्वपर्ण यागदान माना जाता है । इन सबका मारवाड़ स सम्बन्ध रहा ह ओर यहा की सांस्कृतिक परपराआ का इन रचनाकारा ने अपनी कृतिया म जा सुन्दर आर प्रभावी चित्रण प्रस्तुत किया ह उसस आग आन वाली यहा की कई पीढ़िया प्ररणा प्राप्त करती रहा हे । अपने काव्यग्रन्था म उन्हाने काव्यगत् विशषताआ का जिस मालिकता तथा मानव क मनाभावा का कल्पना क सहयाग स जिस बारीकी व आजपूर्ण ढग स अभिव्यक्त किया ह उससे राजस्थाना साहित्य की गारवशाली परम्परा का दिग्दर्शन हाता ह । अनक चारण कृतियो मे ऐतिहासिक सामग्री भी बहुतायत से उपलब्ध हाता ह ।

राव अमरसिंह राठाड़ का आश्रित वीठू सुन्दरदास साजत परगन क ग्राम राजाला का निवासी महड् शाखा चारण खगार, पाला परगन क रूपावास ग्राम का कसरीसिंह बारहठ का पुत्र करणीदान बारहठ (जिस महाराजा बखतसिंह द्वारा रामासिया नामक पाली परगने का गाव तथा एक लाख का मुदियाड़ ठिकाना दियागया) इत्यादि विवेच्यकाल म मारवाड़ क चारण साहित्य के प्रमुख रचनाकार थे जिन्हान अपनी काव्यप्रतिभा क बल पर राजस्थाना साहित्य का ता श्रीवृद्धि का हा साथ ही यहा के सांस्कृतिक मूल्या को अपन काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त कर यहा के जनमानस म उनकी प्रतिष्ठापना कर उनम आत्मबल साहस वारचित भावना व नवचतना जागृत की जिसम यहा का सांस्कृतिक जावन अपना एक अनूठी पहचान बनान म कामयाब हा सका ।

बिरजूबाई–

डिंगल की कवयित्रा बिरजूबाई का रचनाकाल वि.स. १८०० क आस पास माना जाता ह किन्तु बिरजूबाई क जावनकाल क सम्बन्ध म मुख्य रूप स दा धारणाए पायी जाता ह । प्रथम क अनुसार बिरजूबाई का डिंगल क प्रसिद्ध कवि कविया करणादान"

क कलापक्ष आर भावपक्ष का सुन्दर चित्रण किया ह व यमक अलकार का इसम सुदर छटा देखने का मिलता ह। भावपचाशिका नामक पन्चास दोहा व पच्चास सवया की इस रचना म कवि न अपन मनोभावा का बहुन सरस व हृदयग्राहा वर्णन किया है।

शृगार शिक्षा नामक ग्रन्थ का रचना वृन्द ने आरगजेब क वजार मुहम्मद खा के पुत्र अजमर के सूबेदार मिर्जा कादरी का पुत्री का पातव्रत धर्म का शिक्षा देन क लिए वि स १७४८ म की। इस रचना क अन्तिम भाग म नायिका भेद व सालह शृगारा का वर्णन वृन्द न बहुत हा सुन्दर ढग स किया ह। वृन्द द्वारा रचित उसका एतिहासिक रचना वचनिका भा मिलती ह जिसम उसन किशनगढ़ क महाराजा रूपसिह द्वारा धालपुर क युद्ध म प्रदर्शित वारता का वर्णन किया ह। धालपुर का यह युद्ध वि स १७१५ म शाहजहा क उत्तराधिकार के लिए उसक चारा पुत्रा दारा शुजा मराद आर आरगजेब क बीच हुआ था। दारा का मुकाबला शेष तानो भाइया स हुआ। इस युद्ध म महाराजा रूपसिंह न दारा का पक्ष लिया था। एतिहासिक घटना पर आधारित वृन्द का यह वचनिका वाररसात्मक कृति ह। वचनिका की भाति हा एक अन्य ऐतिहासिक घटना का उल्लिखित करत हुए वृन्द ने सत्यस्वरूप नामक ग्रन्थ का रचन का जिसम आरगजेब का मृत्यु के पश्चात दिल्ली क तख्त की प्राप्ति हेतु उसक पुत्रा शाहजादा मुअज्जम आजम कामबख्श आदि क बीच जो युद्ध हुआ उसका वर्णन ह। इसम किशनगढ क महाराजा राजसिह न बहादुरशाह का पक्ष लेते हुए युद्ध म अद्भुत शोर्य का जो प्रदर्शन किया था उसका वर्णन कवि ने बडी ओजपूर्ण भाषा म किया हे।

उपर्युक्त कृतियों के अतिरिक्त वृन्द का पवन पच्चासा समत सिखर छन्द हितापदशाष्टक भारतकथा आर हितापदशक नामक छोटी कृतिया भा मिलता ह।[११९]

जग्गा भाट—

जग्गा भाट भीनमाल का निवासी व जाधपुर क महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम का कृपापात्र था।[१२०] इसका काव्य प्रतिभा स प्रभावित हाकर महाराजा ने इस भीनमाल म भूमि प्रदान की थी। जग्गा भाट ने काई स्वतन्त्र काव्य का रचना ता नही का परन्तु उसके स्फुट गात कवित्त दोहे इत्यादि उपलब्ध हाते हे। उसका स्फुट काव्य भा बडा प्रभावशाली व मारवाड का गोरवशाला परम्परा तथा ओजस्वी उद्बाधन का प्रतीक ह। महाराजा जसवतसिंह धरमत के युद्ध क्षत्र स लाट आये थे। अपने आश्रयदाता क इस अशाभनाय कृत्य पर स्वाभिमानी जग्गा भाट का स्वाभिमान जाग उठा आर नाति मान मर्यादा व गारवशाला परम्परा क विरुद्ध कार्य करने पर अपन आश्रयदाता का भा निर्भीकता स निन्दा करत हुए उम कुल गोरव का स्मरण कराया। इस प्रसग क कुछ दाह यहा द्रष्टव्य ह—

कुठ काळच लगे जसा भड़ रण सू भागत।
गण माहि रजपूत ने मरणा ही राचत॥

धण घर आया आण न मा उर बळगी आग।
जोधाण आया जसा देवण कुळ न दाग॥

रण मा मरतो राठवड़ हाता हरख विसेख।
भड आया किम भाग न रणमाता रगरज॥

आज जोधाण गढ ऊमणा परथक गढ रा पाळ।
क्यू नी बज्या काटरा जाय मसाणा ढाला॥[१२१]

सूरति मिश्र—

जाधपुर के महाराजा जसवतसिंह प्रथम क काव्यगुरु सूरतिमिश्र जा आगरा के मल निवासी एव कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। सरतिमिश्र स्वय उच्चकोटि क कवि एव काव्यशास्त्र के ज्ञाता थ।[१२२] रसग्राहक चन्द्रिका अमरचन्द्रिका रसिकप्रिया टाका अलकार माला तथा सरस रस आदि कृतिया सूरतिमिश्र की प्रमुख एव उत्कृष्ट रचनाए माना जाता हे।[१२३] सूरतिमिश्र की गणना हिन्दी के प्रसिद्ध आचार्या म हाती ह।

नवीन कवि—

महाराजा जसवतसिंह प्रथम क आश्रय म रहकर काव्य रचना करन वालो म नवान कवि का नाम भी अग्रिम पक्ति म आता ह। नवान कवि की रचनाआ म कवल नह विधान नामक ग्रन्थ ही उपलब्ध हाता ह।[१२४] इस कवि की कुछ कृतिया आर हाने की सभावना की जा सकता ह क्याकि यह राज्याश्रित कवि था एव एसा कवि मात्र एक कृति का सृजन कर ही मान साध कर बठ जाय यह नही लगता। मध्यकालीन अन्य रचनाकारा की भाति इस कवि न और भी कृतिया लिखा होगा परन्तु उपलब्धता क अभाव मे प्रामाणिक रूप से कुछ नही कहा जा सकता।

चारणेशत्तर अन्य कवियो म कवि सुन्दरदास कृत सयागिनी वियोगिनी बारह मासा[१२५], सालग कवि कृत समुद्रबन्ध रूपक (जिसम जालार दुर्ग व जलन्धरनाथ का वर्णन ह)[१२६] प वणीरामकृत 'शकुनराज चापाई[१२७] कवि जयकृष्ण निर्मित रूपदी पक (जिसम कवि ने ५२ छन्दा क लक्षण सादाहरण दिय है)१२८ भडारा हजारामल कृत नायक्लक्षण[१२९] (नायक क १६ लक्षण दिय है) सुन्दरकवि कृत सुन्दर शृगार[१३०] एव उदिया ढाढी का सारठ वाझा री वात[१३१] आदि का विवच्यकाल म लिपिबद्ध हस्तप्रतिया उपलब्ध हाता ह। य प्रतिया महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश म सगृहात ह।

(१४१० ई १५१० ई) था आर्विभाव हुआ ।[१४२] रामानन्द न विशिष्ट द्वत का स्वाकारत हुए धर्म का जा स्वरूप सामन रखा उसा क आधार पर यहा रामावत सम्प्रदाय का स्थापना हुई । इतना हा नहा रामानन्द की भावधारा स प्रभावित होकर कबार पथ आदि सम्प्रदाय उत्तरा भारत म सर्वत्र लाक-प्रसिद्धि प्राप्त करत रह । कबार पथ का मारवाड़ म काफी प्रचार प्रसार हुआ तथा कबार पथा साहित्य क अन्तर्गत मुख्यत कबार की रचनाए यहा की जनता द्वारा विवच्यकाल म अधिक लोकप्रिय हुई ।

रामानन्द का शिष्य परम्परा म अनन्तानद कबार, सुखा सुरसुरा पद्मावति नरहरि पापा भावानन्द रदास धन्ना सन आदि वताय जाते ह ।[१४३] कुछ विद्वान जस आचार्य परशुराम चतुर्वेदा[१४४] आर श्रा बलदव उपाध्याय[१४५] न इनम स कईया का रामानन्द का शिष्य स्वीकार नहा किया ह । इसक विपरीत लोक परम्परानुसार कबार आदि का रामानन्द का हा शिष्य स्वाकार किया गया ह आर यहा धारणा यहा भा अधिक प्रचलित ह । रामानन्द का शिष्य परम्परा का एक प्रमुख विशषता यह रहा ह कि उत्तरा भारत मे उनक शिष्या न सगुण आर निर्गुण दाना हा प्रकार का भक्ति की धाराए प्रवाहित का परन्तु निर्गुण भक्ति का प्रचार प्रसार यहा अधिक हुआ ।

दादूपथी सत--

सन्त साहित्य म यहा कबार दादू, रदास आदि क पद बड़ लाकप्रिय रह ह । इसक अतिरिक्त स्थानाय आचलिक साधु सन्ता आर सिद्ध पुरुषा का वाणिया भा गाया जाता ह । सन्तसाहित्य म अधिकतर ईश्वर क निर्गुण स्वरूप का वर्णन मिलता ह । दादूपथ क सस्थापक दादू का जन्म सवत् १६०१ के आस पास आर जन्मस्थान अहमदाबाद माना जाता ह ।[१४६] परन्तु बास वर्ष का अवस्था म हा उनका राजस्थान म आगमन हा जाता ह आर राजस्थान क साभर आमर आर नराणा (नारायणा) म व कई वर्ष तक रह । साभर आर नागार परगन मारवाड़ स सम्बद्ध रह ह आर दादू जस सत का साधना स्थली साभर भा रहा इसलिए इस परगन म हा नहा पूर मारवाड़ म उस सत की वाणिया स जनता लाभान्वित हाता रहा ।[१४७]

सत दादू क पश्चात् दादूपथा शिष्य परम्परा में अनक सन्त हुए, जिन्हान दादू क उपदशा का प्रचार प्रसार किया । इन सन्ता म रज्जब (जन्म सवत् १६२४ क लगभग) गराबदास (जन्म सवत् १६३२) जगन्नाथदास आदि अनक सता न अपन पथ का प्रचार किया । इन्हान प्रमुख रूप स दादू क उपदशा का ही प्रचार प्रसार किया पर साथ हा अपन मालिक सृजन स भा सत साहित्य का वृद्धि हुई । रज्जब द्वारा रचित वाणा आर सवगा गराबदास क रच साखा पद अणभ प्रमाद व अध्यात्म बाध जगन्नाथदास कृत वाणा गुणगजनामा गातासार आर यागवाशिष्ठ सार आदि ग्रन्थ प्रमुख ह ।[१४८]

ब्रह्मदास—

ब्रह्मदास का बचपन का नाम विसनदास (विष्णुदान) था। ब्रह्मदास नाम तो दादू पथ मे दीक्षित होने के बाद रखा गया। इसका जन्म मारवाड मे पोकरण के समीप स्थित माडवा गाव मे हुआ था। इसके पिता का नाम जगा चारण (बीठू शाखा) था। ब्रह्मदास के गुरु का नाम हरनाथ था।[१४९] प्रारभ मे ही ब्रह्मदास को बचपन मे अपने परिवार के सस्कार के अनुरूप राजस्थानी भाषा मे काव्य इतिहास व पौराणिक कथाए सुनने का अवसर सुलभ हुआ था एव दादू पथ स्वीकार करने पर उनका सारा जीवन हरिभजन शास्त्र श्रवण व अध्ययन मे ही व्यतीत हुआ।[१५०] ब्रह्मदास की भक्तमाल दादू पथियो मे बहुत लोकप्रिय रही है। राजस्थानी भाषा मे पौराणिक उदाहरणो के आधार पर भक्तवत्सल भगवान की महिमा का बखान ब्रह्मदास ने जो अपनी भक्तमाल के माध्यम से किया है वह अत्यन्त सरल सरस व हृदयस्पर्शी है।[१५१]

ब्रह्मदास जोधपुर नरेश विजयसिंह के समकालीन थे। इसका आधार यह है कि विजयसिंह ने वि स १८१६ मे पोकरण के ठाकुर देवीसिंह सहित ८ बड़े सरदारो को धोखे से पकड़कर मरवाने का जो कुकृत्य किया उस पर ब्रह्मदास ने महाराजा विजयसिंह को उनके सम्मुख एक उपालम्भ गीत सुनाया था।[१५२] ब्रह्मदास की छोटी बड़ी कुल छ भगतमाल हिन्दी मे टीका सहित सपादित कर सपादक उदयराज उज्ज्वल ने प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर से प्रकाशित करवायी है।

माधोदास—

दादूपथी सत माधोदास मारवाड़ के गूलर ग्राम का निवासी था। माधोदास रचित सतगुण सागर[१५३] नामक ग्रन्थ मे २४ तरगो के अन्तर्गत दादू का जीवन चरित्र और उनकी शिष्य परम्परा के अतिरिक्त दादू के उपदेशो का वर्णन किया गया है। माधोदास कृत इस सतगुण सागर ग्रन्थ का रचनाकाल वि स १६६१ है।[१५४]

कृष्णदेव—

दादूपथी सत कृष्णदेव नराणे से मारवाड़ मे आये। कृष्णदेव को मारवाड़ मे रखने के प्रश्न को लेकर महाराजा अभयसिंह एव बखतसिंह के बीच मतैक्य नही था। अभयसिंह कृष्णदेव को जोधपुर मे रखना चाहते थे जबकि बखतसिंह उन्हे नागौर मे रखना चाहते थे। दोनो भाइयो के मतभेद को दूर कर उनकी सहमति से कृष्णदेव ने मेड़ता मे रहना तय किया। कृष्णदेव के मेड़ता मे रहने के पश्चात् दादूपथियो की वहा गादी द्वारा स्थापित हुआ।[१५५] कृष्णदेव मृत्युपर्यन्त मेड़ता मे ही रहे। मेड़ता मे उनके पश्चात् उनकी शिष्य परम्परा द्वारा दादू के विचारो व उपदेशो का प्रचार प्रसार उस क्षेत्र मे किया गया।

इसके अतिरिक्त दादू के प्रमुख शिष्य सुन्दरदास की रचनाओ को यहा बड़े उत्साह से उनके पथानुयायियो द्वारा गाया व पढ़ा जाता रहा है। सुन्दरदास ने धर्म और अध्यात्म

के गूढ तात्विक ज्ञान का अपनी रचनाओं मे बहुत ही सरल व सहजता से उतारा है। सुन्दरदास की विभिन्न कृतिया के अलावा राघवदास की भक्तमाल (रचनाकाल वि स १७७०) तथा जन गोपाल[१५५] की कृतिया यहा बडी लोकप्रिय रही। जगजीवन दामोदरदास खेमदास वाजींद जी आदि ने अपने पथीय साहित्य मे वृद्धि करने मे महत्वपूर्ण योगदान दिया। ये दादूपथी सत मारवाड़ मे उत्पन्न नहा हुए फिर भी उनकी रचनाए यहा बड चाव से पढ़ी जाती रही है।

रामस्नेही सन्त–

सन्त दरियावजी

रामस्नेही सम्प्रदाय की चारो शाखाओ मे प्रथम और प्राचीन रेण पीठ के संस्थापक दरियावजी का जन्म मारवाड़ राज्य के जतारण कस्बे मे वि स १७३३ (ई सन् १६७६) भाद्रपद कृष्णा अष्टमी बुधवार को हुआ था।[१५६] श्री दरियावजी महाराज को अखिल भारतीय रामस्नेही सम्प्रदाय का आदि आचार्य माना जाता है[१५७] और ये मूलत रामानन्द की शिष्य परम्परा से सम्बद्ध है। दरियावजी ने अपने पूर्ववर्ती कबीर, दादू आदि सन्तो की भाति निराकार निर्गुण भक्ति का ही प्रचार किया।[१५८] दरियावजी उच्चकोटि के साधक व सत थे। उन्होने रामभक्ति की महिमा बताकर रामभक्ति का प्रचार-प्रसार किया जिससे पूरा देश और प्रान्त तो लाभान्वित हुआ ही मारवाड़ राज्य की तत्कालीन जनता विशेष रूप से लाभान्वित हुई। वि स १८१५ (मार्गशीर्ष पूर्णिमा)[१५९] को उनके मोक्षप्राप्ति के पश्चात् उनके शिष्यो ने यहा की स्थानीय भाषा मे वाणीसाहित्य की रचना कर रामभक्ति का व्यापक प्रचार किया।

सत दरियाव जी के अनेक शिष्यो मे ७२ शिष्य और ९ शिष्याए प्रसिद्ध थी। उनमें से हरखराम ने नागोर, सुखरामदास ने मेड़ता टेमदास ने डाडवाना गगाराम ने जोधपुर, मिरेमल ने साभर, देवदास ने मूडवा जस्सी राम ने राल सतोषदास ने ईड़वा उदेराम ने आकासर, उरेडचद ने जनवाणे जादूराम ने साजू, नानकदास ने कुचेरा देवाराम ने हरसोळ धन्नाराम ने खुड़ी गाव भगवानदास ने रेण सरदारराम ने बूटाटी आदि मारवाड़ के कई स्थानो पर रामस्नेही सम्प्रदाय का प्रचार किया।१ दरियावजी के समय ही इस शाखा का मारवाड में काफी प्रचार हो चुका था और उनके कई शिष्यो ने मारवाड़ ही नही राजस्थान के अन्य स्थानो पर भी रामभक्ति का प्रचार प्रसार किया। मारवाड़ में रामभक्ति को व्यापकता प्रदान करने मे रेण शाखा के सन्तो का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सत हरखराम

सत हरखराम रेण शाखा के संस्थापक दरियावजी के प्रमुख शिष्यो मे से एक थे। वीतरागी भजनानन्दी निष्ठावान सत हरखराम दरियावजी के पश्चात् रामनामा रेण पीठ की गद्दी पर बैठे। उनके तपस्वी जीवन से उनका प्रभाव व सुयश सर्वत्र फैला और उन्होने

ररियावजी द्वारा सस्थापित पाठ का कार्यभार कुशलता स निभाया। विस १८५६ म इन्हान रामधाम रेण म राम सभा का गठन किया एव अपने गुरु का फूलडाल का उत्सव बडा धूमधाम स आयाजित किया।[१६१] गुरु की वाणिया कअतिरिक्त इन्हान एक भक्तमाल का भा रचना का जिसम रामानन्दी साधुआ और विशपकर रण क रामस्नहा दरियावजा क प्रमुख शिष्या का उल्लख किया गया ह।

किसनदास

किसनदास का जन्म नागार परगन के टाक्ला गाव म वि.स १७४१ को हुआ। किसनदास का कई सिद्धिया प्राप्त थीं जिसस उन्हान जनता को चमत्कृत भी किया। वि.म १८२५ म किसनदास का स्वर्गवास हुआ। रण शाखा क रामस्नेही सत परम्परा क अनुयाया सत किसनदास का फुटकर वानी और गुरु महिमा का अग ही अभी प्रकाश म आय ह।[१६३]

सुखरामदास

सुखरामदास का जन्म मड़ता म वि.स १७५८ म हुआ था। रेण शाखा के सस्थापक दरियावजी क प्रमुख शिष्या म सुखरामदास का गणना हाता ह। सत सुखरामदास न मड़ता मे रहकर ही साधना की थी। इनका मृत्यु वि स १८२३ म हुई। सुखरामदास का फुटकर वाणा मिलता ह जिसम उनक द्वारा रचित विरह का अग बहुत प्रसिद्ध ह।[१६४]

सन्त सुखराम

जोधपुर स ३० माल उत्तर म स्थित मारवाड़ क विराई गाव क निवासी थ। य जाति क गुर्जरगौड़ ब्राह्मण थ। इनक पिता का नाम आईदान व माता का नाम जगतुबाई था। इनका जन्म वि.स १७८३ चत्र शुक्ला नवमी गुरुवार (रामनवमी) को हुआ था। एक बार पेड़ काटत समय इनका महसूस हुआ कि पड़ का दर्द हा रहा ह उसक बाद व हरिभजन म लग गय। विराई क समाप का पहाड़ा पर १८ वर्ष तक तपस्या का आर उसके बाद जगह जगह घूमकर रामभक्ति का प्रचार किया। वि.स १८७३ म व जब भ्रमणार्थ पालाभात की ओर गये हुए थे वही रिछाला गाव मे इनका देहान्त हुआ। सुखरामदास (विराई) के दो लघु ग्रन्थ भुरका आर परमपछतावा उपलब्ध हाते है।[१६५] सन्त सुखराम क अतिरिक्त विराई गाव के रामद्वार क सता म सावलदास वीरमदास[१६६] राघवदास आदि सता न रामस्नहा सम्प्रदाय का विचारधारा को प्रचारित करन म महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी गाव के रामद्वार का सत परम्परा म कालान्तर म सुखसारण हुए जिन्हान परचा काव्य क माध्यम स विभिन्न सता क जीवनवृत्त का लिपिबद्ध (पद्य म) किया। सुखसारण न महिला भक्त कवयित्रिया का परिचये अधिक लिखा।[१६७]

भगवानदास

भगवानदास पापाड़ गाव क रहन वाल आर जाति के माहश्वरा थ। उनका जन्म वि.स १८०१ आसाज सुदि १४ शनिवार का हुआ। इनक पिता का नाम दामादरदास

ग्न मनमत का विभिन्नता इस विषय पर है कि शास्त्र मत का आधार वेद्याणी है और मन्तो की वाणी का आधार प्रत्यक्ष अनुभव है। अनुभव और शास्त्र दोनों के मिलान में कुछ विपर्याभास अवश्य प्रतीत होता है किन्तु अनुभवशून्य शास्त्रज्ञान जनहृदय पटल पर उतना प्रभाव नहीं डाल सकता जितना कि अनुभवसिद्ध साहित्य डाल सकता है।[१८]
इसलिए विवच्यकाल म मारवाड़ की जनता पर धार्मिक साहित्य के अन्तगत जितना साधा प्रभाव सन्तसाहित्य का पड़ा उतना शास्त्रीय धार्मिक साहित्य का नहीं।

निरजनी सन्त—

हरिदास

निरजनी सम्प्रदाय के सस्थापक सत हरिदास के सम्बन्ध म बहुत मतभेद है। स्व. पुरोहित हरिनारायण के अनुसार ये हरिदास प्रथम प्रयाग दासजी के शिष्य हुए फिर दादूजी के, फिर कबीर और गोरखपथ म चल गये फिर अपना निराला पथ चलाया।[१८४]

एक मत के अनुसार हरिदास नागौर जिले का एक जाट था। एक दिन उसने एक गर्भवती मृगी का शिकार किया। उसे इस बात पर बहुत पश्चात्ताप हुआ और वह अरण्य म भगवान की आराधना करने चला गया। उसने निरजना निराकार की उपासना की इसलिए उसके अनुयायी निरजनी कहलाये।[१८५]

एक अन्य मत के अनुसार यह कहा जाता है कि हरिदास जन्म से साखला गोत्र के क्षत्रिय थे। ये डीडवाना परगने के कापडोद गाव के निवासी थे। इन्होंने आरभ म वैवाहिक जीवन व्यतीत किया एव इनका पूर्व नाम हरिसिंह था।[१८६] इनके जन्म मृत्यु व जीवन आदि के बारे म बहुत मतभेद पाये जाते हैं। परन्तु निरजनी सम्प्रदाय के सस्थापक के रूप म हरिदास जी को स्वय को और उसके पश्चात् मारवाड़ म उसके निरन्तर विकास म उनके शिष्यों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। निरजनियों के १२ प्रमुख महन्तो मे हरिरामदास तुरसीदास जगजीवणदास ध्यानदास मोहनदास रामदास खेमदास आदि की गणना होती है। इन निरजनी सतों की वाणियाँ यहा हस्तलिखित प्रतियों म प्रचुर मात्रा म उपलब्ध होती हैं।

हरिरामदास

ये निरजनी हरिदास की शिष्य परम्परा म से थे। हरिरामदास जी ने डीडवाणे को ही अपना प्रमुख साधना स्थल बनाया। हरिरामदास की रचनाओं म छन्द रत्नावली परमार्थ सतसई ओर महाराज हरिदास की परची प्रमुख हे। इसके अतिरिक्त इनकी लिखी कुछ फुटकर वाणियाँ भी मिलती हे।[१८७]

आत्माराम

आत्माराम निरजनी जोधपुर महाराजा विजयसिंह के गुरु थे। उनका देहान्त वि स १८१६ की फाल्गुन वदि १ (ईसन् १७६० २ फरवरी) को हुआ था[१८८] और उनका

समाधि के समय उपस्थित होने की आज्ञा के बहाने मारवाड़ के चार बड़े सामन्तों को मारने की योजना बनाई थी। इस प्रसंग का एक दोहा यहाँ बहुत प्रचलित है -- ।[१८९]

इनकी फुटकर वाणी मिलती है। साखी, चन्द्रायणा और कुंडलिया के द्वारा गुरु की महिमा, भक्ति की महिमा और भगवान की भक्त वत्सलता का वर्णन किया गया है।[१९०]

इसके अतिरिक्त मोहनदास नामक संत निरंजनी सम्प्रदाय के बारह प्रमुख महन्तों में से एक थे। इनका समय सोलहवीं सदी का उत्तरार्द्ध माना जाता है। मोहनदास की परम्परा अब भी डीडवाणा में विद्यमान है। इसी थाभे (डीडवाणा) में बालकिशन नामक संत हुए जो 'लोटन जी" के नाम से यहाँ जाने जाते थे। उनके उपनाम के कारण ही आज तक यह स्थान लोटन जी का बाड़ा नाम से प्रसिद्ध है। संवत् १८१४ में जब इनका स्वर्गवास हुआ तो उनके शिष्य जयरामदास ने डीडवाणा में उनका स्मारक बनाया और उसकी प्रतिष्ठा करवायी।[१९१] इस प्रकार निरंजनी सम्प्रदाय के संतों ने भी विवेच्यकाल में मारवाड़ में धार्मिक चेतना को जाग्रत करने एवं लोगों में उसके प्रति दृढ़ आस्था रखने का विश्वास जगाने में सक्रिय भूमिका निभायी।

भक्ति साहित्य के विशिष्ट रचयिता--

ईसरदास

मारवाड़ के भद्रेस गाँव के निवासी भक्त कवि ईसरदास रोहड़िया के जन्म संवत् व मृत्यु संवत् के सम्बन्ध में उत्पन्न मतभेदों का उल्लेख सम्भ्रान्तवर्गीय विशिष्ट रचयिता के अन्तर्गत पूर्व में किया जा चुका है। हाला झाला रा कुण्डलिया" के अतिरिक्त - (१) हरिरस (२) छोटा हरिरस (३) बाललीला (४) गुणभागवत (५) गरुड पुराण (६) गुरु आगम (७) निन्दा स्तुति (८) देवियाण (९) गुण वैराट (१०) सभापर्व (११) रासकैलास व (१२) दानलीला सभी भक्ति के प्रमुख ग्रन्थ हैं।[१९२] गुजरात के रावल जाम के राज्याश्रय में रहते हुए संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित पीताम्बर भट्ट से ईसरदास ने भागवत व अन्य धार्मिक शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया था।[१९३]

ईसरदास द्वारा लिखे गये भक्तिग्रन्थों में हरिरस नामक ग्रन्थ सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय रहा है। शेष कृतियाँ छोटी छोटी हैं जिनको साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्व भले ही न समझा जाय परन्तु भक्ति की दृष्टि से वे पठनीय व प्रेरक हैं। उनके ग्रंथ हरिरस का तो गुजरात काठियावाड़ और राजस्थान के अनेक घरों में नियमित पाठ होता है। ईसरदास गुजरात में रावल जाम के राज्याश्रय में रहे इसलिए उनकी रचनाएं राजस्थानी और गुजराती दोनों भाषाओं व प्रदेशों में समान रूप से सम्मानित व स्वीकृत की गयीं। उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हरिरस की महत्ता और भक्तिमत्ता के सम्बन्ध में केशवराम गाडण का यह मत द्रष्टव्य है---

जग प्रजळती जाण अंध नावानळ ऊपरा ।
रचियो रोहड़ राण समद हरिरस सूरवत ॥[१९४]

ईसरदास ने भक्तिप्रधान कृतिया लिखकर भक्ति साहित्य का श्रीवृद्धि ता का हा इसक साथ व स्वय उच्चकाटि के भक्त थ । लाकमानस म उनक कई चमत्कारिक किस्म प्रचलित है एव उन्ह ईसरा सा परमेसरा कह कर पुकारा जाता ह ।

चूडा दधवाडिया

प्रसिद्ध भक्त कवि माधादास दधवाडिया क पिता चूडा दधवाड़िया मड़त के राव वीरमदेव का कृपापात्र था । चूडा दधवाड़िया द्वारा रचित निमनधा वध आर गुण चाणक वलि [१९५] नामक दाना कृतिया भक्ति प्रधान रचनाए हे ओर इसम ईश्वर की महिमा का गुणगान किया गया ह । चूडा दधवाड़िया आर अल्लू जी कविया का नाभादास ने अपनी भक्तमाल म चारह चारण भक्त कविया म गणना का ह ।

माधौदास दधवाडिया

यह चूडा दधवाडिया का पुत्र था । इसका जन्म मेड़ता परगने के बलुदा ग्राम मे सभवत १६१० १५ के आस पास हुआ आर सवत् १६१० क आस पास स्वर्गवास हुआ । यह जाधपुर क महाराजा सूरसिंह का आश्रित कवि था ।[१९६] माधादास दधवाड़िया बाकानर क राठाड़ पृथ्वाराज तथा कशवदास गाडण के समकालान था । माधादास को अपन पिता स भक्ति के सस्कार विरासत म मिल थ आर पिता से भी बढ़कर इसे भक्तकवि क रूप म प्रसिद्धि मिली ।

माधादास उच्चकाटि का कवि आर हरिभक्त था । माधादास रचित रामरासा रामकथा पर आधारित लगभग पान ग्यारह सा छन्दा का ग्रन्थ ह । रामरासा की कथा का आधार वाल्मीकि रामायण ह किन्तु इसक अतिरिक्त कथा के सूत्र आनन्द रामायण कृतिवासीय रामायण अध्यात्म रामायण लोमसहिता आदि मे भी खाजे जा सकते है । इससे कवि के विस्तृत अध्ययन आर उसकी समन्वयात्मक प्रवृत्ति का पता चलता हे । रामरासा का कथा सगा म या काण्डा म विभाजित होने की वजाय स्वय कवि क द्वारा राम की पूरी कथा कहा गयी ह ।[१९७]

भाषा दशमस्कध भा माधादास दधवाडिया का भक्तिप्रधान रचना ह । राम रासा आर भाषा दशमस्कध क अतिरिक्त माधादास की गजमाख रा नीसाणी म भागवत क गजन्द्रमाक्ष की कथा वर्णित ह । यह नीसाणा छन्द म लिखा छाटा सा रचना ह जिसम साधा सादी प्रवाह पूर्ण भाषा म बड़े राचक ढग से कवि न गजमाक्ष की कथा का वर्णन किया ह । माधादास द्वारा रचित हनुमान गात [१९८] म हनुमान की महिमा का बखान किया गया ह ।

कहा जाता हे कि राठाड पृथ्वाराज की वलि क्रिसन रुकमणी पर अनुकूल सम्मति भेजन वाल चारण कविया म स एक माधोदास दधवाडिया भी था । माधादास ने पृथ्वीराज का वलि का बहुत प्रशसा की । पृथ्वीराज राठाड़ ने भा माधादास का प्रशसा म एक दाहा लिखकर भेजा जा इस प्रकार है

"चूडै चत्रभुज सेवियो ततफल लागो तास ।
चारण जीवा चार जुग मरो न माधोदास ॥ [१९९]

नरहरिदास

नरहरिदास रोहड़िया शाखा का चारण था । इसक पिता का नाम लक्खा था । इसका जन्म वि स १६४८ म आर देहान्त सवत् १७३३ म हुआ ।यह जोधपुर के महाराजा गजसिह के आश्रय मे था तथा महाराजा द्वारा इसे टहला नामक गाव प्रदान किया गया ।[२००] इसके द्वारा पिंगल भाषा मे प्रणात अवतारचरित्र ग्रथ यहा बहुत लाकप्रिय रहा ह ।

अवतारचरित्र एक भक्ति प्रधान रचना ह निसम हिन्दू धर्म क मान्य २४ अवतारा का वर्णन किया गया हे । इस वर्णन म रामावतार का कथा का विस्तार सर्वाधिक ह तथा शप म कृष्णावतार कपिलावतार बुद्धावतार वराहावतार आदि का सक्षिप्त वर्णन ह । इसकी भाषा बहुत सरल एव व्यवस्थित है । कथाप्रसग के अनुकूल छन्दा को चुना म भा कवि ने पटुता प्रदर्शित का ह पर नरहरिदास के भावा मे मालिकता का प्राय अभाव सा ह । अवतारचरित्र का क्या रचना पद्धति क्या घटनाक्रम क्या भावव्यजना आर क्या उक्ति चमत्कार, सभी रामचरित मानस स मिलते जुलत ह । कशव का रामचन्द्रिका का अनुकरण भी किया गया ह ।

अवतारचरित्र के अलावा भी नरहरिदास रचित काई १५-१६ ग्रथ मान जाते हे प वे सब उपलब्ध नही हैं । क्वल निम्नलिखित छ ग्रथा का नामाल्लख मिलता ह

(१) दशमस्कन्ध भाषा (२) रामचरित्र कथा (३) अहिल्या पूवप्रसग (४) वाणा (५) नरहरि अवतार कथा (६) अमरसिंहजी रा दूहा ।

द्वारिकादास दधवाडिया

द्वारिकादास दधवाडिया मारवाड क प्रसिद्ध भक्तकवि माधादास दधवाड़िया का पौत्र था । द्वारिकादास बलूदा ग्राम का निवासी व जाधपुर क महाराजा अजीत सिंह का कृपापात्र था । द्वारिकादास न अजीतसिंह रा दवावत (रचनाकाल वि स १७७२) म अपन आश्रयदाता क शार्य पराक्रमवभव का आकर्षक शैला म वर्णन किया है। अजातसिंह न इस जैतारण परगन का बासना नामक ग्राम सासण म प्रदान किया ।

कशवदास गाडण जिसका उल्लख चारण साहित्य क अन्तर्गत किया गया ह । इस कवि ने भी आध्यात्मिक आर भक्ति से ओतप्रोत "नासाणा विवकवार रा छन्द

जग प्रजळता जाण अध त्तावानळ ऊपरा ।
रचियाँ रोहड़ राण समद हरिरस सूरवत ॥[१९४]

ईसरदास ने भक्तिप्रधान कृतिया लिखकर भक्ति साहित्य की श्रावृद्धि तो की हा इसक साथ व स्वय उच्चकाटि के भक्त थे । लाकमानस म उनक कई चमत्कारिक किस्से प्रचलित है एव उन्हे ईसरा सा परमेसरा कह कर पुकारा जाता ह ।

चूड़ा दधवाडिया

प्रसिद्ध भक्त कवि माधादास दधवाडिया के पिता चूडा दधवाड़िया मड़ते क राव वीरमदेव का कृपापात्र था । चूडा दधवाड़िया द्वारा रचित निमनधा बध आर गुण चाणक वलि [१९५] नामक दाना कृतिया भक्ति प्रधान रचनाए ह आर इसम ईश्वर का महिमा का गुणगान किया गया है । चूडा दधवाड़िया आर अल्लूजी कविया को नाभादास न अपना भक्तमाल म चादह चारण भक्त कविया म गणना का ह ।

माधौदास दधवाडिया

यह चूडा दधवाड़िया का पुत्र था । इसका जन्म मेड़ता परगन क चलुन्त ग्राम मे सभवत १६१० १५ के आस पास हुआ और सवत् १६९० के आस-पास स्वर्गवास हुआ । यह जाधपुर क महाराजा सूरसिह का आश्रित कवि था ।[१९६] माधादास दधवाडिया वाकानेर क राठाड़ पृथ्वाराज तथा केशवदास गाडण के समकालीन था । माधादास का अपन पिता स भक्ति के सस्कार विरासत म मिल थ आर पिता से भा बढ़कर इस भक्तकवि क रूप म प्रसिद्धि मिला ।

माधादास उच्चकाटि का कवि आर हरिभक्त था । माधादास रचित रामरासा रामकथा पर आधारित लगभग पाने ग्यारह सौ छन्दा का ग्रन्थ है । रामरासा का कथा का आधार वाल्माकि रामायण ह किन्तु इसके अतिरिक्त कथा के सूत्र आनन्द रामायण कृतिवासीय रामायण अध्यात्म रामायण लामसहिता आदि मे भी खाजे जा सकते हे । इससे कवि के विस्तृत अध्ययन आर उसकी समन्वयात्मक प्रवृत्ति का पता चलता ह । रामरासो की कथा सर्गा म या काण्डो मे विभाजित होने की बजाय स्वय कवि के द्वारा राम की परी कथा कहा गयी ह ।[१९७]

भाषा दशमस्कन्ध भा माधादास दधवाडिया की भक्तिप्रधान रचना ह । रामरासा आर भाषा दशमस्कन्ध क अतिरिक्त माधादास का गजमाख रा नासाणा म भागवत क गजेन्द्रमाक्ष का कथा वर्णित ह । यह नासाणी छन्द म लिखा छाटी सी रचना ह जिसमे साधा सादी प्रवाह पर्ण भाषा म बड़ राचक ढग स कवि ने गजमाक्ष की कथा का वर्णन किया ह । माधादास द्वारा रचित हनुमान गात [१९८] म हनुमान की महिमा का बखान किया गया ह ।

कहा जाता ह कि राठौड़ पृथ्वीराज का वलि क्रिसन रुकमणा पर अनुकूल सम्मति भेजने वाले चारण कवियां म स एक माधादास दधवाड़िया भी था। माधादास न पृथ्वीराज की वलि का बहुत प्रशसा की। पृथ्वाराज राठाड़ ने भा माधौदास का प्रशसा म एक दाहा लिखकर भजा जा इस प्रकार ह

चूडे चत्रभुज सविया ततफल लागा तास।
चारण जावा चार जुग मरो न माधादास॥ १९९

नरहरिदास

नरहरिदास रोहड़िया शाखा का चारण था। इसक पिता का नाम लक्खा था। इसका जन्म वि स १६४८ म आर दहान्त सवत् १७३३ म हुआ। यह जाधपुर क महाराजा गर्जासिंह क आश्रय म था तथा महाराजा द्वारा इसे टहला नामक गाव प्रदान किया गया।[२००] इसके द्वारा पिंगल भाषा म प्रणात अवतारचरित्र ग्रथ यहा बहुत लाकप्रिय रहा ह।

'अवतारचरित्र एक भक्ति प्रधान रचना है जिसम हिन्दू धर्म क मान्य २४ अवतारा का वर्णन किया गया ह। इस वर्णन म रामावतार का कथा का विस्तार सर्वाधिक ह तथा शेष म कृष्णावतार, कपिलावतार, बुद्धावतार, वराहावतार आदि का सक्षिप्त वर्णन ह। इसका भाषा बहुत सरल एव व्यवस्थित है। कथाप्रसग के अनुकूल छन्दा का चुनन म भी कवि ने पटुता प्रदर्शित का हे पर नरहरिदास के भावा म मालिकता का प्राय अभाव सा हे। अवतारचरित्र की क्या रचना पद्धति क्या घटनाक्रम क्या भावव्यजना आर क्या उक्ति चमत्कार सभा रामचरित मानस स मिलत जुलत ह। कशव का रामचन्द्रिका का अनुकरण भी किया गया ह।

अवतारचरित्र के अलावा भी नरहरिदास रचित काई १५ / १६ ग्रथ मान जाते ह प वे सब उपलब्ध नही हे। कवल निम्नलिखित छ ग्रथा का नामाल्लख मिलता ह

(१) दशमस्कन्ध भाषा (२) रामचरित्र कथा (३) अहिल्या पूर्वप्रसग (४) वाणा (५) नरहरि अवतार कथा (६) अमरसिहजी रा दूहा।

द्वारिकादास दधवाडिया

द्वारिकादास दधवाडिया मारवाड़ क प्रसिद्ध भक्तकवि माधादास दधवाड़िया का पात्र था। द्वारिकादास बलूदा ग्राम का निवासी व जाधपुर क महाराजा अजीत सिंह का कृपापात्र था। द्वारिकादास न अजीतसिंह रा दवावत (रचनाकाल वि स १७७२) म अपने आश्रयदाता क शार्य पराक्रमवभव का आकर्षक शला म वर्णन किया ह। अजीतसिंह न इस जैतारण परगने का बासना नामक ग्राम सासण में प्रदान किया।

केशवदास गाडण जिसका उल्लख चारण साहित्य के अन्तर्गत किया गया ह। इस कवि ने भा आध्यात्मिक आर भक्ति से ओतप्रोत "नासाणी विवकवार री "छन्द

महादेवजी रा [२०२] छन्द गोरखनाथ री इत्यादि कृतियो की रचना की जो यहा के लोकजीवन मे काफी प्रसिद्ध रहा है।

पीरदान लालस

पीरदान लालस मारवाड़ के जुड़ाया गाव के निवासी थे। इन्होंने परमभक्त ईसरदास को अपने गुरु के रूप मे उल्लिखित किया है—

इसाणद गुरु चित मा आणा वद व्यास ना पछै वखाणा। [२०३]

परन्तु ईसरदास और पीरदान लालस के बीच समय का जो अन्तराल है उसे देखते हुए लगता है कि ये दोनो समकालीन नहीं थे। यह संभव है कि पीरदान लालस ने परमभक्त ईसरदास को अपना गुरु मान लिया हो। ईसरदास की स्वर्गवास तिथि वि स १६७५ के आस पास मानी जाती है जबकि पीरदान लालस की सभी रचनाएं वि स १७९१ व १७९२ मे लिखी हुई उपलब्ध होती है। अत इन रचनाओ के आधार पर पीरदान का काल वि स १७०० के बाद का ही निश्चित होता है।[२०४] पीरदान ग्रथावली२०५ के अनुसार पीरदान लालस की कृतिया इस प्रकार है- (१) नारायण नेह (२) परमेसर पुराण (३) हिंगलाज रासो (४) अलख अराध (५) अजपा जाप (६) ज्ञानचरित और (७) पातिग पहर।

पीरदान ग्रथवली मे सकलित ये सभी रचनाए भक्ति सम्बन्धी हैं जिसमे पीरदान लालस ने दूहा चोपई गाहा कवित्त मोतीदाम आदि छन्दो के माध्यम से विविध रचनाओ द्वारा ईश्वर भक्ति की भावना को अभिव्यक्त किया है।

हमीरदान रतनू

चारणा की रतनू शाखा का हमीरदान मारवाड़ के घड़ोई ग्राम का निवासी था।[२०६] हमीरदान रतनू की कृतियों मे (१) लखपत पिंगल (२) गुण पिंगल प्रकास (३) हमीर नाममाला (४) भागवत दर्पण (५) चाणक्य नीति (६) भरतरी शतक प्रमुख है।[२०७] गुणपिंगल प्रकास की रचना वि स १७६८ म की जिसका उल्लेख कवि ने ग्रथ के अन्त में किया है—

सवत सतरह अड़सठे माह सीत रित मास।
जिहड़ौ जोडे जाणियो अहडो कियो अभ्यास ॥६८

सुणता पुणता सीखता अथक होई आणद।
कहीयो ग्रथ हमीर कवि गुण ग्राहक गोविद ॥७०

इसी प्रकार लखपत पिगल का रचना सवत् १७९५ दिया है। इससे हमीरदान रतनू विवेच्यकाल का रचनाकाल था। गुणपिंगल प्रकास मे हमीर दान ने छन्दा के लक्षण देकर उदाहरण के रूप मे रामकथा का गुणगान किया है। कवि ने अपने इष्टदेव राम का

स्थान स्थान पर देवाधिदेव प्रदर्शित करने का प्रयास किया ह । कवि के उपास्य राम म महत् तत्व का प्राधान्य ह । राम के विशप रूप से उदार, करुण व शरणागतवत्सल गुण का चर्चा करत हुए सगुण दास्यभक्ति क अन्तर्गत श्रीराम का विष्णु का अवतार मानकर उनका यशागान किया ह ।[२०८] कवि की भागवतदर्पण व भरतरीशतक दाना भक्ति प्रधान रचनाए ह ।

ओपा आढा

यह महाराजा विजयसिंह का दरजारा कवि था आर महाराजा मानसिंह क समय तक विद्यमान रहा ।[२०९] ओपा आढ़ा का रचनाकाल वि स १८४०-१८७५ तक माना जाता ह । ओपा आढ़ा का स्वतत्र रूप से कोई ग्रन्थ तो उपलब्ध नही हे, किन्तु इसके फुटकर डिंगल गीत उपलब्ध होत है । ओपा आढ़ा क डिंगल गात भक्तिभाव से सम्पन्न सरस आर कमनाय है ।[२१०] इनके पिता का नाम बखता आढा था एव मूलत पशुआ गाव (सिरोहा) क रहने वाले थ ।[२११]

रायसिंह सादू

रायसिह सादू का जन्म वि.स १८५० म मारवाड़ के वाली कस्बे क पास मिरगसर नामक गाव म हुआ था । रायसिंह सादू राम क परम भक्त थ । 'मोतिया के दूह रायसिंह सादू के रच हुए हे जा उन्हाने मातिया नामक सवक का सवाभक्ति से प्रसन्न हाकर लिख थे । इन दोहो म भी मातिया को दी गयी रामभक्ति की सीख क कई उदाहरण दखने को मिलत है—

सारे दुख सहियो नवग्रह बाधे नाखिया ।
रामण ना रहिया माथा दस ही मातिया ।[२१२]

सतदास

सतदास का जन्म वि स १६९९ वदि ० रविवार का मड़ता परगन क कावड्या खराडा गाव म हुआ था । सतदास खिड़िया शाखा क चारण एव रामानदी सम्प्रदाय क नारायणदास जी (छाटा) क शिष्य थे । सतदास ने जूनागढ म दीक्षा ग्रहण का । कुछ समय तक गिरनार व गलता मे रहकर दातड़ा चले गये । वि स १८०६ फाल्गुन कृष्णा सप्तमी शनिवार को स्वर्गवास हुआ । सतदास क पश्चात् गुदड़पथ का स्वतत्र रूप स निमाण भा हुआ ।[२१३] सतदास की वाणी शाहपुरा के रामस्नेही सम्प्रदाय म भी आदर का दृष्टि से देखी जाती ह ।

सतदास के ब्रह्मध्यान और भ्रमतोड़ नामक दा लघु ग्रथ उपलब्ध हात ह । इसक अतिरिक्त सतदास ने फुटकर साखी व पदा का रचना भी की । सतनाम का साखिया व पदा म सगुण व निर्गुण दाना का समन्वय ह । गुदड पथ म सगण का उपासना अधिक प्रचलित ह ।

इतनी सक्रिय भूमिका एव प्रभाव रखन क एव अपन व्यस्त जावन क बावजद भा उन्हान साहित्य सृजन म रुचि ला जा उनका बहुआयामा प्रतिभा का परिणाम हा कहा जायगा।

उनक द्वारा रचित ग्रथा म गजउद्धार ग्रथ सबस महत्वपूर्ण ह जा भागवत कथा क प्रसग पर आधारित ह। गजमोक्ष की कथा क बहान एसा प्रतीत हाता है कि कवि न अपना आत्म निवदन किया ह। ग्रन्थ म हथिनिया क करुण विलाप गज और ग्राह का युद्ध गज की आर्तपुकार आदि प्रसग काव्य कौशल की दृष्टि स सुन्दर बन पड ह। कही कहा व्यग्य का प्रयाग भी कवि का तीव्र बुद्धि का परिचय दता ह। राजस्थानी भक्ति साहित्य की परम्परा म इस कृति का अपना महत्व है।[२२३]

गज उद्धार ग्रथ क अतिरिक्त महाराजा अजातसिह का अन्य रचनाओ क सम्बन्ध म श्री अगरचन्द नाहटा[२२४] डा मोतीलाल मनारिया[२२५] तथा मिश्रबन्धुओ[२२६] न परिचय दन का प्रयास किया जिस डा नारायणसिंह भाटी न भ्रामक व एकागी माना ह[२२७] डा भाटी न अजातसिह रचित गुणसार नामक ग्रथ का एक वृहत् ग्रथ माना ह जिसम अनक रचनाए सम्मिलित ह आर दूसर लागा न इनका पृथक् पृथक स्वतत्र रचना के रूप म उल्लख किया ह। निजी शाध दृष्टि के आधार पर मूल्याकन करन क कारण ही ऐसा मतभद उत्पन्न हुआ हागा। गुणसागर ग्रथ म मगलाचरण कटारिका पूजन हिंगलाज स्तुति दवाचरित्र शुभनिशुभ वध सर्वागरक्षा कवच भवाना सहस्रनाम श्रीकृष्णचरित्र दवाकृपा अजातावतार तथा निर्वाणा दोह[२२८] उनका भक्तिपरक साहित्य साधना का ही अभिव्यक्त करत हे। इसक अतिरिक्त भावविरहा व 'दुर्गाभाषा पाठ नामक कृतिया भा अजातसिह द्वारा रचित मानी जाती है।

वि स १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई सन् १७२४ २३ जून) को अजीतसिंह क छोटे पुत्र बखतसिंह न अपन साये हुए पिता (अजीत सिह) का वध कर दिया।[२२९]

महाराजकुमार शेरसिंह

जाधपुर क महाराना विजयसिह के सबस छोटे व प्रिय पुत्र महाराजा कुमार शेरसिंह जिसको वि स १८४७ म गुलाबराय की सिफारिश पर युवराज पद प्राप्त हुआ था।[२३०] महाराज कुमार शेरसिंह रचित रामजस[२३१] नामक ग्रथ उपलब्ध ह जिसम राम व कृष्णचरित का वर्णन किया गया ह। इस ग्रथ का रचनाकाल उपलब्ध कृति म वि स १८४६ (ई सन् १७८३) वर्णित ह। इस कृति क अलावा महाराज कुमार की अन्य काई रचना प्रकाश म नहा आयी ह। वसे युवराज शेरसिंह का अल्पायु म असमय हा वि स १८५३ (ई सन् १७९६) म देहान्त हा गया था।

मुरारदास बारहठ

मुरारदास बारहठ कृत विजय विवाह[२३२] जिसम कृष्ण रुक्मिणी क विवाह का वर्णन किया गया ह आर जिसका रचनाकार वि स १७७५ कृति क अन्त म उल्लिखित किया गया ह। मुरारदास की इस कृति को गुणविज ब्याह[२३३] नाम से परम्परा पत्रिका

तेजसिंह

तेजसिंह का जन्म सन् १६७९ म मारवाड़ क ?हना नामक गाव म हुआ। इसक पिता का नाम अजयसिंह बारहठ व प्रसिद्ध भक्तकवि नरहरि दास इसक पितामह थ।[२१४] अपन पितामह का भाति तेजसिंह न भा ससार का असार व नाशवान समझकर अपना अधिकाश समय हरिभक्ति व ईश्वर स्तुतिगान म हा बिताया। "मुक्तिप्रकास आर भगवद्गाता का भाषानुवाद इनक लिख हुए ग्रथ है। सन् १७४३ म इनका देहावसान हुआ।[२१५]

महाराजा जसवन्त सिंह (प्रथम)

महाराजा जसवन्तसिंह का जन्म वि स १६८३ माघवदि ४ (ई सन् १६२६ ता २६ दिसम्बर) को बुरहानपुर म हुआ था।[२१६] जाधपुर क महाराजा गजसिंह के उत्तराधिकारी महाराजा जसवन्तसिह अपन समय क अद्भुत वीर, साहसी शक्तिशाली नातिज्ञ उदार आर दानी व्यक्ति तो थ ही साथ ही व काव्यशास्त्र क पडित आर अच्छे लेखक थ। महाराजा जसवतसिह न गद्य आर पद्य दोनो म लिखा ह। जिसका उल्लख इसी अध्याय म चारणतर कवियो म किया जा चुका है। यहा कवल उनकी आध्यात्मक ज्ञान आर वदान्त स सम्बन्धित रचनाओ का ही उल्लख किया जायगा।

महाराजा जसवन्तसिंह की (१) आनन्दविलास (२) अनुभव प्रकाश (३) अपराक्ष सिद्धान्त (४) सिद्धान्त बोध (५) सिद्धान्त सार, आर (६) प्रबोध चन्द्रोदय नाटक सभी वदान्त स सम्बन्धित ग्रथ है।[२१८] उपर्युक्त पाच ग्रथो का वेदान्त पचक नाम स जाना जाता है जिसम वदान्त एव भक्ति विषयक व विचार वर्णित ह।

महाराजा जसवन्तसिंह का देहान्त जामरूद क थान पर वि स १७३५ पाष वदि १० (ई सन् १६७८ २८ नवम्बर) का हुआ।[२१९]

महाराजा अजीतसिंह

अजीतसिंह का जन्म वि स १७३५ चत्र वदि ४ (ई सन् १६७९ १९ फरवरी) बुधवार का लाहार म हुआ।२२० जाधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम का जामरूद क थाने पर देहान्त हा जाने के बाद जब उनकी दो रानिया जादमजी[२२१] आर नरुकी जा जो गर्भवती होने के कारण सती नही हा सकी जोधपुर के लिए लाट रही थी तब उनक गर्भ से लाहौर मे अजीतसिंह एव दलथम्भन का जन्म हुआ। यही अजीतसिंह आगे चलकर दुर्गादास राठौड के सान्निध्य म पलकर पुन जोधपुर राज्य को प्राप्त कर उसके शासक पद पर आसीन हाता ह। अजीतसिंह का आजीवन सघर्षो म उलझ रहना पड़ा एव दिल्ली सल्तनत म अपनी प्रभावी भूमिका क लिए निरन्तर उनको प्रयत्नशील रहना पडा। आरगजब क बाद चार पाच दिल्ली के बादशाह इनक जीवनकाल म दिल्ली की गद्दी पर बैठ आर हटाय गय। व सभी अजीतसिंह स भयभीत रहत थे।[२२२] राजनीति म

इतनी सक्रिय भूमिका एव प्रभाव रखन क एव अपने व्यस्त जावन क बावजूद भी उन्हान साहित्य सृजन म रुचि ली जा उनका बहुआयामा प्रतिभा का परिणाम हा कहा जायगा।

उनक द्वारा रचित ग्रथा म गजउद्धार ग्रथ सबम महत्वपूर्ण है जा भागवत कथा क प्रसग पर आधारित ह। गजमाक्ष की कथा क जहान एसा प्रतीत हाता है कि कवि न अपना आत्म निवदन किया ह। ग्रन्थ म हथिनिया क करुण विलाप गज आर ग्राह का युद्ध गज की आर्तपुकार आदि प्रसग काव्य काशल की दृष्टि स सुन्दर बन पड है। कही कही व्यग्य का प्रयाग भा कवि की तीव्र बुद्धि का परिचय दता ह। राजस्थानी भक्ति साहित्य की परम्परा म इस कृति का अपना महत्व ह।[२२३]

गज उद्धार ग्रथ क अतिरिक्त महाराजा अजातसिह का अन्य रचनाआ क सम्बन्ध म श्री अगरचन्द नाहटा[२२४] डा मातालाल मनारिया[२२५] तथा मिश्रबन्धुआ[२२६] न परिचय दन का प्रयास किया जिस डा नारायणसिह भाटा ने भ्रामक व एकागी माना ह[२२७] डा भाटी न अजीतसिह रचित गुणसार नामक ग्रथ का एक वृहत् ग्रथ माना ह जिसम अनक रचनाए सम्मिलित है आर दूसरे लागा न इनका पृथक् पृथक् स्वतत्र रचना क रूप म उल्लेख किया ह। निजा शाध दृष्टि क आधार पर मूल्याकन करन क कारण हा एसा मतभद उत्पन्न हुआ हागा। गुणसागर ग्रथ म मगलाचरण कटारिका पूजन हिंगलाज स्तुति दवाचरित्र शुभनिशुभ वध सर्वांगरक्षा कवच भवानी सहस्रानाम श्रीकृष्णचरित्र दवीकृपा अजीतावतार तथा निर्वाणी दाह[२२८] उनका भक्तिपरक साहित्य साधना का हा अभिव्यक्त करत ह। इसके अतिरिक्त भावविरहा व 'दुर्गाभाषा पाठ नामक कृतिया भी अजातसिह द्वारा रचित मानी जाती हे।

वि स १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई सन् १७२४ २३ जून) को अजीतसिह के छाट पुत्र बखतसिंह न अपन साय हुए पिता (अजात सिह) का वध कर दिया।[२२९]

महाराजकुमार शेरसिंह

जाधपुर क महाराजा विजयसिंह के सबस छाट व प्रिय पुत्र महाराजा कुमार शरसिह जिसको वि स १८४७ म गुलाबराय की सिफारिश पर युवराज पद प्राप्त हुआ था।[२३०] महाराज कुमार शरसिह रचित रामजस[२३१] नामक ग्रथ उपलब्ध ह जिसम राम व कृष्णचरित का वर्णन किया गया है। इस ग्रथ का रचनाकाल उपलब्ध कृति मे वि स १८४६ (ई सन् १७८३) वर्णित ह। इस कृति क अलावा महाराज कुमार की अन्य काई रचना प्रकाश म नहा आयी ह। वस युवराज शरसिह का अल्पायु मे असमय ही वि स १८५३ (ई सन् १७९६) म दहान्त हो गया था।

मुरारदास बारहठ

मुरारदास बारहठ कृत विजय विवाह[२३२] जिसम कृष्ण रुक्मिणा क विवाह का वर्णन किया गया ह आर जिसका रचनाकार वि स १७७५ कृति क अन्त म उल्लिखित किया गया ह। मुरारदास की इस कृति का गुणविज व्याह[२३३] नाम स परम्परा पत्रिका

के भाग ३५ म प्रकाशित किया जा चुका ह । कि 'इस कृति म विशेष ध्यान देन योग्य वस्तु कवि का वर्णन कौशल है । उसन स्थान स्थान पर अपन वर्णन म मालिक्ता लान का प्रयास किया है ।[२३४] मध्यकालान राजस्थानी काव्यधारा म इस कृति का महत्व भाव आर भाषा दाना हा दृष्टियो स ह ।[२३५]

विवेच्यकाल में हरिचरणदास की मोहनलीला कृष्णभक्तिपरक रचना है ता दूसरा कृति रामायणसार[२३७] मे रचनाकार न कवित्त दोहा सवयो क माध्यम से सक्षेप म रामकथा वर्णित का ह । लच्छीराम जिस कृष्ण जीवन लच्छा राम क नाम स भी जाना जाता ह इसकी करुणाभरण[२३८] कृति मिलती है जो कृष्ण भक्ति का रचना ह । मोहनदास ने प्रसिद्ध भक्तकवि सूरदास के उद्धव गोपी सवाद क भ्रमरगीत क आधार पर भवरगात[२३९] नामक कृति लिखा । इसक अतिरिक्त लधराजकृत 'पाबूजी के दाह[२४०] जो लोकदेवता पाबूजा राठाड पर लिखे गय है यहा बडे भक्ति भाव स पढ़ जाते ह ।

नाभादास

नाभादास का यहा के भक्तकविया म महत्वपूर्ण स्थान ह । नाभादास ने भक्तमाल नामक ग्रन्थ की रचना कर उसम विभिन्न भक्ता का जो पद्यवद्ध परिचय दिया ह उससे कई ज्ञात अज्ञात भक्त रचनाकारा की जानकारी प्राप्त होती ह । भक्तमाल का रचना कर नाभादास ने अनेक भक्ता की महिमा उनके मुख्यकृत्य और हरिभक्ति का जा उल्लेख किया उससे यहा की जनता अनेक भक्ता से परिचय प्राप्त कर सकी । भक्तमाल का भक्तिरस ग्रोधिनी टीका की हस्तलिखित प्रति जिसका रचनाकाल वि स १७६९ व लिपिकाल १८३५ उल्लिखित है । नाभादास की भक्तमाल प्रकाशित हा चुकी है आर आज भी भक्तो व भक्तिसाहित्य पर कार्य करने वाला क लिए एक महत्वपूर्ण ओर अधिकृत जानकारी उपलब्ध कराती है ।

अनन्तदास

प्रसिद्ध ग्रन्थ भक्तमाल के रचयिता नाभादास के गुरुभाई सत विनोदीजी के शिष्य अनन्तदास ने एसी अनेक परचइयो (परचिया) का रचना का था जिनमें कबीर, नामदेव पीपा त्रिलोचन रैदास जेसे सतो का परिचय पाया जाता ह ।[२४१] अनन्तदास रामानद की शिष्य परम्परा में स थ । इन्होने अपने द्वारा नामदेव की परचई का वि स १६४५ म लिखि जाने का उल्लेख किया ह । इसके आधार पर कहा जा सकता है कि अनन्तदास १६ वी शताब्दा म उत्पन्न हुय । अनन्तदास द्वारा रचित पीपा जा की परची म उन्हाने अपनी गुरु परम्परा इस प्रकार दा हे—अनन्तदास विनादी अग्रदास कृष्णदास अनन्तानद रामानन्द ।[२४२] यहा के सग्रहालया म अनन्तदास द्वारा रचित सन्तो की परचिया की सर्वाधिक प्रतिया पायी जाती है । अनन्तदास परचीकाव्य के प्रारम्भिक रचनाकारा में स

एक थ यदि यह कहा जाय तो अनुचित नही हागा ।[२४३] सता आर प्रसिद्ध भक्ता की परचिया लिखकर उनकी भक्ति भावना का यहा के लोक समाज म प्रचार-प्रसार आर लोकप्रिय बनाने म अनन्तदास का महत्वपूर्ण योगदान रहा ह ।

बनारसीदास

बाकादास की ख्यात क आधार पर डा गौराशकर हीराचद ओझा ने लिखा ह कि—'*महाराजा (जसवन्तसिंह प्रथम)* ने बनारसा दास नाम क एक जन व्यक्ति को एक आध्यात्मिक ग्रथ लिखन की आज्ञा दी थी । [२४४]इसस उस काल के भक्ति साहित्य के रचनाकारो मे बनारसीदास की गणना करना भी अनुचित नही होगा ।

इसके अतिरिक्त ज्ञानदास रचित 'हठप्रदीपिका [२४५] (वेदान्त याग सम्बन्धी ग्रन्थ) हरिवल्लभ कृत 'गीता दोहात्मक'[२४६] सुन्दरदास कृत ज्ञानसागर कृपाराम सवापथी कृत पारसभाग [२४७] (महमूद गजाली के फारसी ग्रथ कामिया सहादत का हिन्दी अनुवाद) आदि कृतियो की हस्तलिखित प्रतिलिपिया (विवेच्यकाल म लिपिबद्ध) उपलब्ध होती है । भक्ति व वेदान्त के अतिरिक्त पाराणिक और धार्मिक व्रत उपवास की कथाआ की भी हस्तप्रतिया जेसे कार्तिक महात्म्य (लि.का वि स १८४४) हितोपदश (लि.का. १७२३) एकादशी कथा (लि.स १७९२) चोथमाता री कथा (लि.का. १८१२) शनिश्चर जी री कथा (लि.का. १८२०) वशाख माहात्म्य (लि का १८४२)[२४८] आदि की अनेक प्रतिया मिलती है ।

रतनू हमीर ने ब्रह्माण्ड पुराण'२४९ श्यामराम ने ब्रह्माण्ड वर्णन [२५०]दामोदरदास ने मार्कण्डेयपुराण [२५१]'शभु बोहरा ने महादेव री स्तुति [२५२] और भगवानदास ने वराह पुराण के ब्रज वर्णन के आधार पर 'ब्रजरचना'[२५३] नामक ग्रन्थो का प्रणयन टीका आदि कर के यहा की भक्ति भावना को बल प्रदान किया । यहा यह भी उल्लेखनीय हे कि मध्यकाल म काव्या के अतिरिक्त गद्य शली मे व्रत उपवासो का कथाओ पाराणिक आख्याना को लिपिबद्ध करके व धार्मिक ग्रथा का सरल टाकाए करने का कार्य भी हुआ । गद्य क माध्यम से भक्तिपरक साहित्य का सृजन व सवर्द्धन १७ वी शताब्दी मे यहा अधिक मात्रा म हुआ । इस काल की लिपिबद्ध अनेक ऐसी रचनाए विभिन्न सग्रहालया म पर्याप्त मात्रा म उपलब्ध होती हे जिससे यह ज्ञात हाता हे कि तत्कालीन युग म यहा भक्ति क प्रचार प्रसार के लिए गद्य आर पद्य दोना ही प्रकार की रचनाए व्यवहत हाता था ।

निम्बार्क सम्प्रदायी भक्त कवि

निम्बार्क सम्प्रदाय के प्रादुर्भाव उसके प्रवर्तक व मारवाड़ म इस सम्प्रदाय क प्रमुख प्रचारका का विशद वर्णन पूर्व में किया जा चुका है । इस सम्प्रदाय क सता द्वारा कृष्ण भक्ति का प्रचार इस क्षेत्र मे किया गया ।

परशुराम

राजस्थान म निम्बार्क मत क प्रचार का श्रेय सत परशुरामदव का जाता हे। परशुरामदव न अपन गुरु हरिव्यासदव के निर्देशानुसार राजस्थान म राधाकृष्ण का भक्ति का प्रचार किया। अजमेर के समीप सलेमाबाद (परशुराम पुरी) नामक स्थान पर निम्बार्क सम्प्रदाय का पीठ का स्थापना का जा यहा निम्बार्क सम्प्रदाय का प्रधान पीठ माना जाता ह। अजमेर क आस पास इस्लाम क बढ़त प्रभाव को रोककर परशुरामदव ने यहा कृष्णभक्ति का प्रचार किया। इस उद्देश्य हेतु उन्हान कृष्णचरित्र पर विस्तृत साहित्य लिखा। उनका विप्रमति नामक एक ग्रथ वि स १६७७ का लिपिबद्ध किया हुआ उपलब्ध हाता ह। इसम परशुरामदव की वाणी आर १३ लाला ग्रथ तथा विभिन्न अवतारचरित्रा का सकलन ह। दूसरा ग्रथ परशुराम सागर [२५४] ह इसम निम्नलिखित २८ ग्रथ सगृहीत ह—(१) साखा ग्रथ (२) छन्द जोड़ा (३) दस अवतार चरित (४) रघुनाथ चरित (५) श्रीकृष्ण चरित (६) सिगार सुदामा चरित (७) परवाध का जाडा (८) नृफ्ल सिन का जोडो (९) भगति साखा जाडा (१०) कर्म निन्दि को जाडा (११) देह देवल का जोड़ा (१२) द्रोपदी का जाड़ा (१३) गज ग्रह का जाडा (१४) प्रहलाद चरित (१५) अमरबाध लाला (१६) नामनिधि लीला (१८) नाथ लाला (१९) निजरूप लाला (२०) हरि लाला (२१) निर्वाण लाला (२२) समझणी लीला (२३) तिथि लीला (२४) वार लीला (२५) नक्षत्र लाला (२६) बावना लाला (२७) विप्रमति लाला (२८) गाति पद। [२५५]

परशुराम दव के साहित्य म सगुण आर निगुण धारा का व्यापक समन्वय परिलक्षित हाता ह फिर भी मुख्यत य कृष्णभक्ति के सगुणापासक रूप क प्रबल प्रचारक थ। इन्हान अपन साहित्य म सगुण धारा क अन्तर्गत भगवद्भक्ति कृष्णचरित्र वृन्दावन महिमा नित्यविहार, वर्षा वसन्त हाला हिडालात्सव सखाभाव शृगार के सयोग आर वियोग पक्ष विनय व आत्मनिवदन का अत्यन्त सरस सहज व सरल अभिव्यक्ति प्रदान की ह। परशुरामदव का यह सरस सत साहित्य ब्रजभाषा मिश्रित राजस्थाना म लिखा हुआ है। [२५६]

परशुरामदव क पश्चात् निम्बार्क सम्प्रदाय का प्रधानपीठ सलमाबाद पर प्रधान आचार्य क पद पर आसान हान वाल श्रा हरिवशदव (वि स १६७० स १७१३) श्रा नारायणदव (वि स १७१३ १७५५) श्रीवृन्दावन दव (वि स १७५५ १७९७) श्रा गाविन्ददेव (वि स १७९७ १८१४) श्रा गाविन्दशरण दव (वि स १८१४ १८४१) श्रा सर्वश्वर शरण दव (वि स १८४१ १८७०) [२५७] कई सन्ता न कृष्णभक्ति क प्रचार म महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अपन गुरु का वाणा व उनक साहित्य क अतिरिक्त इस सम्प्रदाय क साहित्य सृजन म इन सता का भा न्यूनाधिक मात्रा म यागदान रहा ह। इन

सता क प्रयास से ही कृष्णभक्ति का प्रचार रेनवाल पापाड जतारण रास रायपुर, नीमाज लाम्वा नाम्वोल वीराल झिंटिया जाधपुर, फलादा थात्र पुष्कर, कुचामन मीठडा आदि मारवाड़ क विभिन्न स्थानो पर गापालद्वारे (निम्बार्कीय सम्प्रदाय क स्थल व मदिर) निर्मित हुए[२५८] एव कृष्ण भक्तिपरक साहित्य क सृजन म हा श्रावृद्धि नही हुया उस साहित्य का व्यापक प्रचार भी यहाँ हुआ जिसस यहा की जनता विवेच्यकाल में लाभान्वित हुई ।

4537

विश्नोई सम्प्रदाय के सत—

जाम्भोजी

विश्नाई सम्प्रदाय क सस्थापक जाभोजी थे । इस सम्प्रदाय का साहित्य 'जभाणा साहित्य' के नाम स भी जाना जाता है । इस जभाणा साहित्य मे मुख्य रूप से जाभोजी का लाला का बखान उनक द्वारा किये गये विभिन्न चमत्कारा (परचा) का उल्लेख तथा जिन जिन व्यक्तिया का कष्ट निवारण किया उनका विस्तृत वृतान्त दखने का मिलता हैं । जा स्वय जाभाजी की रचना न होकर कालान्तर म उनके पथानुयाया भक्ता द्वारा उन्ह महिमा मडित करने हेतु सृजित किया । यह तो चमत्कारी वर्णन धार्मिक जनता को आकर्षित करने के लिए प्राय प्रत्येक पथीय साहित्य मे दखने का मिलता ह परन्तु इसके साथ ही जाभोजी न अपना साखियो व सबदो के माध्यम से ईश्वर साधना की अन्य सता का भाति सहज आर सरल विधि बतायी । जाभाजा न भा जगत की मिथ्या बाता को त्यागकर गुरु की सहायता से परमतत्व का प्राप्ति को ही मनुष्य जीवन का मूल उद्देश्य माना ह ।

जाभाजी की विचारधारा से प्रभावित हाकर उनके पथ क कई अनुयायियो न कालान्तर म भी उनके साषी व सबदा का सकलन सपादन आर टीकाआ द्वारा विस्तार कर इस सम्प्रदाय के साहित्य की श्रावृद्धि म यागदान दिया । इसक अन्तर्गत स्वामी ब्रह्मानन्द रचित जम्भेश्वरचरित्र भानु साहबराम राहड कृत "जम्भसार रामानन्द स्वामी कृत जम्भसागर स्वामी सच्चिदानन्द कृत जभगाता श्रारामदास कृत "जभसार साषी आदि जभाणा साहित्य की प्रमुख कृतिया माना जाता ह ।[२५९] इन कृतिया म जाम्भाजी के जावन चरित्र की महिमा क अतिरिक्त उनक धार्मिक विचारा का जो मुख्यत साषी व सबदा के रूप मे उपलब्ध हात ह उल्लख किया गया ह ।

वल्लभ सम्प्रदाय के भक्तकवि

निम्बार्क सम्प्रदाय का भाति १७वा शताब्दी म मारवाड़ म वल्लभ सम्प्रदाय का भा आगमन हुआ जिसस यहा कृष्ण भक्ति का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ ।[२६०] वल्लभमत की पुष्टिमार्गी परम्परा क अनुसार श्रीनाथजी का प्रत्यक झाका क समय मूर्ति क सम्मुख बाहर आगन म गायक मण्डला द्वारा झाकी क अनुरूप वाद्य यत्रा क साथ नियमित

गात भजन गाय जात हे ।[२६१] इसक अतिरिक्त पुष्टिमार्गी शाखा (वल्लभ मत) का साहित्य भी उपलब्ध हाता हे ।

हरिराय

हरिराय नामक सन्त का अनक कृतिया विवच्य काल म लिपिबद्ध का हुया यहा उपलब्ध होती है जिनम आचार्य स्वरूप चिन्तन कृष्णावतार स्वरूप निर्णय गुसाई जी का स्वरूप चिन्तन[२६४] जप प्रकार[२६५] द्वैतात्मक स्वरूप विचार[२६६] पुष्टि दृढाव[२६७] व शिक्षापत्र[२६८] आदि मुख्य ह । इन सभा कृतिया का लि का वि स १८३३ उल्लिखित ह तथा जाधपुर क महाराजा मानसिह पुस्तक प्रकाश सग्रहालय मे सगृहीत हे । इन कृतिया म वल्लभ सम्प्रदाय क सस्थापक वल्लभाचार्य क स्वरूप वर्णन श्रीकृष्ण क स्वरूप वर्णन के अतिरिक्त पुष्टिमार्गी मत के विचारो और सिद्धान्तो का विवेचन किया गया ह ।

ध्रुवदास

हरिराय का भाति वल्लभमत के विचारा आर सिद्धान्ता क अनुरूप रचित ध्रुवदास नामक सत की विभिन्न कृतिया वि स १८२७ म लिपिबद्ध की हुया मिलती है । ध्रुवदास रचित कृतिया म आनन्ददशा विनोद (ग्रथाक ९८३ ग्रथ निर्माण वि स १६५०) आनन्दलता (ग्रथाक ९८४) ख्याल हुलास (ग्रथाक-९९५) जीवदशा (ग्रथाक १००४) जुगलध्यान (ग्रथाक १००५) महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर मे सगृहात ह ।

मध्यकालान मारवाड म नाथपथ का यहा काफी प्रभाव रहा । यह तथ्य विवेच्यकाल म यहा लिपिबद्ध की गयी विपुल नाथपथ की रचनाआ स स्पष्ट होता हे । इसमे गारखनाथ कृत अष्टमुद्रा (लि का १७४५ ग्रथाक ५२९) आवली श्लोक (ग्रथाक ५४०) गोरखनाथ क पद (ग्रथाक ६२४) गारखबाध (ग्रथाक ७०७) निर्भयबाध (ग्रथाक ७३९) इत्यादि अनक कृतिया की प्रतिलिपिया उपलब्ध हाती है । गारखनाथ के अलावा गोरखपथ क अन्य आचाया व अनुयायियो न भी कई ग्रथा की रचनाए का । इनमे सर्वाधिक सबदी नाम की रचनाए मारवाड़ म उपलब्ध होता हे इस सबदी नामक रचना म साधु विशष का वाणिया सगृहात ह ।[२६९] इन सबदिया म कुम्भारी पाव सबदा (ग्रथाक ५७३) चारगीनाथ सबदी (ग्रथाक-६८०) गराबनाथ सबदी (ग्रथाक ५४१) चरपटनाथ सबदी (ग्रथाक-६७४) नागार्जुन सबदी (ग्रथाक-७५०) दवलनाथ सबदी (ग्रथाक-७३०) पार्वती सबदी (ग्रथाक-८०५) पृथ्वानाथ सबदी (ग्रथाक ८०९) भरथरा सबदी (ग्रथाक-८३४) हरतालीपाव की सबदा मुकुन्दभारता सबदी मालापाव सबदी माडकीपाव सबदा मणावता सबदा आदि ।[२७०]

इसके अतिरिक्त महादव गारख सवाद क्वार गारख गाष्ठी गारख मछन्द्रनाथ मबाद मछन्द्रनाथ पद मछेन्द्रपुराण भरथरा पद इत्यादि यहा नाथ सम्प्रदाय का लाकप्रिय रचनाए रही ह जिसम यहा की जनता का भक्तिभाव प्रदर्शित हुआ ह ।

फूलीबाई

फूलीबाई ईश्वर का परमभक्त थी । यह मारवाड़ म नागाणा के पास किसी गाव का रहन वाली थी ।[२७१] फूलीबाई जाट कुल म उत्पन्न हुई थी जिसका उल्लेख परचा[२७२] म इस प्रकार किया गया ह ।

फूला कुल मे जाटणा सता का अवतार ।
जो जाणो व्हे दस म तो करज तू दादार ॥२६

फूलाबाई का जन्म सवत् ता उपलब्ध नहीं होता ह परन्तु यह जाधपुर क महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम क समकालीन था ।[२७३] समकालीन ही नहीं फूलाबाई आर महाराजा जसवन्तसिंह की भट का प्रसग भी परचा म मिलती हे ।

फूलीबाई मीराबाई की भाति परमेश्वर को ही अपना पति मानता थी । आजावन ब्रह्मचारिणा रहकर फूलीबाई न अपना पूरा जीवन ईश्वरभक्ति म विताया जिसका उल्लख 'फूलीवाई की परची म प्रारभ म ही इस प्रकार किया हुआ ह—

मलधारी परणी ज्यू नाहि पारब्रह्म पति मरे माहि ।
सा कहु जनमे मर जु नाहि सुखसागर सदा उरमाहि ।१
जानी आया गारव फूला किया विचार ।
सब सता को सायबो सा मरा भरतार ॥२

रानाबाई

रानाबाई ने मारवाड़ क हरनामा (हरनावा) ग्राम म जालम जाट के घर पर जन्म लिया ।[२७४] रानाबाई की परची[२७५] म रानाबाई के जन्मस्थान आर पिता क नामाल्लख की पक्तिया द्रष्टव्य ह—

मुरधर देस गाव हरनामा ज्या बाई राना को धामा ।
नाव पिता का जलप्रजाट घण जात विभा का को ठाट ॥

बाल्यावस्था स हा भगवान क चरणकमला म रानाबाई की अनुरक्ति थी । प्रसिद्ध सत श्री खाजीजा क सत्सग क प्रभाव स इनका पूर्ण जीवन भगवद्भक्ति स सम्पन्न हा उठा । जाट कुल म उत्पन्न रानाबाई न मीरा आर फूलीबाई का भाति भगवान का पतिरूप मे वरण किया तथा ससार से विरक्त हाकर ईश्वर की भक्ति म हा सम्पूर्ण जीवन बिताया । रानाबाई का जन्मसवत् तो अनात ह किन्तु वह महाराजा अभयसिंह (जाधपुर) के समकालीन थी ।[२७६] रानसिंघ मड़तिया नामक अभयसिंह का एक सामन्त रानाबाई का धर्मभाई था तथा इतिहास प्रसिद्ध अहमदाबाद क युद्ध म रानाबाई द्वारा उसका सहायता करने का उल्लेख परची मं इस प्रकार मिलता ह[२७७] -

ज बाई उबरू इण काला तु हा सतगुर रामदयाला।
ज म रीझपटा अब पाऊ कर दरसण अपणे घर जाऊ।
यू कह जुध के माहा बाह पसार करा वा छाई।
जहा तहा जूझे उनका साथ सिर ऊपर राना का हाथ॥

इस प्रकार रानाबाई (राणावाई) अपन जावन काल म हा परमभक्त क रूप म प्रसिद्धि पा चुकी थी आर यहा क साधारण वर्ग के लागो म हा नहा सामन्त वर्ग द्वारा भी पूजित आर सम्मानित हुई।

सूरज कवर

सूरज कवर नामक कवयित्रा का जावन परिचय ता *अज्ञात* ह किन्तु उसक द्वारा रचित कृष्णकार्तन [२७८] ग्रथ जिसका १८२० वि स लिपिकाल ह महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश म (ग्रथाक-८१) सुरक्षित ह। इसी सग्रहालय म कृष्ण निद्रालाला [२७९] (लिपि समय वि स १८२०) नामक कृति (ग्रथाक ८४) उपलब्ध ह जिसके लिपिकर्ता क रूप म बाई सूरजकवर का नाम उल्लिखित हे। इसस ज्ञात हाता ह कि यह कवयित्रा *मारवाड़ का बहन बेटा रहा होगा तभा उस बाई नाम स यहा सबाधन प्राप्त हुआ।* इस कवयित्री का रचनाकाल १८ वी शताब्दी का मानना उपयुक्त ही होगा क्याकि दा ग्रथा क लिपिकाल का समय इस बात को आर भा प्रमाणित कर देते ह। यह कवयित्री कृष्णभक्ति परम्परा की था।

भारतीय सस्कृति क मूलाधार धर्म का व्याख्या विवच्यकाल म विभिन्न धार्मिक सम्प्रदाया ने अपन अपने ढग स का थी। आर इन सम्प्रदाया ने विभिन्न प्रकार के साधना पथ प्रशस्त कर अपन मतानुसार मानव क कल्याण का उपाय बताया। इन सब धार्मिक सम्प्रदाया क अतिरिक्त मध्यकालान मारवाड म शक्तिपूजा का महत्वपूर्ण स्थान रहा ह। यहा का शासक वर्ग मुख्य रूप स शक्ति का आराधना म जहा लीन दिखाई देता ह वहा चारण कवि महामाया का अनकानक रूप से उपासना कर उस प्रसन्न करन म त्तचित्त जान पड़ता ह। शक्ति का निरन्तर उपासना आर गहन आस्था के कारण हा अनकानेक दविया का प्रादुर्भाव भी इस जाति म हुआ। काई चालीस दविया का चारणकुलात्पन्न हाने का विवरण मिलता ह। [२८०]

मध्यकालान मारवाड़ का शक्ति आराधना की यह विशषता रही ह कि यहा आदि शक्ति दुर्गा आर भगवता का आराधना के साथ लाकदेविया का अर्चना का भी प्रचलन पाया जाता ह। *इतना हा नहा कई लाक्दविया जा चारणकुल म उत्पन्न हुई व मारवाड़ हा नहा राजपूताना क कई राजवशा की कुलदेविया क रूप म पूजित हुयी।*

दवा क पाराणिक आर लाकिक नाना स्वरूपा का आराधना तथा प्रशस्ति म लिख सकड़ा स्फुट छन्द आर काव्य मिलत ह। चारण वग द्वारा ता दवा का आराधना में विपुल

साहित्य रचा गया जिसम ईसरदास का दवायाण हिंगलाज स्तुति आदि प्रमुख ह।[२८१] इसक अलावा करणी आवड़ आदि कई चारण दविया स सम्बन्धित साहित्य यहा उपलब्ध हाता ह। चारण कवि हा नही जन कविया द्वारा भा शक्ति की आराधना म काव्य लिख गय जिसम जयचन्द्रकृत माताजा री वचनिका प्रमुख ह। अनेक कविया का खजड़ला[२८२] व सचियाय माता[२८३] का प्रशस्ति म फुटकर काव्य रचनाए उपलब्ध होता ह। इससे यह ज्ञात हाता ह कि मध्यकालान मारवाड़ म दवी की भक्ति क प्रति यहा के लागा म विशेष रुझान था।

जैन साहित्य के विशिष्ट रचयिता

जन धर्म के दा प्रधान सम्प्रदाय हे श्वताम्बर आर दिगम्बर। राजस्थान क बीकानर उदयपुर आदि कई सभागो की भाति मारवाड़ म श्वेताम्बर सम्प्रदाय का प्रभाव अधिक रहा। दिगम्बर सम्प्रदाय क कविया न हिन्दी म अधिक रचनाए का क्योकि उनका प्रभाव हिन्दी क्षेत्रा म अधिक था। श्वेताम्बर सम्प्रदाय क कविया का रचनाए हिन्दी म कम आर राजस्थाना म अधिक हे। श्वताम्बर सम्प्रदाय म भी कई गच्छ हे। इनम स बहुत गच्छ ता राजस्थान क स्थाना के नाम स प्रसिद्ध हुये ह। बड़गच्छ व उसकी कई शाखाआ जस - उपकेशगच्छ खरतरगच्छ का प्रभाव मारवाड म अधिक रहा। इनका रचनाए प्रधानतया राजस्थाना भाषा मे हे। तपगच्छ का प्रभाव गुजरात म अधिक रहा। जिन गच्छा का प्रचार गुजरात आर राजस्थान दाना म रहा उनकी रचनाआ म गुजराती का प्रभाव दखने को मिलता ह।

जैन धर्म मे १६ वी शताब्दी म मूर्ति पूजा विराधा लाकमत का प्रादुर्भाव हुआ। उसका तीन शाखाआ म नागारा शाखा का प्रचार राजस्थान म बहुत हुआ। इस लोकागच्छ म स १८ वा शदी क प्रारभ म ढूढिया पथ निकला जा आग चलकर बाईसटोला आर 'स्थानक्वासा नाम से प्रसिद्ध हुआ। सवत् १८१७ म इसी स्थानकवासा सम्प्रदाय म स भीखणजी (आचार्य भिक्षु) द्वारा तरापथ नामक एक आर सम्प्रदाय चलाया गया।[२८४] जिसका प्रचार यहा सर्वाधिक रहा। इस प्रकार जन धर्म क इन सभी मतावलम्बिया व विभिन्न गच्छा का साहित्य यहा विपुल मात्रा म उपलब्ध ह।

मालदेव

भटनर जिस आजकल हनुमानगढ कहत ह वहा बडगच्छ का एक शाखा कई शताब्दिया तक प्रभावशाली रहा। इस गच्छ क आचार्य भावदव सूरि के शिष्य मालदव बहुत ही अच्छ कवि हुए। मालदव का सस्कृत एव प्राकृत रचनाए भा उपलब्ध हाता ह परन्तु राजस्थानी रचनाए सख्या आर स्तर दाना हा दृष्टि से विशष महत्वपूण है। इसका रचना पुरन्दर चापई का काफा प्रचार रहा ह। मालदवकृत चापई राम स्तवन सज्झाय सनह कई रचनाआ का प्रतिलिपिया यहा उपलब्ध हाता ह।[२८]

समयसुन्दर

समयसुन्दर राजस्थाना साहित्य के सबस बड़े जैन गातकार एव कवि क रूप मे प्रसिद्ध ह । समयसुन्दर युगप्रधान आचार्य जिनचन्द्रसूरि क शिष्य सक्लचन्द्र गणि क शिष्य थे । सवत् १६४१ स सवत् १७०० तक लगभग ६० वर्षा का दाघकालिक रचनाकाल इनका माना जाता हे । सम्राट अकबर न सवत् १६४९ फागण सुदि २ का जिनचन्द्र सूरि को युगप्रधान पद आर मानसिह को आचार्य तथा गुणविनय का जत्र वाचक पद स अलकृत किया गया उस अवसर पर समयसुन्दर को भा वाचक पद स अलकृत किया गया ।[२८६]

समयसुन्दर का जन्म स्थान साचोर था जिसका उल्लेख स्वय कवि न अपनी रचना सीताराम चौपई नामक राजस्थानी जेन रामायण की एक ढाल म किया है । इनके पिता का नाम रूपसी एव माता का नाम लीलादे था । समयसुन्दर के जन्म सवत् का निश्चित उल्लेख नहा मिलता । तरुणावस्था मे ही दीक्षाग्रहण कर समयसुन्दर न काव्य क अतिरिक्त व्याकरण छन्द अलकार ज्योतिष आदि विषया मे भा कुशलता हासिल का आर इन सभा विषया से सम्बधित प्रचुर साहित्य का निर्माण किया आर अनेक ग्रथा पर टीकाए लिखीं । समय सुन्दर कृति कुसमाजलि नामक पुस्तक म श्री अगरचन्द नाहटा ने कवि की अनेक रचनाओ (करीब ५६३) का उल्लेख किया हे । विस १७०३ चेत सुदि १३ का समयसुन्दर का अहमदाबाद मे स्वर्गवास हुआ ।[२८७] समयसुन्दर का रचनाओ में विषय वविध्य मिलता हे वह उनकी बहुमुखी प्रतिभा का द्यातक ह । विभिन्न विषया पर रचना करने म वही व्यक्ति सफल हो सकता ह जो अनक विषया म निष्णात बहुज्ञ आर बहुश्रुत हा । जन धर्म क साथ साथ हिन्दू धर्म क पाराणिक आख्यानो पर भी समयसुन्दर ने रचनाए लिखी हे जस नलदमयन्ती चौपई सातारास चापई द्रापदी चोपई आदि ।

समयसुन्दर बड उद्‌भट विद्वान् एव कवि के रूप म प्रसिद्ध रहे हे । चापई के अतिरिक्त छतीसी ग्रथ इनके प्रतिपाद्य का प्रमुख माध्यम रहे हे । राजस्थानी साहित्य का लोकप्रिय ओर सुप्रसिद्ध निम्नलिखित दाहा इनक द्वारा ही रचित माना जाता ह—

कागद थोड़ो हित घणउ सापिण लिख्या न जाय ।
सायर मा पाणी घणउ गागर म न समाय ॥[२८८]

समयसुन्दर का अनेक कृतिया का प्रतिलिपिया भा यहा अधिक मात्रा म उपलब्ध होता ह । जन साहित्य का श्रावृद्धि म इस कवि का महत्वपूण भमिका रहा ह । समयसुन्दर रचित कृतियो का बहुलता का देखते हुए यह सभावना व्यक्त का जाता ह कि इस नाम से एक से अधिक कवि रह है । समयसुन्दर का शिष्य परिवार भा काफा विशाल था आर उनका शिष्य परम्परा अब तक चालू ह ।[२८९]

खरतरगच्छ के पुण्यसागर पद्मराज कनकसोम साधुकीर्ति विमलकीर्ति विमलरत्न हमरत्नसूरि, गुणविनय सहजकीर्ति श्रीसार आदि अनेक जन रचनाकारो की हस्तलिखित प्रतिया यहा उपलब्ध होती हे । य रचनाकार मारवाड म तो उत्पन्न नहा हुय फिर भी इनकी रचनाओ का यहा प्रचलन अधिक रहा । इसम से कई रचनाकार तो चातुर्मास के दौरान मारवाड के विभिन्न स्थानो पर रुके और चातुर्मास के दौरान यहा रहते हुए कई कृतियो की रचना भी की । विमलरत्न कृत वीरचरित्र बालावबोध२९० (वि स १७०२) साचोर म हमरत्न सरि कृत लीलावती चोपई [२९१](वि स १६७३) पाली मे गुणविनय कृत खण्डप्रशस्ति फलादी म ओर लघुशान्ति वृत्ति[२९२] बिलाडा म और श्रीसार कृत जिनराज सूरि रास (सवत् १६८१) सतरावा म सतरभदी पूजा स्तवन (वि स १६८२) फलौदी मे सारगावनी [२९३](सवत् १६८२) पाली मे रच गये ।

सत्रहवी शताब्दी म राजस्थानी जैन साहित्य का लखन कार्य उत्कर्ष पर था उसका प्रभाव १८वीं शताब्दी क पूर्वार्द्ध तक अत्यधिक रहा और विभिन्न गच्छो के जन कवियो द्वारा साहित्य सृजन का कार्य जारी रहा । मारवाड़ मे इस काल म खरतरगच्छ का प्रभाव भी अधिक रहा ह और खरतरगच्छ क प्राय सभी विद्वानो की अधिकाश रचनाए मूलत राजस्थानी म ह । सस्कृत और प्राकृत भाषा मे भी जैन साहित्य का लेखनक्रम इस काल म जारी रहा किन्तु राजस्थानी का अपेक्षा बहुत कम मात्रा म । विवेच्यकाल के जैन साहित्य म गुजराती का पुट व प्रभाव भी ह । कुछ जन कवियो नसे जिनहर्ष और देवचन्द्र का पूर्ववर्ती रचनाए राजस्थानी म और परवर्ती रचनाए गुजराती म मिलती हे क्योकि उनका पूर्वकाल राजस्थान म और उत्तरकाल गुजरात म बीता । जिनहर्ष व जिनसमुद्र सूरि न मातृभाषा राजस्थानी की अनुपम सवा की ह ।

जिनहर्ष

कविवर जिनहर्ष का नाम जसराज था । दीक्षा के बाद जिनहर्ष नाम रखा गया । इनका जन्म सवत् १६७५ के लगभग माना जाता ह । जिनहर्ष का जन्म मारवाड़ मे होना सुनिश्चित ह क्योकि सवत १७०४ से १७३५ तक का सभी रचनाए मारवाड़ प्रदेश मे हा रचित ह । इसक पश्चात् वे पाटण गुजरात म अधिकाश समय तक स्थायी रूप से रह और पाटण म ही वि स १७६३ ६४ के आस-पास इनका देहान्त हुआ ।[२९४] जिनहर्ष ने उपाख्यानात्मक रास और चोपई सज्ञक रचनाओ का जितना निर्माण किया उतना शायद हा किसी अन्य जन कवि न किया हो । शत्रुजयरास विद्याविलास रास कुमारपाल रास मलयासुन्दरी रास आदि कवि की बृहद् एव प्रमुख कृतिया हैं ।

जिनसमुद्र

जिनसमुद्र सूरि का जन्म सवत् व जन्म स्थान अज्ञात ह । इनक माता पिता का नाम शाह हरराज व लखमादेवी था एव ये जिन चन्द्र सूरि क शिष्य थ । अपन गुरु के देहावसान

न पश्चात् बगड़गच्छ के आचार्य का पद वि म १७१३ म प्राप्त हुआ । इनका अधिकाश रचनाए जसलमर ज्ञान भण्डार म सुरक्षित ह । इनस यह ज्ञात होता ह कि उनका अधिकाश समय जसलमर, सिधप्रान्त आर जाधपुर राज्य म व्यतात हुआ ।

मूता रुग्घा

आसवाल जाति का यह कवि मारवाड के जालरवा गाव क ठाकुर हरिदास भाटा का कामदार था ।[२९५] जाधपुर क महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम का सवारा दखकर उनकी प्रशस्ति म एक गात लिखन पर मता रुग्घा महाराजा द्वारा पुरस्कृत व सम्मानित किया गया ।[२९६] मृता रुग्घा न प्रशस्ति हा नही यथार्थ चित्रण को भा अपने काव्य म स्थान दिया । मूता रुग्घा के काल म मारवाड म रूपावत आर पातावत राठाड चारा आर डाका डालकर यहा की जनता स धन वसल करत थ आर गरीबा का लूटने स भा पीछ नही रहत थे । उनक दुष्कृत्या का कवि न अपन काव्य म इस प्रकार उद्घाटित किया ह—

काचा पाका टिडसा ताड़े ताडे बीट मतीरदा ।
रूपा पाता मिलकर चाल्या जाण टोळ फकीरन्दा ॥

इस कटु सत्य क उद्घाटन के कारण मता रुग्घा की रूपावता आर पातावता न मिलकर हत्या कर दा । ठाकुर हरिदास भाटा न अपने कामदार व स्पष्टवक्ता कवि का हत्या का बदला लिया ।

जचन्द

जन जता जचन्द न माताजी रा वचनिका[२९७] नामक कृति का सृजन नागार क कुचरा नामक स्थान पर वि स १७७६ म किया । इस कृति म पाराणिक आख्याना क आधार पर भगवता जगदम्बा का लाला [illegible] किया गया ह । इसम जाधपुर के तत्कालान महाराजा अजातसिह क शास

(स १८२५ नागोर) तेतली पुत्र चापई (स १८२५ नागार) शब्दालपुत्र चापई (स १८२५ नागार) आदि रचनाए मारवाड़ म रहते हुय लिखा। इसके अतिरिक्त जयमल्ल का सता द्रोपदी महाशतक दरिद्रलक्ष्मी सवाद मूर्ख पच्चीसी नीद पच्चीसी वैराग्य बत्तासी[२९८] आदि रचनाए यहा काफी लोकप्रिय रहा हे।

जयमल्ल के पट्टधर शिष्य रायचन्द्र ने अपने गरु की भाति अनेक रचनाए लिखी जिनमे सवत् १८१७-१८८९ तक जोधपुर मेडता नागार, मोजत फलोदी जालार व तिवरा आदि मारवाड के कई स्थाना पर अधिकाश रचनाए लिखा गयी। जोधपुर म रचित गौतमस्वामी सज्झाय मृगलेखा चापई पुष्पमाला चापई नर्मदा सती चापई ज्ञानपच्चीसी सुगुरु सम्प्रदाय प्रवचन माला ढाळ कृपण पच्चीसी आदि रचनाए प्रमुख ह। इनकी शिष्य परम्परा म आसकरण सवलदास खुसालचन्द[२९९] आदि ने आगे चलकर अपने सम्प्रदाय के साहित्य की श्रीवृद्धि की।

आचार्य भिक्षु

आचार्य भिक्षु (भाखणजा) जो तेरापथ सम्प्रदाय क प्रवर्तक थे उनका जन्म मारवाड के कटालिया ग्राम म हुआ था। इनक पिता का नाम सखलेचा बलुजी ओर माता का नाम दीपाबाई था। स्थानकवासी आचार्य रघुनाथ जा म २५ वर्ष की अवस्था म वि स १८०८ मे दीक्षा ग्रहण की था एव उसके आठ वर्ष क उपरान्त वि स १८१७ म तरापथ नामक अपने स्वतत्र सम्प्रदाय की स्थापना की। वि स १८६० म इनका देहावसान हुआ। आचार्य भिक्षु ने राजस्थानी भाषा म अनेक छोटी बड़ी रचनाये लिखी जिनमे से उनकी ५५ पद्यबद्ध रचनाए भिक्षुग्रन्थ रत्नावली खण्ड एक ओर दो मे प्रकाशित हो चुकी है।[३००]

जन साहित्य यहा इतने अधिक परिमाण म मिलता है कि उसके सारे कविया का रचनाआ का यहा विवेचन करना सम्भव नहा ह। इस काल मे सकड़ा जन रचनाकारो न राजस्थानी साहित्य के भण्डार का भरा ह जिनमे जयरग सुमतिरग धर्ममन्दिर, लब्धोदय अभयसोम लाभवर्द्धन कुशलधीर, अमरविजय विनयचन्द, आनन्दघन लक्ष्मीवल्लभ कमलहर्ष धर्मवर्द्धन जयचन्द आदि अनेक जन कविया न जा मारवाड़ मे चाहे उत्पन्न न भा हुये हा फिर भी उन्हाने अपन विहार के दौरान मारवाड के विभिन्न भागा म निवास करते समय जा रचनाए लिखा उनका व इसक अतिरिक्त अन्य जेन कृतिया का प्रतिलिपिया यहा क हस्तलिखित सग्रहालयो मे बहुत बड़ा मात्रा म उपलब्ध हाती ह।

सन्दर्भ सूची

१ प्र सपा डा धारेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य काश पृ ८८६

२ वास्तव में पृष्ठभूमि क रूप मे सामाजिक अवस्था का निरूपण सभा इतिहासा में रहता है आर विशिष्ट प्रकार

क साहित्य अथवा बर्गीय साहित्य म सामाजिक प्रभाव का बराबर प्रतिफ नित किया जाता ह जैस तुलसी साहित्य का पृष्ठभूमि में तुलसी क युग का विवचन अनिवार्य समझा जाता ह । न्दि साहित्य काश पृ ८४७

स रामचन्द्र वर्मा सक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर पृ १७८

४ प्र सपा डा धीरेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य काश पृ ८४७

सीतारामम लाळस राजस्थानी शब्द कास प्रथम खण्ड पृ ८४

६ डा हारालाल माहेश्वरा राजस्थाना भाषा आर साहित्य पृ ४

७ डा प्रमसुमन जैन कुवनयमाला कहा का सास्कृतिक अध्ययन पृ २५१

८ राजस्थानी सबद कोस प्रथम खण्ड पृ ८७

९ राजस्थान भारती भाग ३ जुलाई १९५३ पृ ११

१० कवि मछ रघुनाथरूपक मरूभूमभाषा तणा मारग रम आछी रात सू

११ माडजी आसिया पाबूप्रकाश कर आणन्द वस वर्णण मरूभाषा वट

१२ सूर्यमल्ल मिश्रण वशभास्कर प्राया मरुदेशीया प्राकृति मिश्रित भाषा

१३ वही डिंगल उपनामक कहुक मरूबाना हु विधय

१४ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ ५

१५ वही पृ ६

१६ वही पृ ११

१७ परम्परा भाग १५ १६ पृ १९

१८ वही पृ २०

१ राजस्थानी सबद कोस प्रथम खण्ड निवदन अ

२० वही पृ ८४

२१ डा हीरालाल माहश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ

२२ बारहठ किशोरसिंह की मान्यता है कि चारण लाग सिंध स पहल गुजरात की तरफ आय फिर मारवाड में उन्होंने प्रवेश किया । गुजरात में रहन वाले चारण काछेला कहलाय आर मारवाड में रहने वाले मारू चारण कहलाये ।

२३ राजस्थानी सबद कोस प्रथम खण्ड पृ ८४

२४ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ ६

२५ वहा प ६५

२६ डा हीरालाल माहश्वरी राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ ६६

२७ वहा पृ ७०

२८ राजस्थाना सबदकास प्रथमखण्ड पृ ८५

२९ डा हारालाल माहश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ ६

प विश्वश्वरनाथ रेऊ मारवाड का इतिहास भाग १ पृ २४०

३१ वही पृ ४७

२ द्रष्टव्य जैन ज्ञाति जचन्द कृत माताजा री वचनिका परम्परा भाग २०

३३ राजस्थानी सबद कोस प्रथम खण्ड पृ ८४

३४ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ ५

३५ परम्परा भाग ७१ ७२ पृ ५६

३६ प्र सपा डा धीरेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य कोश पृ ३०८

३७ एन साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका वाल्यूम ९ पृ ४४६

३८ श्याम परमार भारतीय लोक साहित्य पृ १०

३९ सम्मेलन पत्रिका लोक सस्कृति विशेषाक सवत् २०१० पृ ६५

४० डा हजारी प्रसाद द्विवेदी जनपद वर्ष १ अक १ पृ ६५

४१ सप्तसिन्धु मार्च १९६१ पृ ४

४२ राजस्थानी सबद कोस प्रथमखण्ड पृ ८५

४३ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ ६

४४ राजस्थानी सबदकोस प्रथम खण्ड पृ ८५

४५ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट्रेचर पृ ५८

४६ डा मोतीलाल मेनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १४१

४७ सवत् पनर पनडोतरे, जनम्या ईसरदास ।
चारणवरण चकारमा ईण दिन हुवो उजास ॥

४८ पनरासौ पिच्याणवे जनम्या ईसरदास ।
चारण बरन चकार में उण दिन हुवो उजास ॥

४९ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १२६

५० डा मोतीलाल मेनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १५४

५१ डॉ हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १२६

५२ वही पृ १२८

५३ डॉ मोतीलाल मेनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १५४

५४ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १३९

५५ डॉ मोतीलाल मेनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १७८

५६ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १३९

५७ डॉ गौरीशकर हीराचद ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास भाग १ पृ ३५८

५८ मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम खण्ड पृ ७८ परन्तु प विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने चारणों द्वारा यह धरना आउवा गाव में देने और दो दिन अनशन करने के बाद तीसरे दिन सूर्योदय के समय अपने गले में कटार खाकर आत्महत्या करने का उल्लेख किया है इसमें दुरसा आढा भी सम्मिलित था परन्तु सयोगवश वह जीवित बच गया ।
द्रष्टव्य मारवाड़ का इतिहास प्रथम खण्ड पृ १७४

५९ डॉ हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १४०

६० डा गौरीशकर हीराचन्द ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ३३७-३३८

६१ आर वी सोमानी अक्बर पृ ८१

६२ डा मातालाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १८४
६० डा हीरालाल माहश्वरा राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १४२
६४ वहा पृ १४३
६५ डा मातीलाल मेनारिया डिंगल में वीर रस, पृ ५१
६६ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिटेचर, पृ ६१ ६२ परम्परा भाग १५ १६ पृ ३००
६७ डा हीरालाल माहश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट पृ ५०
६८ परम्परा भाग १५ १६ पृ २८४
६९ डा हीरालाल माहश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थाना लिटेचर, पृ ६१
७० डा मातीलाल मेनारिया राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ १५९
७१ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थाना लिट पृ ६५
७२ सातारामा लालस गजगुणरूपक बध भूमिका पृ १
७३ डा मातीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १५९
७४ सूरजप्रकास भाग २ पृ ९ डा जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालीन चारण काव्य पृ ८
७५ डा शभूसिंह मनाहर वचनिका राठौड़ रतनसिंघजी महेसदासात री पृ १७
७६ सपा डा एल. पी टैसीटोरी वचनिका राठौड़ रतनसिंह महेसदासोत री भूमिका पृ ४
७७ डा शभूसिंह मनाहर वचनिका राठोड़ रतनसिंघ जा महेसदासात री पृ २१
७८ डा हीरालाल माहश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट् पृ ६८ ६९
७९ डा मातीलाल मेनारिया राज. भाषा आर साहित्य पृ २११
८० डा जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालान चारण काव्य पृ ७६
८१ स नरोत्तमदास स्वामी क्रिस्न रुक्मणी री वेलि प्रस्तावना पृ ७८
८२ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ १३५
८३ वही पृ १३२
८४ डा हीरालाल माहश्वरा राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १४ ५०
८५ वहा पृ १३५
८६ डा मातीलाल मनारिया रा. भा. आर सा. पृ २३७
८७ डा हीरालाल माहश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ ७०
८८ डा गावर्द्धन शर्मा राजस्थानी साहित्य क ज्योति पुज पृ ५१
८९ डा मातालाल मनारिया राजस्थानी भाषा ओर साहित्य पृ २३० चारणों के बहीभाट के अनुसार करणादान का जन्म स्थान आमर रियासत का डोगरी गाव माना है जिसे डॉ जिज्ञासु व डा दुगड़ न अधिक विश्वसनीय माना ह ।
    (i) डा मानेलाल जिनास चारण साहित्य का इतिहास पृ २३५
    (ii) डा राजकृष्ण दुगड़ कविया करणीदान आर सूरजप्रकास पृ १७
९० ह प्र ग्रथाक ६१८ (१) रा शा स चापासना अब यह कृति परपरा भाग ७७ ७८ म प्रकाशित हा गया ह ।
९१ डा मातालाल मनारिया राजस्थाना भाषा आर साहित्य पृ २४
९२ सातारामा लालस राजस्थाना सबदकास प्रथम खण्ड पृ १६०

९ परम्परा, भाग १ १६ पृ २८
९४ डॉ. हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट् पृ ७
९ परम्परा, भाग १ १६ पृ ३०
९६ डॉ. जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालीन चारण काव्य पृ १५४
९७ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट् पृ ७१
९८ कविया करणीदान जोधपुर के महाराजा अभयसिंह का राज्याश्रित कवि था एवं सूरजप्रकास नामक प्रसिद्ध राजस्थानी ग्रंथ का रचियता था ।
९९ मुशी देवीप्रसाद महिला मृदुवाणी पृ ८७
१०० डा सावित्री सिन्हा मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियां पृ ३
१०१ मरुभारती वर्ष ३ अंक २ परम्परा भाग १५ १६ पृ २००
१०२ परम्परा भाग १५ १६ पृ २०१ पर सन्दर्भित पूरा गीत उद्धृत है ।
१० जगदीशसिंह गहलोत मारवाड राज्य का इतिहास पृ १०६
१०४ डा. मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २२६
१० भूरसिंह राठौड़ कवि बहादुर और उसकी रचनाएं सम्पादकीय पृ
१०६ प रामकर्ण आसोपा राजरूपक भूमिका, पृ २
१०७ भूरसिंह राठौड़ कवि बहादुर और उसकी रचनाएं सपादकीय पृ ६
१०८ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड पृ ४१
१०९ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड पृ ४६ ७ रेउ मारवाड़ का इतिहास, प्रथम भाग पृ २४१
११० डा. मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १९
१११ वही पृ २०३
११२ गोवर्द्धन शर्मा राजस्थानी साहित्य के ज्योतिषपुंज पृ ७८
११३ डा. मनोहर सिंह राणावत इतिहासकार मुहणात नैणसी और उसके इतिहास ग्रंथ पृ ४६
११४ डा. मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २०४
११५ सपा डा. नारायणसिंह भाटी मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ३३
११६ द्रष्टव्य डा. मनोहर सिंह राणावत मुहणोत नैणसी और उसके इतिहास ग्रन्थ पृ १
११७ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २०५
११८ डॉ मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २२०
११९ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २२१ २२४
१२० डा जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालीन चारण काव्य पृ १०६
१२१ डा जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालीन चारण काव्य पृ १०७ व १०८ से उद्धृत
१२२ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ४७१
१२३ वही पृ ४७१ डा राजकुमारी कौल राज के राजघराना की हिन्दी सेवा पृ ८
१२४ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ४७२
१२ सयोगिनी वियोगिनी बारहमासा (ह) ग्रथांक २४८ लि. का. १७८६ वि स

१ ‍ ‍ समुद्रबध रूपक (ह. ग्र) ग्रथाक २५२
१२७ शुकराज चापई (ह. ग्र) ग्रथाक ६६६ लि. का. १८२३ वि. स.
१२८ रूपन्नापक (ह ग्र) ग्रथाक २९७ लि का १८५७ वि. स
१२९ नायक लक्षण (ह ग्र) ग्रथाक १४०८ लि. का. १८४८ वि.स
१३० सुन्दरशृगार (ह ग्र) ग्रथाक १४ ४ लि का १७९७ वि.स.
१३१ सोरठ वीझारी वात ग्रथाक ११८ लि. का. १८४७ वि. स.
१ २ राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल (परम्परा) भाग १५ १६ पृ २०८
१३३ इनक वशज नरहरदासोत कहलाये नैणसी री ख्यात, भाग-१ पृ २०४
१३४ आझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ४३७
१३५ राजस्थाना साहि का मध्यकाल (परम्परा) भाग १५ १६ पृ २०८
१३६ मुशा न्दवाप्रसाद महिला मृदुवाणा पृ २ ३
१३७ मुशा दवाप्रसाद महिला मृदुवाणी पृ २ ३
१३८ डा सावित्री सिन्हा मध्यकालान हिन्दी कवयित्रिया पृ० ३५
१३९ परम्परा भाग १५ १६ पृ० २०८ २०९
१४० राव पानूदान री बही राणी मगा, लछड़ा ग्राम बही पृ १५
१४१ परम्परा भाग १५ १६ पृ २११ २१२ विक्रमसिंह राजपूत नारिया पृ १३४
१४२ बलदेव उपाध्याय भागवत सम्प्रदाय पृ २५३
१४३ नाभादास भक्तमाल पृ २८२
१४४ परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की सत परम्परा पृ २२४
१४५ बलदेव उपाध्याय भागवत सम्प्रदाय पृ २६८
१४६ दादू का जन्म अहमदाबाद नगर में (वि स १६०१ म फाल्गुन शुक्ला अष्टमी बृहस्पतिवार को हुआ था।
दादू का जीवन चरित्र (ह ग्र)ग्रथाक ३१५१९ रा. प्रा. वि प्र जाधपुर
१४७ राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्टान जाधपुर राजस्थाना शाध सस्थान चौपासनी महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश जाधपुर आदि कई सग्रहालयों म दादू एव दादूपथा साहित्य की अनक हस्तलिखित प्रतिया सग्रहित ह ।
१४८ डा. मातालाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २८६ ८९
१४९ सपा. उदयराज उज्ज्वल भगतमाल (ब्रह्मदासकृत) सपादकाय पृ ७
१५० सपा. उदयराज उज्ज्वल भगतमाल (ब्रह्मदासकृत) सम्पादकाय पृ ७
१५१ डा जगमोहनसिंह परिहार मध्यकालान चारण काव्य, पृ ६१
१५२ सपा. उदयराज उज्ज्वल भगतमाल (ब्रह्मदास कृत) सपादकीय पृ ७
१५३ यह हस्तलिखित ग्रथ दादू महाविद्यालय जयपुर के सग्रहालय में सगृहित ह ।
डा पेमाराम मध्यकालीन राज. में धार्मिक आन्दोलन पृ १२७
१५४ डा. मातीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ २९१
१५५ वही पृ २९०
१५६ दरियाव महाराज की जन्मलीला (ह ग्र) ग्रथाक ३१०३४ प्रा वि. प्र जोधपुर पृ ११७

१ ७ डा शिवशकर पाडय रामस्नही सम्प्र की दार्श पृष्ठभूमि पृ ४८
१५८ सपा हरिनारायण शास्त्री दरियावजाण आम केवलिया दरि दिग्द पृ ६
१ ९ शिलानख प्रादुर्भाव १७३३ भाद्रप्रद कृष्णाष्टमी । दाभा १७८९ कार्तिक शुक्ला ११ माक्ष सवत् १८१५ मिगसर पूर्णिमा ।
१६० रण दरियावजा महाराजा की जन्मलीला (ह ग्र) ग्रथाक ३१०३४ पृ १२२ १२४
१६१ ओम केवलिया श्री दरियाव दिग्दर्शन पृ १
१६२ हरखरामकृत भक्तमार (अप्रकाशित) रण स्थित इस ह ग्र का लि काल वि स १८३२ है ।
१६३ नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय और उनका साहित्य (टकित शोधप्रबध) पृ २९६ २९८ (जोधपुर विश्वविद्यालय)
१६४ आनन्दीराम रामस्नेही सतवाणी पृ १३०
१६५ नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय और उनका साहित्य (टकित शोधप्रबध) पृ २९९
१६६ वीरमदासकृत पतावना व आत्मज्ञान नामक दो ग्रथ प्रकाशित ।
१६७ द्रष्टव्य परम्परा भाग ६९ ७० पृ १०७-११५
१६८ केवलराम स्वामी रामस्नेही सम्प्रदाय पृ ५१
१६९ करुणा मिलन खुदाय का करणा आप अल्लाह ।
करुणा राम रहिम दिल माना साच सल्लाह ॥
आनन्दीराम रामस्नेही सतवाणी पृ १४५
१७० डा मातीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १३२
१७१ चाकसराम श्री रामस्नह धर्मप्रकाश पृ ३६
१७२ गुलाबकवर भडारी राजस्थाना साहित्य में रामभक्ति काव्य (टकित शोधप्रबध) पृ ३५० (जोधपुर विश्वविद्यालय)
१७३ सतवाणी अक (कल्याण) पृ ४१५
१७४ नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय और उनका साहित्य (टकित प्रति) पृ २८१
१७५ नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय और उनका साहित्य पृ २५०
१७६ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ क
१७७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राजमारवाड़ तीसरा हिस्सा पृ २८७
१७८ रामदास की परची (ह ग्र) ग्रथाक २३०९७ रा प्रा वि प्र जोधपुर
१७९ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दशन पृ ९
१८० प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेही मत दिग्दर्शन पृ ८
१८१ रामदास की परची (ह ग्र) ग्रथाक २३०९७ रा प्रा वि प्र जाधपुर पृ ११३
१८२ चोकसराम श्रीरामस्नहा धर्मप्रकाश पृ १०५ न पेमाराम मध्यकालान राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ २४१
१८३ प उत्साहराम प्राणाचार्य श्रीरामस्नेहा मत दिग्दर्शन पृ २७
१८४ सपा पुराहित हरिनारायण सुन्दर ग्रन्थावली प्रथमखण्ड जावनचरित्र पृ ९२
१८५ बजरगलाल लाहिया राजस्थान की जातिया पृ ९७

१८६ आचार्य परशुराम चतुर्वेदा उत्तरा भारत का सत परम्परा पृ ३४२

१८७ नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय आर उनका साहित्य (टक्ति शाध प्रबध) पृ २०७

१८८ रऊ मारवाड का इतिहास प्रथम भाग पृ ७८

१८९ केहर देवो छत्रसी दल्लो राजकुमार ।
मरते मोड मारिया चाटी वाळा च्यार ॥

१९० नारायण शर्मा राजस्थान के सत सम्प्रदाय आर उनका साहित्य पृ २०९

१९१ वहा पृ ३१७

१९२ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १५५ ५६

१९३ डा हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १२६

१९४ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १५६

१९५ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट् पृ ७८

१९६ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ १९०

१९७ डा हीरालाल माहेश्वरा राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ १७१

१९८ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट पृ ८२

१९९ डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ १९०

२०० डा मोतीलाल मनारिया राजस्थानी भाषा आर साहित्य पृ २०५

२०१ वही पृ २०६

२०२ डा हीरालाल माहेश्वरी हिस्ट्री आफ राजस्थानी लिट पृ ६५

२०३ वरदा वर्ष ५ अक ३ में बद्रीप्रसाद साकरिया का लेख महाकवि ईसरदास आर उनका साहित्य

२०४ पीरदान लालस का समय स १७६० १७९३ तक निश्चित हाता है ।

२ ५ अगरचन्द नाहटा द्वारा सपादित पीरदान ग्रन्थावली

२०६ राजस्थानी सबदकोस प्रथमखण्ड पृ १५७

२०७ इसके अतिरिक्त हमीरदान रतनू कृत जदुवसवसावली दसलली री वचनिका जोतिस जड़ाव ब्रह्माण पुराण व महाभारतरा अनुवाद नामक रचनाओं का उल्लेख मिलता है ।
द्रष्टव्य राजस्थानी सबदकास प्रथमखण्ड पृ १५८

२०८ गुलाब कुवर भण्डारी राजस्थानी साहित्य में रामभक्ति काव्य (वि स १६०० १९००) टक्ति शो प्रबन्ध पृ २०५ २०६

२०९ राजस्थानी सबदकोस प्रथम खण्ड पृ १६३

२१ गुलाब कुवर भण्डारी राजस्थानी साहित्य में रामभक्ति काव्य (वि स १६०० १९०० टक्ति शा प्रबध) पृ २३४

२११ राजस्थाना सबदकास प्रथमखण्ड पृ १६३

२१२ वहा पृ १७०

२१३ नारायण शर्मा राजस्थान क सत सम्प्रदाय आर उनका साहित्य (टक्ति शाधप्रबध) पृ २२७

२१४ डा माहनलाल जिज्ञासु चारण साहित्य का इतिहास भाग १ पृ २८

२१५ डा जगमाहनसिंह परिहार मध्यकालीन चारण काव्य पृ ७०

२१६ ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ४१३

२१७ डा राजकुमारा कौल राजस्थान क राजघरान का हिंदा सवा, पृ ३८

२१८ ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड पृ ४७१

२१९ ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास प्रथम खण्ड पृ ४६७

२२० ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास द्वितीय खण्ड पृ ४७८

२२१ जादवराणी जसकुवरी करौला क राजा छत्रसिह का पुत्रा इसस कुवर अजीतसिंह का जन्म हुआ । ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखड पृ ४६९

२२२ परम्परा भाग १७ सम्पादकीय पृ ११

२२३ वही पृ १५

२२४ मरुभारती वर्ष १० अक-४ पृ ८९ ९०

२२५ राजस्थान का पिंगल साहित्य पृ १२२ २३

२२६ मिश्रबन्धु विनाद भाग-२ परम्परा भाग-१७ पृ ११

२२७ गज उद्धार ग्रथ (परम्परा भाग १७) पृ ११

२२८ डा राजकुमारी कौल के राजस्थान के राजघरानों की हिंदी सवा नामक प्रकाशित शोध प्रबन्ध के पृ ५४ ५५ एव परम्परा भाग १७ पृ ११ पर गुणसार में सगृहित रचनाओं की पूरी सूची दी गयी है ।

२२९ ओझा जोधपुर राज्य का इति खड २ पृ ६६० रेऊ मारवाड़ का इतिहास प्रथम भाग, पृ ३२७

२३० रेऊ मारवाड का इतिहास प्रथमभाग पृ ३९४

२३१ रामजस (ह ग्र) ग्रथाक २०३ लि का १८५० म मा पु प्रकाश जोधपुर

२३२ विजयविवाह (ह ग्र) ग्रथाक २२० लि का १८०७ म मा पु प्र जोधपुर

२३३ सपा डा नारायणसिंह भाटी परम्परा भाग ३५ रा शा स चापासना

२३४ परम्परा भाग-३५ सम्पादकीय पृ ११

२३५ वही पृ १३

२३६ माहनलीला (ह ग्र) ग्रथाक-१८८ (र का वि स १८३३) म मा पु प्र जाधपुर

२३७ रामायणसार (ह ग्र) २१४ (का वि स १८३२) म मा पु प्र जाधपुर

२३८ करुणाभरण (ह ग्र) ग्रथाक ४१५ (लि का वि स १७७२) म मा पु प्र जोधपुर

२३९ भवरगीत (ह ग्र) ग्रथाक १६४ (लि का १८२०) म मा पु प्र जोधपुर

२४० लघराजकृत पाबूजी रा दूहा ग्रथाक ४०२ रा शा स चौपासनी परम्परा, भाग-२८ में यह कृति प्रकाशित

२४१ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, चतुर्थभाग पृ ४५८

२४२ वही पृ १२१

२४३ परम्परा, भाग ६९ ७० पृ ८६

२४४ ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास प्रथमखण्ड पृ ४७२

२४५ हठप्रदीपिका (ह ग्र) ग्रथाक ९४९ लि का १७ ५ म मा पु प्र जाधपुर

२४६ गाता दाहात्मक (ह ग्र) ग्रथाक ११२२ लि का १८०७ म मा पु प्र जाधपुर

२४७ ज्ञानसागर (ह ग्र) ग्रथाक-१२३४ लि का १७१० म मा पु प्र जाधपुर

२४८ उपर्युक्त हस्तलिखित प्रतियां मान मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर में संगृहीत

२४९ ब्रह्माण्ड पुराण (ह ग्र) ग्रथाक ४७८ लि का १८५३ म मा पु प्र जोधपुर

२५० ब्रह्माण्ड वर्णन (ह ग्र) ग्रथाक-४७९ लि का १७७ म मा पु प्र जोधपुर

२५१ मार्कण्डेयपुराण (ह ग्र) ग्रथाक ४८८ लि का १८४० म मा पु प्र जोधपुर

२५२ महात्व री स्तुति (ह ग्र) ग्रथाक १४६९ लि का १७१४ म मा पु प्र जोधपुर

२५३ व्रजरचना (ह ग्र) ग्रथाक ४९७ लि का १८२२ म मा पु प्र जोधपुर

२५४ परशुराम सागर ग्रन्थ का एक हस्तलिखित प्रति स १८३७ का लिपिबद्ध की हुयी स्वामी प्रयागदास जी के स्थल रत्नपुर में विद्यमान है।
डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन पृ १९०

२५५ डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन, पृ १९०

२५६ वही पृ १९१

२५७ वही पृ १९१

२५८ वही पृ १९२

२५९ श्री गोपाल गोस्वामी श्री जाम्भोजी महाराज के दिव्य चमत्कार, पृ ५

२६० डा पेमाराम मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन, पृ १९४

२६१ आझा निबन्ध संग्रह भाग-३ पृ १४३

२६२ ह ग्र ग्रथाक- ८२ म मा पु प्र, जोधपुर

२६३ वही ग्रथाक ९९४ म मा पु प्र जोधपुर

२६४ वही ग्रथाक ९९६ म मा पु प्र, जोधपुर

२६५ वही ग्रथाक १००३ म मा पु प्र, जोधपुर

२६६ वही ग्रथाक १००८ म मा पु प्र जोधपुर

२६७ वही ग्रथाक १०३८ म मा पु प्र, जोधपुर

२६८ वही ग्रथाक ११०० म मा पु प्र, जोधपुर

२६९ इन सबदियों में नाथपथी साधुओं के योग और अध्यात्म सम्बन्धी विचार भी द्रष्टव्य है।

२७० प्राय प्रत्येक कर्ता के नाम पर सबदी का नामकरण हुआ है यथा चरपट नाथकृत चरपटनाथ सबदी गबनाथकृत गरीबनाथ सबदी। पार्वती और मेणावती सबदी की रचनाकार महिलाए है। उपर्युक्त सबदियां महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश फोर्ट, जोधपुर में संगृहीत है।

२७१ परम्परा भाग ६९ ७० पृ १०७

२७२ सुखसारणकृत फूलीबाई की परची (ह ग्र) ग्रथाक-७१९१ रा शा स चौपासनी

२७३ आप आप मत बालीया ओ जसवन्त वड्डो नरेस।
इणराजा का राज वहा ज्या फूली को देस ॥२४
फूलीबाई का परचा

२७४ कल्याण भक्त चरिताक, पृ ४५१

२७५ सुखसारण कृत रानाबाई की परची ग्रथाक ३४१६ रा शा स चौपासनी

२७ कल्याण भक्त चरिताक पृ ४५१

उत्सव, त्यौहार और मेले

आदिमकाल स उत्सव त्याहार आर मेलो ने प्रत्येक देश क जातीय जावन का विकसित करन म वड़ा महत्वपूर्ण यागदान दिया ह । मामान्य रूप स उत्सव आर मले दश क प्रचलित धर्म से प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप स सम्बद्ध होन हे । म्यता का अग्रगति के साथ साथ उत्सव आर त्याहारा का सख्या बढ़ता जाता ह विधि विधान द्वारा उन्हे समृद्ध किया जाता ह तथा उनके मनान का समय ओर क्रम भा नियत कर दिया जाता है ।[१]

इस प्रकार उत्सव त्याहार आर मलो का किसा दश क सामाजिक जावन म महत्वपूर्ण स्थान हाता ह आर इसस जातीय जीवन तो अटट रूप म जुड़ा रहता हा है साथ ही उस देश का सस्कृति का भी इन त्याहारो के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध हाना ह । प्राय सभा त्याहारा क आयाजन के पाछ कुछ न कुछ कारण विद्यमान रहना ह आर सभा त्याहारा के साथ कुछ न कुछ कथा जुड़ा रहता ह ।[२] त्याहार किसा विशेष प्रयोजन या किसा विशिष्ट घटना की स्मृति का ताजा बनाये रखने या किसी धार्मिक महत्व के प्रतिपादन हेतु आयोजित किये जात रह ह ।

त्याहारा का उद्देश्य हमार जीवन मे कुछ नवानता लाना ह जो जाति जितने उत्साह स अपने त्याहारा का मनाता ह वह उतना हा प्राणवान आर सशक्त मानी जाती है । इनके साथ जातिगत पारम्परिक परपराय भी जुड़ी होता ह[३] आर य त्याहार हमार जावन म उत्साह प्रसन्नता आर सुख की अभिवृद्धि करत ह । प्राय सभा त्याहारा म हर्षोल्लास गायन वादन हाता ह जिससे मनाविनाद भी हाता ह । इस प्रकार त्याहारा स कुछ हद तक मानव क मनारजन का कार्य भा पूर्ण हाना ह । इन त्याहारा का स्त्री पुरुष बालक वृद्ध सभी बड़ उत्साह स मनात ह ।

मनुष्य सामाजिक प्राणा ह । समाज स बिछुड़कर उसक लिय जावित रहना कठिन हा जाता ह । इसलिए मुख्यत सामाजिकता क सुख का अनुभव मिलान आर साथ हा ससार क प्रपच म फस हुए प्राणिया का थाड़ा दर क लिए शारीरिक आर मानसिक विराम आर आनन्द क लिए प्राचानकाल स हा प्रत्यक देश क मानव समाज म नियत मुहूर्त आर

दिन पर उत्सव ओर त्योहारा का आयाजन किया जाता रहा है । इन उत्सवा आर त्याहारा द्वारा सामूहिक रूप म किसी जाति या समुदाय के सदस्यों का कुछ समय क लिए आनन्दित कर उनके हृदया को उदार व उन्नत बनाने का प्रयत्न किया जाता रहा है । सम्भवत इसी विचार स वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र म उत्सव आर मेला का नाम सम्भूय क्रीडा दिया ह जिसम सामूहिक रूप स वहुत से नर नारा एकत्र हो सक्रिय भाग लेते ह ।[४]

त्याहार की भाति यहा विभिन्न उत्सवा का आयाजन भी मध्यकाल म हाता रहा ह । उत्सव का मतलब उछाह से हे । कुछ उत्सव त्याहारो से सम्बन्धित हाते है और कुछ स्वतन्त्र होते है[५] तथा कुछ धर्म स सम्बन्धित होते है । उत्सवा का उद्देश्य भी आनन्द का बढाना है । सुख आर आनन्द बाटन से बढ़ता है दुगुना आर चागुना होता है । त्यौहार ता एक परिवार के दा चार आदमी भी मना सकत ह किन्तु उत्सव परिवार क बाहर के व्यक्तियो मित्रो साथिया सगिया व कई लोगा के समुदाया क उसमे शामिल हाकर मनाने से होगा । उत्सवा म भाषण गायन अभिनव कविता आदि के कार्यक्रम होते है । इनके द्वारा गायन भाषण नृत्य आदि कलाओ को भी प्रोत्साहन मिलता ह । उत्सवा पर भूमि एव भित्ति अलकरण भी हाता ह कई प्रकार क माडण अकित किए जात है । इस प्रकार चित्रकला का प्रयोग भी कई उत्सवा में बड़े उत्साह के साथ किया जाता रहा हे ।

उत्सवो की उत्पत्ति के मूल आधार कृषि और ऋतु परिवर्तन रहे हे ।[६] कालान्तर मे इन उत्सवो में धार्मिकता व सामाजिकता का प्राबल्य हाने से धार्मिक और कई प्रकार के सामाजिक उत्सव भी मनाये जाने लगे । इतना ही नही मानव क सस्कारो से सम्बन्धित भी कुछ उत्सव नियत हो गये । इन सब मे धार्मिकता का पुट अवश्य देखने का मिलता है । अध्ययन की सुविधा के लिए हम यहा के त्यौहारा आर उत्सवा को निम्नलिखित तीन भागा मे बाट सकत है —

(१) धार्मिक उत्सव

(२) सामाजिक उत्सव

(३) सस्कारजन्य उत्सव

धार्मिक उत्सव

मध्यकालान मारवाड़ की जनता म धार्मिक आस्था के अनुरूप यहा कई धार्मिक उत्सव मनाये जात थ । वसे ता हर त्याहार व उत्सव के साथ कुछ धार्मिक मान्यताए व परम्पराय जुड़ जाया करती है परन्तु कुछ पर्व विशुद्ध धार्मिक प्रेरणा से मनाये जाते रहे ह । एसे पर्वा का धार्मिक उत्सव की सज्ञा देना समाचीन हागा । इन धार्मिक उत्सवो म कई तो विभिन्न देवा दवताओ क जन्म दिवस क रूप म आयोजित किय जात रह हे आर कुछ उत्सव विभिन्न धार्मिक माहात्म्य व पापमुक्ति तथा मोक्ष प्राप्ति के विश्वास म

मनाये जात रह ह । यहा ऐस हा कुछ धार्मिक उ सवो का सक्षप म वर्णन किया ना रहा ह जा मध्यकाल में यहा की जनता द्वारा वडे उत्साह व हर्षाल्लास क साथ मनाय जाते थ ।

रामनवमी-

विष्णु के अवतारा म यहा राम ओर कृष्ण के अवतार प्रमुख (पूर्ण अवतार) माने जाते रहे ह । चैत्र शुक्ला नवमी का मध्याह्नकाल में श्रीरामचन्द्र का जन्म हुआ था इसे 'रामनवमा क नाम स जाना जाता ह । इस तिथि का राम का जन्मात्सव मनाने के साथ साथ रामनवमी का व्रत (नित्य नमित्तिक तथा काम्य भेद स)[७] किया जाता था । रामनवमी पर मन्दिरो म सगीत नृत्य कार्तन आदि होत थे । पुजारी लाग पचामृत प्रसाद आदि बनाते जिस लागों मे वितरित किया जाता था ।[८]

इस अवसर पर रामायण-पाठ तथा रामलाला आदि के आयाजन भी परम्परागत रूप स होते रहे है । राम की महिमा को मारवाड की जनता में स्थाया रूप से प्रचारित करने मे रामनवमी जैसे पर्व का बड़ा महत्व रहा है । राम के मन्दिरो के अलावा रामस्नही सम्प्रदाय क रैण खड़ापा आदि महत्वपूर्ण पीठो म यह राम जन्मात्सव विशष धूमधाम से मनाया जाता रहा है ।

नागपचमी

श्रावण शुक्ला पचमी को वाराहपुराणानुसार ब्रह्मा ने नागा का वर दिया था । इस तिथि को नागों की पूजा होती थी ।[९] आर ऐसी मान्यता थी कि नागपचमी का व्रत करने से सर्प-भय नही रहता । इस तिथि का यहा क निवासा देव रूप में नाग देवता की पूजा कर अपनी कुशलक्षेम की मगल कामना करते थे । नाग देवता को दूध मिश्री आर नारियल चढ़ाये जाते थे । इस तिथि पर कई स्थाना पर नागपचमी का मला लगता था । मारवाड़ की पुरानी राजधानी मडोर म 'नागादड़ी पर यह मेला आज भी आयोजित होताहै । नागादड़ी जिस जगह स्थित है उसक चारा ओर के पर्वत को भौगिशल (सर्पो का पर्वत) के नाम से प्रसिद्ध है । यहा सर्प भी बहुतायत स पाय जाते है । इस पर्वत म मडोर के चारों तरफ शिवजी के कई स्थान हैं[१०] जहा मध्यकाल मे कई तपस्विया ने तपस्या की आर आज भा व स्थान पवित्र माने जाते हैं ।

कृष्ण जन्माष्टमी-

भादवा वद ८ का कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व कृष्ण के जन्मदिवस के उपलक्ष्य म प्रतिवर्ष बड़ धूमधाम से मनाया जाता रहा । इस तिथि पर बुधवार को रोहिणी नक्षत्र मे जब चन्द्रमा वृष का था श्रीकृष्ण का जन्म अर्द्धरात्रि म हुआ था अत इस दिन सवर से रात्रि के १२ बजे तक उपवास और अर्द्धरात्रि के पश्चात् श्रीकृष्ण क जन्मात्सव क उपरान्त फलाहार किया जाता है । अष्टमी को उपवास कर नवमी का पारणा करन स व्रत की पूर्ति होती है ।

इस पर्व को यहाँ "कान जलम आठम" व "कानजी री आठम" नाम से पुकारा जाता है। इस उत्सव को वैष्णव लोग बड़े उत्साह से मनाते है। कृष्ण मन्दिरों को इस अवसर पर विशेष रूप से सजाया जाता था। भजन कीर्तनो का आयोजन किया जाता था। कृष्ण के जन्म होने के पश्चात् अर्द्धरात्रि के समय पजीरी का प्रसाद और चरणामृत बाटा जाता था। यहा ऐसी मान्यता है कि इस समय कुछ वर्षा भी अवश्य होती है मारवाड जैसे सूखे प्रान्त में जब वर्षा की कमी होती है तब लोग इस आशा से जन्माष्टमी का इन्तजार करते है कि उस अवसर पर कुछ वर्षा अवश्य होनी चाहिए। जन्माष्टमी को मारवाड में सर्वत्र मनाया जाना इस तथ्य की भी पुष्टि करता है कि यहा कृष्ण भक्ति की जड मध्यकाल मे गहराई तक पहुच चुकी थी और महलो से लेकर झोपड़ियो तक मे इस पावन पर्व को श्रद्धा व उत्साह के साथ लोग उस समय भी मनाते थे। इस अवसर पर बड़े शहरो और कस्बो में कृष्णलीला को अभिव्यक्त करने के लिए रासलीला आदि का आयोजन भी होता था और कृष्ण के बालस्वरूप के प्रति जनता विशेष रूप से आकृष्ट होती थी।

गोगानवमी

भादवा वद नवमी को गोगा नवमी का उत्सव मनाया जाता है। गोगाजी चौहान राजस्थान के प्रमुख लोक देवताओ में से एक है और विशेषकर पश्चिमी राजस्थान और सम्पूर्ण मारवाड राज्य मे उनकी नाग के रूप में पूजा प्रचलित है। आज भी गावो में गोगाजी का प्रचार और प्रभाव अधिक देखने को मिलता है। "गाव गाव खजडी और गाव गाव गोगो" यह कहावत यहा प्रचलित है। गोगाजी के स्थान प्राय खेजड़ी के नीचे कच्चे चबूतरे पर निर्मित किये जाते थे। घूघरी चूरमा भात और सेवैयो की खीर का गोगाजी को प्रसाद चढाया जाता था। मध्यकालीन लोकसाहित्य में गोगाजी के महत्त्व का अच्छा प्रतिपादन हुआ है। मारवाड़ की ग्रामीण जनता में यह पर्व विशेष महत्व रखता आया है

बाबा रामदेव की बीज

राजस्थान मे लोकदेवताओ में रामदेव जी का प्रमुख स्थान है और यहा के प्रसिद्ध पाच लोकदेवताओ में उनकी गिनती होती है। मारवाड ही नही गुजरात तक के श्रद्धालु भक्त उनके स्थान रामदेवरा मे प्रतिवर्ष आते है। भादवा सुद २ को बाबा रामदेव का जन्म हुआ था और उनके जन्मोत्सव को यहा बडे धूमधाम से मनाया जाता है। इसी दिन रुणीचा में तो बड़ा भारी मेला लगता है जिसमे दूर दूर से श्रद्धालु भक्त पहुचते है। हिन्दू ही नही मुसलमान भी बाबा रामदेव मे आस्था रखते है और "पीर रूप" में उनकी पूजा करते है। रामदेव जी के चमत्कारो व प्रभावो से श्रद्धालु भक्तो की मनोकामना पूर्ण होती है और कई प्रकार की मनौतिया वे मानते है। अपने निर्दिष्ट कार्य की सफलता पर रुणीचा

जाकर अपनी मनाती मनाते है । रुणीचा या रामदेवरा के अतिरिक्त भी प्राय मारवाड़ के सभी बड़े गावों में रामदेव जी के मन्दिर बने हुए है जिन्हे देवरा कहा जाता है । भादवा की २ का सभी रामदेवरा मे भजन कीर्तन होते है और रात्रि जागरण होता है । यहा यह भी द्रष्टव्य है कि रामदेव जी की पूजा अर्चना मध्यवर्ग मे तो है ही पर यहा के निम्न वर्ग विशेषकर मेघवाल जाति के लोग जिन्हे समाज मे अछूत समझा जाता था उनमे इनकी भक्ति का अधिक प्रचार प्रसार रहा है ।

मध्यकाल में भी निम्नवर्ग के लोगो मे रामदेव बाबा सबसे अधिक लोकप्रिय रहे है । मारवाड मे मेघवालो की जनसख्या उस समय भी खूब थी । धार्मिक ऊहापोह के बीच भी मेघवालो की आस्था रामदेव मे अटल रही और इस आस्था ने उन्हे न केवल आत्म बल दिया अपितु विधर्म के प्रति आकृष्ट होने से भी बचाया ।

नवरात्रि -

चैत्र मास के शुक्ल पक्ष तथा आश्विन मास के शुक्ल पक्ष के पहले नवरात्रि (नौ नौ दिन) जिसमें हिन्दू लोग नवदुर्गा का व्रत घटस्थापना तथा नवदुर्गा का पूजनादि करते थे । नवरात्र के पहले दिन जिसे 'स्थापना" कहा जाता है घटस्थापन कर देवी का आह्वान कर, फिर पूजन बराबर नौ दिन तक किया जाता था । अष्टमी या नवमी को कुमारी पूजन तथा उन्हे भोजन कराया जाता था । भोजन करायी जाने वाली बालिकाए २ से १० वर्ष के भीतर की अवस्था वाली होती थी, इन्हे नवकुमारी कहा जाता था । इनमे कुमारिका त्रिमूर्ति कल्याणी रोहिणी काली चंद्रिका शाभवी दुर्गा और सुभद्रा देवियो की पूजा की जाती थी ।[१२] मारवाड़ में दोनो नवरात्र "चती नोरता और आसोजी नोरता" का उत्सव मनाया जाता है किन्तु आश्विन मास मे आने वाले नवरात्र को "बड़ा नोरता" के रूप मे मनाने का प्रचलन रहा है । मध्यकाल मे शक्ति और बल का प्रतीक दुर्गा की अभ्यर्थना समय सापेक्ष थी यहा नवरात्र मे बलि चढ़ाने की भी प्रथा थी ।[१३] जोधपुर दुर्ग मे स्थित चामुण्डादेवी के मन्दिर पर भैसे की बलि दी जाती थी । अन्य स्थानो पर भी बकरो की बलि स्थापना व अष्टमी को दी जाती थी । यहा के क्षत्रिय वर्ग के लोग इस पर्व को विशेष उत्साह के साथ मनाते थे ।

नवरात्रि मे नौ दिन व्रत करने की परम्परा भी उन दिनो मे प्रचलित थी । इस प्रकार यह पर्व आत्मशुद्धि के लिए भी अपना महत्व रखता था तथा दुर्गापाठ हवन आदि का आयोजन ब्राह्मण वर्ग विशेष रूप से करते थे । मारवाड़ के राठौड़ो की कुलदेवी नागणेचिया रही है अत इस अवसर पर राठोड लोग इस देवी की विशेष रूप से अभ्यर्थना करते थे ।

दशहरा-

आश्विन शुक्ला दशमी हिन्दुओ का और विशेषकर क्षत्रियो का बहुत बड़ा त्योहार था । इस दिन श्रीरामचन्द्र ने लकापति रावण पर विजय प्राप्त की थी । इसलिए इस तिथि

को विजय दशमी कहते है।[१४] भगवान राम की रावण पर विजय की यादगार मे यह पर्व मनाया जाता है। मध्यकाल मे आज जैसे युग के आणविक युद्धास्त्र नही थे वर्षाकाल मे किसी देश पर चढ़ाई नही की जाती थी अत तत्कालीन युद्ध मे प्रयुक्त होने वाले अस्त्र शस्त्र रख दिये जाते थे और इस तिथि को वर्षाकाल की समाप्ति हो जाती थी। अत क्षत्रिय लोग अपने अस्त्र शस्त्रों को साफ कर उनकी पूजा करते थे। यह मुख्यत राजपूतों का त्योहार था।[१५] इस दिन देवी घोड़े हाथी और खड्ग की पूजा की जाती थी। दशहरे के दूसरे दिन शमी पुस्तक लेखनी आदि की पूजा होती। दशहरे का सबसे बड़ा आकर्षण राम की बड़ी सज धज से निकलने वाली सवारी थी जिसे रजवाड़ो की राजधानी मे बहुत ठाट बाट से निकाला जाता था। आजकल प्रमुख शहरो मे रावण के पुतले को जलाने के साथ इस परम्परा का निर्वाह भी देखने को मिलता है। विजय दशमी के उपलक्ष्य मे गाव और शहरो मे स्थान स्थान पर रामलीलाओ का आयोजन होता था। इस पर्व को सत्य की असत्य पर, न्याय की अन्याय पर, धर्म का अधर्म पर, प्रकाश की अधकार पर विजय के प्रतीक के रूप मे आज भी यहा बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। मध्यकाल मे यह पर्व यहा की युद्धप्रिय राजपूत जाति के वीरत्व शौर्य और साहस का प्रतीक रहा है।

बसन्त पचमी

माघ शुक्ला पचमी को बसत और रति सहित कामदेव की पूजा का विधान पुराणो मे भी वर्णित है। इस तिथि को समुद्र से लक्ष्मी का जन्म हुआ था अत इसे "श्रीपचमी"[१६] के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन बसन्ती रग के वस्त्र पहिने जाते थे। राज्य मे विशेष दरबार लगता था जिसमे सगीत और नृत्य का आयोजन होता था। सरस्वती पूजन से यह उत्सव प्रारम्भ होता है तथा बसन्त ऋतु को यहा का जनसाधारण भी बड़े उत्साह से लेता था। इस अवसर पर कन्याये किसी बाग मे या तालाब के किनारे जाकर स्वय को फूलो से सुसज्जित करती थी। तत्पश्चात् झुण्ड मे गाते हुए, हाथ मे फूल पत्तिया आदि लिये हुए अपने घरो को सजाने उतावली सी चली जाती थी।[१८]

मारवाड़ में बसन्त पचमी को तुर्रापाचम के नाम से भी पुकारा जाता है। ऋतु परिवर्तन के साथ इस दिन खेतो मे खडी फसलो मे बालिया फूटने लगती है तथा किसान गेहू व जौ की बालिया को अपने साफो व पगड़िया[१९] मे तुर्रो के रूप मे सजाते है। शायद इस प्रकार वे अन्न देवता के रूप मे लक्ष्मी का आदर व सम्मान करते प्रतीत होते है। पुराणो मे वर्णित कामदेव की पूजा के विधि विधान का तो मारवाड की आम जनता भली प्रकार निर्वाह नही कर पायी पर उस उत्सव के महत्व को प्रतिपादित करने मे यहा के कवियो और प्रबुद्ध जनो ने मध्यकाल मे कोई कसर नही रखी।

शिवरात्रि -

फाल्गुन मास क कृष्णपक्ष का चतुर्दशी का शिवरात्रि का त्योहार मनाया जाता ह । इस दिन शिव की पूजा करते ह आर शिव भक्त उपवास रखत ह । भगवान शिव चोदह तिथि क स्वामा ह अत इसका शिवरात्रि नाम सार्थक भी ह । एसा माना जाता ह कि इस दिन शिवजा का पार्वती के साथ विवाह हुआ था । शिवरात्रिव्रत नाम सर्वपापप्रणाशनम् । आ चाण्डालमनुष्याणा भुक्ति मुक्ति प्रदायकम् । क अनुसार इस चारा वर्ण अछूत स्त्रा पुरुष बाल युवा वृद्ध सब कर सकते ह । इसीलिए इस परम पवित्र माना गया ह । वदपाठी आर गराब स गरीब सबकी पूजा शिव का ग्राह्य ह । स्कन्दपुराण क अनुसार इस दिन पूजन जागरण आर व्रत करन वाला का पुनर्जन्म नही हाता । तात्रिक लाग भा इसे विशष महत्त्व देत ह । ईशान् सहिता के अनुसार ज्योतिर्लिंग का प्रादुर्भाव फाल्गुन कृष्णा १४ को निशीथ म हुआ था अत इस महाशिवरात्रि कहत हे । ऐसा भी माना जाता ह कि रुद्र रूपी शिव को ब्रह्मा न सृष्टि के प्रारम्भ म इसी तिथि को उत्पन्न किया था ।[२०] कुछ लागा का ऐसा भा विश्वास ह कि इस दिन शिव ने गरल पान किया था जिसस उनका नाम नीलकण्ठ पडा ।

इस प्रकार कई मान्यताओ आर विश्वासा स जुड़ा यह शिवरात्रि का पर्व यहा बहुत ही श्रद्धा आर आस्था क साथ मनाया जाता था । प्रत्यक आस्तिक हिन्दू अपनी सामर्थ्य क अनुसार शिव की आराधना करता था । निराहार व्रत आर रात्रि जागरण इस पर्व क प्रधान अग थे । साम वेदीय आर ऋग्वेदीय पद्धति से स्वस्तिवाचन आर पूजन करने क बाद चार बार प्रत्यक प्रहर म क्रमश दुग्ध दधि घृत और मधु स शिवलिंग को स्नान करा पूजन किया जाता था । दूब आक विलपत्र और गुड अक्षत शिव को चढाये जाते थ । शिव का भक्ति से सब प्रकार की मनोकामना पूर्ण होती है इसा धारणा स लाग इस महापर्व को मनाते थ ।

जालोर जिले (जसवन्तपुरा परगना) के सूधा पर्वत पर श्रा भूर्भुव स्वश्वर, श्रीमालेश्वर, श्राचापश्वर, श्रापातालेश्वर, श्रीखाड़ेश्वर, श्रीदेवेश्वर, श्री आड़श्वर, श्रीभूतेश्वर, श्रा नालकण्ठ श्रा दूधेश्वर, श्रा सागश्वर, श्री दवड़ादेव ये पावन शिवस्थल है ।[२१] पाली के सोमनाथ मदिर, नीम्बेश्वर (फालना के पास) परशुराम महादेव (सादड़ी के समाप) जोधपुर के प्रसिद्ध शिवमदिरा[२२] तथा मारवाड के प्रमुख सभी शिवालया प्रत्यक गाव के समीप स्थित प्राय प्रत्येक प्रसिद्ध शिवमन्दिर म शिवरात्रि के इस पर्व को धूमधाम स मनाने की परपरा यहा आज भी विद्यमान है ।

इसके अतिरिक्त यहा गणेश चतुर्थी निर्जला एकादशी शरदपूर्णिमा अनन्तचतुर्दशी नृसिंह चतुर्दशी ऊभछठ वत्सबारस कार्तिक पूर्णिमा आदि धार्मिक पर्व भी यहा बड़े धूमधाम से व श्रद्धा-भक्ति से मनाया जाते थे । इन उत्सवों के अतिरिक्त विभिन्न पुण्य

तिथियो पर सत्सग व भजन कार्तन का आयाजन कर रात्रि जागरण किय जात थ । इस यहा रातीजगा क नाम स भा पुकारा जाता था । ये राताजगे कई बार धार्मिक उत्सवा व पवा के अतिरिक्त मनाता व शुभ मागलिक अवसरा पर भा आयाजित किय जात थ । पाराणिक व पारम्परिक दवा दवताआ क अतिरिक्त लाकन्वताआ झूझारा पितरा सतिया व भौमिया आदि की अर्भ्यर्थना म भी रातीजगा का आयोजन कर उसे एक धार्मिक उत्सव की भाति मनाते थ । एसे आयाजन निश्चित रूप स मध्यकालान जनता की धार्मिक आस्था व विश्वासा क परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए आर पनपे जिन्ह सदिया तक यहा की धर्मप्राण जनता न अपन जीवन के एक अभिन्न अग क रूप म स्वीकार किया ।

(२) सामाजिक उत्सव

जैसा कि पूर्व म उल्लिखित किया जा चुका ह कि प्रत्यक उत्सव व त्याहार में यहा धर्म की भूमिका दृष्टिगाचर होती है आर प्राय सभी त्याहारा व उत्सवा क साथ धार्मिक विचार जुड़ हुए है । चाह वे सामाजिक उत्सव हो या सस्कारजन्य उत्सव । सामाजिक उत्सव स अभिप्राय एसे उत्सव से है जा सामाजिक मान्यताआ पर आधारित होता ह और लोकजीवन की प्रवृत्ति का इसम प्रधानता होता ह । सामाजिक उत्सवा म धर्म गाण आर सामाजिक रातिरिवाज प्रमुखता लिय हाते ह आर प्रत्येक देश व जाति अपने सामाजिक परिवश में उसका आयाजन कर उल्लसित व आनन्दित हाता ह । एस हा कुछ सामाजिक उत्सव जो मध्यकालीन मारवाड़ म यहा क समाज द्वारा मनाय जाते थे उनका विवरण यहा देना समीचीन होगा ।

हाली

होला हिन्दुओं का एक बड़ा त्याहार ह जो फाल्गुन का पूर्णिमा को बसत ऋतु के आरम्भ मे मनाया जाता है । इसमे लोग एक दूसरे पर रग डालते है आर अनेक प्रकार के विनोद करत है । यह प्राचीनकाल के मदनोत्सव या 'बसन्तोत्सव का ही रूपान्तर है । इस दिन विष्णु भक्त प्रहलाद को उसक पिता हिरण्यकश्यप ने जो विष्णु का घोर विरोधी था अपना बहिन होलिका की गाद म बिठाकर अग्नि में जलवा देना चाहा था । वरदानानुसार होलिका अग्नि से जीवित बचकर निकल आयेगा और प्रह्लाद जलकर भस्म हो जायेगा एसा विचारकर राक्षस आनन्द स नाचने कूदने लगे थे परन्तु विष्णुभक्त प्रह्लाद बच गया और होलिका जलकर भस्म हो गयी । पहले इस त्यौहार को शूद्रो का त्योहार माना जाता था [२३] पर बाद में इस सब वर्ण के लोग मनाने लगे ।

हाला मारवाड का रगाला आर मतवाला त्योहार था जिस यहा के प्रत्येक गाव और ढाणा ढाणी में हर्षोल्लास क साथ मनाया जाता था । गीत गालिया फाग गीतो और लूरो की स्वरलहरिया म चग की सुरीली तान परवान चढती थी । पाराणिक आख्यान के अनुसार प्रतिवर्ष फाल्गुन पूर्णिमा का होला जलान का यह पर्व बडे उत्साह आर उमग के

साथ सार ग्रामवासी मिलकर मनात थ । क्या अमीर आर क्या गरात्र सत्र इस रगीले त्योहार म मदमस्त हा जाया करत थ । हाली स त्म दिन पूर्व हा खूटा पाचम स गावा म डडिया का गर प्रारम्भ हा जाता था । फाल्गुन मास लगत हा गाव की हर गली म जवान त्रच्च त्रूढ सभी चग त्रजात फाग गाता को गात थ । नवयुवतिया व आरत रात्रि म दर तक लूर गाता हुई घूमर लिया करता थी । हाली क इस पर्व स सबधित यहा कई लाकगात फागगीत व लूर पायी जाती है जिनम यहा क जनमानस का उल्कण्ठाआ की सहन सरल आर स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रकट हाती ह । इस मास म आरत विशेष प्रकार का आढना जिसे यहा 'फागणिया कहा जाता है बहुत हा चाव स आढ़ा करती था । हेलिका दहन क समय छाट बच्चा का ढूढन का प्रथा भा यहा प्रचलित थी । 'ढूढ का विस्तृत विवरण आगेचलकर यहा क रातिरिवाज आर मान्यताआ का वर्णन करत समय दिया जायगा । होली के दूसर दिन प्रात काल "रामासामा" करन लाग एक दूसर क यहा जाया करते थे । गाव के प्रमुख जागीरदार या ठाकुर क यहा अमल (अफीम) गाला जाता व सत्रको मनुहार दी जाती थी । इसी दिन "धूलेटी होता और लाग रग गुलाल स गर खला करत थ । इस प्रकार पूर महीन हाला की खुशी से सारा वातावरण आह्लादित हा जाया करता था ।

हाला क इस रगील आर अलत्रेले उत्सव पर पुरुष ही नही स्त्रिया भा पीछे नहा रहती था । सभा नर नारी सामाजिक बधना शिष्टता एव सभ्यता की सामाआ का अतिक्रमण कर मुक्तभाव से अपना भावनाआ को अभिव्यक्त करते थे।[२४] साहित्यिक व ऐतिहासिक स्रोता से इस उत्सव से सम्बन्धित गाना व नृत्य आदि क बार म जानकारा ज्ञात हाता ह ।[२५] कविया करणीदान रचित सूरजप्रकाश नामक एतिहासिक काव्य ग्रथ से यह पता चलता ह कि हाली क अवसर पर जोधपुर के महाराजा हाथी पर सवार होकर नगर क प्रमुख मार्गा से गुजरत थे और स्त्रिया अपने घरा की छत पर खड़ा होकर गात गाती व गुलाल व रग डालती थी ।[२६] होली क दिन जोधपुर क राजमहलो म अन्त पुर मे विशेष आयोजन के अन्तर्गत गुलाल के पानी से राजपरिवार की महिलाए महाराजा क साथ गर खला करती थी ।[२७] कई बार यह आयोजन बाहर भी होता था । वि स १८२० (१७७२ ई) म महाराजा___ बालसमद मे थे उस समय यह खेल बालसमद के बाग पर आयोजित हुआ जिसम अन्त पुर स जनाना सवारी निकली और बालसमद में रग खलने क बाद पुन राजमहल मे लौटी ।[२८]

इस प्रकार हाली का यह उत्सव राजपरिवार से लेकर यहा के साधारण वर्ग के लोगों सहित सभी क द्वारा बहुत हा उत्साह व उमग के साथ मनाया जाता था ।

दीपावली-

दापावली या दीपोत्सव हिन्दुआ के सत्रस अधिक महत्वपूर्ण उत्सवा म से एक है । मारवाड़ महोला और दापावली सबस बड़ त्याहार माने जाते है । दीपावली को यहा

गावाली जो दीपावली (दीपों की कतार) का अपभ्रंश है के नाम से पुकारा जाता है। कार्तिक माह की अमावस्या को भगवान श्रीराम लंका विजय करके जब सीता और लक्ष्मण सहित १४ वर्ष के वनवास के पश्चात् पुनः अयोध्या लौटे तब अयोध्यावासियों ने इस अवसर पर खुशी में घी के दीपक जलाये उस दिन से प्रतिवर्ष यह त्योहार इसी तिथि को मनाया जाता रहा है। दीपावली के दो दिन पूर्व से ही महालक्ष्मी की पूजा प्रारम्भ हो जाती थी। महालक्ष्मी जो धन की देवी मानी जाती है उसका पूजन होने से उस दिन को यहां "धनतेरस" के नाम से पुकारा जाता था। धनतेरस की रात्रि में घी का दीपक जलाकर कुंकुम अक्षत अबीर गुलाल सुपारी चांदी के रुपये व गृहलक्ष्मी के स्वर्णाभूषणों सहित लक्ष्मी का पूजन अपनी श्रद्धानुसार किया जाता था।

१७ वीं शताब्दी के साहित्य अमरकाव्य बारहमासा रा दूहा[29] आदि से स्पष्ट ज्ञात होता है कि दीपावली के एक दिन पूर्व ही मंदिरों महलों गलियों मकानों सभी को कस्बों व गांवों को सजा दिया जाता था।[30] दीपावली के अवसर पर घर आंगन की लिपाई पुताई व सफाई की जाती थी। दरवाजा व घर आंगन को विभिन्न माडणों से सजाया जाता था। दीपावली को स्त्री पुरुष बच्चे सभी नये कपड़े पहिनते थे और इस दिन घरों में विविध प्रकार के मिष्ठान बनाये जाते थे। घी गुड़ व गेहूं के दलिये से बनी "लापसी" को यहां बड़ा मांगलिक माना जाता था और यह मिष्ठान प्रायः प्रत्येक वर्ण के घर में अवश्य बनाया जाता था।

दीपावली के दूसरे दिन सभी लोग आपस में एक दूसरे से और सगे स्नेहियों से मिलते थे। इसे "रामासामा" कहा जाता था। औरतें भी अपने से बड़ी बड़ेरियों को पावांधोक देकर आशिष पाती थी। इस प्रकार होली व दीपावली जैसे इन बड़े त्यौहारों से पारस्परिक प्रेम और सामाजिक सद्भाव में वृद्धि होती थी।

दीपावली के दूसरे दिन औरतें प्रातः काल गाय के गोबर से गोवर्द्धन बनाकर उस पर दीपक व अनाज के दाने रखकर गोवर्द्धन पूजन किया करती थी। बड़े सवेरे उठकर सूप बजाया जाता था और बजाते बजाते घर आंगन के हर कोने में घूमती थी। इसे यहां "खाखरा खरकडाना" कहा जाता है। पुरुष अपने बैलों गायों व सारे पशुधन को रजमी (रंग विशेष) से रंगा करते थे। ये प्रथा आज भी गांवों में देखने को मिलती है।

मारवाड में दीपावली को धनवानों[31] का और होली को गरीबों का त्योहार माना जाता था। दीपावली की तड़क-भड़क आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न लोगों के यहां अधिक होती थी। गरीब और निम्न आय वर्ग के लोग अपनी हैसियत के अनुसार इस पर्व को मनाते थे। दीपावली के दूसरे दिन दवात पूजा के दस्तूर में नयी स्याही नयी कलम और नयी बही रखी जाती थी। सेठ साहूकार लोग कुंकुम के छींटे डालकर इस दिन से नया लेखा प्रारम्भ करते थे। कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया के दिन भैय्यादूज का त्योहार मनाया जाता था।

रक्षाबधन

श्रावण मास की पर्णिमा का राखी का त्योहार मनाया जाता है। भाई बहिन के पावन प्रेम और स्नेह से भरा यह त्योहार मध्यकालीन मारवाड में भी बड़े उत्साह से मनाया जाता था। प्राचीनकाल में श्रावण मास की पूर्णिमा का यह दिन बहुत शुभ माना जाता था। आचार्य अपने शिष्यों को इस दिन से वेदों का अध्ययन प्रारंभ करवाते थे। रक्षाबधन का यह त्योहार कब से प्रारम्भ हुआ। इस सम्बन्ध में कई धारणाएं यहा प्रचलित है। एक धारणा के अनुसार कुन्ती से यह प्रथा प्रारम्भ हुई जब उसने अपने पौत्र और अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के रक्षाकवच बाधा। दूसरी मान्यता के अनुसार इसका प्रारंभ देवासुर सग्राम के समय से हुआ। जब इन्द्र असुरो से पराजित हो गया था उस समय उसकी पत्नी शची ने रक्षा के लिए अपने पति के दाहिने हाथ में रक्षा पोटलिका बाधी थी। एक मान्यता यह भी है कि भगवान विष्णु ने रक्षा के लिए राजा बलि के रक्षाकवच बाधा था। आज भी ब्राह्मण राखी बाधते समय जो मन्त्रोच्चारण करते है उसमें इस प्रसग का उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार है—

यन बद्धो बलि राजा दानवेन्द्रो महाबल ।
तेन त्वामभिबध्नामि रक्ष मा चलमाऽचल ॥

रक्षाबन्धन का यह त्योहार विशेषकर भाई बहिनो व ब्राह्मणो के लिए है।[32] इस पर्व पर बहिने भाइयो की कलाई पर राखी बाधती थी और भाई बहिनो को भेटस्वरूप रुपये देता था। राखी से पहले बहिन अपने भाई की कुशलक्षेम हेतु 'वीरफूली' का व्रत भी रखती थी। रक्षाबधन क्षत्रियो को उन्हें अपने क्षत्रिय धर्म की याद दिलाने का प्रतीक भी था। अत इस अवसर पर पुरोहित और ब्राह्मण क्षत्रियो के दाहिने हाथ में राखी बाधते थे और उनसे दक्षिणा पाते थे। यह मुख्यत ब्राह्मणो का त्योहार था।[33] इस पर्व को स्थानीय भाषा मे "राखड़ी" के नाम से भी पुकारा जाता था।

मध्यकालीन राजस्थान में इस पर्व का ऐतिहासिक महत्व भी रहा है। मेवाड़ के महाराणा विक्रमादित्य की माता कर्मवती ने अपनी व राज्य की सुरक्षा हेतु गुजरात के बहादुरशाह के विरुद्ध मुगल सम्राट हुमायू को राखी भेजी थी।[34] इस प्रकार कोटा के शासक राव बुद्धसिंह हाडा की रानी अमरकुवरी कच्छवाही ने अपने राज्य की सुरक्षा हेतु जयपुर के महाराजा जयसिंह के विरुद्ध मराठा सरदार होल्कर को राखी भेजी थी।[35] इस प्रकार मध्यकाल में अपनी सुरक्षा के उद्देश्य से विधर्मी भाइयो से सहायता प्राप्त करने के उदाहरण भी मिलते है। परन्तु बहिन के स्नेहिल मनोभावो को प्रकट करने के प्रतीक रूप में व्रत रखकर भाई की मगल कामना से प्रेरित होकर राखी का यह मागलिक धागा बाधकर बहिन अपनी सुरक्षा व सम्मान का भार उसे सौपती थी।[36] राजपरिवार की राजकुमारिया रेशमी धागे से युक्त स्वर्ण निर्मित व अनेक रत्नादि से जड़ी राखी भाई के

हाथ पर बाधता था ।[३७] ससुराल जाने के बाद भी ससुराल से भाई के पास बहिन राखी भेजा करता था । राज परिवारों में राखी अपनी शान शक्ति के अनुरूप भेजी जाती थी । वि स १८५७ (१८०० ई) में जयपुर की महारानी राठौड़ा जी जोधपुरी ने अपने भाई जोधपुर के महाराजा भीमसिंह को जो राखी भेजी उसमें जड़ाऊ राखी २ जवाहर, ५ सिरोपाव एक घोड़ा पूरा सजा हुआ तथा ३८ रुपये १२ आने ३ पाई नकद भेजे गये थे ।[३८] राखी लेकर आने वाले को विदा करते समय बहिन के रुपयो के साथ उसे भी रुपये दिये जाते थे ।[३९] राखी के दिन शासक की ओर से बहु बेटिया के साथ धायो बड़ारणो आदि को भी सिरोपाव दिये जाते थे ।

अक्षय तृतीया

वैशाख शुक्ल तृतीया को यह त्योहार मनाया जाता है । सतयुग का आरम्भ इसी तिथि से माना जाता है । इस तिथि में सक्तुभाण्डो का दान सकल्प विशेष फलदायक है । अक्षय तृतीया अतिपवित्र और महान फल देने वाली मानी गयी है ।[४०] इसे यहा की भाषा में आखातीज कहा जाता है । आखातीज नामक इस त्योहार की मान्यता मारवाड़ के ग्रामीण अचल में अधिक थी । इस दिन नववर्ष के शकुन लिये जाते थे । आगन में सात धान (गेहू, बाजरा, मोठ, मूग, तिल, गवार और मतीरे के बीजो) की ढेरिया बनाकर उन पर गुड़ की डलिया रखकर कच्चे सूत के धागे से लिपटा बीच में पानी का लोटा रखा जाता । पहले पहल चिड़ी आकर जिस धान के चोच लगाती वह फसल उस वर्ष अच्छी होती और कोआ चोच डाले तो अकाल पड़ता ऐसी मान्यता थी । वर्षा और फसल के सम्बन्ध में पूर्वानुमान करने हेतु विविध प्रकार के तरीके प्रचलित थे जिनसे शुभ शकुन ज्ञात किये जाते थे । इस दिन छिपकली का दिखना, साड का ताड़ूकना, गरी का बोलना शुभ समझा जाता था । इस दिन अमल की मनुहार को शुभ व मांगलिक माना जाता था । खीच गळवाणी का भोजन[४१] बनाया जाता था । यह दिन इतना श्रेष्ठ माना जाता था कि इस दिन गाव के लोग अणपूछ्या सावा अर्थात् बिना ब्राह्मण को पूछे ही विवाह का लग्निक मुहूर्त मानते थे । इस दिन विशेषकर किसानो और खेतीखड लोगो के परिवारो में विवाह सम्पन्न होते थे और इस लग्निक मुहूर्त पर गावो में विवाह की धूम मच जाया करती थी दर्जनो विवाह एक साथ सम्पन्न होते थे ।

गणगौर

यहा के सामाजिक उत्सवो में गणगौर का प्रमुख स्थान है ।[४२] होलिका दहन के दूसरे दिन चैत्र कृष्णा प्रतिपदा से गणगौर पूजा प्रारभ होकर चैत्रशुक्ला तृतीया को समाप्त होती है । इन अठारह दिनो में गणगौर पूजा के रूप में इस त्योहार की चहल पहल रहती है । भगवान शिव को यहा गण व 'ईसर' तथा पार्वती को गौर या गवर कहा जाता था । अतः शकर पार्वती की आराधना इस गणगौर पर्व पर होती थी ।[४३] गणगौर

वस्तुत अविवाहित बालिकाआ का त्याहार रहा ह । वे अपन लिए उपयुक्त वर की प्राप्ति का कामना स गणगार का पजन किया करती था ।[४४] सुहागिन स्त्रिया भी अपने सुहाग को दीर्घायु बनाये रखन की कामना स गारी पूजन किया करती थी । इस प्रकार इस उत्सव म अविवाहित और विवाहित स्त्रिया दाना ही उड उल्लास आर उमग क साथ गणगार का पूजा किया करती था । गणगार पूजन के ललक यहा की नारी मन मे कितना अधिक था इस बात का अनुमान यहा के गणगौर विषयक गाता[४५] को देखन से सहज ही हो जाता है । गणगार के बहुत स लाकगात यहा क जनसमाज म आज भी प्रचलित ह ।

चिकनी मिट्टी का ईसर व गवर की मूर्तिया बनाकर उन्हे विविध ढग से सजाया व पूजा जाता था । कन्याए व स्त्रिया विभिन्न समूहा म सिर पर कलश रखकर समीपवर्ती तालाबो बावड़ियो आर कुआ पर जाकर पार्वती का पूजन करता थी । लौटत समय अपने अपने पात्रो म स्वच्छ जल हरा दूब व पुष्प लाकर घर पर रखी गवर की प्रतिमा का पूजा का जाती थी ।[४६] चत्रमास की तृतीया को विशेष उत्सव का आयाजन हाता आर गवर व ईसर का जुलूस निकाला जाता आर गवर की मिट्टी की मूर्ति का जल म विसर्जित करने[४७] क साथ ही यह उत्सव समाप्त हाता ह ।

इस अवसर पर कई स्थला पर मले लगते थे ओर मला व कई गावो म ऊटो व घोड़ा की दाड़ मुख्य रूप से आयोजित हाता था । यहा यह कहावत भी प्रचलित ह कि "गणगारिया न घाड़ा नी दाड़ला ता कद दौडला ।[४८] गणगार क इस उत्सव आर मले मे नारी समाज की भूमिका विशेष उल्लखनाय रहता आयी है । साधारण वर्ग की स्त्रिया विभिन्न साज शृगार के साथ गणगार की सवारी मे भाग लती थी । इस अवसर पर गाये जान वाले गीता म शिव पार्वती की भक्ति के अतिरिक्त अपन सुखी व सफल दाम्पत्य जीवन की कामना की सहज अभिव्यक्ति मिलती है ।

राजपरिवार मे गणगोर का उत्सव बहुत ही भव्य व सजधन के साथ सम्पन्न किया जाता था । गणगौर के उत्सव के लिए राजकोठार से अलग से रुपय निर्धारित किये जाते थे ।[४९] बूदी के अलावा यह उत्सव राजस्थान की प्राय प्रत्येक रियासत म राजकीय स्तर पर मनाया जाता था । जोधपुर म गणगार के उत्सव म राव सातल की मृत्यु क पश्चात् (वि.स १५४८) से ईसर की सवारी बन्द कर दी गयी थी क्याकि उन्हाने गणगार का व्रत रखने वाली तीजणियों का यवना से मुक्त कराने हेतु युद्ध किया था ओर अत्यधिक घायल हो जाने के कारण इस तिथि को उनकी मृत्यु हा गयी था ।[५०] जोधपुर म गणगार की सवारी म गवर की मूर्ति को राजसा सज धज व वस्त्राभूषणा स सजाया जाता था । इसके आगे ढोल नगारा निशान घोड़ा तुरी आदि पूरा लवाजमा चलता था ।[५१] गणगौर का यह सवारी जोधपुर के शहर के सार प्रमुख बाजारा से हाता हुई गुलाबसागर क पास लायी जाती थी । इसकी सवारी के उत्सव हतु विशेष तार स "भगतण व पातुरा का

गान व नाचने के लिए बुलाया जाता था।[52] जोधपुर के महरानगढ़ म्यूजियम मे चान्दी की बनी हुई आदमकद गणगौर की मूर्ति आज भी प्रदर्शित की हुई है। संभवत यही उस उत्सव की शोभायात्रा के रूप मे प्रयुक्त हुआ करता था। गणगौर को स्वर्णाभूषणों व कीमती वस्त्रों से सजाये जाने के कारण उसकी सुरक्षा व हिफाजत के लिए भी पूरा प्रबन्ध किया जाता था। मध्यकाल मे गणगौर की सवारी को लूटना एक साहस व शौर्य का कार्य माना जाता था और गणगौर के लूट की ऐसी कई घटनाएं उस काल मे घट चुकी थी अत सुरक्षा प्रबन्ध बहुत कड़े किये जाते थे।

गणगौर मुख्यत स्त्रियों का त्योहार था और भारत के अन्य स्थानों की अपेक्षा मारवाड मे अधिक उल्लास और उत्साह के साथ मनाया जाता था।[53]

घुडला

चैत्रमास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को घुडले का उत्सव मनाया जाता है।[54] घुड़ला मध्यकालीन मारवाड मे मनाया जाने वाला ऐसा उत्सव है जिसकी उत्पत्ति सम्बन्धी ऐतिहासिक घटना इस प्रकार है–

अजमेर का सूबेदार मल्लूखा पीपाड को लूटता हुआ कोसाणा गाव तक पहुचा और कोसाणा गाव की बालिकाए व सुहागिन जो गवर पूज रही थी उनको मल्लूखा के सैनिको ने अपहरण कर लिया। जोधपुर के राव सातल को जब यह ज्ञात हुआ तो उन्होने शीघ्र सेना तैयार कर मल्लूखा की सेना पर रात्रि मे आक्रमण किया। इस अचानक हुए आक्रमण से मल्लूखा की सेना मे खलबली मच गई और घबराकर मैदान छोडकर भाग गया। स्वय मल्लूखा को भी अजमेर की तरफ भागना पडा। इस युद्ध मे मल्लूखा का सेनापति घुड़लेखा बहुत बहादुरी से लडा तीरो से उसका सिर व शरीर बिंध गया और मारा गया। कोसाणा गाव की न केवल उन तीजणियों को छुडाया गया बल्कि घुडलेखा की पुत्री गान्दोली को भी कैद कर लाया गया। राव सातल इस युद्ध मे बुरी तरह घायल हुआ और वि स १५४८ की चैत्र शुक्ला तृतीया को उसकी मृत्यु हो गयी। इस विजय की स्मृति मे इस त्यौहार पर अनेक छिद्रो से युक्त एक घडे मे दीपक जलाया जाता है। घड़े के किनारो पर सूत के धागे लिपटाये जाते है और छोटी कुवारी लड़किया उसे सिर पर उठाकर अपनी सहेलियो के साथ द्वार द्वार पर घूमती है और घुडलो घूमेला जी घूमेला नामक गीत गाती है। चैत्र वदि अष्टमी से लेकर चैत्र शुक्ला तीज तक यह उत्सव मनाया जाता है। यह घडा चैत्र शुक्ला तृतीया को या तो फोड़ दिया जाता है या पानी मे डूबा दिया जाता है। गणगौर त्योहार के साथ घुड़ले के गीत गाये जाते है।

मकर सक्रांति-

ज्योतिष के अनुसार सूर्य की १२ राशिया है। सूर्य जब एक राशि से दूसरी राशि मे प्रवेश करती है तब सक्रान्ति होती है। इस प्रकार वर्ष मे बारह सक्रान्तिया होती हैं

जस–मकर सक्रान्ति कर्क सक्राति मष सक्रान्ति वृष सक्रान्नि आदि। इन बारह सक्रान्तिया म मकर आर कर्क सक्रान्ति प्रमुख ह जा छ महीना क अन्तर पर आता ह। मकर स सूर्य उत्तरायण तथा कर्क स दक्षिणायन हा जाता ह। पुराणानुसार उत्तरायण म दवताआ का दिन तथा दक्षिणायन म उनका एक रात पूरा हाता ह।[55] मारवाड़ म मकर सक्रान्ति का त्याहार मनाया जाता था इसे यहा की भाषा म सकरात कहा जाता था। मकर सक्रान्ति पौष माह क शुक्ल पक्ष म या माघ माह के कृष्ण पक्ष म आता ह। कृष्ण पक्ष म आन वाला सक्रान्नि यहा शुभ माना जाता थी। इसक एक दिन पहले मळमास समाप्त हाता ह। मळमास म यहा काई नया या शुभकार्य सम्पन्न नहीं किया जाता था। मकर सक्रान्ति स ऋतु परिवर्तन हाता ह। सूर्य क उत्तरायण होन स इस दिन स (१४ जनवरा स) दिन बड़ा आर रात छाटी हान लगती ह। इस तिथि पर तिल आर गुड का विशेष महत्व था आर तिल खात व तिल दान दत थे। इस दिन सूर्य की पूजा का जाता था आर नदिया व जलाशया मे जाकर स्नान किया जाता था।[56] सक्रान्ति को प्रत्येक घर में मीठ पकाड़ बनाये जात थ आर सर्वप्रथम गाया को खिलाये जाते थे। इस दिन तल जलाना अच्छा माना जाता था अत बड़े चीलड़े आर तिल के लड्डू व तिल पापड़ा बनाया जाती थी। मीठे गुलगुले (पकौड़े) चारो दिशाआ मे फेककर अपने अनिष्ठ क अन्त का टाटका भी किया जाता था। इस दिन तिलदान क अतिरिक्त एक हा प्रकार के १३ बर्तन दान म देन का भी रिवाज था जिस यहा तेरुडा कहा जाता था।

तीज

तीज का त्याहार मारवाड़ मे बड़े हर्षाल्लास के साथ मनाया जाता रहा ह। यहा यह कहावत प्रचलित रही है कि- तीज तिवारा बावड़ा ल डूबी गणगार अर्थात् ताज वापिस त्यौहारा को लेकर आयी है उनको गणगार लेकर डूब गई था। गणगार के बाद चार माह तक यहा कोई बड़ा त्याहार नहा आता आर तीज स त्याहारा का ताता लग जाता था।[57] यह त्योहार यहा साल मे दा बार मनाया जाता था। पहला श्रावण के शुक्ल पक्ष की तृतीया को आर दूसरा भाद्रपद के कृष्ण पक्ष का तृतीया को। श्रावण शुक्ला तीज का त्याहार जिसे यहा हरियाळी तीज कहा जाता था मुख्यत बालिकाओ व नवविवाहित युवतियों का त्याहार था। इस दिन घरा व बागा मे झूले डाल जाते थ। युवतिया विभिन्न प्रकार के शृगारा स सज्जित होकर इस पर्व को मनाता थी। इस मास म "लहरिया नामक ओढ़नी को बड़ चाव स आढ़ा जाता था। बरसात का ऋतु म आने वाल इस त्याहार को नारी समुदाय बहुत ही उमग व आमाद-प्रमोद के साथ मनाता था। सुरगा रुत आई म्हारे देस" आदि लोकगीता की मधुर स्वरलहरिया स सारा वातावरण बड़ा मनोरम और सुहावना हो जाता था। तीज के अवसर पर नवविवाहित स्त्रिया के ससुराल व मायके की आर से फल मिठाइया व कपड़े आदि भज जाते थे जिसे स्थानीय भाषा म

सिझारा' कहा जाता था। श्रावण की तीज स भाद्रपद की ताज अधिक महत्व का मानी जाती थी।[५८] यहा श्रावणी तीज को ल्होडी तीज' (छाटी तीज) और भादवे की तीज को बड़ी तीज या काजळी तीज [५९] कहा जाता था। इसे सातु की तीज भी कहा जाता था। इस दिन सत्तू बनाय जाते थ आर स्त्रिया क पाहर स सत्तू भेज जाते थ। इस दिन स्त्रिया व्रत रखता था दिन भर निर्जल व्रत रखकर रात्रि म चन्द्र दर्शन करक भोजन करती थी। यह सुहाग और सौभाग्य का व्रत माना जाता था।[६०] काजली तीज को भा झूले झूलने की उमग और हाड़ तीजणिया के मन म नही समाती थी और बडे हर्षोल्लास से स्त्रिया इस त्यौहार को मनाती था।

शीतला सप्तमी–

चैत्र कृष्णा सप्तमी को शीतला सप्तमा का त्यौहार मनाया जाता था। इस दिन शीतला दवी का पूजन किया जाता था।[६१] चत्र मास म ऋतु परिवर्तन होता ह सर्दी का समाप्ति और गर्मी का आरम्भ होता है अत यह समय स्वास्थ्य व आध्यात्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समझा जाता था। एस समय मे खानपान के मन्तुलन हतु एक दिन पूर्व बनाया हुआ ठण्डा भाजन किया जाता था। ठण्डे खान का ही शातला दवी को भोग चढाया जाता था। इसके अतिरिक्त कच्चा दूध दही बाजरी का खीच आर भागे हुए धान बासी रोटी का भोग शीतला दवा को चढ़ाया जाता। इसके पूजन स वष भर ठडक आर मन का सुख-शान्ति मिलती थी और शातला देवी की कृपा से चेचक व छाटी चेचक (जिस यहा बड़ी माता आरी व अछपड़ा नाम से सम्बोधित किया जाता था) की बीमारी नही होती ऐसी मान्यता थी। प्रत्येक घर मे स्त्रिया बड़े सवेरे ईट या पत्थर की दो मूर्तिया शीतला देवी के प्रताक रूप म रखकर उस पर लाल कपड़ा रखती व काजल व कुकुम की सात सात बिन्दिया बनाती थी। ठण्डा पानी उस पर उडेल कर उनका पूजन किया जाता था। इस अवसर पर जोधपुर सोजत पाली आदि कई स्थाना पर मल भरते थ। जोधपुर में शीतला पूजन सप्तमी की बजाय अष्टमी को होता था आर उस दिन जोधपुर मे कागा नामक स्थान पर मेला लगता था।

इसक अतिरिक्त मारवाड़ म गणगार क साथ हाली क तान दिन पश्चात् चैत्र कृष्णा तीज से चैत्र शुक्ला तृतीया तक लोटिये का त्याहार मनाया जाता था जिसमें होली की राख म बाय "जवारा व दूब लोटे मे दबाकर लड़किया व ओरतें प्रतिदिन गीत गाती था और गवर व ईसर की पूजा करती थी। मध्यकाल म पनपने वाला घुड़ले का त्यौहार *मारवाड़ में ही मनाया जाता था। इसी प्रकार होला के पश्चात् मारवाड़ के कई स्थानो पर* बादशाह की गर का उत्सव मनाया जाता था। इसम एक व्यक्ति बादशाह बनता हे आर दूसरा बीरबल। इन दाना की सवारी शहर क प्रमुख बाजारों से गुलाल उड़ाते निकलता था आर इतनी अधिक गुलाल बिखेरा जाता थी कि जिधर से भी यह सवारी

निक्लता था वह गढ़क परा गुलाल मे लाल हा जाती थी । जब तक यह गर नहा निकलता था हाला क बाद तब तक सारा बाजार बन्द रहता था । आज भा उसी परम्परा का निर्वाह मारवाड के पाला आर ब्यावर नामक कस्बा म हाता ह आर उसी क अनुरूप बादशाह का गर निक्लता ह । इन त्याहारा क अतिरिक्त श्रावण की अमावस्या का हरियाळा अमावस कार्तिक मास क कृष्णपक्ष का चतुर्थी क दिन करवा चाथ का उत्सव हाडा री इग्यारस आदि मनाये जाते थ । श्रावण का तीज का तालाब पूजन का उत्सव भी यदा कदा यहा मनाया जाता था जिसे यहा समन्द डावना कहा जाता था ।

पुत्र जन्मात्सव

पुत्र जन्म पर मारवाड़ म बड़ी खुशी मनाई जाती थी । मध्यकालीन परम्परा क अनुसार पुत्र जन्म वश का वृद्धि करता ह । इस विचार क अनुसार इस अवसर पर आनन्द और उत्साह प्रकट किया जाता था ।[62] इस काल म (१६००-१८०० ई) जनमानस क पटल पर पुत्री जन्म अभिशाप क रूप म बना रहा ।[63] उच्च कुल म पुत्री का जन्म न हान का आर पुत्र जन्म की कामना का जाती था । पुत्र जन्म का कामना क प्रति उनका प्रमुख आकर्षण था ।[64] पुत्र जन्मोत्सव राजघराना म बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था । पुत्र जन्मात्सव पर कई प्रकार की धार्मिक व सामाजिक क्रियाए सम्पन्न का जाता था जिनम सूर्यपूजन जलवा पूजन आदि मुख्य थे । पुत्र जन्मात्सव की खुशा म मिठाई बाटा जाती व अपन अभिजात्यवर्ग का सिरोपाव व नकद रुपये इत्यादि इनाम इकरार क रूप म दिये जाते जिन्हे लाकिक भाषा म ' नेग कहा जाता था । राजघरान म पुत्रजन्मात्सव पर दिये जाने वाले इन नेगों का उल्लेख बहिया म मिलता ह । एक उदाहरण यहा दिया जा रहा ह "महाराजकवार श्री प्रीथीसिघजी रो जनम हुया सवत् १७०८ असाढ़ सुद ५ गुरुवार र तरै खरच रुपीया ७६९ / सात सा उणानर हुवा

२८/ साना ताला २/ दाय प्रत रुपया १४/- लेखे

१/- पारायत मनोहर नु दीगीजीया

१/ वेदाया माधा लालाधर न दीया

६ / गङपान रा बदाया नु

५१०/ रुपाया पाच सो दस सुवावड़ रा शा सखावत जी नु दीरीजाया

५/ पीरोयत नु दाया

५/- बदीया नु दीया

५६/ रुपाया मोहरा ८ प्रत रुपाया ७/- लेखे दोवी गढ़ ऊपर सुता ताण नु

४९/- मारा ७/ नगदारा नु

५०/ दाई टाहा जागा री बहु न

१/ व्यास पदमनाथ नु टाका कायो तर थाला म घालाया

४/ आवल नु थाली १ लीवी

६/- थाली में घालीया

६/ सूरज रा दान कोयौ

२/ मलीयाडा रा थान पगला माडण न

४६/- रुपाया चालास छव फुटकर याचकदारा नु उछालीया न दाखणा आद रा खरच

७६९/ जुमले रुपीया सात सा उणसातर लेखे खरच हुवा।'६५

पुत्र जन्मात्सव पर रानी को प्रसूति सुवावड के ५०० रुपये[६६] और पुत्री के जन्म पर ३००/ रुपये[६७] दिये जाने का प्रावधान था।

पुत्र के सुखद भविष्य की सारी क्रियाए की जाती थी व दानपुण्य किया जाता था। राजघरानो के समान सामन्ता जागीरदारो व सम्पन्न लोगा म भी यही प्रथाए प्रचलित थी। जनसाधारण म भी पुत्र जन्म पर खुशी प्रकट की जाता थी पर उनक आयाजन इतनी भव्यता लिय हुए नहा हुआ करते थे। साधारण स्तर पर उनका आयोजन होता था। सूरज पूजन आदि की रस्म जरूर पूरा का जाता थी। पुत्र जन्मोत्सव पर गुड बाटकर खुशा प्रकट की जाती थी व गेहू व चने की गूघरी जलवा पूजन पर प्राय बाटी जाता था। समाज के कृषक व श्रमजीवी वर्ग म पुत्र जन्मोत्सव उत्साह स मनाया जाता था फिर भी सम्पन्न वर्ग आर राजघराना का भाति पुत्री व पुत्र जन्म के दस्तूर इतने भेदभावपूर्ण नही होत थे क्याकि पुत्रा भी उस वर्ग मे जीविकोपार्जन क साधन जुटाने म सहायक होती था। हा इतना भेद तो अवश्य बना हुआ था कि पुत्र जन्म पर थाल बजाया जाता व पुत्री क जन्म पर छाजला (सूप) थपथपाया जाता जो पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता का परिचायक कहा जायगा।

राजतिलक

राज्य के शासक पद पर आरूढ होने का उत्सव राजतिलक के रूप मे मनाया जाता था। राजतिलक की यह रस्म परम्परागत रूप से सम्पन्न होती थी तथा पिता की मृत्यु के पश्चात् उसका वरिष्ठ पुत्र जिसे युवराज कहा जाता था अपने पिता का उत्तराधिकारा हुआ करता था। प्राय इसी परम्परा का पालन यहा हाता था परन्तु कभी कभी विशिष्ट परिस्थितिया म इस परम्परा का उल्लघन भी दखने का मिलता है। महाराजा गजसिंह प्रथम के पश्चात् अमरसिंह राठाड वरिष्ठता क कारण नियमानुसार अपन पिता क उत्तराधिकारा थ परन्तु उनका जगह जसवन्त सिंह का राज्यगद्दी का उत्तराधिकारी बनाया गया। राजतिलक का यह रस्म विधिवत् ढग से किले म सम्पन्न हाती थी। यहा क

महाराजा विवेच्यकाल म अधिकतर मुगल मनसबदारी मे रहे थे अत प्रारम्भिक मुगल सम्राट अकबर स लेकर शाहजहा तक यहा के राज्य के उत्तराधिकारा महाराजा का अनुमादन मुगल सम्राट द्वारा खिलअत भजकर किया जाता था। कई बार राज्यतिलक का घाषणा का औपचारिकता जोधपुर शहर से बाहर हा उनके प्रवास क्षत्र म हा हो जाती थी आर बाद म जाधपुर पहुचकर राजकीय उत्सव के रूप म सम्पन्न हाता थी। मुगला का परम्परा व पद्धति अनुरूप राजतिलक के अवसर पर इस राज्य क डावी व जामणी मिसल के ताजीमी सरदार व अन्य सभी बड़े जागीरदार, राज्य क ओहदेदार आदि उपस्थित हाते थे। व नय महाराजा को नजराना भट करते थे। महाराजा की ओर से उन्ह जागार तथा इनाम इकरार इस अवसर पर प्रदान किये जाते थे।

महाराजा रामसिह के राज्यतिलक का वृत्तान्त यहा द्रष्टव्य है- सवत् १८०६ रा सावण सुद १० गुरु वृचक लगन म मोरथ टीका रा थो सु महाराजा श्री रामसिहजी गढ़ ऊपर टाक बिराजाया। टीका रा निजराणा रोकड़ जवारतो धायभाई देवकरण न दिरायो हाथा घोड़ा दरबार में राखिया धाय भाई देवकरण ने पचास हजार रो पटो हाथी घोड़ा पालखा जड़ाऊ तरवार, कटारी मोतिया री कण्ठी किलगी सिरपेच उठण बठण री कुरब दिया। सिरपाव भारी टीके बिराजता इतरा दिया—

नगारची अमिय ने मोती कड़ा ढाल तरवार, कटारी श्रीजी रा बादण रा सिरपाव।

चुड़ीगर सपुरदीन ने कड़ा मोता

चाकर चादा ने सिरपाव कड़ा माती गाव रोहलो ने सेज वरदा री।

मुसरीया न दीवाणगी म ॥ मनरूप ने खानसामा प्रो जगनाथ ने व्यास नु दोनोई खिजमत आपरा बेटा ने दिराई।

दीवाणगी म ॥ सुरतराम सिरपाव पालखा बठण री कुरब

सोवदारी म ॥ दालतराम ने था जन बैठण रा कुरब सिरपाव पालखी

खानसामा प्रो ॥ सिवकिसन सिरपाव पालखी बठण री कुरब

बखसीगीरी प ॥ खावकरण लालजी रा बटा ने सिरपाव।

व्यास पदवा व्यास दौलतचद फतचद न व्यास उदेचद सू तागार हुई।

म ॥ मनरूप आ जगनाथ ने खात्र तसला रा सिरपाव अजमेर म लिया।[६८]

इस प्रकार यह उत्सव राजकीय उत्सव ही था और उसस सम्बद्ध लागो की हा इसम सक्रिय भूमिका रहता था। आम नागरिक का इसम का विशेष भूमिका नही हुआ करती था और यह उत्सव केवल राजधाना म हा सजधज क साथ सम्पन्न होता था।

था। मध्यकाल म यहा झडूला रखने का भी रिवाज था और किसी के बहुत लम्बे समय के पश्चात पुन प्राप्ति होने पर या पूर्व सन्तान जीवित न होने पर मनोती माना जाती था। कुलदवता पितृदेवता लोकदवता या अन्य किसी दवता की अपनी धार्मिक आस्था क अनुरूप यह मनोती माना जा सकता था जिसम उसक केश नियत अवधि के पश्चात् नियत स्थान पर समर्पित किए जात थे। इस झडूला या मुडन सस्कार का उत्सव बहुत ही उत्साह आर उमग क साथ मनाया जाता था जिसमे परिवार कुनबे आर अपने रिश्तेदारा सहित कई लाग आमत्रित किय जात थे।

राजपरिवार म भी झडूले का यह सस्कार सम्पन्न होता था। महाराजा विजयसिंह के समय मे महाराजकुवर तथा श्री कीकाजी के झडूला बड़ा हुआ। उस उत्सव की विगत जनाना डयोढ़ा का वहा म इस प्रकार वर्णित है—

"बीगत उछब री

म्होरथ रो थाळ श्री राणीजी सा री डावडी लावै लारे राज मीनख गातेरणिया दोढ़ीदार उपर झराखा म व्यास प्रायत जासी बेदीया सारा हाजर हुवे जठे डावडी र माथे सु थाळ श्री नागणचिया माताजी रा सवग लेन पधराव तर जासी लगन लाख तीण रा पूजन व्यास प्रोयत करे तीण बखत मगलाचार करावै पछे पाछो थाळ मेवग लेने डावडी रे माथे धरे तरै रग राग करती माय गया।

श्री म्हाराज कवार सायब बार पधाराया लारे गातेरणिया गीत गावती थारमारा आछाड रेव सु पधारे दोढ़ादार ऊपर बाड़ी रा म्हेला मे टाका उपर श्री थापना जा रा कोठार री साळ मे फरासखाना सु बीछायत जाजम चानणी गादी तकीयो बीछायत हुई जठे बाराज पछे अगालिया न बुलावे सु तर खावर पधराव सु पला ना कतरणी सु झडूलो बडा कर न पछे पाछणा सु खावर पधराव ने पछै तातडखाना सु नाजोट भेट ने सपाड़ा रा जळ रा कळस आवे सु उमेहीज सपाडा पधरावे ने पासाख दूसरा पधरावे पछ चनण केसर सु मस्तक कर चरचठो कुकुम रो तीलक करे न मस्तक रे साथीया कर व्यास। पछ म्हाराजकवार माताजी रै पगा लाग न भेटा कर।[९४]

चूड़ाकरण और झडूला के साथ यहा शिखा रखना इस सस्कार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अग था।[९५] और यह शिखा कुल का परम्परा क अनुरूप रखा जाता था।

कर्णवध विद्या आरम्भ उपनयन वेदारम्भ आदि सस्कार केवल उच्च वर्ग व सम्पन्न वर्ग म हा किय जात थ। उपनयन सस्कार का ब्राह्मण वर्ग म विशेष महत्व था आर उपनयन सस्कार का विधि विधानपूर्वक बड़ उत्साह व भव्य आयाजन क साथ सम्पन्न किया जाता था। उपर्युक्त तथा पूर्व वर्णित सारे सस्कार राजकीय परिवार (राजवर्ग) व उच्च तथा सम्पन्न वर्ग म विशेष आयाजना क साथ सम्पन्न किये जात थ। साधारण वर्ग व निम्न वर्ग क लागा में महत्वपूर्ण कुछ सस्कार अवश्य मनाये जाते थ पर व इतन भव्य

आयोजना की बजाय साधारण स्तर पर ही सम्पन्न किय जात थ और उनक उ सवा क विधिविधान सरल व कम खर्चील हुआ करत थे । एसे सस्कारा म विवाह सस्कार सबस अधिक महत्वपूर्ण था आर प्रत्यक वर्ग म यह आवश्यक रूप स सम्पन्न किया जाता था पर इसम भी धार्मिक मान्यता का समानता हात हुए भा सम्पन्नता आर विपन्नता का भेद स्पष्ट दृष्टिगाचर हाता था ।

विवाह

विवाह का हिन्दू सस्कारा म सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा ह ।[९६] एकाकी पुरुष अधूरा समझा जाता था । विवाह एक सामाजिक आवश्यकता ही नही धार्मिक चेतना का भी प्रताक था । प्राचीन काल म ता विवाह एक यज्ञ माना जाता था और इस यज्ञ के पश्चात् ही वह गृहस्थ जीवन म प्रवेश करता था । पितृऋण स मुक्ति केवल इसस ही सभव था ।[९७] भारतीय आश्रम व्यवस्था म गृहस्थ आश्रम का अन्य तीनो आश्रम से श्रेष्ठ माना गया था क्याकि सभी आश्रम गृहस्थाश्रम पर ही आधारित थ । अत गृहस्थाश्रम म प्रवेश हेतु किये जाने वाले इस महत्वपूर्ण विवाह सस्कार के प्रति जनसाधारण का आकृष्ट हाना स्वाभाविक ही था ।

मध्यकालीन मारवाड म विवाह सस्कार हतु विविध प्रकार की अनक प्रथाए उसके साथ जुडी हुई था । हर वर्ग का अपनी कुछ विशिष्ट रातरस्म इस सस्कार क आयोजन को आर भा आकर्षक बनाता थी । धूमधाम स आयाजित हान वाल इस सस्कार म प्रत्येक जाति अपनी बिरादरी के परम्परागत नियमा का सावधाना स पालन करती था । विवाह सस्कार स सम्बन्धित यहा की कुछ प्रमुख रस्मो को निम्न प्रकार से उल्लिखित किया जा सकता ह । य रस्मे मुख्यत क्षत्रिय वर्ग म अपनाया जाता थी किन्तु इसमें उल्लिखित कई रस्म प्राय सभी वर्गा म अपनाया जाता था

विवाह से पूर्व सगाई की रस्म पूरी हाता जिसम विवाह याग्य लड़के लड़की के आपस म रिश्त की बात तय की जाती थी । यह सगाई ब्राह्मण चारण भाट या अन्य किसी व्यक्ति विशेष क प्रयास द्वारा वर व वधु पक्ष क बाच म तय करवायी जाता जिसम लड़की व लड़क की आयु कुल स्थान रूप बल गुण आदि भा दख जाते व जन्मकुण्डली के मिलने पर सगाई पक्की करने हतु कन्या पक्ष की ओर स टीक का दस्तूर सम्पन्न किया जाता था । सजातीय बिरादरी वालो व गाव वाला की उपस्थिति म सगाई का दस्तूर सम्पन्न करने के मागलिक अवसर पर अफाम (अमल) गाला जाता व गुड व बताश बाट जात थे । सगाई क दस्तूर क पश्चात् विवाह क लिए शुभ लग्न दखकर समय निश्चित किया जाता जिसे यहा की भाषा म सावा (विवाह का मुहूर्त) कहा जाता था । इसे लग्न लिखवाना भी कहते ह । इस लग्न की नियत तिथि पर वर पक्ष वाल बारात लकर कन्या पक्ष वाला क घर पहुचत थे । इसस पूर्व दाना पक्षा की आर स अपन रिश्त नाते व

सहयोगी मित्रो को कुकु पत्री लिखकर इस मागलिक अवसर पर आमत्रित किया जाता था। निकट सम्बन्धियो को व्यक्तिगत रूप से निमन्त्रण दिया जाता जिसे पीले चावल देना या बत्तीसी झलाना कहते थे। यह आमत्रित करने का यहा का अपना ढग था जो अन्य कई जातियो मे भी प्रचलित था। उपर्युक्त विवाह पूर्व की सारी रस्मे थोड़े बहुत अन्तर के साथ प्राय सभी वर्ग के लोगो मे यथासभव पूरी की जाती थी।

वर व वधू जिनका विवाह होना तय हो जाता था उसे बान बिठाया जाता। बान बेठाने का यह दस्तूर अपनी सुविधानुसार १० १५ दिन पूर्व किया जाता था तथा प्रतिदिन वर व वधू के गेहू का आटा व हल्दी को घी व पानी मे घोलकर बदन पर मलते थे। इसे यहा की भाषा मे पीठी करना कहते थे। बान बैठाने के बाद मे परिवार वाले व इष्ट मित्र वर बने लड़के को सपरिवार अपने घर आमत्रित कर मिष्ठान्नयुक्त भोजन करवाते। इसे बदोला देना कहा जाता था। बान बिठाने व बदोला देने की रस्मे अपने अपने स्थान पर लड़का व लड़की दोनो के लिए सम्पन्न की जाती थी। इसी प्रकार गणपति का पूजन कर लापसी बनायी जाती जिसे विनायक का जीमण कहा जाता था। वर के घर से वधू के लिए गहना कपड़ा लत्ता आदि सामान तेयार किया जाता जो बरी कहलाता था और दुल्हन को विवाह के समय ये पहनाये जाते थे। बरी के साथ मेवा मिष्ठान मंगलिक वस्तुए व सुगधित इत्र फुलेल माड़ आदि भी भेजे जाते जिन्हे यहा पड़ला" कहा जाता था। विवाह के एक दिन पूर्व वर व वधू के अपने अपने घरो पर इष्टदेव या कुलदेवी का पूजन किया जाता रातीजगा देते इसे "मायारान कहा जाता था। इसी रात्रि को पूजन के पश्चात् दूल्हे के दाहिने हाथ और पाव मे काकण डोरा बाधा जाता तथा एक काकण डोरा दुल्हन के लिए रखा जाता जो पडले के साथ भेजा जाता और विवाह के अवसर पर दुल्हन उसे पहिना करती थी।

अपने देवी देवताओ को नमस्कार कर दूल्हे को मोड़ बाधकर विवाह के लिए तैयार किया जाता। दूल्हे को यहा बीदराजा कहा जाता था। बीदराजा के साथ विवाहोत्सव मे शामिल होने वाले लोग भी तैयार होकर उसके साथ जाते और यह बारात का लवाजमा पूरी सजधज के साथ दुल्हन के गाव पहुचते थे। बारात का दुल्हन के गाव मे पहुचने पर कन्या पक्ष वाले दूल्हे सहित बारात का स्वागत करते इसे यहा की भाषा मे सामला कहा जाता था। सामेले के पश्चात बरी व पडला दुल्हन के लिए भेजा जाता है जिसे वधू तेल चढने के बाद पहिनती है। नियत समय पर तोरण वदन कर दूल्हे की सास जवाई को दही देती थी तथा सुहागिन स्त्रियां के मधुर गीतो के मध्य झलामल का आरती उतार कर बड़े स्वागत के साथ दूल्हे को गृह के भीतर ले जाया जाता था। विवाह मण्डप को यहा चवरी कहा जाता था। चवरी मे ही पाणिग्रहण करवाया जाता जिसे यहा हथलेवा जोड़ना कहा जाता था। विवाह मण्डप मे ब्राह्मण अग्नि की साक्षी मे दोनो को सप्तपदी

का परिक्रमा करवाना था। मारवाड म चार फर हा पड़ते ह चाथ फर के पश्चात दल्हन दल्ह का हा जाता थी। इस सम्बध म यहा ववाहिक लाकगीत की य पक्तिया द्रष्टव्य ह —

पहल फर बाबा की बटा दूज फर भुआरी भतीजी।
तीज फर मामा की भानजी चाथ फर धी हुई पराई॥[९८]

इन फरा क पश्चात कन्यादान का सकल्प किया जाता था। वधू क परिवार वाल अपना आर स यथाशक्ति कन्या का दान देत। बाद म हथलवा छूटता और पाणिग्रहण का यह रस्म पूरा हाता। दूसर दिन बारात या वर पक्ष का आर स अमल गाला जाता। नग आदि चुकाय जात थ। दूल्हा दुल्हन क साथ गठजाडा (छडा छडा) बाधकर माड वाला (कन्यापक्ष) क कुल क दवी देवताआ का जात दत थ उनका नमन करते थ। पिता अपना सामर्थ्य क अनुसार बारात का राककर पुत्रा की सीख देता। उस समय दहेज व जान जुआरी दकर विदा करता। विवाह का सारा रस्म पूरा करन क बाद दूल्हा दुल्हन सहित बारात वापिस घर लाटता जहा पर भा बड धूमधाम म उनका स्वागत किया जाता था। विविध रस्मा के साथ यह विवाहात्सव सम्पन्न हाता था।

मध्यकाल म वर व वधू का विवाह का काई निश्चित आयु सीमा निर्धारित नहा थी। सामान्यत एक पत्ना का ही रिवाज था परन्तु राजा महाराजाआ क कई रानिय व उप पत्निय व पासवान आदि भी हुआ करती था। साधारणत अपनी जाति बिरादरा म हा समान हैसियत वाल समधा क साथ रिश्ता जाड़ा जाता था। ब्राह्मण क्षत्रिय व वश्या म विधवा विवाह का प्रचलन न था किन्तु अन्य खतिहर वर्ग व निम्नवर्ग क समुदाय म विधवा विवाह भा हात थ।

राजाआ को डोळा भेजने का भा प्रथा थी जिसम राजा क लिए वधू क रूप म बिना विवाह की रस्म पूरा किए हा कन्या भज दी जाती थी।[९९] कइ बार राजा क युद्धा म व्यस्त हाने पर उसका तलवार भेजकर उसके साथ वधू क फर डालने क उदाहरण भा यहा मध्यकाल म मिलत है। इसे खाडा विवाह कहा जाता था। उस काल क राजा महाराजाओ के विवाह का वर्णन आज भी वहियो म सुरक्षित ह जिनम स कुछ का उल्लख करना समाचान हागा

"गजसिंह प्रथम का विवाह नयानगर क जाडचा का पुत्रा पमावना तथा जसलमर क रावल कला भावात का पुत्रा लाछमाद म सवत् १६७७ म सम्पन्न हुआ।[१००] महाराजा अजात सिंह का विवाह जामनगर क जाम राज लाखा का पुत्रा के साथ वि स १७७३ रा असाड सुद १४ का हुआ।[१०१] महाराजा भामसिंह का विवाह जयपुर म सवत् १८५७ म हुआ जा पुष्कर म सम्पन्न हुआ।[१०२] जयपुर आर जाधपुर राजघरान म आपस म दुतरफा सम्बध भी थ इसस यह प्रकट हाता ह कि दुतरफा सम्बध भी उस

काल म हाते थ जिन्ह यहा की भाषा म 'बेवडा सम्बन्ध" कहा जाता था। महाराजकुमार[103] और राजकुमारिया[104] के *विवाहो का वणन भी बहियो म उपलब्ध होता ह* तथा इस वणन के दौरान विवाह के समय दिय जान वाल नेगो का भी उल्लेख मिलता ह। जोधपुर राजधराने म विवाहोत्सव के समय जो दस्तूर थ उसका विशद वणन भी उपलब्ध होता है।[105] इसम हाथकाम के मुहूर्त के पश्चात विवाहोत्सव की सारी तयारी प्रारभ करन का प्रावधान था और उसके बाद विवाहोत्सव की सारी रस्म पूरी की जाती था। यथा विनायक पूजा माया उकरड़ी नेतना मायारात जागरण तेल पाठी चढ़ाइ *वाणा पधराना साभाग्यपूजा सवरा रा निछरावल, म्हेरापारा पडला परणाज र पधार न* माडा हुव परणीज न पाछा आया राईका बधाई लेने आव परणीज न पाछा आया तारण वदाज आरती अर बार रुकाई देवी देवतारा रा भेट आतिशबाजी पहरावणी तथा सारापाव आदि का उल्लेख इस बहा म मिलता है।

अन्त्येष्टि

हिन्दू क जीवन का अन्तिम सस्कार अन्त्यष्टि है जिसक साथ वह अपन ऐहिक जीवन का अन्तिम अध्याय समाप्त करता ह। इस ससार से उसक प्रस्थान करन पर उसक जीवित सम्बन्धी परलोक म उसके भावी सुख या कल्याण के लिए उसका मृत्यु सस्कार करत ह।[106] यहा यह मान्यता प्रचलित थी कि मृत्यु क पश्चात् भी आत्मा अमर रहती ह मृत्यु केवल शरीर का पार्थक्य हे इसीलिए मरणोत्तर होन पर भी यह सस्कार कम महत्वपूर्ण नही था। अत अन्य सस्कारो की भाति अन्त्यष्टि क्रियाए भी यहा बड़ी सावधानी व विधिविधान पूर्वक सम्पन्न की जाती थी। हिन्दुओ म वदिक काल स लेकर आज तक मृतक शरीर का दाह शव की व्यवस्था का मान्यतम प्रकार रहा ह।[107] शव को स्नान करान क बाद उसको बैठी हुई या लेटी हुई अवस्था मे जिसे क्रमश बकुण्ठी व रथी (साढी) नाम स पुकारा जाता था श्मशान भूमि तक ल जाते थे। स्त्री क शव को चिता पर रखने स पूर्व उसके रग बिरगे वस्त्राभूषण हटा दिये जाते थ।[108] चिता पर रखन क बाद पुत्र या निकट सम्बन्धी द्वारा अग्नि लगाई जाती था जिस यहा की भाषा म लापा देना कहा जाता था। नारियल घी चन्दन सुगन्धित पदार्थ व लक्डी (काष्ठ) से अन्त्यष्टि क्रिया की जाती थी।[109] राजा महाराजा क साथ उनकी रानिया उपपत्निया पासवान खवासे गातरणिय आदि भी उसी चिता म साथ कूद कर अपनी इहलीला समाप्त कर देती थीं जिस यहा सती होना कहा जाता था।

अन्त्यष्टि क तीसर दिन जिस यहा तीया कहा जाता था अस्थि सचयन क्रिया जाती।[110] यहा की भाषा म "फूल चुगना" कहा जाता था। मृतक की अस्थिया को किसी कपड़ म लपट कर प्राय पुष्कर या हरिद्वार म विसर्जित किया जाता था। जिनकी आर्थिक स्थिति ठीक होती वहा इन तीर्थो म अस्थि विसर्जन करवा सकता था जिसकी

हसियत नही हाती वह अपन आस पास के किसी तीर्थ रूप नदी नाले मे अस्थि विर्सजित करता वरना श्मशान म हा पड़ी रहती ।[111] मृतक के पीछ ग्यारहव या बारहवे दिन तक शोक रखा जाता जिस सातरवाड़ा कहा जाता था । एकादशा व द्वादशा तक गरुड पुराण की कथा व हरिकीर्तन किया जाता । द्वादशा क त्नि मृत्युभाज करन की परम्परा भी थी । मृत्युभोज जिसे यहा मौसर कहा जाता था । मृतक के पीछे इस अन्तिम सस्कार क विधिविधान प्रत्यक वर्ग व जाति म अनिवार्यरूप से सम्पन्न किये जाते थे । पुत्र अपने पिता का "कारज सुधारने हेतु ऋण लेकर भा यह काय करवाता था ।

मारवाड म विश्नाई ढाली तथा डोरावन्द सीरवी जाति के लोगो म शवदाह की क्रिया नही हाती । वे मृतक का गाडा करते थ ।

मेले--

मले किसी प्रदेश की सस्कृति का मूर्तमान स्वरूप हाते ह । प्रदश विशय की धार्मिक सामाजिक सास्कृतिक मान्यताए ता मला म अभिव्यक्त होती ह साथ ही आर्थिक पक्ष से भी इनका सम्बन्ध रहता है । मारवाड़ में मध्यकाल म प्रमुख रूप स निम्नलिखित मेले आयोजित हात थे ।

रामदेवरा का मेला

मारवाड राज्य म पोकरण कस्बे स १२ कि.माटर उत्तर म स्थित रामदवरा पश्चिमी राजस्थान का बडा पावन धाम माना जाता हे । रामदेवरा का यहा रुणीचा" नाम स भी जाना जाता ह । इसक निर्माता रामदेव तवर जिनकी गणना यहा क प्रमुख पाच लाक्देवताआ म गिनता होती ह उनका आविर्भाव पन्द्रहवा शताव्दी के पूर्वार्द्ध मे हुआ था ।[112] रामदेव जी ने अपना भतीजी (वीरमदेव की पुत्रा) को दहज म अपना निवास स्थान पाकरण दे दिया । विगत क अनुसार रामदव का पुत्री का विवाह राठौड़ जगमाल मालावत के पुत्र हम्मीर स किया । उसन पाकरण हम्मार का दी ।[113] इसके पश्चात् यह नया निवास स्थल वनाया जो रुणाचा आर रामदेवरा क नाम से जाना जान लगा । बाबा रामदेव ने कई चमत्कारित लीलाए की थी किन्तु उन सबम भरव दमन लीला ने यहा के जनमानस को अत्यन्त प्रभावित किया । सातलमर क कुख्यात भैरव क प्रबल उत्पात व आतक क कारण आस पास के सकडा गाव उजड़ चुक थ । मानव दहधारियो म मात्र बालकनाथ नामक एक तपानिष्ठ साधु हा भरव क आतक से प्रभावित नहा हुआ था । यहा बालक नाथ रामदेव क धर्मगुरु क रूप म प्रतिष्ठित हुए जिनका पोकरण म साधना स्थल ह आर जाधपुर म मसूरिया पहाड़ा पर उनका समाधि बनी हुइ ह । रामदव न उस कुख्यात भरव का अन्त कर लोगा का भयमुक्त किया था । वि स १५१५ म अनक लाकिक अलाकिक लाला करते हुए बाबा रामदवजा न स्वनिर्मित रामसरावर पर जीवित समाधि ले ला था ।[114] उस स्थान पर विशाल मदिर वना हुआ ह तथा उनका पावन

स्मृति म प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्लाद्वितीया से ग्यारस तक मेला भरता ह ।[११] इस मल म राजस्थान गुजरात सिंध घाट मध्यप्रदेश प्रान्तो के सहस्त्रा नर नारा भाग लेते हे तथा बाबा रामदवजा क दर्शन रामसरोवर मे मज्जन बावडा क जल का आचमन एव नगर प्रदक्षिणा करक अपने आपको कृत्य कृत्य समझत हे ।[११६]

रामदवजा क भक्तो म हिन्दू मुस्लिम उच्च वर्ग व निम्नवर्ग सभी तरह क लाग पाय जात ह । निम्नवर्ग खासकर चमार जाति म इनका मान्यता अधिक हे । भाद्रपद क महान म इस मल म अपना मनोतिया आदि क लिए, आराध्य क दर्शन हतु तथा कुष्ठ एव असाध्य रोगा क निवारण का कामना स बडा सख्या म लाग इस पावन धाम का यात्रा करत ह । मेल म तरहताली नृत्य का आकर्षक प्रदर्शन किया जाता ह जा प्रमुखतया कामड़िया लोग प्रस्तुत करत हे । विभिन्न टोलिया म रामदवजा क भजना व उनक जावन सबधा लालाआ का गान किया जाता ह । श्रद्धालु भक्ता का यह लाक विश्वास रहा ह कि रामदवजा निर्धना का धन निपुत्रा का पुत्र अधो को आख पगु लोगा को पर देत ह तथा कुष्ठ आदि भयकर रागा का निवारण करत ह । रामदवजा यहा अछूतोद्धारक क रूप मे जाने जाते हे साथ हा हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रताक भा । रामदव का हिन्दू लाकदवता क रूप मे पूजत ह ता मुसलमान उन्हे रामसा पार क रूप म पजत हे । इस प्रकार उनका गणना पारा म होता हे ।[११७]

तिलवाडा का मेला

तिलवाडा का मला चत्र कृष्णा ११ स चत्र शुक्ल ११ तक आयाजित होता था ।[११८] इस मल का आयाजन सर्वप्रथम राव मल्लानाथ क श्रद्धालु भक्ता द्वारा उनका यादगार म किया गया । राव सलखा के पुत्र राव मल्लानाथ एक वीर आर सिद्ध पुरुष था । पश्चिमा मारवाड म रावल माल क प्रति लोगो के दिला म अटट प्रेम आर विश्वास था । राव मल्लानाथ का जन्म वि स १४१५ मे हुआ था । यह बड़ा वीर आर प्रतापी शासक था । एक बार जब दिल्ली क बादशाह अलाउद्दीन खिलजा ने उस पर फाज भेजा जिसक तरह तुग (फाजा टुकड़िया क दल) थे । वि स १४३५ म मेहव का हद म लड़ाई हुई । अपन ऊपर तरह दला क साथ जा आक्रमण किया गया उसका राव मल्लानाथ न बड़ा बहादुरा स मुकाबला किया आर बादशाह का यवन फाज का मदान छाड़कर भागना पड़ा । इस प्रसग का एक कहावत यहा आज भा प्रचलित ह कि तेरह तुगा भागिया माल सलखाणा[११९] अथात् राव सलखा क पुत्र राव मल्लानाथ न मुगला क तरह दला क नाम पर हा बाड़मर क्षत्र क एक भाग का नाम मालाना पड़ा । मालानी के हा तिलवाड़ा ग्राम क पास लूना नदा का तलहटा म वि स १४५६ म राव मल्लानाथ न जावित समाधि ला ।[१२०] उस सिद्धपुरुष का यादगार म निस इस क्षत्र म दवतुल्य पूज्य माना जाता ह यह मला प्रारभ हुआ । कालान्तर म यहा पशु मेला भा आयाजित हान लगा आर यह राजस्थान का प्रमुख पशुमला ह जिसका गणना दश के प्रमुख विशाल मला म का जाना

। यह विराट पशु मेला मारवाड़ ही नहीं राजस्थान के पशुधन की कीमत आंकने व विभिन्न नस्लों के पशुओं की बिक्री व खरीद का प्रमुख केन्द्र है।

इस मेले के आयोजन की व्यवस्था मारवाड़ राज्य के शासक की ओर से की जाती थी। सिवाणा परगने के जागीरदारों के लोगों द्वारा चैत्री मेले की व्यवस्था की जाती थी। मेले का प्रबंध संवत् १६०५ में मारवाड़ नरेश के हाथों में ही था।[१२१] इसलिए इस मेले में होने वाली आमदनी भी राज्य की आय के रूप में जमा होती थी।

इस मेले को यहां मल्लीनाथ बाबा का मेला तिलवाड़ा पशुमेला, चैत्री पशु मेला आदि नामों से पुकारा जाता है। चैत्री मेले के नाम से यह ज्यादा विख्यात है।

नाकोडा का मेला

बालोतरा से १० किमी दूर नाकोड़ा नामक स्थान जैनों का प्रसिद्ध तीर्थस्थल है। जनश्रुतियों के अनुसार ३ पूर्व तीसरी सदी में नाकोर सेन और वीरमदत्त नामक दो राजपुत्र भाइयों ने नाकोर नगर और वीरमपुर नामक नगर अपने अपने नाम से बसाये और जैन धर्म से प्रभावित होने के कारण उन नगरों के मध्य सुन्दर जिनालयों का निर्माण कराया जिनका समय समय पर जीर्णोद्धार होता रहा। जैन मतानुसार उनके तीर्थंकर वीतराग होते हैं अतः वे किसी को वरदान या शाप नहीं देते हैं न ही किसी की आराधना से प्रसन्न व अप्रसन्न होते हैं अतः वीतराग की आराधना का फल प्रदान करने के लिए प्रत्येक जिनालय में एक अधिष्ठायक देव की स्थापना की जाती है। ये देव मंदिर की रक्षा भी करते हैं। नाकोडा पार्श्वनाथ मंदिर के अधिष्ठायक देव श्री नाकोड़ा भैरव बहुत प्रसिद्ध और जागृत देव माने जाते हैं।

नाकोड़ा भैरूजी के यहां यात्रियों का तांता तो प्रतिदिन लगा ही रहता है और हर पूर्णिमा को भी विशेष आयोजन होता है किन्तु प्रतिवर्ष मार्गशीर्ष वदि १० को भगवान पार्श्वनाथ का जन्म कल्याण दिवस मनाया जाता है अतः इस दिन हजारों की संख्या में उनके श्रद्धालु भक्त आते हैं। इस दिन पार्श्वनाथ की भव्य जुलूस गाजे बाजे के साथ बड़ी धूमधाम से निकाला जाता है। जिसे यहां 'नक्कारसी' के नाम से पुकारते हैं।[१२२]

नाकोडा के भैरव तो प्रसिद्ध हैं ही इसके अतिरिक्त जैनों के अन्य तीर्थंकरों के मन्दिर भी वहां बड़े भव्य और विशाल बने हुए हैं जिनमें पार्श्वनाथ, शान्तिनाथ, ऋषभदेव के मंदिर प्रमुख हैं और नाकोडा एक जैन तीर्थ के रूप में जाना जाता है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त पार्श्वनाथ मंदिर के समीप ही १६ वीं शताब्दी का चारभुजा का वैष्णव मन्दिर तथा १७ वीं शताब्दी का शिवमन्दिर भी बना हुआ है।

परबतसर का मेला

जिस प्रकार तिलवाड़ा का मेला रावल मल्लीनाथ की याद में प्रारंभ हुआ और बाद में एक विराट पशुमेले का रूप ले लिया उसी प्रकार परबतसर का मेला तेजाजी की

यादगार म प्रारभ हुआ । यह मेला परगना परबतसर मे कस्बा हाजा मे लगता था । इस मल का आयाजन भाद्रपद कृष्णा ११ से भाद्रपद शुक्ला ११ तक होता था । मले का सारा इन्तजाम राज्य का आर से किया जाता था ।[१२३]

सत्रहवा शताब्दी मे मारवाड क नागार परगन के खडनाल नामक गाव म जाट कुल मे तेजाजा का जन्म हुआ था । अपन पिता (ताहड़) का ये सातवी सन्तान थ । लाछा गूजरा की गाया का मेणा से मुक्त करन क पश्चात् घायल अवस्था मे प्रतिज्ञानुसार सर्प क सम्मुख उपस्थित हुए आर सर्पदश क कारण सुरसर ग्राम मे स्वर्गवास हुआ । जाट जाति म तजाजा को देवतुल्य मानकर पूजा की जाती है । यहा के कृषक वर्ग मे भी तेजाजा सम्बधा लाकगात बड चाव स गाय जात हे । इसके अतिरिक्त सर्पा क देवता के रूप म भी उनका पूजा का जाता हे । यहा क जनमानस का ऐसा लाकविश्वास ह कि इनके नाम का राखा (सूत्र) बाधन पर सर्पदशित व्यक्ति विष क प्रभाव स मुक्त हा जाता है । कुवर तजाजा का स्मृति म प्रतिवर्ष भाद्रपद के शुक्ल पक्ष का १० स पूर्णिमा तक परबतसर म पर्वोत्सव मनाया जाता हे आर भारा मला लगता है ।[१२४] इस मल म तजाजा क भक्त उनका यशागान करत है । हजारा नर नारी इस मले मे भाग लते हे । अधिकतर जाट जाति क लागा का तजाजी म अधिक श्रद्धा व आस्था हे ।

मडोर का वीरपुरी का मेला

मडार जाधपुर स ५ माल उत्तर म स्थित ह जहा प्राचीन मारवाड़ का राजधाना था । मडोर जो नागाद्रि नामक छाटी सी नदी के किनारे बसा ह इसका अस्तित्व बहुत पुराना ईसवी सन् का चाथी सदा क आस पास माना जाता ह । शिलालखा म मडार का नाम माडव्यपुर लिखा मिलता ह तथा माडव्यऋषि का साधना स्थला हान का भी उल्लख मिलता ह ।[१२५] इस स्थान पर नागा प्रतिहारा परमारा चाहाना इदा एव राठाडा आदि का राज्य रहा । इस एतिहासिक स्थल न सदिया स काल क उतार चढ़ाव व विभिन्न राजवशा क उत्थान आर पतन क दिन दख है ।

इस एतिहासिक स्थल पर वारपुरा का मला १७ वा शताब्दी के अन्त म प्रारम्भ हुआ । इस सम्बध म यह कथा प्रचलित ह कि महाराजा जसवतसिंह प्रथम जब आरगजब का आर स अहमदनगर म लड़न गय ता उनकी सना का भारा हानि उठाना पड़ा तब उन्हान मारवाड क वार सपता का स्मरण किया उन्हा स प्ररित हाकर युद्ध म विजय प्राप्त का । वहा स लाटकर महाराजा न वार वाथिका का निर्माण करवाया । प्रति वर्ष इसा विजय पर्व क दिन महाराजा श्रद्धा कुसुम चढ़ान सवारी के साथ मडार जाया करत थ । तभी स जाधपुर निवासा इस वारशाला का मगल एव गरिमा का विषय मानत ह ।[१२६] इस वार वाथिका का निमाण आर उसम भव्य आकृतिया का महाराज अभयसिह क द्वारा[१२७] उत्कीर्ण करवाय जान का बात भा यहा प्रचलित ह किन्तु नणसा न वि स १७०६

म इसका निर्माण महाराज अजानसिह द्वारा करवाया जाना उल्लिखित किया है[१२८] जा अधिक महा प्रतीत होता ह आर पडित विश्वेश्वरनाथ रउ [१२९] न भा इस ात को स्वाकार किया है। वम इस देवताआ की साल म अभयसिह जा के समय साता राम आदि दवताओ का मर्तिया[१३०] उत्कीर्ण करन आर महागजा मानसिंह जी क समय जलधरनाथ आर गोरखनाथ की मूर्तिया उत्कीर्ण[१३१] करने का उल्लख भा मिलता ह। डा आझा न लिखा ह कि महाराज अभयसिह के समय का ततास कराड देवता का देवालय जिसम एक ही चट्टान का काटकर १६ बडा बडी मूर्तिया बनाई गया ह जिसम ७ ता देवताओ का आर नौ जालधरनाथ गुसाई राव मल्लानाथ पाबू, रामदव हरबू, जाभा महा आर गागा का ह। [१३२] इम प्रकार यह बारवाथिका देवताआ की साल आर ततीस कराड दवताआ का देवालय वास्तव म एक हा हाना चाहिए आर इस वीर वाथिका म निर्माण की प्रक्रिया भी यहा कई महाराजाआ तक चला आर अपन अपने समय म उन्हान विभिन्न मूर्तिया उत्कार्ण करवायी।

मानव जावन के सार्थक आर सार्वभाम तत्वा स सम्पन्न वार वीथिका क इन वारो का गाथा काल एव परिस्थितिया की सामा का अतिक्रमण कर लाकमानस म आज भी विद्यमान ह। मध्यकाल म यह वीर-वाथिका क्षत्रिय जाति का वीरपूजा का प्रताक थी जिसका सम्मान पूर समाज म था। सावन माह के अन्तिम सोमवार का जो यह वीरपुरा का मला लगता है इसम सभा जाति क लाग सहर्ष भाग लेते ह। [१३३]

नागपचमी का मेला

मडार मे वारपुरी क अतिरिक्त नागपचमा का मेला प्रतिवर्ष भाद्रपद माह के कृष्ण पक्ष की पचमा का भरता ह। [१३४] मडार सभवत प्रारभ म नागवशी क्षत्रिया क अधीन रहा हागा। इसका अनुमान इस बात स किया जाता ह कि नागाद्रि नदी नागकुड अहिशल आदि स्थल जा उसक पास स्थित है उनक नाम नागवश क प्रभुत्व क हा परिचायक ह। इस दिन दव रूप म नाग की पूजा का जाती ह आर इस दिन लोग नारियल मिश्री का प्रसाद नागदवता का चढ़ात हे। मडोर म नागपचमा का विशाल मला लगता ह आर इस दिन नागाद्रि नदा आर नागकुण्ड के पवित्र जल का पूजन मज्जन भी करत है। अधिक मास म जाधपुर नगर की भागिशल परिक्रमा भा दी जाती थी जिसम जाधपुर आर मडार क आस पास के प्रमुख तार्थस्थला का दर्शन कर परिक्रमा करने वाले अपन आपका धन्य समझत थे।

शीतलाष्टमी का मेला

चत्र कृष्णा अष्टमा का शातलाष्टमी का त्याहार आता ह। उस दिन शातला देवा का पूजन किया जाता ह। इस दिन जाधपुर म कागा म मला लगता ह। कागा म शातला माता का मंदिर बना हुआ ह। मारवाड़ म कई स्थाना पर शातला सप्तमा का त्याहार मनाया जाता ह किन्तु जाधपुर शहर म यह शातला अष्टमा का मनाया जाता ह।

यादगार म प्रारभ हुआ । यह मला परगना परत्रतसर म कस्वा हाजा म लगता था । इस मल का आयोजन भाद्रपद कृष्णा ११ से भाद्रपद शुक्ला ११ तक हाता था । मेल का सारा इन्तजाम राज्य का आर से किया जाता था ।[१२३]

सत्रहवा शताब्दी म मारवाड क नागार परगने क खड़नाल नामक गाव म जाट कुल म तजाजा का जन्म हुआ था । अपन पिता (ताहड) की ये सातवी सन्तान थ । लाछा गूजरा का गायो का मणा स मुक्त करन क पश्चात् घायल अवस्था म प्रतिज्ञानुसार सर्प के सम्मुख उपस्थित हुए आर सर्पदंश क कारण सुरसर ग्राम म स्वर्गवास हुआ । जाट जाति मे तजाजा का देवतुल्य मानकर पूजा का जाती है । यहा के कृषक वर्ग म भा तेजाजा सबधा लाकगात बड चाव से गाय जात ह । इसक अतिरिक्त सर्पा क देवता के रूप म भा उनका पूजा का जाता है । यहा क जनमानस का एसा लाकविश्वास ह कि इनक नाम का राखा (सत्र) बाधन पर सर्पदशित व्यक्ति विष क प्रभाव स मुक्त हा जाता ह । कुवर तजाजा का स्मृति म प्रतिवष भाद्रपद क शुक्ल पक्ष का १० स पर्णिमा तक परबतसर म पर्वोत्सव मनाया जाता हे आर भारा मला लगता ह ।[१२४] इस मल म तजाजा के भक्त उनका यशागान करत ह । हजारा नर नारी इस मेले म भाग लत हे । अधिकतर जाट जाति क लागा का तजाजी म अधिक श्रद्धा व आस्था ह ।

मडोर का वीरपुरी का मेला

मडार जाधपुर से ५ माल उत्तर म स्थित हे जहा प्राचान मारवाड़ का राजधाना था । मडार जा नागादि्र नामक छाटा सा नदी क किनारे बसा हे इसका अस्तित्व बहुत पुराना ईसवी सन का चोथा सदा क आस पास माना जाता ह । शिलालखा म मडार का नाम माडव्यपुर लिखा मिलता ह तथा माडव्यऋषि का साधना स्थला हान का भी उल्लेख मिलता है ।[१२५] इस स्थान पर नागा प्रतिहारा परमारा चाहानो ईदो एव राठाडा आदि का राज्य रहा । इस एतिहासिक स्थल न सदिया से काल के उतार चढाव व विभिन्न राजवशा क उत्थान आर पतन क दिन दख हे ।

इम ऐतिहासिक स्थल पर वारपुरा का मला १७ वा शताब्दी के अन्त म प्रारम्भ हुआ । इस सम्बन्ध म यह कथा प्रचलित ह कि महाराजा जसवतसिह प्रथम जब आरगजब का आर स अहमदनगर म लडन गय ता उनका सेना का भारा हानि उठाना पड़ा तब उन्हान मारवाड क वार सपता का स्मरण किया उन्हा स प्ररित हाकर युद्ध मे विजय प्राप्त का । वहा स लाटकर महाराजा न वार वाथिका का निर्माण करवाया । प्रति वर्ष इसा विजय पर्व क दिन महाराजा श्रद्धा कुसुम चढान सवारी क साथ मडार जाया करते थे । तभा स जाधपुर निवासा इस वारशाला का मगल एव गरिमा का विषय मानत हे ।[१२६] इस वार वाथिका का निर्माण आर उसम भव्य आकृतिया का महाराज अभयसिह क द्वारा[१२७] उत्काण करवाय जान का बात भा यहा प्रचलित ह किन्तु नणमा न वि स १७७६

म इसका निर्माण महाराज अजातसिह द्वारा करवाया जाना उल्लिखित किया ह[१२८] जा अधिक सही प्रतीत होता ह आर पडित विश्वेश्वरनाथ रउ[१२९] न भी इस बात का स्वीकार किया ह । वस इस देवताआ का साल म अभयसिह जा के समय साता राम आदि दवताआ की मूर्तिया[१३०] उत्कीण करन आर महाराजा मानसिंह जी के समय जलधरनाथ आर गोरखनाथ की मर्तिया उत्कीर्ण[१३१] करन का उल्लख भा मिलता ह । डा आझा न लिखा ह कि महाराज अभयसिंह क समय का ततास कराड दवता का दवालय जिसम एक ही चट्टान का काटकर १६ वडी बडा मूर्तिया बनाई गयी ह जिसम ७ ता दवताआ का आर ना जालधरनाथ गुसाई राव मल्लानाथ पाबू, रामदेव हरबू, जाभा महा आर गागा की ह ।[१३२] इस प्रकार यह वारवीथिका दवताआ का साल आर ततीस कराड दवताआ का देवालय वास्तव म एक हा हाना चाहिए आर इस वार वाथिका म निर्माण का प्रक्रिया भा यहा कई महाराजाआ तक चला आर अपने अपन समय म उन्होन विभिन्न मूर्तिया उत्कार्ण करवायी ।

मानव जावन के सार्थक आर सार्वभाम तत्वा स सम्पन्न वार वीथिका क इन वारा का गाथा काल एव परिस्थितिया की सीमा का अतिक्रमण कर लाकमानस म आज भी विद्यमान ह । मध्यकाल म यह वीर वाथिका क्षत्रिय जाति की वीरपूजा का प्रताक थी जिसका सम्मान पर समाज म था । सावन माह क अन्तिम सामवार का जो यह वीरपुरी का मला लगता ह इसम सभी जाति क लाग सहर्ष भाग लत ह ।[१३३]

नागपचमी का मेला

मडार म वारपुरा क अतिरिक्त नागपचमा का मेला प्रतिवर्ष भाद्रपद माह क कृष्ण पक्ष का पचमी का भरता ह ।[१३४] मडार सभवत प्रारभ म नागवशा क्षत्रिया क अधीन रहा हागा । इसका अनुमान इस बात से किया जाता ह कि नागाद्रि नदी नागकुड अहिशल आदि स्थल जा उसक पास स्थित ह उनक नाम नागवश क प्रभुत्व क हा परिचायक ह । इस दिन दव रूप म नाग का पूजा का जाता ह आर इस दिन लाग नारियल मिश्री का प्रसाद नागदवता को चढात ह । मडार म नागपचमा का विशाल मला लगता ह आर इस दिन नागाद्रि नदा आर नागकुण्ड क पवित्र जल का पूजन मज्जन भा करत ह ।अधिक मास म जाधपुर नगर का भागिशल परिक्रमा भा दी जाता थी जिसम जोधपुर आर मडार क आस पास क प्रमुख तीर्थस्थला का दर्शन कर परिक्रमा करन वाले अपन आपका धन्य समझत थ ।

शीतलाष्टमी का मला

चत्र कृष्णा अष्टमा का शातलाष्टमी का त्याहार आता ह । उस दिन शातला दवा का पूजन किया जाता ह । इस दिन जाधपुर म कागा म मला लगता ह । कागा म शातला माता का मदिर बना हुआ ह । मारवाड़ म कई स्थाना पर शातला सप्तमा का त्याहार मनाया जाता ह किन्तु जाधपुर शहर म यह शातला अष्टमा का मनाया जाता ह ।

खेड का मेला

खेड किसी समय एक विशाल नगर और महान तीर्थ था यहा के खण्डहर और भग्न मूर्तियो के अवशेष इस बात के साक्षी है । यह स्थान मारवाड़ राज्य मे बालोतरा के समीप लगभग ८ मील पश्चिम मे लूनी नदी के किनारे स्थित है । वर्तमान मे यहा रणछोडराय का विशाल मंदिर और आस पास छोटे और जीर्ण मन्दिर है । रणछोड़राय के मंदिर के सभामण्डप मे बाहर ब्रह्मा का तथा शिव मन्दिर है । प्रत्येक पूर्णिमा को यहा मेला लगता है । माघ मास मे रबारी जाति के लोग यहा अपने बालको का मुडन सस्कार करवाने आते है ।

खेड़ापा (रामधाम) का मेला

जोधपुर नागौर सडक मार्ग पर स्थित खेडापा रामस्नेही सम्प्रदाय का तीर्थस्थल है । रामस्नेही सम्प्रदाय का प्रमुख चार शाखाओ मे से खेड़ापा एक है जहा से एक नवीन शाखा का प्रारंभ आचार्य रामदास ने किया । यहा के राममदिर मे आचार्य रामदास का चरण पादुकाए, माला तथा शरीर के वस्त्र प्रतिष्ठापित है । खेडापा शाखा के रामस्नेही श्रद्धालु जन प्रतिवर्ष यहा होली पर सम्पन्न होने वाले मेले मे भाग लेने बड़ी सख्या मे पहुचते है ।

रेण का मेला

खेडापा की भाति रेण भी रामस्नेही सम्प्रदाय की एक प्रमुख शाखा का पीठासन स्थल है । मेडता रोड से १२ मील पर स्थित यह स्थल रेणा शाखा के प्रवर्तक दरियावजी की तप स्थली रही है । यहा पर दरियावजी की समाधि भी है । समीप ही लाखोली या रामसरोवर नामक तालाब स्थित है । खेडापा सिहथल शाहपुरा की भाति रेण भी रामस्नेही सम्प्रदाय का एक आचार्य पीठ है । मारवाड मे रेण व खेडापा के रामस्नेहियो का प्रभाव यहा के स्थानीय अचलो के निवासियो पर अधिक रहा है । रेण मे मार्गशीर्ष तथा चैत्र पूर्णिमाओ को उप मे दो बार मेला लगता है । अनेक साधु सन्त व भक्त जन इन वार्षिक महोत्सवो मे भाग लेकर अपने आपको धन्य मानते है ।

बिलाडा का मेला

जोधपुर के समीप बिलाड़ा नामक कस्बे के पास की पहाड़ी राजा बलि की टकरी के नाम से पुकारी जाती है । विरोचन के पुत्र राजा बलि ने वहा ८ अश्वमेध यज्ञ किये थे । टकरी पर घृत तलाई है । बलि ने ही बाण मारकर बाणगंगा प्रकट की थी ऐसी यहा मान्यता है । बाणगंगा एक पवित्र सरोवर माना जाता है और बारहो महीने इसमे पानी भूमि के नीचे से आता रहता है । सरोवर के किनारे गगेश्वर महादेव और कालाजी तथा अन्य कई मन्दिर है । कार्तिक पूर्णिमा को यहा मेला लगता है और हजारो लोग इस पवित्र सरोवर मे स्नान करते है ।

प्रसिद्ध भक्त प्रहलाद के पुत्र दैत्यराज विरोचन का भी यह स्थान माना गया है तथा विरोचन की मृत्यु के उपरान्त उसकी नौ (९) रानियां सती हुई थी उसकी स्मृति में चैत्र मास की अमावस्या को यहां नौ सतियों का मेला भी लगता है। सीरवी जाति की कुलदेवी आईमाता का भी यहां प्रसिद्ध मन्दिर है।

बिलाड़ा से १६ मील दूर स्थित सोजत नामक कस्बा लोकधारणा के अनुसार बलि के पुत्र बाणासुर की राजधानी था जो कभी शोणितपुर के नाम से जाना जाता था। यहां पर बाणासुर की पुत्री उषा से अनिरूद्ध का विवाह हुआ था। सोजत में बालेश्वर (बाणेश्वर) महादेव का मंदिर है। माघ मास में यहां मेला लगता है। बिलाड़ा के समीप कापरड़ा गांव मे श्वेताम्बर जैनों का विशाल मंदिर है। चैत्र शुक्ला पचमी को यहां मेला लगता है। इसके अतिरिक्त समुजेश्वर (घुंघाड़ा लूनी से ४ मील) के शिव मन्दिर में श्रावण के प्रथम सोमवार को निंबोकानाथ (फालना के समीप) शिवरात्रि का मेला लगता है।

लोकदेवता पाबूजी का मेला कोळू नाम गांव में और हड़बूजी का मेला बेगहटी नामक गांव में लगता है। इस प्रकार विश्नोई सम्प्रदाय के प्रवर्तक जाभोजी का मेला मुकाम नामक स्थान पर लगता है।

मारवाड़ में स्थान-स्थान पर छोटे बड़े कई मेले लगते थे जिनमें यहां के निवासी बड़े उत्साह से भाग लिया करते थे। यही नहीं मारवाड़ के आस पास समीपवर्ती क्षेत्रों के प्रसिद्ध मेलों में भी यहां के निवासी बड़ी संख्या में भाग लिया करते थे। एसे मेलों मे पुष्कर, परशराम महादेव व गौतम (गौरम) जी के मेलो का नाम लिया जा सकता है।

मनोरंजन के साधन

सामाजिक जीवन में मनोरंजन का सदैव महत्व रहा है। जीवन की समस्याओं से उलझा मानव मानसिक शान्ति व प्रफुल्लता के लिए मनोरंजन के विविध साधनों का सहारा लेता रहा है। आमोद-प्रमोद या मनोरंजन के उसके ये साधन युग की मांग के अनुरूप बदलते और विकसित होते रहे है मध्यकाल में मारवाड़ की जनता के आमोद-प्रमोद के अपने कुछ साधन रहे है जिसके माध्यम से यहां का जन जीवन आह्लादित व आनन्दित होता रहा है। मध्यकाल की सामाजिक व्यवस्था ही कुछ इस ढंग की थी कि उस काल के व्यक्ति मनोरंजन हेतु विविध उपलब्ध अवसरों में पर्व एवं मेलों का खास महत्व रहा है। विविध भांति के पर्व उत्सव त्यौहार और मेलों के आयोजन से आमोद प्रमोद की अभिलाषा पूर्ण होती रही है। मध्यकाल के ये सांस्कृतिक महत्व के आयोजन मानव की स्वाभाविक मनोरंजन की प्रवृति को भी बहुत हद तक सन्तुष्ट करने में सक्षम थे चाहे धार्मिक महत्व के आयोजनों में यह प्रवृत्ति कम देखने में मिले किन्तु अन्य संस्कारजन्य उत्सव सामाजिक पर्व एवं पारिवारिक उत्सवों में आमोद प्रमोद की

बहुलता स हो ये सारे आयोजन बहुत उत्साह व धूमधाम से मनाये जाते थे जिनमें यहां के हर वय के स्त्री पुरुष भाग लिया करते थे। इन त्योहारों में होली दीपावली गणगौर, रक्षाबंधन अक्षयतृतीया दुर्गाष्टमी तीज आदि मुख्य थे। इसी प्रकार यहां आयोजित होने वाले विभिन्न मेले भी लोगों के आमोद प्रमोद और मनोरंजन के सुलभ और सहज साधन थे। इस अध्याय के प्रारंभ में इन उत्सवों और मेलों पर विस्तार से विवेचन किया जा चुका है।

आखेट

मध्यकालीन मारवाड़ में राजपरिवार सामन्तों व जागीरदारों के मनोरंजन का आखेट एक महत्वपूर्ण साधन था। इससे जहां एक ओर उन्हें घुड़सवारी करने गोला तलवार भाला एवं तीर चलाने आदि युद्ध के तरीकों का प्रशिक्षण मिलता था वहां दूसरी ओर व्यायाम के साथ मनोविनोद भी होता था।[१३५] आखेट में शेर चीता सूअर हिरण खरगोश तीतर बटेर आदि पशु पक्षियों का शिकार किया जाता था। राजपूतों में शिकार का प्रचलन अधिक था। उस समय शिकार भेंट करने का भी प्रचलन था। महाराजा अजीतसिंह ने बहादुरशाह को एक हिरण की शिकार भेंट की थी।[१३६] खरगोश[१३७] सूअर हिरण आदि पशुओं की शिकार का वर्णन अनेक ख्यातों में मिलता है। नरेशों और सरदारों का यह शाही व्यसन मृगया के नाम से भी संबोधित किया जाता था।

चौपड़

मध्यकालीन वार्ताओं के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उस काल में इस खेल का प्रचलन अधिक था।[१३८] यहां चौपड़ का खेल बहुत लोकप्रिय रहा है और इस खेल से लोग अपना मनोरंजन करते थे।[१३९] चौपड़ का खेल मनोरंजन का जहां साधन था वहीं कई बार इस खेल के कारण आपस में कलह और झगड़ा भी हो जाया करता था। चौपड़ के खेल के हार जीत के मसले से उत्पन्न विवाद के दौरान राव चन्द्रसेन के पुत्र आसकरण एवं उग्रसेन दोनों आपस में लड़कर मारे गये थे।[१४०] राजपूतों में चौपड़ खेलने का आम रिवाज था तथा विशेषकर नवविवाहित औरतों में यह खेल अधिक लोकप्रिय था। राजपूत लड़कियों की शादी के अवसर पर चौपड़ देने की प्रथा अब भी प्रचलित है।

चौपड़ और शतरंज की तरह खेला जाने वाला चण्डल मण्डल का खेल मध्यकाल में यहां भी प्रचलित था जो १६ व्यक्तियों एवं ६४ गोलियों द्वारा खेला जाता था।[१४१] वर्तमान पोलो खेल की भांति मैदानों में खेले जाने वाले खेलों में चौगान नामक खेल प्रमुख था। यह शाही खेल नरेशों व उच्च अधिकारियों के मनोरंजन का प्रमुख साधन था।[१४२] कुलीन वर्गीय लोगों में घुड़दौड़ प्रतियोगिता का प्रचलन भी था। इसके अतिरिक्त कुश्ती[१४३] भैंसों व मेंढ़ों की लड़ाई नृत्य आदि भी मनोरंजन के माध्यम थे।

लाकनाटक ख्याल तमाश कठपुतला रासलाला रामलाला स्वाग कच्छा घाड़ा बहुरूपिय का स्वाग आदि स भी यहा का आम जनता का मनारजन हाता था। इसक अतिरिक्त ढाला ढाढा मातीसर, चारण भाट आदि अपन काव्य स व विभिन्न कलाकार सगात सभाआ म लाकसगीत व लोकनृत्या द्वारा भी मनाविनाद किया करत थ।

सन्दर्भ सूची

१ मन्मथ राय हमारे कुछ प्राचीन लाकात्सव, पृ १२ १३
२ दवीलाल सामर राजस्थाना लाकात्सव पृ १
३ वही पृ २
४ मन्मथराय हमारे कुछ प्राचान लाकात्सव, पृ २२
५ देवालाल सामर राजस्थानी लाकात्सव, पृ २१
६ वही पृ २१
७ राणा प्रसाद शर्मा पौराणिक कोश, पृ ४४५
८ डा प्रेम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिह पृ १२८
९ राणा प्रसाद शर्मा पौराणिक कोश, पृ २६७
१० बैजनाथ, मडलनाथ सिद्धनाथ भूतनाथ आदि यहा शिव के प्रसिद्ध स्थान है।
११ राणा प्रसाद शर्मा पाराणिक कोश पृ १२९
१२ वही पृ २६५
१३ डा प्रेम एंग्रिस महाराजा अभयसिह पृ १२९
१४ राणा प्रसाद शर्मा पाराणिक कोश पृ ४६५
१५ डा प्रम एंग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२९
१६ राणा प्रसाद शर्मा पौराणिक कोश, पृ ४५८
१७ डा प्रेम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिं पृ १३०
१८ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति पृ १०८
१९ यहा ऋतु के अनुसार पाग पगडिए पहिनने का प्रचलन था।
२० राणाप्रसा‌द शर्मा पौराणिक कोश पृ ४९५
२१ डा भगवतीलाल शर्मा श्रीसुधामाता तीर्थ पृ ९२
२२ नागपचमी के वर्णन में इनका उल्लेख किया गया है।
२३ राणाप्रसा‌द शर्मा पाराणिक कोश पृ ५५४
२४ ग्रथाक ९०(३९) व ग्रथाक २०५ बारहमास रा दूहा रा शोस चौपासनी
२५. डा शशि अराड़ा राजस्थन में नारी की स्थिति पृ १०९
२६ कविया करणीदान सूरजप्रकाश, प्रथम भाग पृ ५८
२७ जाधपुर हकीकत बही न वि स १८२० ३० पृ ३२६६
२८ वही पृ ६५६६६

२ प्रथाक २०५ (३) व ३२८(२) राशो स चौपासनी जाधपुर
३० शशि अराडा राजस्था म नारी का स्थिति पृ १०७
३१ दीपावला सर्वाधिक लाकप्रिय और विशेषकर वैश्या का मुख्य त्याहार था। डा प्रम एग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२
३२ सुखवार सिह गहलात राजस्थान के रातिरिवाज पृ २१८
३३ डा प्रम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२९
४ श्यामलाल वारविनाद, भाग २ पृ ८० ३०
डा वी एस भटनागर सवाई जयसिंह एण्ड हिज टाइम्स पृ २१८
३६ शशि अराडा राजस्थान म नारा का स्थिति पां १०२
३७ जाधपुर हकाकत वहा न ४(वि स १८४१ ४५) पृ २७१
३८ न्स्तूर कौमवार, भाग-२४ (वि स १८५७) पृ ६१८
३९ जाधपुर हकीकत बहा न ४ (वि स १८४१ ४५) पृ २७२
४ राणा प्रसाद शर्मा पौराणिक कोश पृ /
४१ डा प्रम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १ /
४२ शशि अराड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति पृ १०
४३ सुखवीर सिह गहलात राजस्थान के रीतिरिवाज पृ २२०
४४ शशि अराड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति पृ १००
४ भवर म्हाने पूजण दो गिणगौर एक राजस्थानी लोकगीत
४६ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति पृ १०१
४७ सुखवीर सिंह गहलात राजस्थान के रातिरिवाज, पृ २२१
४८ वहा पृ २२२
४९ जाधपुर हकाकत बही न ६ (वि स १८५१ ५२) पृ ५५५
५० सुखवार सिह गहलात राजस्थान के रातिरिवाज, पृ २२२
५१ जाधपुर हीकत बही न ६ (वि स) १८५१ ५२ पृ ५५५
५२ जाधपुर हकीकत बही न ५ (वि स १८४६ ५०) पृ २०३
३ डा प्रेम ऐंग्रिस मराराजा अभयसिंह पृ १२७
४ सुखवीर सिंह गहलात राजस्थान के रातिरिवाज पृ २२२
राणाप्रसाद शर्मा पौराणिक कोश, पृ ५०५
६ सुखवार सिंह ग ला राजस्थान के रातिरिवाज पृ २१८
७ न । पृ १४
/ शि अरा । राजस्थान में नारी की स्थिति, पृ १०५
डा जा एन शर्मा साशल लाइफ इन मडाइवल राजस्थान, पृ १६८
६ मुखवार सिह गहलात राजस्थान के रातिरिवा, पृ २१५
६१ वही पृ २२३

६ ट्वा ाल सामर राजस्थानी लाकोत्सव पृ २६

६३ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति पृ १८

६४ वही पृ १८

६५ रीतकिरियावर री बही ग्रथाक ३५०६ पृ ७०ए राज शा स चौपासनी

६६ वही पृ ८१ बी रा.शो.स चौपासनी

६७ वही पृ ८५ बी रा.शा.स चौपासनी

६८ महाराजा रामसिंह का राज्यतिलक ग्रथाक २५/७/४५/१० पृ १ २ राज राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।

६९ रीतकिरियावर री बही (जाधपुर राज्य) ग्रथाक १३५०६ रा.शा.स चौपासनी।

७० डा राजबली पाण्डेय हिन्दू ससाकर, पृ १९

७१ वही पृ २६

७२ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ २७

७३ वही पृ ३३

७४ वही पृ ३४

७ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति, पृ १४

७ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ ५०

७७ जोधपुर सनद परवाना, बही न ७ विस १८२४ (१७६७ ई) पृ २

७८ शशि अरोड़ा राजस्थान मे नारी की स्थिति, पृ १४

७९ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार पृ ७८

८० राजस्थानी सबद कोस, प्रथम खण्ड पृ १८४

८१ रीत किरियावर री बही जोधपुर राज्य ग्रथाक १३५०६ पृ ७३ बी

८२ जनानी ड्योढ़ी बही न. ४ मरा मानसिंह पुस्तक प्रकाश फोर्ट जोधपुर

८३ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ ९४

८४ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति, पृ १४

८५ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार पृ ९९

८६ वही पृ १०३

८७ शशि अरोड़ा राजस्थान में नारी की स्थिति, पृ १४ परन्तु यहा ४० वे दिन की बजाय १० व आर १२ वे दिन नामकरण सस्कार करने का प्रचलन अधिक था।

८८ डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ ११४

८९ जोधपुर हकीकत बही, न. ३ विस. १८३५ ४० रा.रा.अ बीकानेर

९० डा राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ ११५

९१ वही पृ ११९

९२ वही पृ १२२

९३ डा जी एन शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ ११२

९४ जनानी ड्योढ़ी बही न. ४ मरा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

९५ डा. राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ १२५
९६ डा. राजवली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृ १९५
९७ वही पृ १९६
९८ जगदीशसिंह गहलोत सनिक क्षत्रिय जाति के रीतरस्म पृ १५
९९ प्रथाक १३५ ६ जोधपुर राज्य रा रीतकिरियावर बही रा. शो. सस्थान चौपासना डोळा आयारी विगत पृ ४६ ४७
१०० रीतकिरियावर री बही प्रथाक १३५०६ पृ ५३ ए, रा.शा स चौपासनी
१०१ वही पृ ४६ बी
१०२ वही पृ ५३ बी
१०३ वही पृ ५४ ए महाराज कुमार भीवसिंह का जैसलमेर विवाह हुआ सवत् १८४८ में
१०४ वही पृ ४१ ४२ सूरजक्वर बाई जी रो ब्याव
१०५ विवाह री बही न ८३२ महा. मानसिंह पुस्तक प्रकाश जोधपुर
१०६ डा. राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार पृ २९६
१०७ वही पृ ३०५
१०८ ड. जी.एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृ १२५
१०९ जगदीशसिंह गहलात सैनिक क्षत्रिय जाति क रीतरस्म, पृ २९
११० डा. जी एन. शर्मा सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान पृष्ठ १२६
१११ जगदीशसिंह गहलात सैनिक क्षत्रिय जाति क रीतरस्म, पृ ३०
११२ जन्म के विषय में मतभेन है। तुवरों के भाटों की बहियों के अनुसार इनका जन्म वि.स १४०९ कीचैत्र शुक्ला पचमी को हुआ था।
सानाराम विश्नोई बाबारामदेव सनधी लाक साहित्य पृ ११
११३ मारवाड़ रा परगना री विगत, भाग-२ पृ २९१
११४ सोनाराम विश्नोई ने अपने शोधप्रबन्ध में समाधिका समय भाद्रो सुदि एकादशी वि. स. १४४२ दर्शाया है। बाबा रामदेव सबधी लाकसाहित्य पृ ३७
११५ सानाराम विश्नोई बाबा रामदेव सम्बन्धी लोकसाहित्य पृष्ठ २२
११६ राजस्थान के लोकतीर्थ पृ ८१ ८३
११७ मरुभारती वर्ष ५ अक-३ अक्टूबर १९५७ पृ १७
११८ २२/सी/४/I सामान्य रा. रा. अ. बीकानेर
११९ ओझा जाधपुर राज्य की इतिहास प्रथम खड पृ १९१
१२० राजस्थान के लोकतीर्थ पृ ४३ ४६
१२१ जनरल फेयर २२/सी/४/I चैत्री मेला रा. राज्य अभि. बीकानेर
१२२ राजस्थान क लोकतीर्थ पृ. ८४ ८६
१२३ तेजाजी का मेला-१५/सा/२/VI रा. रा. अभि बीकानेर
१२४ राजस्थान के लोकतीर्थ पृ २२ २६
१२५ ओझा जाधपुर राज्य का इतिहास, प्रथमखड पृ २४

१२६ राजस्थान के लोकगीत पृ ६८

१२७ ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास भाग-१ पृ २५

१२८ मारवाड़ रा परगना री विगत प्रथम भाग पृ ५६६

१२९ प रऊ न निर्माण सवत १७७१ माना है।

मारवाड़ का इतिहास प्रथम भाग पृ

१३० मारवाड़ रा परगना री विगत भाग-१ पृ ५६८

१३१ वही पृ ५७४

१३२ डा ओझा जोधपुर राज्य का इतिहास भाग-१ पृ २५ २६

१३३ राजस्थान के लोकगीत पृ ६८

१३४ वही पृ ६८

१३५ डा हुकमसिंह भाटी राजस्थान के मेड़तिया राठौड़ पृ १६९

१३६ ऐतिहासिक स्कके परजान (परम्परा भाग-२४) पृ ५

१३७ एक दिन न राजा री चढ़िया आप सिकार

सामा दाठा नासता दाना घाड़ा लार ॥

राजस्थान बात सग्रह (परपरा ६ ७) पृ ३

१३८ ऐतिहासिक बाता (परम्परा भाग-१) पृ ८८

राजस्थाना बात सग्रह परम्परा भाग ६ ७ पृ ३

१३९ डा हुकमसिंह भाटी राजस्थान के मेड़तिया राठौड़ पृ १७०

१४० ऐतिहासिक बाता (परम्परा-१) पृ ८८

१४१ डा प्रेम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२५

१४२ पी एन चोपड़ा सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मुगल एज पृ ६६

१४३ डा प्रेम ऐंग्रिस महाराजा अभयसिंह पृ १२६

◆ ◆ ◆

सामाजिक मान्यताएं

प्रत्येक समाज की अपनी कुछ विशिष्ट सामाजिक मान्यताए हुआ करता हे आर य विशिष्ट सामाजिक मान्यताए उस समाज के सास्कृतिक जावन स अनुस्यूत हाता ह अत मध्यकालान मारवाड़ के सास्कृतिक अध्ययन के अतर्गत इन विशिष्ट सामाजिक मान्यताओ का विवचन करना समीचान ही होगा।

मध्यकालान मारवाड़ म पनपने वाली विशिष्ट सामाजिक मान्यताआ को निम्नलि खित बिन्दुओ के आधार पर विवचित किया जा सक्ता हे

१ शकुन

२ आचार-विचार व सामाजिक व्यवहार

३ सामाजिक धारणाए।

शकुन

ज्यातिष शालिहोत्र गणित आर चिकित्सा विज्ञान का भाति शकुनशास्त्र पर वषा का व्यावहारिक परीक्षण व अनुभूतिया का अध्ययन अपेक्षित हे। शकुनशास्त्र बड़ा हा दिलचस्प विषय रहा ह। इसम पशु पक्षी मानव वनस्पति व प्रकृति क क्रियाकलाप आदि का अध्ययन कर उनका सूक्ष्म अन्वपण तथा सही मूल्याकन किया जाता ह। किस समय किस दिशा का हवा चलने स क्या प्रभाव हागा तथा किस पक्षा के किस समय बालन पर बाय दाये खड़े रहन पर किस प्रकार का परिणाम निकलगा आदि सभी बाता से शकुन ज्ञात किय जाते है जो अनुभव चिन्तन आर मनन का गहन विषय ह।[१]

शकुन के अध्ययन हतु प्रकृति का उन्मुक्त वातावरण आर सूक्ष्म पर्यवक्षण शक्ति को प्रमुख आधार माना जा सकता है। शकुन का मध्यकालान मारवाड़ के सामाजिक जावन म अत्यधिक महत्व रहा ह और व्यापक पमान पर प्रभाव डालन वाले शकुन जस अकाल सुकाल अतिवृष्टि अनावृष्टि बामारिया व महामारिया अथवा प्राकृतिक प्रकोपा आदि के शकुन को ज्ञात करन क लिए कुछ प्रसिद्ध त्याहारा क दिवस निश्चित थे जसे अक्षय तृताया सक्रान्ति दापमालिका श्रावणी पूर्णिमा हाला आदि। इन पर्वा पर आज भा शकुन लन की प्रथा प्रचलित ह।

राजस्थानी साहित्य म शकुन विषय पर गद्य आर पद्य प्रबन्ध एव मुक्त दाना हा विधाआ म लिखा हुई प्रचर सामग्री उपलब्ध हाती ह जिसस यह ज्ञात हाता ह कि शकुन क प्रति यहा क निवासिया म बहुत आस्था था । शकुन साहित्य राजस्थानी संस्कृति की अमूल्य निधि ह जा हमार पूर्वजा क गहन चिन्तन मालिक मनन आर अनात का अनुभूति का प्रसाद ह ।[२]

शकुन प्रमुखतया दा प्रकार क होते थे अच्छे आर बुर ।[3] प्रत्यक शुभ कार्य क लिए अच्छ शकुन अपक्षित थे । य शकुन पशु पक्षिया का भाषा स भा ज्ञात किए जात थ । शकुना से भावा घटनाआ का सकत प्राप्त कर दुर्घटनाआ स बचा जा सकता था एसी लाकधारणा थी । जाधपुर क राठाड़ नरेश राव जाधा क विपत्तिकाल म यहा के प्रसिद्ध सत आर लाकदवता हरभू साखला न शकुना क आधार पर राव जाधा क भविष्य सम्बन्धी कुछ दाह कह हे । वे यहा सकुन बत्तासा[६] क नाम से विख्यात ह ।

इसी प्रकार राव मालदेव विरचित शकुनाशास्त्र[५] जिसकी प्रतिलिपि राजस्थानी शोध सस्थान चापासना क हस्तलिखित ग्रथालय व अन्य सग्रहा म सुरक्षित ह म भी यहा क प्रचलित विभिन्न शकुना का उल्लख मिलता ह । इस ग्रथ क प्रारम्भ म दिशाकाण पर विचार किया गया ह । इसके पश्चात् काला चिडा रा सकुन सगाई करण जाव तिणरा सकुन झगडा करण रा सकुन नवा वास वाज न मूल गाव छाडाज तिणरा सकुन धणा कने हालता रा सवण सहर माह सुभ सकुन व बार कुण रा विचार शार्षक क अन्तर्गत राव मालदेव न जा शुभाशुभ फल बतलाये उनका वर्णन किया गया है । राव मालदव द्वारा निर्धारित शकुन सम्बन्धा कई मान्यताए आज भी मारवाड की ग्रामाण जनता म प्रचलित ह ।

अक्षयतृतीया के शकुन

अक्षयतृतीया का वर्ष भर क फलाफल सुकाल दुकाल सम्बन्धी शकुन लेने की परम्परा रहा ह जा आज भी ग्रामीण अचल म प्रचलित ह । अक्षय तृतीया को चार घडी दिन चढने स पूर्व सब दिशाओ की आर हवा चले तो विग्रह दक्षिण पवन चल तो फसलो को हानि टिड्डी आने का आशका नऋत्यकाण का हवा चले तो बाह्य आक्रमण का भय पश्चिम आर वायव काण का हवा चले ता अच्छी फसले व लाग सुखी हो । उत्तर की हवा बहुत शुभ ईसान का हवा मगलकारी व पूर्व की हवा सुभिक्ष की सूचक तथा अग्निकाण की हवा स दुर्भिक्ष का पूर्वानुमान लगाया जाता ह । अक्षयतृतीया का मध्यान्ह क समय थाली म पानी भर कर सूर्य की परछाई दकर शकुन ज्ञात किये जाते थ— आखात्राज दिने मध्यान समय थाळी पाणी सु भर ने सूरज माह जाइज जिण दिस सूर्य राता दिस तो तिण दिस दिस विग्रह सूरज नीला पीळा दीसे तो धरता माह मादवाड़ करवरा हाइ । रसकस मुहगा । धवळा दिसे तो धान घणा हाइ सुकाळ मह घणा परजा

सुखा। धुधला दीस ता अन सुगाल माइक बाज वाइ। रजवाटीया दास ता ताड आव। स्याम दीस तो दुरभख होइ।

मकर सक्रान्ति के शकुन

मकर सक्रान्ति के पश्चात् पाचव सातव नाव आर नीसव दिन शुभकार्य का किया जाना वर्जित था। जस - सगाई विवाह न करना गढ़ घर आदि की नीव न लगाना आदि।[७]

होली के शकुन

इसी प्रकार होला जलाने के समय चलने वाला हवा के आधार पर भा शकुन ज्ञात किय जाते थे। इसस सम्बन्धित कुछ दाहे यहा द्रष्टव्य हे—

होळी र वायरा रा विचार[८]—

"पूर्व वाय वहता जाय तिडी मुसा नहच होय।
अगन कूण रो वाजे वाय लाय चाळो का लट खाय ॥१ ॥
दीखण वाय वहे असराळ, तो तु जाण नहच काळ।
नैरत कुण ए जा हुव पवन दस विधावि निपज कण ॥२ ॥
उतर वाय वहता जाय परजा दुख न देख कोय।
भला पवन जाण इसाण घर घर मगल हाय कल्याण ॥३ ॥

इस प्रकार होला दहन क समय जिस दिशा से वायु चलता थी उसे दखकर आन वाल समय के सम्बध म शकुना क आधार पर पूर्व म भविष्यवाणी की जाती था। जानकार लाग आज भा इन शकुना म विश्वास रखत ह।

दीपावली के शकुन

दीपावला के पर्व पर कवड़ाया के शकुन लिय जात थे। दापावली के दिन यदि यह कवड़ीया कमल क फूल घर हाथा घाडा फूल फूले वृक्ष पर दिखाई पड़ता ता शुभ माना जाता एव राख हड्डा चमड़ा काष्ठ सूखे तिनका क ऊपर दिखाई पड़ता ता उस बहुत बुरा माना जाता था। आर उस वर्ष फसल भी अच्छा नहा हागी एसा माना जाता था।[१०]

विभिन्न पशु पक्षिया क शकुन यहा बहुत लाक प्रचलित रहे हे तथा जनसाधारण म उनका मान्यता बहुत अधिक था। अच्छ-बुरे प्रमुख शकुना का ज्ञान ता प्राय प्रत्यक व्यक्ति का था आर अपना राजमर्रा का जिन्दगा म उसका पालन करना आम बात थी। बुरे शकुन हान पर यात्रा करना स्थगित कर दत थ—

आटो टाटा घी घड़ा छूटा कसा नार।
डावा भला न जामणा ल्याळी जरख सुनार ॥[११]

घर से प्रस्थान करत समय शुभ-मुहर्त्त आर शकुन का पुरा ध्यान रखा जाता था। सुकनावली[१२] नामक हस्तलिखित ग्रथ म कुछ शुभ शकुन इस प्रकार उल्लिखित ह—

गलन ग सुसर मगलाक मर छत्र चाभरा माड़ मस हा सुखपाल सरसव
नाणा जल कुआरा कन्या कन गमा रधा गाय गुळ अन धुआरहत अगन गावा हाता
घाड़ा मपालणा नगरनायका मनामुहागण सुहागण असी नालर, मायानस्मत हतायार,
गाडा स जुता पुत्र गा म लिया असा असा भराय रहड राछडा समत कामधन धार
हलन कुकुम गटा ताना नाणा रूपा नाणा लुहारनादीवाळा सन्यासा वस्त्र पहिरिया श्री
टाकर रा मृरत भिण मृ पग भगयाड़ा उजला पृल राना हा मगलाक वस्तु सामा माला
भला ।

इसा प्रकार घर स निकलत समय हान वाल अशुभ शकुन भा उल्लिखित ह । कुछ
उगहरण यहा द्रष्टव्य ह—

फर घर मु चालता वरा सामा माल तुसधान आटा चना कपास भागा ठाकरा
छाणा तल लाह खाता छाजार छुट कस नार, नकटा वामण भैसा गथराड़ा पसारा
नायला रागा भापा आहड़ा खटाक दुखायादान गहला गूगा वमन करता काणा ईंधण
रा भारा वाझिया काढ़िया वासन ठाला घडा खड खल मुज कम रातवता अस्रा
छानाळ विधवा वडकुआरा कायला नुआरी गाव चालना इतरा थाक नहा लणा । [१३]

इसा प्रकार खरडावा विष नावणा जस कई शकुन सम्बधा दाह यहा प्रचलित
रह है । यहा क शकुना का भलाप्रकार स समझन क लिए कुछ उदाहरण आर दने उचित
रहग जिनक द्वारा यह ज्ञात हा सक कि मध्यकालान मारवाड़ क निवासा विभिन्न
पशु पक्षिया क द्वारा शुभ आर अशुभ शकुना का किस प्रकार निर्धारण करत थ । कुछ
प्रमुख पशु पक्षिया क शकुना क सम्बन्ध म उनकी धारणा यहा उल्लिखित का जा
रही ह—

कागमाळा रो विचार

काआ नामक पक्षी अपना घासला यदि वृक्ष की पूर्व दिशा का डाला पर बनाता तो
ऐसा माना जाता था कि बहुत अच्छा वर्षा हागा पदावार भरपूर हागी तथा सब लाग
निरोग व कुशल रहग । वृक्ष पर अग्नि काण व ईसान कोण मं घौसला डालन पर दुर्भिक्ष
दक्षिण दिशा म घासला बनान पर पृथ्वा पर हाहाकार व दुर्भिक्ष नऋत काण मे घासला
बनाने पर सुभिक्ष पश्चिम दिशा म बनान पर वर्षा थोड़ी हवा अधिक फसल अच्छी नहा
पर बिमारिया फल किराण की वस्तुए महगी तथा उत्तर दिशा म घौसला बनान पर अच्छा
पदावार होने क तथा सब अनाज अधिक मात्रा मे उत्पन्न हागा । [१४]

वृक्ष का ऊपरा शिखा पर काए क धौसला बनान पर सुभिक्ष अधबिच का डाला पर
घासला बनान पर वर्षा कम व वर्षा के अभाव म फसल सूख । छाटा खेजड़ा पर (शामा
वृक्ष पर) यदि काआ अपना घौसला बनाय ता दश म उल्कापात महामारा व चारा क
उत्पात स लाग दुखा हा । सूखे वृक्ष पर यदि घासला बनाय ता राजविग्रह दुर्भिक्ष आर

महा अनिष्टकारा। मन घर मन्दिर या पवनशग पर यदि काआ घासला बनाय ता राज्य म विग्रह हागा।[१]

इस कागमाला क विचार क अन्तर्गत हा अन्त म यह दर्शाया गया है कि जा काग मनुष्य रा माथा उपर जम ता छ मास माह मरण कह अथवा छ महाना रा आउपा घट अथवा अनर्थ उपजाव।[१६] कागमाळा विचार एक अन्य हस्तलिखित ग्रथ[१७] म चित्राकार रूप म इस प्रकार दर्शाया है—
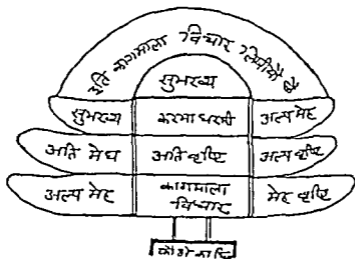
रात का राजा का शकुन

गाव के लिए प्रस्थान करते समय बाया तरफ यदि उल्लू बाल ता वह आनदवर्द्धक एव सुखकारी। दायी तरफ आर सामन बाल ता वह भयकारक। बार बार बाले ता बहुत दुखदायी। गाव म प्रवेश करत समय या वापिस लाटत समय दायी तरफ उल्लू का बोलना शुभ। घर ऊपर बाल ता सात दिन म स्त्री का कष्ट या पाड़ा अथवा लक्ष्मी की हानि करन वाला चोरी का भय। इसा सम्बन्ध म आग यह भी लिखा गया है कि घर उपर राजा गोली ने देम ता सुभ विमुसत सुभाव भला बोल ता लाभ कर अस्त्रा गर्भवना हाय ता पुत्र जनम। घर ऊपर कुरलाव ता रागाया हुव ना राग जाव अर निरागा हुव ता मर। प्रसाद गढ कूआ ऊपर बाल ता नगर देस छ मास माह उजड़ कर।"

भ्रमर रा शकुन

गाव चलत समय बाया आर भ्रमर गुजार कर ता सर्वकाय सिद्ध। बाया आर फूल पर बठ ता प्रत्यक्ष कार्य म सफलता। बठ हुए या सोते हुए शरार क अग पर यदि भ्रमर गिर ता स्नान करना चाहिय नहा ता राग हा या मृत्यु कारक। जनन समय भ्रमर यदि

शरीर क बायी ओर स्पर्श करे ता सर्वकार्य सिद्ध एव गाव चलते समय भ्रमर सिर पर गुजार कर ता शुभ ।

तीतर रा शकुन

गाव के लिए प्रस्थान करते वक्त तीतर नामक पक्षी बायी तरफ बोले ता शुभ । दायी तरफ बाले ता अशुभ उस समय गाव नहा जाना चाहिए । अग्निकोण म चौथे पहर यदि तीतर बोले तो वह शुभ ।[२०] सुकनावली[२१] व पक्षी सकुनविचार [२२] म भी तीतर पक्षी से सबधित शकुन का उल्लेख मिलता है ।

स्वान रा शकुन

गाव से प्रस्थान करते समय कुत्ता दाया या बाया मिले तो अशुभ । कुत्ता यदि दाया तरफ अपनी कोख चाटता पेट चाटता काधा खुजलाता अथवा मुह मे आहार लिए हड्डा चबाता मास सहित सामने आता दिखाई पड तो शुभ बहुत लाभकारी ।[२३] स्वान के शकुन के सम्बन्ध में निम्नलिखित दा दोहे भी द्रष्टव्य है—

स्वान कान फड़ फड़ करं अथवा बैठा खाट ।
असो देख न चालीये आगै करं उचाट ॥ [२४]

'कूकर डावो सुर करे बाल वारो वार ।
सुकन विचारो पथिया सीने राज द्वार ॥ [२५]

राती कीडी रा शकुन

लाल रग की चीटी के शकुन के सम्बन्ध में उल्लेख मिलता है कि राती कीड़ि घर माहि विचि नीकळे ता घर उजड हाए । अगन दिसि माहि कीड़ि नाकळे तो पीयु आपणो आवं । दक्षिण दिसि घर माहि जो हो तो लाभ कहै । नैऋत्य दिसि घर माहि नीकळे तो पावस आवै । पश्चिम दीसि घर माहि नीकळे तो स्त्री लाभ कह । वायदिसि घर माहि नीकळे तो स्त्री पर रत्त होइ । उतर दिसी राती कीडि घर माहि नीकळे तो सपदा होइ । ईसानदिसि देह छूटे । [२६]

साड रा शकुन

बेल बाये पाव अथवा बाय साग से जमीन खोदता दिखाई पड़े तो बहुत लाभकारी । दाये पाव या दाये सीग स खोदता दिखाई दे ता अशुभ । बायी आर बाल तो शुभ । गाव चलते समय बेल भैसा एक साथ चरते हुए दिखाई पडे तो कष्टकारा बहुत अशुभ ।[२७]

इसी प्रकार घाडा सियार, हरिण भसा बकरी ऊट वानर, कनखजूरा भेड़ धामणी छछूदर, मकडी आदि क शकुन भा सकुनमाला[२८] नामक ग्रथ मे लिखित है । इसक अतिरिक्त सर्प[२९] छिपकली[३०] क शकुन भी मिलत हे । विभिन्न पशु पक्षियो से सम्बन्धित शकुन अनकानेक शकुन ग्रथो व फुटकर तथा स्फुट दाहो मे भी उपलब्ध होते

हे । बुलबुल मार, कुरज बतक चीत्ररी आड कबूतर, वृकडा काग खाल्हाड़ा नीलग्रास सूवटा तातर, कमेडा बाज तातर आदि पक्षिया स सम्बन्धित शकुन पक्षा शकुन विचार सुकनावला चक्र३२ तथा सुक्नावली [33] नामक ग्रथा म विस्तार स दशाय गय ह । इन ग्रथा म राजस्थानी के साथ उर्दू फारसा शब्दा की बहुतायत ह । चक्र बनाकर विभिन्न पक्षिया क शकुन सम्बन्धी विवरण का एक चार्ट क रूप म तथा बाद म प्रत्यक पक्षा का अलग अलग वर्णन प्रस्तुत किया गया ह । एक उदाहरण द्रष्टव्य ह–

बुलबुल जनावर

सानसार करा नफा हायगा सीर म भलाई ह गुमान न करो । जहमत हायगा । चलणा न करा । धीरा रहा । ईजमाना म जोरू करणी । पगपत थाडा हायगा । बुजणा नही गजा क दर खुलगा दील खुसा रहगी । कुछ भला होयगा । सहा असीरार करा । महकम होयगा । बहुत दिन रहेगा नहा । गई वसत कतेक दिन पाछ आखर पावगा । लाभगा सही ।भली खबर आवगा । नहछ स हा भला हायगा । भला ह । फायदा बहुत हायगा । दावा झगड़ा करा तेरा फत हायगा । पुत्र लाभ होयगा । बड़ी उमर पावगा । भुढा दाकग हायगा । खरीद करो पण ईस सोद नफा माफ्क हायगा सहा । [34] विभिन्न परिक्षाआ (परछाआ) के बार म जानवर के अनुसार वर्णन दिया गया ह ।

मध्यकालीन मारवाड म शकुन ज्ञात करन क विभिन्न तरीके थ । इनम स कुछ ता बहुत लाकप्रिय व लाकप्रचलित हान के कारण साधारण जनता म भा लाकप्रिय थ । ऐस तराक सरल व अनुभव पर आधारित थ । कुछ जटिल व गणिताय अका क आधार पर ज्ञात किय जात थ एस शकुन पासा कवली" [35] के नाम स जाने जाते थ जिसम प्रत्यक अक क आग उस शकुन का नाम तथा उसका फलादश लिखा हुआ मिलता ह । सरलतम तरीका म स एक रुचिकर व मनाविनादपूर्ण शकुन ज्ञान का एक तराका यहा द्रष्टव्य ह जो चाडा सकुन ज्ञान" के नाम से जाना जाता ह । इसम चिड़ा का एक चित्र बना हाता ह जिसम उसक विभिन्न अगा पर १ स लकर ७ तक अक लिख होत ह आर उन सब अका के परिणाम अलग स समीप लिखे हुए हात ह–

"सुकनावली" चाच दुख ॥ १ पाख मरणसार ॥ २ कठ हुवै मिलाप ॥ ३ सुगा भाजन ॥ ४ गुजधन ॥ ५ मस्तक आव राज ॥ ६ ज उलखणा पर वायड ता पथा आव आज ॥ "[३६]

इसा प्रकार छाक क सम्बन्ध म भा कई ग्रथा म शकुन का वणन किया गया ह। सकुनशास्त्र [३७] नामक हस्तलिखित ग्रथ म छीक विचार क अन्तर्गत विभिन्न दिशाआ म छाक हान क शकुन दर्शाय गय है। कुछ पक्तिया द्रष्टव्य है

उत्तर छाक महा बलवन्ती इसान धन दाय तुरती।
पूरब छाक महरण सनेही अगन छीक जुर आवै देही।
दखिण छाक कर विवहारा नरतकुण भर भडारा।
पछिम छीक कर बहुहाण वायव छाक मिलावै आण।
आकास छाक पाव न धरणा घर बैठा ही आनद करणा। [३८]
"छीक आरज्या घट न रती इम भाखै निज गोरख जती। [३९]

ग्राक सकुन [४०] नामक एक अन्य ग्रथ म यह उल्लख किया गया ह कि बैठत मान नामत द्रव्य गाड़त नय कपड़े पहिनते छाक का शुभ माना है। ग्राम स प्रस्थान करन समय दाया तरफ का छाक शुभ कुशल पाठ पीछै का छीक कार्य सिद्धि का घातक दाहिना आर सम्मुख छाक भयकारक व अशुभ। गाव घर में प्रवेश करत समय दाहिना छाक शुभ। स्नान करन आपधि का सेवन करते बीज बोते आखट जाते जीमन के पश्चात् चलू करन समय वस्त्र बेचते आदि अवसरो पर बायी ओर पाठ पीछ की छाक शभ। छाकविचार [४१] नामक ग्रथ में प्रत्यक वार क अनुसार आठा दिशाओ [४२] का छाक पर विचार किया गया ह आर उसके शुभ व अशुभ परिणामा का उल्लख किया गया है।
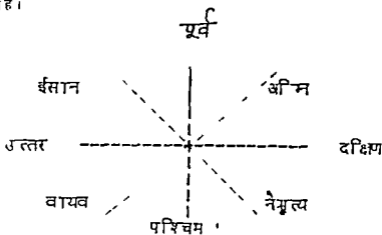
शरीर के विभिन्न अगो के फुरकने के आधार पर भी शकुन ज्ञात करने की धारणा यहा प्रचलित थी जिसमे नेत्रो के फरकने सम्बन्धी मान्यता यहा जनसामान्य मे अधिक व्याप्त और सर्वज्ञात थी। इसमे भी पुरुष की दाहिनी आख तथा स्त्री की बायी आख का फुरकना शुभ समझा जाता था। आख के विभिन्न स्थानो से फुरकने के शकुन फऊ हस्तलिखित ग्रथो मे चित्र बनाकर भी दर्शाये गये है। एक चित्र द्रष्टव्य है—

१ अस्त्री आख फुरकण - विचार

२ पुरुष आख फरकण विचार

आख की भाति शरीर के अन्य अग फरुकने का विचार भी फ़, ग्नलिखित ग्रथो मे देखने को मिलता है। पुरुष का दाहिना अग और स्त्री का बाया अग फरुकना शुभ माना जाता था।[6] सिर फरुकने पर धरती का लाभ ललाट फरुकने पर स्थान (थानक) वृद्धि, नाक फरुकने पर मित्र मिलन पीठ फरुकने पर प्रिय से मिलन पेट फरुकने पर अच्छा भोजन गाल फरुकने पर स्त्री सयोग कान फरुकने पर नया बात व अच्छी बात सुनने को मिले ऊपर का होठ फरुकने पर कलह नीचे का होठ फरुकने पर सयोग तथा पुट्ठ फरुकने पर पराजय प्राप्त हो। मुट्ठी फरुकने पर पराजय कन्धे फरुकने पर शत्रु विजय स्त्री के स्तन फरुकने पर पुरुष लाभ छाया (हृदय) फरुकने पर हानि पाव फरुकने पर स्थान लाभ पगतली फरुकने पर यात्रा योग हो। पुरुष के दायी और के अग स्त्री के बाया और के अगो का फरुकने का शुभ परिणाम होता है ऐसी मान्यता थी।[6] अग फरुकने का विवरण ग्रथो मे मिलता रहता[6] तथा कुछ परिगान के साथ अग फुरकण विचार[4] नामक ग्रथ मे भी दिया गया है। कुछ पंक्तिया द्रष्टव्य है "नाबगा हाथ फुरक ना रात

मान व्यापार लाभ लाखमा प्राप्त हाउ । मित्र मिल राजगार ग्रथ सुख उपन काल्हा जानम स फायन्ग हाय मीठा भानन मिल । पग फुरक ता वाहण मिल । घाड़ा ऊठ मिल । अगूठा फरक भला । धनलाभ व्यापार लाभ आगुला फुरक खाटा । उनासा मिल । काप फुरक ता थन रा हाण कर सहा । हाथ रा हथला फुरक ता हरख कर खुसा हाय मन चात्या काम साध हायें । डाबा हाथ रा हथला फुरक ता चात्या उपन । [48] इस प्रसग म पाहर व तिथि क अनुसार अग फुरकन का विवरण भा दिया गया ह ।

स्वरोदय

शकुन जानन या ज्ञात करन का एक तराका स्वरादय भी था जिस यहा सरोदा क नाम स जाना जाता था । नासिका स निकलन वाल उछाछ (उश्वास) का चन्द्र व सूरज दा सुर म बाट कर शकुन ज्ञात करने का भा यहा परम्परा रही ह । यह तराका कुछ हा जानकार लागा तक सामित था जा सूर्य व चन्द्र स्वर क लक्षणा क आधार पर शुभ कार्य करत थ उदाहरणार्थ द्रष्टव्य ह—

चन्द्र स्वर म किय जान वाल कायां का उल्लख इस प्रकार मिलता ह जात्रा दान पुण्य करान वावा काज । समाइ कान । वसतर पहराज । सोना रूपा घडावान पहरीज । सरव वसत सग्रह काज । गुरदरसण जाहज । मत्र साधना कान । धन सग्रह कीज । भणाज भणावीज भाइग्रध सु मालान साधुजण र दरसण जाइन । रसायण काया क्रिया । कवा गात कहाज । हर मादर दवरा कान । पहला हळ जातराज । अन सारू खाड खिणाज । सून खड़ बसता काज । भाइग्रध रा मनावणा काज । ससार माह ऐसा सुभ काम चन्द्र र सुर काज । [50]

इसा प्रकार सर्य क स्वर म निम्नलिखित कार्य करन शुभ माने गय हे ससत्र लाह लीजे । ससत्र बाधाज । जुवा रमाज । चारा कान । वाहण गज घाडा लीज । रथ लाज रथ बंसीजे । भपज काज । भूप घात काज । सानान काज । मथून भाग कीज । कुकरम काम भूत वार, वंताल साधना पड़गधार उदेग झगडो सूरज सुरकीज । समद जाहाज नाखीजे नदा तीरीज । बावड़ी म पेसीन सूरज र सुर एता काम काज । [51] बाया स्वर चन्द्र का तथा दाया स्वर सूरज का माना जाता ह ओर इन स्वरा म किए जान वाल निर्दिष्ट कार्या का उल्लख चरणदास जी का सराधा [52] आदि अन्य कई हस्तलिखित ग्रथो म भी मिलता हे । महादवजा रो सरादा [53] नामक ह ग्रथ म स्वर क लक्षण (चन्द्र व सूर्य) *शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष के शुभाशुभ स्वराघात विपरीत तत्वभद गरभभेद आदि पक्षा पर भा विचार किया गया हे । इस प्रकार यह ज्ञात हाता ह कि विवेच्यकाल म यहा क* निवासिया म स्वरोदय क शकुन भा प्रचलित थ तथा विहित कार्या क करन क लिए शुभ समय क साथ स्वरा क शुभाशुभ शकुन का भा महत्व था ।

इनक अलावा वादलो व नक्षत्रा का स्थिति विभिन्न तिथिया म वायु का विशिष्ट दिशा म बहना विभिन्न प्राणिया का गतिविधिया व व्यवहार क अनुसार वर्षा व सुकाल

अकाल का पूर्वानुमान करने की परम्परा भी रही है। बारह महीनों में प्रत्येक मास के अनुसार उसके फलों का उल्लेख किया गया है उसे यहां की लौकिक भाषा में 'आरख' नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण चैत्र मास के आरख की कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य है—

"चैत्र मास टाइ दिन सारा आठम चवदस पख अधारा।
पूरब दस जो वाजे मूल वरसे मह न भीजे धूल॥
दखण दिसतो वाज घणा वदत डावा घाडा तणा।
पछम दस जो वाजे वाइ अनधन बहुला थाइ॥"[५४]

नक्षत्रों के आधार पर भी शकुन ज्ञात किए जाते थे। नक्षत्रों संबंधी ये शकुन भी वर्षा सूचक पूर्वानुमान ज्ञात करने में सहायक थे और यहां के कृषक समाज व कृषि कार्य में लगे लोगों में अधिक प्रचलित थे। इस विषय की कई लोकोक्तियां व दोहे आज भी यहां के ग्रामीण क्षेत्र में लोकप्रिय हैं। दो दोहे द्रष्टव्य हैं

मिगसर वाइ न वजाया रोहण तपी न जेठ।
कत म बाध झूपड़ा रहस्या उडला हेठ॥[५५]
श्रावण वद एकादसी तीन नषत्रा ताळ।
कृतिका कर करवरा रोहिण करै सुगाळ॥[५६]

विभिन्न समय में आकाश में बादलों की स्थिति को देखकर भी कृषक लोग वर्षा सम्बन्धी अपने पूर्वानुमान लगाते थे जो वर्षा के अनुभव के आधार पर सूक्ष्म परीक्षण के पश्चात जांचे परखे होते थे और उतने ही उनके परिणाम अभीष्ट होते थे

आसाढ़ सुद नवमी के बादल के बीज।
काठ खेर खखरकर, राखो बळद न बाज॥[५७]
चैत्र मास जो बीजलहाव धुर वैसाखा केसू थाव।
जेठमास जो जाइ तपतो कुण राखे जलहर वरसतो॥[५८]

विभिन्न जीव जन्तुओं की क्रियाओं को देखकर भी वर्षा सम्बन्धी एवं अन्य पूर्वानुमान व शकुन ज्ञात करने की परम्परा विवेच्यकाल में प्रचलित थी। इस संदर्भ में कुछ उदाहरण यहां द्रष्टव्य हैं—

इडा टाटोडी तणा अणी भूमि दिस होय।
जेता मास सुवरसणा कहै गमेता सोय॥
कीड़ी कण आसाढ म घर ले जाती न्हाळ।
अन दुरभिख यू जाणिय तृणि लाया तिण काळ।
काडी घर मा कण लाया बाहरि नाप आणि।
वरस भला वरखा घणा भाला कह्या वखाणि॥

कर घुसाळा घर विच चिडिया आगम जाणि ।
च्यार मास नीझर झर नहा मह का हाणि ॥
आगम सूझ साढ कू दाडा थळा अपार ।
पग पटक बस नहा माधव आवणहार ॥
टोळ मिल क कावळया आय थळा बसत ।
दिन चोथ क पाच म वरखा कर अनत ॥
राभ गाय बिन बाछरू गळता माझल रात ।
आरही उल्कापात यू दुरभख मरण विख्यात ॥ [५९]

इसा प्रकार कुछ वृक्षा व वस्तुआ क स्वरूप म हान वाळ परिवर्तन क आधार पर भा शकुन ज्ञात किय जात थ ।—

चरण बारा अरु खजडा सकल पान झडि जाय ।
सुभ आरख आसाढ का राजा सम्या सराय ॥
लूण गळ साबण गळ नवसाग्र गळ जाय ।
जद असवारा मह अता कमा न राख काय ॥
कागद फुट लेखना स्याहा अेळा जाय ।
लहा आगम यू लख महा मुगता हाय ॥

सुकाल दुकाल क पूर्वानुमान आर वर्षा सम्बन्धा पर्व जानकारा दन वाल विवच्य कान्त के डक भड्डुला क सवादात्मक शकुन ग्रथ अनक रूपा म लिपिबद्ध मिलत ह जस डक भड्डुला रा दूहा भडलीपुराण[६०] भड्डुलापुराण[६१] भाडलापुराण[६२] भाड्डुला नायक[६३] भडली के पद[६४] आदि । इस शकुन ग्रथ का बहुत सा प्रतिया यहा क ग्रथालया म उपलब्ध हाता हे । इसस इस ग्रथ का लाकप्रियता तथा उसम लाक निहित गहरा आस्था का पता चलता ह ।

यहा का अधिकाश जनता कृपि कार्य म सन्नद्ध था आर कृपि भा सिचाई क साधना क अभाव म प्रकृति पर अधिक आधारित था । वर्षा का यहा अन्यधिक महत्व समझा गया आर सभवत इसालिए बाल्ला हवा आदि प्राकृतिक उपादाना का विशिष्ट स्थिति एव नक्षत्र विशप म हान वाल विभिन्न प्राकृतिक घान मधाता क आधार पर सृजित यहा का कृपि व वर्षा सम्बन्धा मान्यताआ का लाक समान म बहुत अधिक प्रचलन रहा इस आशय का अनक लाकाक्तिया आज भा यहा क समाज म प्रचलित ह जा कृपि कार्य म लग लागा का पूर्वानुमान लगान का एक अनुभव सिद्ध तराका ह । शकुन का वणन करन समय इस पर पूर्व म विचार किया जा चुका ह अत यहा उदाहरणार्थ कुछ लाकाक्तिया दा जा रहा ह—

१ आन्रा बाज बाय झपडी झोला खाय।

२ आन्रा भर खात्रा पुनरवसु भर तळाव।

३ काळ करडा सुकाळे जेर।

४ गाव माय तो कतरा राहा माय सियार।

य जा रोव ता पड गाहत्यारा काळ॥

५ ज उरस उनरा ता धान न खाव कतरा।

६ ज पुरवा लाव पुरवाई ता सखा नदिया नाव चलाई।

७ नाडा टाकण बळद त्रिकावण त क्य चाला आध सावण

८ अक हळ हत्या दा हळ काज।

तान हळ खता चार हळ राज॥

९ दा सावण दा भादवा दो कातिक दा मा।

ढाढा ढारा वचकर, नाज बिसावण जा॥

१० नीत्रोळी सक नाव पर, पड न नींच आय।

अन्न न नापज अेक क्ण काळ पडगा आय॥

११ मघा को बरसणा अर मा का पुरसणा बरात्रर

१२ जठा बाजरा अर भावी पत राम दे तो पाव।

१३ जठ सरीखा वाजरा कातिक सराखा जा कानी।

१४ बुध बावणा सुक्कर लावणी।

१५ काता का म क्टक त्रारात्रर।

(राकास)

किमा नय या शुभ कार्य क लिए प्रस्थान करत समय जा मुहूर्त न्खा जाता था उसम वार, नक्षत्र तिथि याग सभा का ध्यान रखा जाता था। इस सत्रध म साता वारा क शकुन पर भा विस्तार स विवचन हुआ ह जिसका उल्लेख सात वार विचार [६५] नामक ह लि ग्रथ म मिलता ह। प्रस्थान क लिए साम गुरु व शुक्रवार तथा अश्वनी पुष्य रवता मूल मृगशिर, पुनर्वसु, ज्यष्ठा अनुराधा नामक नक्षत्र शुभ समझ जात थ। चतुर्थी नवमी अष्मा चतुर्दशा व अमावस्या य तिथिया प्रस्थान क लिए अशुभ व निषधकारा माना जाता था। इसा प्रकार "मासत सक्राति न्नि त्रठा तिथि न्धाए न्नि वत्नना त्राना तिथ सर्व भला। वियाग सिद्धयाग सर्वक याग इत्यान्कि उत्तम याग भला। यमघट यमन्ाट न्ानामुखा भद्रा कुलिक मृत्युयाग, क्कयाग इण याग न चाला। न्सिामूळ सन्मुख

टाळवो। [६६] वर्जित तिथियो व योग दिशासूल आदि का भी प्रस्थान के समय ख्याल रखा जाता था।

मध्यकालीन मारवाड के समाज मे प्रचलित विभिन्न शकुन जिन्हे यहा (सवण) नाम से पुकारा करते है उनक बारे म 'साण सग्रह [६७] नामक ग्रथ म विस्तार स उल्लेख हुआ ह। इस ग्रथ म रोजगार क लिए प्रस्थान करते समय सगाई विवाह कटक (आक्रमण) वेद (युद्ध) वाहर चढने धाड़ा डालने मार्ग म डरा डालने धान मोल लेन व बेचन सुभिक्ष दुर्भिक्ष व फसल सम्बन्धा शकुन इत्यादि कई शकुना पर विस्तार से वर्णन मिलता है। य शकुन चाधरा माटिल द्वारा मुहणात नणसी को लिखाये गये थ। मुहणोत नणसी मध्यकालीन इतिहास का बहुत बड़ा (समकालीन) विद्वान था।

सूर्य व चन्द्रग्रहण

विभिन्न मासा म चन्द्रग्रहण व सूर्यग्रहण के फलाफल क सम्बन्ध मे व्याप्त धारणाए एव ज्योतिष सम्बन्धी मान्यताए लाक समाज म किस प्रकार घुला मिली थी उसका एक उदाहरण यहा द्रष्टव्य ह

माह रे महने ग्रहण हाइ ता धमचक्र होइ सूर्यग्रहण व्हेतो हिंदू नें भूडा चन्द्रग्रहण व्हता मुसलमान न पीड़ा उपज। फागण मास ग्रहण व्हेता मेह बिरषा घणा कर। चत्र मास ग्रहण हुवै समा दुर्भक्ष पड। वसाख मासे ग्रहण व्हेता अछात जात पीडा होई। तिल गुड़ कपास गाऊ घणा नीपज। जठ सर्व बसत सुहगी होई पण चापदा पाडा कर। असाढ मासे ग्रहण हाई ता षड मडल वृषा करे। कद मूल विनास कर। सावण घोड़ा राग ग्रभ विनास कर अन मुहगा करे वायरा घणो बाजे काळ पड़। भादवा अस्राया रा ग्रभ विनासे। आसाज चारू मास घणी वृषा राजा प्रजा सुखा रहे। काता साख रा चोथा भाग हर समो करवरा होई। मगसर अन सग्रह कीज तीजै मास लाभ तिगुणा। पाह र महाने ग्रहण हाइ ता अग्नि रा चाळा करै। [६८]

इसी प्रकार ग्रहण सम्बन्धा कुछ मान्यताए लाकोक्तियो के माध्यम से भी ज्ञात हाता ह। जस—

"गुरु दिन ग्रहण जे होय ता दुगणो लाभ चामास।
रूपो तल कपास घी सग्रह करजा तास॥

इन धारणाआ व मान्यताआ का कृषक व व्यापारा वर्ग क लिए विशष महत्त्व था आर व उसा क अनुरूप अपने कृषि कार्य व व्यापारिक कार्या को सम्पन्न करते थ।

सामाजिक लाक व्यवहार सम्बन्धा कहावता म यहा क समाज का ना सास्कृतिक रूप अभिव्यक्त हुआ ह वह निश्चित हा मध्यकालान मान्यताआ व धारणाआ का समुचित दिग्दर्शन करान म बड़ा सहायक ह। लाक व्यवहत आचार विचार का ज्ञान भी

इन कहावता स होता है साथ ही मानव स्वभाव का जाचन परखने क उनक अनुभव समाज म अपक्षित मानव मूल्या आर जन आकाक्षाआ का जा प्रतिपादन हुआ ह वह उस युग के सामाजिक जीवन का एक जावन्त झाकी प्रस्तुत करता ह । विवच्य युग का मानव भाग्यवादी[69] था फिर भी पुरुषाथ[70] आर समयाचित[71] कार्य करन म विश्वास रखता था । मितव्यता व मृदुभापिता व अतिथि सत्कार[73] एव शिष्टाचार[74] का जीवन म हाना आवश्यक समझा जाता था ।

'शकुन की भाति यहा क निवासिया क आचार विचार आर सामाजिक व्यवहार म भा उनका अपनी कुछ निजा मान्यताए थी जा उनक अनूठ साम्कृतिक जावन क पहलू का अभिव्यक्त करता ह । इन सामाजिक मान्यताआ पर ही लाक समाज का आचार विचार आर लाकव्यवहार आधारित था । सामाजिक मान्यताआ का विवच्यकाल म प्रावल्य का एक कारण यहा का असुरक्षित जीवन रहा ह । धार्मिक आस्था जादू टाना तत्र मत्र यहा तक कि कई प्रकार क अधविश्वासा म आस्था भी इसा का परिणाम था अपन अमगल का चिन्ता से ग्रसित मध्यकालीन मारवाड के लोकजीवन म विभिन्न दवी देवताआ लोकदेवताआ का पूजा के साथ पितृ पूजा भा प्रचलित थी ।

पितृपूजा

पितृ पूजा का मानव धर्म म विशेप स्थान है इसालिए मानव समाज का प्राचान पद्धति म मृत पूर्वजा क प्रति सम्मान प्रकट करन व उनका सन्तुष्ट करन का भावना अथवा उनका पूजा करन का प्रवृत्ति पाइ जाता ह ।[75] पितृ शब्द का अर्थ पुत्रादि सन्तान को जन्म दने वाला तथा उसकी रक्षा करने वाला व्यक्ति । साधारणतया परिवार से सम्वद्ध हाने क कारण इसका प्रयाग पिता के रूप म होता ह । सस्कृत भाषा के इस शब्द का बहुवचन म पितर रूप बनता ह । पितर शब्द का अर्थ - पिताआ क अतिरिक्त किसा व्यक्ति क मृत पूर्वजा क लिए भा होता है आर इसके अनुसार व्यक्ति के प्राचान सभा पूवजा का अर्थग्रहण हाता ह ।[76] मध्यकालीन मारवाड़ म भा पितृ" शब्द का यही अर्थ प्रयुक्त होता था तथा यहा की स्थानीय भाषा म तो मृत पूर्वजा के लिए पितर शब्द का हा प्रयाग होता रहा ह ।

पितृपूजा एक पारिवारिक पूजा पद्धति ह किसा एक परिवार के सदस्य ही अपने पितरा की पूजा के लिए एकत्रित हात ह । पड़ासिया या जाति के अन्य लोगा का अपक्षा एक कुटुम्ब तक हा उसका विस्तार सीमित होता ह । पितृपजा का प्रचलन आदिकाल स रहा ह और देवताआ का पूजा का प्रादुर्भाव भा कई विद्वान पितृपूजा से हुआ माना मानत ह ।[77] पितृपूजा का उत्पत्ति क बार म कई कारण रह हाग किन्तु मुख्य कारण मृतको स भय और मत्रापूर्ण भाव ह । मध्यकालान मारवाड़ म भी पितरपूजा क प्रचलन क पाछ य दाना भाव प्रमुख रह है । पूवजा के अनिष्ट के भय स तथा परिवार क सदस्या का

कुशलक्षम का कामना हतु अपन पितरा की त्वा का भाति पजा अर्चना करन म हा मध्यकाल क लाग अपना मगल मानत थ ।

मध्यकालान मारवाड क प्राय सभा वगा म पितृपजा का प्रचलन था । पितृपूजा अपन पूर्वजा का स्मरण पजन श्रद्धा व कृतज्ञता का सूचक ता था हा साथ हा यह मान्यता भी प्रचलित था कि पित्रा का कृपा स वश का वृद्धि समृद्धि का अखण्डता व वैभव का विपुलता बना रहता ह । इस प्रकार पित्रा का वश सवर्धन का दवता माना गया आर विवाह पुत्र जन्म आदि मागलिक अवसरा पर अनिष्ट निवारणार्थ ओर मगल कामना क लिए पूर्वजा का सम्मान दना वाछनाय समझा जाता था । निम्न आर साधारण वर्ग मे हा नहा राजघराना म भा पितृपूजन का प्रथा विद्यमान था जिसका उल्लख हम उस काल का बहियो म उपलब्ध हाता ह । एक उदाहरण यहा द्रष्टव्य ह

बहुजी कसट तर रुपाया १/ अक बहुजा रा हाथ लगाय साराथाय मल । कवर जनम तर पाच सुखडा खाणा बणाइज न बासला खाणा र माहे लापसी गुळकर राध न चला रा ठीया पूज नै अक कासा थारा रा पुरसाजे न सवासणा जामाइज । आ कर सावर ना पातर रा हे । दस दिन नालेर सुपारा बाटी जे आर कर म्यापरजा पातर रा ह । [७९]

पितरा क लिए रातजगा व श्राद्ध का भा आयोजन किया जाता था । पितरा म स्त्रा पर्वजो का पजा पितराणा क नाम स का जाता था आर मृत सात बडाजा व लाडीजा [८१] पितराणा क नाम स जाना जाती था ।

भोमिया व जूझार

पितरा क अतिरिक्त भामिया व जझार का पूजा मध्यकाल म यहा प्रचलित था । भामिया वह व्यक्ति कहलाता था जा गाया का रक्षा क लिए अपना बलिदान द देता था तथा बाद म उसक इस पुण्य कृत्य क लिए स्मरणाय व लाकमानस मे दवत्व का प्रताक बन कर पूज्य बन जाता था । इसा प्रकार जझार वह कहलाता था जा युद्ध म अदम्य साहस व उत्साह स वारगति का प्राप्त करता एस दिवगत याद्धा का दवतुल्य पूज्य मानकर उसक कुलवाल उसका पूजन करत थ । जझारा का पूजा यहा की वार परम्परा व वारभावना का प्रताक था तथा राजपूता व ब्राह्मणा म ज्यादा प्रचलित था । [८२] जझार का भा पितरो का भाति वश सवर्धन आर पुत्र का कामना पण करन वाला दवमाना जाता था । [८३] जझार व भामिया का पूजन भा मागलिक अवसरा पर अवश्य किया जाता था एव इन अवसरा पर इनक लिए रातजगा का आयाजन भा किया जाता था । जझार व पितरा का पूजा कुल व परिवार तक सामित था जबकि भामिया का पजा गाव व आस पास क क्षत्र तक सामित था ।

कुल दवी

प्रत्यक गनपन जाति का अपना कुलदवा हआ करता था जस राठाड़ा का कुलदवी नागणाचया गाडा का जामहा आर भाटिया का सागायाना व दिगनाज चाहाना का

आशापुरा आदि । इसी प्रकार विशिष्ट तुष्टमान देवियो[८४] का भी विभिन्न कुलो म इष्टदेवी ओर कुलदेवी के रूप मे पूजन करने की परम्परा रही है । हर मागलिक अवसर पर कुलदेवी की पूजा आवश्यक थी । कुल की रक्षा व वृद्धि समृद्धि के लिए ही नही मध्यकालीन सामरिक परिस्थितिया मे शक्ति के नवसचार व प्रेरणा हेतु कुलदेवी का पूजन बहुत ही महत्वपूर्ण था । विवाह पुत्र-जन्मोत्सव व कुलदेवी के रातीजगे व नवरात्रि म उनके पूजन की विशेष व्यवस्था की जाता थी । प्रत्येक राजपूत के घर मे कुलदेवी के लिए एक निश्चित स्थान[८५] बना होता था । आज भी इस परम्परा का प्रचलन देखने को मिलता हे व कुछ परिवारो म अब भी नियमित धूप-दीप करने की प्रथा प्रचलित हे । इन देवियो की मान्यता महाजन ब्राह्मण तथा अन्य जातियो के लोगो मे भी रही हे । देवियो की स्तुति मे लिखा गया जैन लेखको का भी काफी साहित्य मिलता हे ।

सती

मारवाड़ के मध्यकालीन समाज मे अपने पति की मृत्यु के पश्चात् उसके शव या पगड़ी आदि के साथ चिता म जीवित जलने वाली पत्नी सती'[८६] के नाम से जानी जाती था । मध्यकाल के लोग स्वेच्छिक आत्मदाह करने वाली सती को देवा या देवी का अश मानकर उसकी पूजा अर्चना करते थे । समाज के लोग अपनी अपने परिवार की मगलकामना या अपना मनोकामना की पूर्ति हेतु भी सती का पूजन करते थे । स्थान-स्थान पर सती के मन्दिर व छतरिये आदि बनी हुई है उन्ह पवित्र स्थान माना जाता है ।

सत व पीर

मध्यकालीन मारवाड़ मे विभिन्न देवी-देवताओ कुलदेवी सती जूझार, भोमिया आदि के पूजन के साथ साथ सतों पीरो औलिया फकीर दीन दरवेशों की आराधना करने के प्रसग भी विविध स्फुट आख्यानों मे उपलब्ध होते हैं जिससे यह ज्ञात होता है कि ईश्वरीय अश व सिद्ध तथा चमत्कारी महात्मा के रूप म इनको यहा की तत्कालीन जनता ने स्वीकार किया । यहा के जन-साधारण की इनमे आस्था तथा इन सिद्ध चमत्कारी लागा के वचन सत्य निकलते है ऐसी उनकी धारणा थी ।

अधविश्वास - जादू टोना

मध्यकालीन समाज ने प्रकृति को अपने से अधिक शक्तिशाली मानकर उसमे देवत्व की कल्पना करके उसकी पूजा अर्चना के लिए अनक आचारो की सृष्टि कर डाली थी । इसक पूजाभाव मे भय की भावना ओर अनिष्ट निवारण की कामना प्रबल थी । अनिष्टकारी शक्तियों के भय से भयभीत मध्यकाल के मानव ने कई रूप विहीन तत्वों का आकार व अस्तित्व प्रदान कर अपने जीवन का निर्विघ्न बनाने के लिए विभिन्न अनुष्ठानों आर कई लाकिक-विधियों की रचना की था । यहा तक कि असाध्य और उस काल के भयकर

रोगो को भी उसने देवी-प्रकोप के रूप म स्वीकार कर पूजा-अर्चना से उसका उपचार किया करता था। ऐसे रोगो में बड़ी माता (चेचक) ओरी माता व अछपड़ा आदि प्रमुख थ जिस शीतला देवी का प्रकाप माना जाता था। आम जनता या साधारण लोगो का ही नहा राजा महाराजाओ तक का इन मान्यताओ व धारणाओ म विश्वास था। जाधपुर के महाराजा विजयसिंह ने अपने पौत्र भामसिह जिसकी मृत्यु चेचक की बीमारी स सन् १७६९ म हुई थी उसके स्वास्थ्य लाभ हेतु शीतलामाता की मनौती माना था।[87]

आज के वैज्ञानिक युग म इन महामारियो के उन्मूलन व उपचार की समुचित व्यवस्था हो चुकी है और मध्यकालीन धारणाओ मे बहुत कुछ परिवर्तन आया है फिर भी कई मध्यकालीन सामाजिक मान्यताए व धारणाए आज भी यहा के समाज म व्याप्त हैं और आज का सभ्य समाज भी उनका पूर्ण त्याग नही कर पाया है।

धार्मिक आस्था के अतिरिक्त लोक विश्वास पर आधारित कुछ ऐसी सामाजिक मान्यताए भी विवेच्यकाल में यहा के समाज मे प्रचलित थी जो उनके अध विश्वास का ही प्रतिफल था। जादू टोना जत्र मत्र भूत-प्रेत नजर टूकार आदि में आस्था रखना आर अपने अमगल से छुटकारा पाने हेतु इनके निराकरण की विधिया अपनाना मध्यकालीन समाज मे प्रचलित था।

मध्यकालीन मारवाड़ में अन्धविश्वास और रूढ़िगत कई परम्परागत मान्यताओ के कारण यहा के निवासियो के आचार विचार और सामाजिक व्यवहार पर भी प्रभाव पड़ा। लोगा मे यह विश्वास था कि महामाया शक्ति कन्या क रूप म अवतार लती है। ज्वालामुखा देवी की उपासना से अकाल का भय टल जाता है एसा लोकविश्वास था।[88]

जन साधारण का मत्र तत्रो मे भी बहुत विश्वास था। मत्रसिद्धि से कठिन से कठिन कार्य भी सफ्लतापूर्वक सम्पन्न होने की धारणा प्रचलित थी। आकाश मे उड़ना वशीकरणमत्र अदृश्य होना आदि चमत्कारी कार्यो मे मत्र तत्र आवश्यक माना जाता था। यहा की आम जनता मं यागियो सिद्धो यतियो मे बड़ा विश्वास था[89] और वे मत्र बल की शक्ति से भयभीत भी रहत थे। मत्रा द्वारा बीमारियो का इलाज करने की प्रथा भी प्रचलित था। इस पर आग प्रकाश डाला गया ह।

मत्र तत्र

मारवाड मे तात्रिक साधना क प्रादुर्भाव में नाथ सम्प्रदाय का काफी प्रभाव रहा और यहा का जनता मत्र तत्र के प्रति आकृष्ट हुई। मध्यकाल में जन साधारण का मत्र तत्रों में बहुत अधिक विश्वास था। नाथ सम्प्रदाय की तात्रिक साधना का प्रचलन कालान्तर में यहा शाक्त जन तथा अन्य धार्मिक सम्प्रदाया म हुआ। जन यतिया द्वारा भा इस साधना को अपनाने से इसक प्रचार प्रसार म बल मिला। मध्यकालान मारवाड़ म मत्र सिद्धि से

कठिन कार्य भी सफलतापूर्वक सम्पन्न होने की धारणा प्रचलित थी। आकाश म उडना वशीकरण मत्र अदृश्य होना आदि चमत्कारी कार्यो म तात्रिक साधना आवश्यक मानी जाती थी। यहा की आम जनता का योगियो सिद्धो यतियो म बड़ा विश्वास था।

यहा विभिन्न प्रकार क मत्र प्रचलित थ जिनकी साधना क वल पर विभिन्न प्रकार की सिद्धिया हासिल करके चमत्कारी कार्य सम्पन्न किए जात थ। मत्र बल स वशीकरण[90] मारण उच्चाटन[91] जैसे कर्म किय जाते थ। इसके अतिरिक्त भूत प्रत[92] डाकिना पिशाचिनी[93] आदि के मत्रा का प्रचलन अधिक था तथा यहा की आम जनता इन मत्रा क जानकार लोगा का बहुत अधिक सम्मान करती थी क्योकि उनका विश्वास था की मत्र बल से वे लाग भूत प्रेत डाकिनी पिशाचिनि आदि के भय स मुक्त कराने म सक्षम ह। अनाज को कीडा से बचाने के लिए भी मत्रशक्ति[94] का प्रयोग किया जाता था।

मत्रो द्वारा यहा योगिनासिद्धि[95] बटुक भैरव सिद्धि[96] त्रिपुरसुन्दरी सिद्धि[97] कार्यसिद्धि[98] आदि विभिन्न प्रकार का सिद्धिया प्राप्त की जाती थी।

मत्रों के द्वारा विभिन्न प्रकार के भय व आतक से तो रक्षा करन का रिवाज था ही साथ ही उस काल में मत्रा क द्वारा साप काटने या बिच्छू काटने का इलाज भी किया जाता था जिसे यहा साप का झाड़ा[99] व बिच्छु क झाड़ के[100] नाम से जाना जाता था। इतना ही नही शारीरिक व्याधिया का इलाज भी मत्रो के द्वारा सम्पन्न किया जाता था। कुछ व्याधियों के मत्रा के उदाहरण यहा द्रष्टव्य है - आधा सिर व सिरदर्द का मत्र[101] आख दर्द का मत्र[102] पट दर्द का मत्र[103] वायु रोग (वादी) का मत्र[104] जानू डरु रा मत्र[105] आदि।

मत्रा की ही भाति यहा यत्रा का प्रचलन अत्यधिक था जिस यहा की स्थानीय भाषा में जत्र" या जतर" कहा जाता था। मत्र की तरह ही जत्र का उपयोग व दैनिक जीवन मे प्रयोग किया जाता था। जत्र के अन्तर्गत विशिष्ट प्रकार की चित्राकृति के अन्दर अक शब्द या पूर मत्र विधिपूर्वक लिखकर उसे सिद्ध करने पर वह मत्र का भाति ही प्रभावा होता था। यहा के हस्तलिखित ग्रथों म विभिन्न मत्रा यत्रा की हस्तलिखित कृतिया हे जिनमे विभिन्न प्रकार के मत्र व यत्रों का उल्लेख सविधि किया गया है। मोहन का यत्र डाकिनि भूतिनि का यत्र दुश्मन का यत्र वशीकरण का यत्र पुरुष वशीकरण का यत्र युद्ध विजय का यत्र भूत-पलीत का यत्र शत्रु वशीकरण का यत्र नजर नही लगने का यत्र आर सुगनपाली का यत्र[106] आदि विभिन्न प्रकार के कार्यों मे इन यत्रो का प्रयाग किया जाता था।

इलाज क रूप म भा यत्र का उपयाग किया जाता था। जत्र ईकातरा रौ[107] जत्र माथो दुखे जिण रो[108] जत्र नारू रा[109] जत्र खाज को[110] जग धरण को[111] जत्र हडकिया कुत्ता रौ[112] जत्र आधा सीसा को[113] जत्र गई कूख बावड़[114] जत्र गर्भ रहण का[115] जत्र पसली र दर्द रा[116] जत्र माथा रै मळाका रो[117] आदि।

मत्र तत्र व जादू टोने का यहा मध्यकाल मे व्यापक प्रचलन था । "कामण" जसा राजस्थानी लोकगात मध्यकालीन लोगों की ऐसी ही मानसिकता का प्रतीक कहा जा सकता है ।

अनुभवो पर आधारित यहा की कुछ मान्यताएँ जो छाटी छोटी उक्तियो के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है पर उसके पीछे सुदीर्घ परम्परा रही है । इनको यहा के लोगो ने वर्षो की कसोटी पर कसकर जाचा परखा तब समाज मे ओर लोक व्यवहार मे ये आचार-विचार व्यवहृत होने लगे । माध्यकालीन मारवाड़ वे प्रचलित ऐसी ही कुछ मान्यताओ के उदाहरण यहा द्रष्टव्य है -

पुरुष

आकृति प्रकृति मे पुरुष मातृकुल का अनुकरण[११८] करता है । पुरुषो मे घनी मूछों वाले[११९] पुरुष को तथा जबान के पक्के[१२०] मनुष्य को अच्छा माना जाता था । शारीरिक सौष्ठव के आधार पर भी पुरुष की श्रेष्ठता का निर्धारण किया जाता था । अगहीन काना लूला लगडा व ऐचाताणा कायरी आखो वाला तथा गजा व्यक्ति निकृष्ट माना जाता था ।[१२१] पुरुषों में सज्जन और दुर्जन व्यक्ति की पहचान प्रकृति का भेद भी यहा उनके स्वभाव व कार्यो के आधार पर किया जाता था ।[१२२] पुरुषो मे नाई को चालाक माना जाता था ।[१२३] इसी प्रकार कुछ विशिष्ट वर्ग के लोगों के स्वभाव के सम्बन्ध में भी समाज मे निश्चित धारणाए[१२४] प्रचलित था ।

मारवाड के पुरुष श्रेष्ठ माने जाते थे । उनके बखान के कई दोहे यहा आज भी प्रचलित है । उदाहरणार्थ निम्नलिखित पक्तिया द्रष्टव्य है

"मारवाड नर नीपजै नारी जैसलमेर ।
तुरी ज सिंधा सातरा करहल बीकानेर ॥
केकाणा काबुल भली पहर भली परभात ।
मरदा भली ज मुरधरा गोरड़िया गुजरात ॥ [१२५]

नारी

नारा से सम्बन्धित भी मध्यकालीन मारवाड मे कई मान्यताए प्रचलित थी । समाज के सभ्रात व कुलीन वर्गो म नारी का सन्मान व आदर था । नारी को रत्न[१२६] की भाति मूल्यवान समझा जाता था और वह वशवृद्धि का एक प्रमुख आधार[१२७] समझी जाती था । नारा के बिना निकेतन का कोई मूल्य नही था क्याकि स्त्री के बिना घर घर नही कहलाता था ।[१२८] घर मे कुलवन्ती नार स्वर्गिक सुख के समान मानी जाती थी ।[१२९] ताकतवर क अधीन ही नारी रूपी यह रत्न रह सकता था ।[१३०] उस पर से ज्यो ही ताकत हटी वह दूसरों की हा जाती है ऐसी मान्यता भी प्रचलित थी । शृगार प्रसाधन से युक्त नारी भली लगता थी ।[१३१] सुन्दर नत्रा वाली तथा सतान (पुत्र) उत्पन्न करने वाली नारी

अच्छी मानी जाती थी।[132] कुलीन घराने की बहू लाना श्रेयस्कर माना जाता था।[133] अधिक सिंगार पिटार करने वाली बहू क बिगड़ने की ज्यादा गुजाइश रहती थी।[134]

नारी सौन्दर्य की भी यहा के कविया न बड़ी सुन्दर उपमाए दी है तथा उसक शील व स्वभाव के सम्बन्ध में कुछ मान्यताए प्रचलित व बड़ी लोकप्रिय थी जिसके कुछ उदाहरण यहा द्रष्टव्य है—

"गति गगा मति सरसती सीता सील सुभाय।
महिला वरहर मारुई कळि मे अवर न काय॥
हस चलण कदली जघ कटि केहरि जिम खीण।
मुख ससहर, खजन नयण कुच श्रीफल कठ वीण॥
उर चवड़ी कड़ पातळी ठावे ठावे मस।
ढोला थारी मारवी पाबासर रो हस॥

नारी के सम्बन्ध म ये धारणाए यहा की मौलिकता व सास्कृतिक विशेषताआ को उजागर करती है। नारी की महिमा व यशगान के साथ नारी प्रताड़ना[135] व फूहड़[136] व कुलटा नारी[137] के लक्षणा के सम्बन्ध म भी यहा तत्कालीन समाज म जो धारणाए प्रचलित थी उसका ज्ञान हमे लोकोक्तिया व विभिन्न दोहा क माध्यम से होता है। गरीब की औरत का समाज में सम्मान कम था दूसरी बार विवाहित[139] स्त्री से सावधान रहने की मान्यता प्रचलित थी। मध्यकालीन धार्मिक मान्यताआ व तत्कालीन आर्थिक दशा के परिणामस्वरूप नारी के प्रति कुछ विपरीत और अनादरसूचक बाते भी व्यवहृत होती थी। नारी जो पुरुष के सुख दुख की भागीदार थी उसे पर की जूती गवार[140] और अनेक अवगुणो वाली[141] कहकर भा उस काल मे उस पुकारा गया है।

मा के रूप में स्त्री का पावन[142] व पड़ा सम्मानजनक स्थान था विशेषकर मध्यकाल म वारमाता[143] व वीरपत्नी वीर सासू[144] का बखान यहा के रचनाकारा ने बड़े हा प्रभावी ढग से किया है आर कई जगह तो नारी को नर से भी श्रेष्ठ[145] माना हैं।

यहा का वीरागना जो स्वय युद्ध विद्या म प्रवीण हुआ करती थी। अवसर आने पर स्वय भी शत्रुआ स मुकाबला[146] करने आर रणक्षेत्र तक मे जाने से पीछे नही रहती था। ऐसी वीरागनाए उस काल मे अपने लिए वीर पति का वरण करने की कामना रखता थी।[147]

मध्यकाल म यहा के समाज म वीरता आर शार्य का तो समाज म प्राबल्य था हा परन्तु इसके साथ समाज म नारी सुलभ सहज व स्वाभाविक भावनाए तथा सान्दर्य व दाम्पत्य प्रेम सम्बन्धा कोमल आर मनभावन कई सुन्दर मधुर कल्पनाए भा यहा प्रचलित थी जिससे यहा के दाम्पत्य प्रम की सुमधुर छवि स्पष्ट हाता ह। प्रियतम कसा हाना चाहिए? उसके गुण व स्वभाव कम हान चाहिए, इस सामाजिक मान्यता का बहुत ही

मुन्दर अभिव्यक्ति यहा क काव्यग्रथा व फुटकर दाहा म देखने का मिलती ह कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

साजन ऐसा कीजिये जामे लखण बतास ।
भीड पडया विरचै नही सीस करै बगसास ॥
साजन ऐसा कीजिये वहै ज अैके तार ।
अरहट करी माळ ज्या नीर न खडै धार ॥
धरता जहा भरखमा नमणा जेहा कळ ।
मज्जीठा जिम रच्चणा दई ! स साजन मेळ ॥
थोडा बाला घणसहा निहचल प नेठाह ।
जो परवाडा आगला मीत करीजे ताह ॥ [१४८]

पुत्र

मध्यकालीन समाज मे पुत्र का विशष आकर्षण था क्याकि वह वशवर्धक माना जाता था । पिता के समान हा पुत्र के[१४९] याग्य आर बलिष्ठ हान का सभावना व्यक्त का जाता था । सपूत का समाज म सराहना का जाती था ।[१५०] माता पिता का अपना आरस पुत्र कुरूप भा सुन्दर लगता था ।[१५१] दत्तक पुत्र कभी निहाल नहा करता[१५२] व गाद क पुत्र का रखना कठिन कार्य माना जाता था ।[१५३] बिना पिता के पुत्र क बिगड़न का ज्यादा गुजाइश रहता थी ।[१५४]

कुपुत्र के सम्बध म भी कई प्रकार का धारणाए प्रचलित थी । कुपुत्र के उत्पन्न हाने स कुल म कलक लगता आर कुल की मर्यादा नष्ट हाती था ।[१५५] इसलिए कुपुत्र के उत्पन्न[१५६] हान की बजाय जनना का निपूता हाना अच्छा माना जाता था ।[१५७] कपूत घरवाला का अपना दूसरा का कमाकर[१५८] देता ह एसा धारणा प्रचलित था ।

पुत्री

मध्यकाल म यह मान्यता प्रचलित थी कि लडकी मा क अनुरूप होती है ।[१५९] उस युग म पुत्रा का जन्म अच्छा नहा माना जाता था । लडकी के पिता का (विवाह से पूर्व तक) सदव उसका अत्यधिक चिन्ता बनी रहती थी ।[१६०] बटा जाई जिका पगात्या बठगा तथा बटा जाय जमारा टारया जसा कहावत भी इस बात का द्यातक ह कि उस काल म पुत्रा क पिता का क्या स्थिति था । पुत्री का उसक माता पिता स्वच्छा से द देत वह कवल उसका हा अधिकारिणा था । पुत्र का भाति पैतृक सम्पत्ति का हकदार नहा था । यह मन स्थिति सभवत दहेज प्रथा क कारण प्रचलित रहा हागा । पुत्रा की शादा भल गरात्र घर म कर दना चाहिए किन्तु अयाग्य वर स नहा करना चाहिए[१६१] एसी भा मान्यता प्रचलित था ।

मध्यकाल मे जहा पुत्री की स्थिति दयनीय थी वही उसकी माता[१६२] के लिए भी ज्यादा उपयुक्त नही माना जाती थी। पुत्री का आचार विचार स्वय उसके ऊपर[१६३] अधिक निर्भर करता था फिर भी यह धारणा प्रचलित थी कि बिना मा की लड़की का प्राय बिगडने का अदेशा बना रहता है।[१६४]

रिश्तेदारी

रिश्तेदारी करते समय सावधानी बरती जाती थी।[१६५] रिश्ता करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता था कि रिश्तेदार बराबर हैसियत का हो।[१६६] रिश्तेदार एक दूसरे का मददगार व आपसी सम्बन्ध का महत्वपूर्ण आधार[१६७] माना जाता था इसीलिए समर्थ को रिश्तेदार बनाना अच्छा माना जाता था जो समय पड़ने पर काम आ सके।[१६८]

सासू[१६९] आर साले[१७०] के बिना ससुराल का कोई महत्व नही माना जाता था फिर भी ससुराल मे जवाइ का जाकर बसना अच्छा नही माना जाता था। रिश्तेदारी में पत्नी के सम्बन्धी अधिक प्रिय[१७२] लगते ऐसी मान्यता थी। इसके साथ ही जवाई रिश्तेदार व अपनी लड़की का सम्बन्ध दूर करना श्रेयस्कर माना जाता था।[१७३] साले का घर म सर्वाधिक आर्थिक नुकसान करने वाला मानने की धारणा भी प्रचलित था।[१७४]

जातीय गुण

मध्यकालीन मारवाड़ के सामाजिक जीवन में वर्ण व्यवस्था व जाति बन्धन के नियमा का जहा कड़ाई से पालन होता था वही विभिन्न जातियो के स्वाभाविक गुणों के सम्बन्ध में भी कई निश्चित धारणाए प्रचलित थी। समाज की सुरक्षा का प्रमुख रूप से उत्तरदायित्व क्षत्रिय जाति पर था इसलिए इस काल में उनकी रजपूती के सम्बन्ध म यहा बहुत सा गर्वोक्तिया प्रचलित थी।[१७५] जातिगत गुण और स्वभाव बिल्कुल विलुप्त नही होता उसका कुछ असर आये बिना नही रहता।[१७६] मध्यकालीन उस सामतीय व्यवस्था मे जमीन पर जिसका जितना आधिपत्य होता वह उतना ही शक्तिशाली माना जाता था। इसलिए यहा यह धारणा प्रचलित थी कि जमीन ही राजपूत की जाति है।[१७७] इस वीर और स्वाभिमानी१७८ जाति की उदारता दानशीलता मरणोत्सुकता[१७९] व राझ[१८०] आर खीझ भी अनूठी थी। इसके अतिरिक्त तृप्त राजपूत द्वारा धनहरण का भय व भूखे राजपूत[१८१] द्वारा कर्तव्य हेतु तत्पर होने की स्वाभाविक वृत्ति का उल्लेख मिलता है।

क्षत्रिय का भाति ब्राह्मण वर्ण की स्वाभाविक जातीय विशेषताओ के सम्बन्ध म भी कई धारणाए प्रचलित था। ब्राह्मण भोजन से बड़े प्रसन्न हुआ करते थ।[१८२] भोजन आदि अन्य लाभ के कार्यों मे तो ब्राह्मण औरों से सबस आग रहते थ परन्तु खतर क कार्यों से सदा अपने को दूर रखने का प्रयास करते थे।[१८३] ब्राह्मण के वचन को प्रामाणिक

(धार्मिक आस्था के कारण) माना जाता था।[१८४] ब्राह्मणा में आपसी मेलजोल[१८५] तथा जातीय प्रेम का अभाव माना जाता था।[१८६] अकाल और कुसमय मे भी ब्राह्मण को अपना निर्वाह करने म कोई विशष कठिनाई महसूस नही हुआ करती थी।[१८७]

वेश्य वर्ग जो अधिकाशत व्यापारिक क्षेत्र मे लगा हुआ था उसके सम्बन्ध मे भी कई मान्यताए मध्यकालान मारवाड के समाज मे प्रचलित थी। बनिया जानकार को अधिक ठगता है[१८८] तथा अटका हुआ बोहरा ही उधार देता है।[१८९] आम और नीबू की भाति बनिये पर दबाव डालन से ही कुछ द्रव्य (धन) प्राप्त हो सकता है ऐसी मान्यता थी।[१९०] बनिये का मोके पर मना करना बड़ा बुरा लगता था।[१९१] यहा का कृषक तो कडी महनत करके भी अच्छा अनाज नही खा सकता था परन्तु बनिया हमेशा गेहू खाता था।[१९२] मारवाड म गेहू सम्पन्न लोगों का खाना माना जाता था। व्यापार जैसा कार्य विनम्र स्वभाव का बनिया ही सफलतापूर्वक कर सकता है[१९३] तथा जो मोके पर व्यापार नही करता वह बनिया मूर्ख गिना जाता है[१९४] दिवालिया बनिया अपने पुराने बही खात देखा करता है।[१९५] जैसी अनेक मान्यताए बनियो के लिए यहा प्रचलित थी। यहा के बनिय की अभिलाषा निम्न पक्तिया मे द्रष्टव्य है—

घा सक्कर अर दूध क ऊपर पप्पड़ा
सात भाया के बीच सवाया कप्पड़ा
घर में धीणा होय क हुडी चोलणा
एता दे करतार फेर न बोलणा॥

कुछ अन्य मान्यताए

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य मान्यताए व धारणाए भी समाज में प्रचलित थी जिसका क्या मध्यकालीन मारवाड के लोकजीवन मे और क्या शिष्ट समाज के जीवन मे सर्वत्र प्रचार प्रसार था।

,रिजक

व्यवसाय मे नोकरी का सबसे बुरा खेती को अच्छा व व्यापार को सर्वश्रेष्ठ माना जाता था।[१९६] एसी मान्यता व धारणा के उद्‌भव के पीछे यहा की मध्यकालीन परिस्थितिया जिम्मेदार रही हैं।

अतिथि सेवा

अतिथि का यहा बड़ा मान सम्मान था तथा उसका घर आना अहो भाग्य का सूचक माना जाता था। उसकी तुलना यहा बरसात से की है।[१९७] मारवाड़ म बरसात कम हाती है आर बरसात जैसी खुशा यहा मेहमान आन पर होती थी। घर आया अतिथि सगे भाई की भाति प्यारा समझा जाता था।[१९८] घर का आर्थिक विपन्नता में भी अतिथि सत्कार म किसा प्रकार की कमा नही रहे इस बात की चिन्ता कुशल गृहिणी को सदव बनी रहती था।[१९९]

गहने व वस्त्रादि

गहना सम्पन्न का शृगार और विपन्न का आधार माना जाता था।[२००] कपड़ा सफेद[२०१] और दूसरो को अच्छा लगे वैसा पहनने की[२०२] तथा वस्त्राभूषणो के प्रयोग से नारी का सौन्दर्य निखरता हे यह मान्यता थी।[२०३]

सेवक

अपने स्वामी की निष्ठापूर्ख सेवा करना व स्वामी धर्म (स्याम-धर्म)[२०४] का यहा बड़ा महत्व था। सकट के समय अपने स्वामी की रक्षा करना यहा की गौरवपूर्ण परम्परा रही है। स्वामी और सेवक के कर्तव्य को यहा दूध और पानी की भाति माना गया। दूध को जब गर्म किया जाता है तब पहले उस आच को पानी सहन करता हे।[२०५] इसी प्रकार रणभूमि में सेवक अपने स्वामी से पूर्व लड़कर काम आवे[२०६] उसी मे उसकी सेवकाई की सार्थकता है।

राजा

शासन की सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न ईकाई राजा समझी जाती थी। राजा की शक्ति और प्रभाव से बढ़कर उसके व्यक्तिगत आचरण व व्यवहार का उसकी प्रजा पर अधिक असर पड़ता था। इसीलिए यहा यह कहा जाता रहा है कि जसा राजा वैसी उसकी प्रजा होती है।[२०७] इस मान्यता ने राजा के लिए विशिष्ट आदर्श निर्दिष्ट करने में सहयोग तो किया ही साथ ही राजा की शक्तियो पर जनभावना का अकुश भी लगाया[२०८] जिससे उसका मर्यादित व आदर्शमय जीवन श्रेष्ठ माना गया।

मारवाड़ व उसके पड़ौसी राज्यो के प्रति मान्यताए

अपने राज्य की भौगोलिक व अन्य विशेषताओ पर वहा के निवासियो को सदव गर्व होता ही हे। मध्यकालीन मारवाड़ के निवासी भी अपनी जन्मभूमि की विशेषताआ का बखान करने मे पीछे नही रहे। प्राकृतिक प्रकोप वर्षा की कमी रेगिस्तानी इलाका ऐसी कठोर जलवायु वाले क्षेत्र का जिसमें जीवन निर्वाह की कल्पना करके भी लाग भयभात हो जाय ऐसे प्रदेश की महिमा व मरुभूमि का यशगान जिस ढग से किया गया है वह भी बड़ा अनूठा ह। कुछ उदाहरण यहा द्रष्टव्य हैं -[२०९]

नभ नेहीं नेही पवन थळ नेही जळ रेस।
नर नारी नेही निम्रल नेही मुरधर देस॥
देस सुरगो जळ सजळ माणस मिठ बालाह।
घर घर चद वदनिया नीर चढ़ै कमलाह॥
जळ ऊडा थळ उथळा नारी नवळै वैस।
पुरस पटाधर नीपज अइहा मुरधर दस॥

खग धारा घोडा नरा सिमट भर्‌यौ बहुपाणि ।
इणथी मुरधर तरल जळ पाताळा परवाण ॥
मारू थारे देस मे निपजै तीन रतन ।
इक ढोला बीजी मारवी तीजो कसूमल रग ॥

इसी प्रकार मारवाड़ के पडोसी राज्यो के प्रति भी कुछ मान्यताए यहा लोक प्रचलित रही है जिसमे से कुछक यहा द्रष्टव्य है—

मेवाड— *गिर ऊचा ऊचा गढ़ा ऊचा कुळ अप्रमाण ।*
माझी धर मेवाड रा नर खटरा निरवाण ॥

चित्तौड— *चूडा सगता मकवाणा चहुवाणा राठौड़ ।*
सूरा रगता सीचियो ऊ ओही चीतोड ॥

उदयपुर— *उदियापुर लजा सहर माणस घणमोला ।*
दे झाला पाणी भरै आया पीछोला ।

ढूढाड— *ऊचा परबत सेरवन कारीगर तरवार ।*
इतरावधका नीपजै रग देस ढूढाड ॥

आबेर— *वाग वगीचा वावडी फुलवारा चहु फेर ।*
मोज सुरगी माळियै अे वाता आबेर ॥

बीकानेर— *अमल मिठाई असतरी सोनो गहणो साह ।*
पाच चीज पिरथी सिर वाह बीकाणा वाह ॥

जैसलमेर— *घोड होय ज काठ रा पिंडली हो पाखाण ।*
लोह तणा हा लूगडा जोयीजे जेसाण ॥

गुजरात— *ऊ आबा ऊ आवळी रायण दाडम दाख ।*
रोयण आव रस घणा अइहो धर गुजरात ॥[२१०]

मरुधरा के लागा की आशा आकाक्षा प्रत्यक की भिन्न व अपनी रुचि ओर मति अनुरूप थी । यहा के राजा की यह आकाक्षा रहती कि मरी प्रजा सुखी रहे । काश्तकारा का किसी प्रकार का भय न हा । वरावरी क राजा मरी शका मान । मरे मत्री सेनापति ओर राजकुमार याग्य हा । विरुद गान वाल कवि मेरी प्रशसा क गात गात रहे । यदि इश्वर इतना द द ता फिर मुझ आर कुछ पान का इच्छा नही ।

इसा प्रकार सनापति सरदार, ठाकुर, कुवर, भोमिया ठकुरानी कुवराणी कामदार, कणवारिया धाड़ायता साधु सत वैरागा पशुपालक किसान किसान का पत्नी सवक दास दासी जिसका प्रचलन यहा के लाक व्यवहार म आज भी दखन का मिलता है ।

एता देकिरतार फर काई चावणा[२११] मे यहा के राजा से लेकर सेवक तक सभी की आकांक्षाए एव आशाए उद्घाटित होती है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

ठाकुर— चाकर गोली हाय जमीं हूवें वारणैं।
मदवो महला माय प्यारी रै कारणे।
कामती कर काम ढोली नित गावणा।
इतरा द किरतार, फर काई चावणा॥

कामदार— ठाकर बालक होय हुकम ठकराणिया।
गाव दुसाखियो होय क बस्ती बाणिया।
घरे ही न्याव पताव घरा सू तोलणा।
इतरा द किरतार, फेर नही बालणा॥

किसान— नवी मूज री खाट क न चूवे टापड़ी
भैसडल्या दो चार, क दूजै बापड़ी।
बाजर हदा बाट दही मे ओलणा।
इतरा दे किरतार, फेर नही बोलणा॥

किसान की पत्नी— उठे ही पीरो होय उठे ही सासरो
आथूणो होय खेत चूवै नही आसरो।
नाडो खेत नजीक जठै हळ खालणा
इतरा दे किरतार, फर नही बोलणा॥

पशुपालक— घर गाया री छाग घणा है केरड़ा
बेटा पोता बहोत न नंड़ा खेतडा।
च्हावे सो घर माय खजीना खोलणा
इतरा दे किरतार, फेर नही बोलणा॥

इसके अतिरिक्त यहा राजा मत्री सेवक मित्र अतिथि दान शील तप दया क्षमा यश अपयश परोपकार, भाग्य इत्यादि अनेक पहलुओ पर उनका मालिक चिन्तन और अपनी पारम्परिक संस्कृति पर आधारित निजी मान्यताओ का भी मध्यकालीन समाज मे प्रचलन रहा है जिनका सपूर्ण विवेचन करना विस्तार भय के कारण सभव नही वह एक स्वतत्र शोध और अध्ययन का विषय है।

मध्यकालीन मारवाड़ मे खान पान के सम्बन्ध मे भी पूरा ध्यान रखा जाता था और यहा ऐसी धारणा प्रचलित थी कि खाना तो अपनी रुचि के अनुसार खाना चाहिये।[२१२] चैत्र मास मे गुड़ वैसाख मे तेल जेठ मे पत्थल यात्रा आषाढ़ मे जल फल सावन मे हर शाक भादो मे दही आसोज मे करेला कार्तिक मे छाछ मार्गशीर्ष मे जीरा पौष मे धनिया माघ मे मिसरी और फाल्गुन मे चना वर्जित माना जाता था।[२१३] यहा जान पीन को

सार[२१४] मानने की प्रवृत्ति भी प्रचलित था। जीवन मे सभी प्रकार के सुखो का उपभोग करने सग्रह न करने[२१५] व अच्छे कार्यों के करने को भी यहा के लोग उत्सुक रहते थे क्योकि अतकाल म सब कुछ यही धरा रह जाना है कुछ भी साथ नहा चलेगा।[२१६] अत मानव जीवन को उल्लसित व आनदित बनाकर जीना ही सार्थक समझते थे।[२१७] मा के हाथ का भोजन करना सबस अच्छा माना जाता था।[२१८]

मारवाड़ के विभिन्न स्थानों की भिन्न-भिन्न खाद्य वस्तुए (वनस्पति) प्रसिद्ध रही है। जैसे मडोर के मूग[२१९] सीवाणा की सागरी, थलवटकी फलिया जालोर के पीलू और कोळूमद के केर।[२२०] कैर, सागरी और कूमटिया का प्रचलन यहा काफी था। बैर, पीलू व गूदे यहा सूखे मेवे की तरह माने जाते थे।

खान पान के साथ-साथ व्यवहार पक्ष पर भी पूरा ध्यान दिया जाता था। इस सम्बन्ध में यहा यह उक्ति प्रचलित रही है कि खाइये त्यूहार, चालिये व्योहार।' व्यवहारिक जीवन की जानकारी उनकी निम्नांकित बाता से स्पष्ट परिलक्षित होती है

खाणो मा के हाथ को होवो भलाई जैर ई।
बैठणो भाया को होवो भलाई बैर ई।
चालणो गले का हावा भलाई फर ई।
छाया मोकै की होवो भलाई कैर ई।
धीणो भैंस को होवो भलाई सेर ई।

काट कडुबो खीचड़ा खग बावा का काछ।
इतणा तो जाडा भला छाती बोरो छाछ॥

इसी प्रकार जाका पड्या स्वभाव 'क जासी जीव सू, अक्कल सरारा ऊपज दीधा डाम तरवार को घाव भर जाय पर बोली को घाव कोनी भरे जाण मारे बाणियो पिछाण मारे चार कद घी घणा तो कदै मुठी चीणा आप भला तो जग भला आप मरता बाप कोने याद आव आपरी पूठ आपने कद दीखे, भरोसै की भैस पाडो ल्यावे भूखौ पूछै जोतसी धायो पूछै बद भाई बरोबर सैण नी भाई बरोबर दुस्मण ना सार सगाई चाकरा राजीपे को काम हाकमी गरमाई की दुकानदारी नरमाई की हाथी ने हिलावड़ो कुण केवे आदि उक्तिया यहा क जनजीवन के आचार विचार व सामाजिक व्यवहार को बहुत ही सक्षेप व सटीक ढग स उजागर करती है। ये लाकोक्तिया इस युग की देन नही वर्षा पूर्व बनी थी। इनम से अधिकाश पूर्व परम्परा से सम्बद्ध है जो मध्यकाल मे भा ५

सीख

कुछ सीख की नीतिगत स्मरणीय बात भी यहा के जनजीवन उन आचार विचार का सवारने म सदियो स बड़ा सहायक सिद्ध हुई है। से लोगा का व्यवहार सस्कारित हा समाजापयोगी हाता था ७

लोकशिक्षण के कार्य की पूर्ति होती थी । इस तरह की सीख बावनी बत्तीसी, छत्तीसी आदि नामकी कृतियों मे खूब मिलती है साथ ही फुटकर व स्फुट रूप से भी उपलब्ध होती है ।

जीवन में कुछ बाता स सावधान रहने की जरूरत होती हे किसी वस्तु के परख के विशिष्ट नियम होते है तथा स्वर्ग के समान सुख पहुचाने वाली लोकमान्यता मे कौन सी बातें हो सकती है स्वभावगत विशेषता समयोजित कर्म की सार्थकता तथा विभिन्न स्थितिया व परिस्थितियों म विभिन्न प्राणियो व लोगों के स्वभाव व भावात्मक विचार किस प्रकार के बनते है । ये सब ज्ञान व नीति की बातें विविध जानकारिया प्रदान करने वाली होती थी जो तत्कालीन समाज मे उपयोगी व लोकप्रिय थी । ऐसी ही सीख के कुछ काव्यात्मक उदाहरण यहा प्रस्तुत है—

लाखा लोहा चम्मडा पैली किसा बखाण ।
बहू बछेरा डीकरा नीमटिया परवाण ॥

मौत मादगी मामला मदी मागण हार ।
अै पाचू मम्मा बुरा भली करै करतार ॥

कणक पुराणा घी नया घर सिलवती नार ।
चौथी पीठ तुरग री सुरग निसाणी चार ॥

कागा कुता कुमाणसा तीन्या अेक निकास ।
ज्या ज्या सेर्‌या नीसरै त्या त्या करै विनास ॥

काच कटोरो नैण जळ मोती दूध र मन्न ।
इतणा फाट्‌या ना मिळे लाख करा जतन्न ॥

किरपण के दालद नई ना सूरा के सीस ।
दातारा के धन नई, ना कायर के रीस ॥

गोद लडायो गीगलो चढ़ियो कचेडिया जाट ।
पीर लडाई पदमणी तीनू बारा बाट ॥

च्यार डागा चौधरी पाच डागा पच ।
जी के घर मे छ डाग वो पच गिणे न टच ॥

इन मन्यताओ में विवेच्यकाल के सस्कारी जीवन की झलक मिलती है । उस काल के चिन्तन आर सामाजिकता का बोध कराने मे ये धारणाए और मान्यताए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है । कितने ही सामाजिक जीवन के प्रसगा का अभिव्यक्ति उनकी इन धारणाआ में निर्विकार रूप मे प्रकट हुई है जो उस काल के सामाजिक व सास्कृतिक जीवन को भलीभाति समझने म सहायक सिद्ध हो सकती हैं ।

आचार विचार

वर्ण व्यवस्था के आधार पर आचार विचार होता था। प्रत्येक वर्ग के कर्म यहा की जलवायु तथा सामाजिक स्थिति के अनुसार होता था। जैन धर्मावलम्बी इन आचार विचारो का कट्टरता से निर्वाह करते थे फिर भी ब्राह्मण भी सुदूर गावों में चमड़े की पखाल या दावड़ी का पानी पाते थे। पक्की रसोई खाते थे। नित्य स्नान कई स्थानो पर सम्भव नही था वहा विरनाई जिनके स्नान नित्यकर्म का जरूरी अंग था भाजा कान हुआ स्नान जैसी युक्ति से नियम पालन कर सन्तोष करते थे। राजकीय व सामन्ती व्यवस्था में सबको अपना आचार विचार निभाने की स्वतंत्रता थी तथा आवश्यकता होने पर इसके लिए सरक्षण भी दिया जाता था।

इस प्रकार मध्यकालीन मारवाड़ के निवासियों की मान्यताओं व आचार विचार पर अन्य बातो के अतिरिक्त यहा की प्राकृतिक दशा व जलवायु का असर भी पड़ा। धार्मिक व आर्थिक दशा ने यहा के सामाजिक जीवन व उसके मूल्यों को बहुत हद तक प्रभावित किया।

सन्दर्भ सूची

१ सम्भाशक्ति, फरवरी १९६४ पृ ३४

२ वही, पृ. ३४ ३७

३ डा मनोहर शर्मा राजस्थानी बात साहित्य, पृ. १६६

४ सकुनबतीसा, ह. ग्र. ग्रथाक ५४ (९) राज. शोध सस्थान, चौपासनी (जोधपुर)

५ सकुनशास्त्र (ह. ग्र.) ग्रथाक ९० (२३) राज. शोध सस्थान, चौपासनी

६ सकुनशास्त्र (वैशाख रा आरख) ह. ग्र. ७०७४) (२) रा. शो. स. चौपासनी

७ सक्राति सकुन-ग्रथाक १३१६७ रा. शो. स. चौपासनी

८ होली रै वायरा रो विचार ग्रथाक ३४०८ रा. शो. स चौपासनी द्रष्टव्य-ग्रथाक ६४९ ४१९६ १३१६७ रा. शो. स. चौपासनी

९ काढियों के आकार की छोटी छोटी छितियों वाला सर्प विशेष

१० कवडीयारा सकुन ग्रथाक ३४०८ रा.शो.स. चौपासनी

११ सकुनबतीसी ग्रथाक ५४(९) रा.शो.स. चौपासनी

१२ सकुनावली ग्रथाक (ह.लि.) ९०४७(५) रा.शो.स. (जोधपुर) चौपासनी

१३ सकुनावली (ह.लि.ग्र ।) ९०४७(५) रा. शो. स. चौपासनी

१४ वागमाला रो विचार (ह.ग्र. (ग्रथाक ३४०८ रा.शो.स चौपासनी

१५ वही

१६ वही

१७ पशु-पक्षी विचार (ह.ग्र.) ग्रथाक ६४९ ४१९६ रा.शो.स. चौपासनी

१८ रात वा राजा सकुन ह.प्र. प्रथाक-३४०८ रा.शो.स. चौपासनी
१९ सकुनमाला ह. प्र. प्रथाक ११४०० रा. शो. स. चौ.
२० तीतर रा सकुन ह. प्र. ३४०८ रा. शो. स. चौ.
२१ सकुनावली ह. प्र. प्रथाक ६५०० (२) रा. शो. स. चौ.
२२ पक्षी सकुन विचार ह. प्र. प्रथाक ४३३७ रा. शो. स. चौ.
२३ स्वान रा सकुन ह.प्र. प्रथाक ३४०८ रा.शो.सं. चौपासनी
२४ सकुन सासत्र ह. प्र. प्रथाक २९७५(२) रा. शो. स. चौ.
२५ सकुन बतीसी ह. प्र. प्रथाक ५४(९) रा.शो.स. चौ.
२६ सकुनमाला (१४६०) ह. प्र. प्रथाक ११४६० रा.शो.स. चौ.
२७ साड रा सकुन ह.प्र. प्रथाक-३४०८ रा.शो.स. चौपासनी
२८ सकुनमाला ह.प्र. प्रथाक ११४६० रा. शो. स. चौपासनी
२९ सर्प रा सकन ह.प्र. प्रथाक ३४०८ २४ रा. शो. स. चौपासनी
३० छिपकली का सकुन ह.प्र. प्रथाक ३२०४ रा. शो. स. चौपासना
३१ पक्षी सकुन विचार ह.प्र. प्रथाक ४३३७ रा. शो. सं. चौपासना
३२ सकुनावली चक्र ह.प्र. प्रथाक ४८६१ (३) रा. शो. स. चौपासना
३३ सकुनावली ह.प्र. प्रथाक ६५००(२) रा. शो. स. चौपासना
३४ सुकनावली ह.प्र. प्रथाक ६५००(२) रा. शो. स. चौपासनी
३५ सकुन विचार (पासाकेवली) ह.प्र. प्रथाक ७५९ रा. शो. स चौपासनी
३६ चीड़ी सकुन ज्ञान ह.प्र. प्रथाक ९६४८(३) रा. शो. स चौपासनी
३७ १ सकुनाशास्त्र (छीकविचार) ह.प्र. प्रथाक-७७७४ (२) रा.शो.सं. चौपासनी
३८ वही
३९ छीक रो विचार ह.प्र. ९६३३ लिका स. १८५८ रा.शो.स. चौपासनी इस ग्रथ में छीकविचार इसी प्रकार दिया गया है कुछ पाठान्तर अवश्य मिलता है।
४० छीकसकुन ह.प्र. प्रथाक ३२०७ रा.शो.स. चौपासनी
४१ छीकविचार ह.प्र. प्रथाक ९९४(२)
४२ पूर्व पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नेऋत्य ईसानकोण अग्निकोण व वायवकोण।
४३ अग फरकण विचार ह. प्र. प्रथाक १२२२० रा. शो. स. चौपासनी
४४ आख पुरतण विचार ह. प्र. प्रथाक १०१७ ७९२७ रा.शो.स. चौपासनी
४५ पुरुष को जीमणो अग सखरो। स्त्री को डावो अग सखरो।
-अग फरुकणीविचार ह. प्रथाक ७९२७ रा.शो.स चौपासनी
पुरुष रो जीवणो अग फरके तो भलौ स्त्री रो डावो अग फुरके तो भलौ।
-अग फुरकण रो विचार ह.प्र. प्रथाक (२४२८(६)रा. शो.स. चौपासनी
४६ अग फरुकणी विचार ह.प्र. प्रथाक-७९२७ रा.शो.स. चौपासनी
४७ अग फुरकण रो विचार ह.प्र. प्रथाक-१२४२८(६)–रा. शो. स. चौपासनी
४८ अग फरुकण विचार ह.प्र. प्रथाक १२२२० (६) रा.शो.स. चौपासनी

४९ अग फरुकण विचार ह ग्र ग्रथाक १२२२० रा.शो.स. चौपासनी

५० स्वरोदय सागर, ह.प्र प्रथाक-४१५८ पृ ७ रा.शो.स चौपासनी
चरणदास जी को सरोधो ह.प्र.ग्रथाक ७२०९ रा.शो.स चौपासनी

५१ स्वरोदय, ह.प्रनीथाक-४१५८, पृ ८ रा.शो.स. चौपासनी

५२ चरणदासजी को सरोधो ह.प्र ग्रथाक ७२०९-रा. शो. स चौपासनी

५३ महादेवजी रो सरोदो ह.लि.प्र ग्रथाक-७२४७-रा. शो. स चौपासनी

५४ सकुनशास्त्र ह.प्र ग्रथाक-७७७४(२) रा.शो.स चौपासनी

५५ सकुनशास्त्र ह प्र ग्रथाक ७७७४(२)रा.शो.स चौपासनी (जेठ रा आरख)

५६ वही श्रावण रा आरख

५७ वही असाढ रा आरख

५८ वही चैत्र रा आरख

५९ सुकुनसास्त्र ह.प्र ग्रथाक २९७५(२) रा.शो.स चौपासनी

६० भडली पुराण (ह.प्र) ग्रथाक-२५८२ २६३५ रा.शो.स चौपासनी

६१ भड्डलीपुराण (ह.प्र) ग्रथाक-१४९१ १८२४ रा.शो.स चौपासनी

६२ भाडलीपुराण (ह ग्र) ग्रथाक-३२२७(७) ४०१५ (१), ४८५८(२)
रा.शो.स चौपासनी

६३ भाड्डुली वायक (ह.प्र) ग्रथाक-५१७२ रा.शो.स चौपासनी

६४ भडली के पद(ह.प्र) ग्रथाक-४६६३ रा.शो.स चौपासनी

६५ सात वार विचार, ह.प्र. ग्रथाक-४३८ रा.शो.स चौपासनी

६६ सकुनशास्त्र ह. प्र ग्रथाक ७७७४ (२) रा.शो.स चौपासनी

६७ सौण सग्रह ह.प्र ग्रथाक १४०४२ रा.शो.स चौपासनी

६८ ग्रहण विचार ह प्र ग्रथाक ७५८१ रा.शो.स. चौपासनी

६९ (अ) करम अर छिया सागे ई रैवै करम में लिख्या ककर तो काई करे सिव सकर, करम के कारी कोनी लागे
करम हीण खेती करे, क काळ पडे कै बळद मरे ।
(ब) अजल बड़ो बलवान/कितकासी कित कासमीर, खुरासाण गुजरात ।
दाणो पाणी परसराम बाह पकड़ ले जात ॥
(स) अणहोणी होवै नही होणी हा सो होय ।

७० काम व्हालौ व्है चाम नी आळसी को दाळद नी जावै ।

७१ अब पिछताया कै बणै जद चिड़िया चुग गई खेत
असाढ चूक्यो करसौ अर डाळ चूक्यौ बादरो बेळा रा बाया मोती नीप जै आदि ।

७२ अवेरया तो घर बधै छाप्या बधै बाड़ ।
सीधो बोल्या हेत बधे आन्ो बोल्या राड ॥

७३ घर आयो अर मा जायो बराबर । मह अर पावणा किताक दिन रा ।

७४ आवो बैठो पीवौ पाणी तीन चीज तो मोल न लाणी ।

७५ डा. कैलाश चन्द्र विद्यालकार पितृपूजा पृ १

७६ वही पृ ३

७७ एच स्पन्सर प्रिंसिपल्स आफ साशियालाजी वाल्यूम १ पृ ४११

७८ मरुभारता वर्ष ६ अक ४ जनवरी १९५९ पृ २१

७९. रीत विरियारर रा बही (जाधपुर राजघराना) हू.प्र. प्रथाक १३५०६ पृ ७१ रा. शो. स

८० बड़ा या पहला पला

८१ दूसरा या छाटा पला

८२ मरुभारती वर्ष ६ अक ४ जनवरी १९५९ पृ २०

८३ वही पृ २१

८४ आवड़ तूठी भाटिया कामेही गाड़ा ।
   श्रीवर वड़ सीसोदिया करणी राठौड़ा ॥

८५ प्राय घर की साळ या आरे में दीवार के आले में कुलदेवी का स्थान बनाया जाता था ।

८६ कभी कभी राजा या प्रमुख सामन्त की मृत्यु के उपरान्त उनकी पत्नियां ही नहीं उप पत्नियां रखैल पासवान दासियां गोतरणियां खवासें भी सती हाती थी परन्तु विधिवत् वैवाहिक सस्कार से ब्याही पत्नी को ही सती या सतीमाता के रूप में पूजा जाता था ।

८७ प. विश्वश्वरनाथ रेऊ मारवाड़ का इतिहास (प्रथम भाग), पृ ३९४

८८ सूरज प्रकाश, भाग-१ पृ १००

८९ डा. प्रम एंग्रस महाराजा अभयसिंह पृ १३९

९० मत्र वशीकरण (ह. प्र) प्रथाक १६७३(२) मोहिणी मत्र ४६६० (३) रा.शो.स चौपासनी

९१ मारण मत्र (हू.प्र) प्रथाक-४६१५ सा स चौपासनी

९२ मत्र भूत प्रेत रा (ह. प्र) प्रथाक ६८९६(७) १७०९ रा.शा.स. चौपासनी

९३ मत्र डाक्ण रो (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (१८), १६७३ (२) रा.शो.स. चौपासनी

९४ मत्र धान नी सुळण री (हू.प्र) प्रथाक १७०९ रा. शो स चौपासनी

९५ योगिनी सिद्धि (हू.प्र) प्रथाक ४०४० (२) रा. शा. स चौपासनी

९६ बटुकभैरवसिद्धि (हू.प्र) प्रथाक ४२२३ रा. शो. स चापासना

९७ त्रिपुरसुन्दरी सिद्धि (हू.प्र) प्रथाक ६५०३ (१) रा. शो. स. चौपासनी

९८ कार्यसिद्धि विचार मत्र (हू.प्र) प्रथाक ४६३० रा. शो. स चौपासनी

९९ झाड़ो सर्प को (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (१४) रा. शो. स चौपासनी

१०० बिच्छु रा झाड़ा (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (६) रा. शो. स. चौपासनी

१०१ मत्र माथा रा (हू.प्र) प्रथाक १७०९ रा. शो. स चौपासनी

१०२ मत्र आख रक्षा को (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (७) रा. शो. स. चौपासनी

१०३ मत्र पेट रक्षा को (हू.प्र) प्रथाक वही (२८) रा.शो.स. चौपासनी

१०४ मत्र मथवाय का (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (१३) रा. शो. स चौपासनी

१०५ मत्र जानू डेरु रो (हू.प्र) प्रथाक ८२७२ रा. शो. स. चौपासनी

१०६ ये सभी यत्र (हू.प्र) प्रथाक ६८९६ (३० ९६) रा.शो. स चौपासना क सग्रहालय में है ।

१ ७ प्रथाक ६८०६ (११)

१०८ ६८९६ (४)

१ ६८९६ (४१)

११ प्रथाक ६८०६ (५८)

१११ ६८०६ ( )

११ ६८९६ (६०)

११३ प्रथाक ६८ ६ (६९ ८७)

११४ ६८९६ (७३ ८२)

११५ ६८९६ (७४)

११६ प्रथाक ६८ ६ (७८)

११७ ६८९६ (९७) रा शा स आपासनी

११८ नर नानर गाडा लार (रा का स)

११९ मरद तो मूछयान बको (वना)

१२० मरद ता जवान बको (वहा)

१२१ *काणा खाड़ा कायरा सर स गजा हाय ।*
आन जन हा छड़िय हाथ म डडा हाय (रा का स)

१२२ कागा कुहाडा कुटिल नर काट हा काट सुई सुनागा सा पुरुष साठ हा साठे । (रा का स)
सज्जण माणस अमिय सम दाटा हरख करन्त ।
दुख हर माठा चवे नण विकास लहन्त ॥
सज्जण थाड़ा हस ज्यू, विरला काई दीसन्त ।
दुरजण काळा नाग ज्यू, महियल घणा भमत ।(राज गगा)

१२३ नर में नाई आगना पखरु में काग (रा का स)

१२४ बामण नाई कूकरा जात लख घुर्राय (कायथ कागा कूकड़ा जात देख हरखाय

१२ राजस्थानी गगा वर्ष ३ अक ४ पृ ८ १०

१२६ अम्बा रतन सुनावणा रतन सह ना राय ।
तं कारण धन मलियो ते जाता सव जाय ।(राजस्थाना गगा)

१२७ नारा नारा म त करा नारा नर का खाण ।
नारी जनना जगत रा पाल पास न पाख ।
मुरखराम बिसार कर ताहि लगाव लास (राज गगा)

१२८ ऊचा घणा अवास अळगा सु लास अजब ।
मरणा जिन धरवास पाका नाग पृसिया (वना)

१२ धान पुराणा मृत नया धर कुलवन्ता नार ।
चोथा पीठ तुरगरा सुरग नामाणा च्यार ॥

१३० जमा जारू जार का जार हत्या आर का (राज का स)

१३१ लाप्या पृथ्वी आगणी परा आना तार । वना

१३२ नैण वका गारिया कृष्ण वका गारिया रना

१३३ भू घराण की अर माय न्याण को वहा

१३४ एड़ो रगड़ो बह बिगड़ा । वहा

१३५ तिरिया चरित न जाणे कोय खसम मार के सती हाय (रा.का.स.)

१३६ पुहड़ को मल पागण में उतर ।(रा.का.स.)

१३७ नारा नर री जिन्गी नारी मौत-कुमौत ।
सती हुया सजीवणी कुलटा हुया करात (राज.गगा)

१३८ गराब की लुगाई जगत की भाजाई (रा.का.स.)

१३९ गाड़ी सै र लाड़ी सै बचकर रेणु (रा.का.स)

१४० एड़ा वासै है अकल तिरिया तणा तमाम ।
कारण इण जग में कहे नवखड बेगम नाम ।।(राज. गगा)

१४१ छाटा मोटी कामणा सारी विस री वल ।
वैरी मारे दाव सू ऐ मारे हस खेल (राज.गगा, खड २ भाग-४ पृ ३८)

१४२ स्मृति पुराण कहत स्तुति न्यायादिक मत नेक ।
जननी रा रिण हेतु जान ऊरण हुवै न एक ॥
सिद्ध कपिल मुनि सारखा महमा जाहर कीध ।
जनना हन्ने चरण-जल पावन सिरधर पीध (राज.गगा)

१४३ हू बलिहारी राणिया जाया वस बतीस ।
सेर सलूणो चूण लै सीस करै बगसीस (राज. गगा)

१४४ सुत धारा रज-रज थियो बहू वलेवा जाय ।
लखिया डूगर लाज रा सासू उर न समाय (राज. गगा)

१४५ समर चढै काठा चढै रहै पीव रै साथ/एकण गुणा नर सूरमा तीन गुणा तिय जात (राज. गगा)

१४६ गोठ गया सब गेह रा, धणी अचाणक आय ।
सिंघण जायो सिंघणी लीधी तेग उठाय (वही)

१४७ दीजै बावल डीकरी मिलिया ऐहा मल ।
खग मूधा जिण देस में निन मूधा नारेल ॥

१४८ राज.गगा-वर्ष ३ अक २ पृ १०

१४९ अरजन जसा ही फरजन (रा.का.स.)

१५० सपूत की कमाई में सै को सीर सपूत पड़ौसी का भी चोखा (रा.का.स)

१५१ घर का काणा टावर बी सावणा ।(रा.का.स)

१५२ कात्या जी का सुत जाया जी का पूत । गोद को छारा निहाल नी कर ।

१५३ गाद को छोरा राखणा दारो ।(रा.का.स)

१५४ बिना बाप का छोरा बिगड़ै बिना माय की छोरी ।(रा.का.स)

१५५ थयो कुपुत्र कुळ गम वळै कुळ लक्षण आणै ।
बावनी काव्यसग्रह (परम्परा भाग ८१)

१५६ कपूत जाया भला न आयो ।(रा.का.स)

१५७ कपूत स ता निपूती भली (रा.का. स)

१५८ कपूत दूजा ने कमा'र घालै कपूत क्लाल के अर सपूत सुनारे के जावै । (राकास)
१५९ मा गैल डीकरी । (राकास)
१६० के जागै बैटी को बाप के जी के घर में साप (राकास)
१६१ बेटी घर हीण दे देणी पर वर हीण नी देणी । (वही)
१६२ बेटी की मा राणी भर बुत्पापै पाणी । (वही)
१६३ बेटी रेवै आपसै नई तो रेवै न सागी बाप स । (वही)
१६४ बिना माय की छोरी बिगडै बिना बाप को छोरौ (राकास)
१६५ सगपण कीजै जाण पाणी पीजै छाण । (राकास)
१६६ सगाई सगपण बराबरी का (राकास)
१६७ सगो सगे री जड़ हुवै । (राकास)
१६८ सगो समरथ कीजियै जद तद आवै काज (राकास)
१६९ सासू बिना काई सासरो । (राकास)
१७० साळे बिना काई सासरो (राकास)
१७१ सासरे को बास आपके कुळ को नास (राकास)
१७२ घाघरिया रौ गनौ व्हालौ लागै । (राकास)
१७३ गढ़ बेरी अर केहरी सगो जवाई धी ।
इतणा तो अळगा भला ''' सुख पावै जी (राकास)
१७४ भीत ने खावै आळो घर ने खावै साळो । (राकास)
१७५ रण कर रज-रज रगे रिव ढके रज हूत ।
रज जेती धर ना दियै रजरज हुवै रजपूत ॥
रजपूता गुण पूछती लेख सखी साबूत ।
धर पड़िया धर कारणे रज भेळा रजपूत ॥ (राजगगा)
१७६ जात सभाय न जाय, राघड़ के बोनै हुवै ।
आरण वाज्या आय, रीठ वजाई राजिया ।
१७७ राजपूत री जात जमी । (राकास)
१७८ रजपूत रै रैकारे री गाळ (राकास)
१७९ मरदा मरणौ हक्क है ऊबरसी गल्ला ।
सापुरसा रा जीवणा, थोड़ा ही भल्ला । (राजगगा)
मरदा मरणौ हक्क है मगर पच्चीसी माय (राकास)
१८० बाता रीझै बाणियौ गीता सै रजपूत (राकास)
१८१ धायौ राघड धन हरै, भूखौ तजैपिराण भूखौ राघड़ कमर कसै (राकास)
१८२ बामण रीझै लाडुता बाकळ रीजै भूत । बामण रो जी लाडू में ।
१८३ अग्रे अग्रे ब्राह्मणा नगी नाला वरजन्ते । (राकास)
१८४ बामम वचन परमाण । (राकास)
१८५ आठ पूरबिया नौ चूल्ह (राकास)

१८६ बामण कुता हाथी कदै न जात का साथी ।
बामण नाई कूकरा जात देख गुर्राय ।(राकास)

१८७ काल कुसम्मे ना मरै, बामण बकरी ऊट ।
वो मागै वा फिर चरै, वो सुखा चाबै ठूठ ॥(राकास)

१८८ जाण मार बाणियौ पिछाण मारै चोर ।(राकास)

१८९ अटक्यो बारा उधार दे ।(राकास)

१९० आम नींबू बाणियो कठ भीच्या जाणिया (राकास)

१९१ बाणिया की नाट बुरी कातिक की छाट बुरी ।(राकास)

१९२ कूरा करसा खाय गेहू जीमै बाणिया ।(राकास)

१९३ बिणज करेला बाणिया और करेला रीस (राकास)

१९४ बखत नहा बिणजै जको बाणियो गवार (राकास)

१९५ खूट्यो बाणियो जूना खत जोवै ।(राकास)

१९६ धिन खेती द्रिक चाकरी धिन धिन हे बोपार (राकास)

१९७ मेंह अर पावणा कद कदर, आवै ।(राकाअस)

१९८ घरे आयौ अर मा जायो बराबर (राकास)

१९९ घर टोटो मोटा घणा मोटो पिव रो नाव ।
इण कारण धण दूबली गेल ऊपर गाव ॥(राजगगा)

२०० गहणो धाया को सिणगार, भूखा को आधार ।(राकास)

२०१ कपड़ा सुपेत घोड़ा कुमेत (राकास)

२०२ खाणौ मन भातौ पैरणो जग भातौ ।(राकास)

२०३ लीपी गूपी गार, पैरी ओढ़ी नार ।(राकास)

२०४ विधना अपणै हाथ सू तोलै आप करम्म ।
सौ सुकरत एक पालडे एके स्याम धरम्म ॥
राजस्थानी गगा, खड २ भाग-३ पृ १२

२०५ स्याम उबारै साकड़ै रजपूता आ रीत
जब लग पाणी आवटै तब लग दूध न चीत ॥(राज गगा खड २ भाग-३ पृ १३)

२०६ पड़ सोई पहला पड़ै चील विलग्गा चैक ।
नेण बचावै नाह रा, आप काळजो फैंक ॥राज) गगा, खड २ भाग-३ पृ १३)

२०७ जैड़ो राजा वेड़ी प्रजा ।

२०८ राजा की इच्छा ही कानून थी राणो जी कवै जठै उदैपुर अर राजा मानै सो राणी ।

२०९ राजस्थानी गगा वर्ष ३ अक ४ पृ ११

२१० राजस्थानी गगा वर्ष ३ अक ४ पृ १२ १४

२११ इतरा दै किरतार फैर काई चावणा जैसे लोक काव्य के कई सस्करण यहा प्रकाशित हुए हैं और अनेक लोगों ने अपने अपने ढग से इसे सपादित किया है । द्रष्टव्य-स देवेन्द्र सिंह गहलोत इतरा दै किरतार

२१२ खाणौ मन भातौपैरणौ जग भातो ।(राकास)

१३ चत गुड़ वसाख तल, जठे पथ असाढ़े बेल ।
सावण साग भादव दहा क्वार करेला काती मही ।
अगहन जीरा पूस धाणा मा" मिसरी फागण चिणा ।

२१४ खाणा पीणा खरचणा आ हा जग म सार ।

२१५ मूरख नर भळो कर रता न चाल लार ।(राजस्तानी गगा)

२१६ खाया सा हा खरचिया दाया साही सथ्थ ।
जसवत धर पाल्वता माल विराण हथ्थ ।(वही)

२१७ खा ल पा ल खरच ल कर ल मन की सार ।
मूरख नर भलो कर रता न चा ने लार ।
माणस लहर ससार का जीवै ज्या लग माण ।
मूवा पाछ दवळी भाठै को सहनाण (राज. गगा)

२१८ खाणा मा र हाथ रौ होवै भल ही जैर हो (रा.का.स)

२१९ साळ वखाणा सिध रा मूग मडोवर देस ।

२२ जाल्या धर जालार री कालूमन रा केर ।।राजस्थानी गगा)

◆ ◆ ◆